दिनों दिल्ली के चक्करों में गोलबन्द चमचे, चक्करबन्ध, नमकीन
गोजे, खुराकी कार्यकर्ताओं और उत्साहवर्धक समर्थकों के दल केन्
नेताओं के इर्द-गिर्द परिक्रमा करते रहे। जिले, प्रदेश, देश और विदेश
परिस्थितियों से अवगत कराने से भी अगर काम न चला तो कह आये
इन्हें मंत्री न बनाया तो परिणाम भुगतिएगा जब विद्रोह होगा।

दारुलशफा 'ए' ब्लॉक के उत्तरी कोने में कालीशंकर अभी एमबैस्ड
गाड़ी से उतरा ही था, सामने बढ़ई दीक्षित को जाता हुआ देखकर, उसने
आवाज लगायी : "रे बढ़ई ! सुना भाई ! सुना ! !"

"हो·· हो, काली तुम ! क्या बात है ? इस भयंकर लू में कहाँ निकल
पड़े ?"

इतने में गर्द का एक झोंका आया जिसकी जलन से घबड़ाकर काली-
शंकर 'ए' ब्लाक की प्रवेश गैलरी की ओर भागा। बढ़ई भी आँखें मलते
हुए वहीं पहुँच गया। बायीं जेब से रूमाल निकालकर मुँह पोंछते हुए
कालीशंकर ने कहा, "क्या बतायें यार, कृष्णबल्लभ यादव से कहने आया
था, राजभवन पहुँच जायें।"

"अरे ! क्या कृष्णबल्लभ मंत्री हो गये ? सवेरे तो सुना था, उनका
नाम हाईकमाण्ड ने काट दिया। कुछ भी हो गुरु, तब तो मजा-ही-म
यहाँ तो रोजाना मंत्रियों की लिस्ट बनती है, बिगड़ती है, फिर बन
सच क्या है, पता नहीं लग पाता। अब तुम्हीं बताओ मेरे भाई,
कौन हो रहा है।"

"कौन-कौन हो रहा है, क्या है यार ! हमें भी बस अटकलबा
ही मालूम हैं, फिर अभी ढाई बजे ही तो, पार्टी अध्यक्ष लिस्ट लेकर
हैं। किसी को···किसी को भी, हाँ प्रधानमंत्री और पार्टी अध्यक्ष के सि
कुछ पता तो है नहीं—साले बैठे-ठाले लन्तरानियाँ उड़ाते रहते
मुख्यमंत्री के बाप !" मुँह बिचकाते हुए कालीशंकर ने कहा, "तो चि
चलें, और हाँ यादवजी कमरे में तो है, ना ?"

कुछ उखड़े हुए मूड में बढ़ई बोला, 'वह तो कमरा बंद किये पड़े हैं
मैं अभी हाल गया तो डाँटकर भगा दिया। बोले—मगज मत चाटो···सब
साले हैं हरामखोर···वक्त-बेवक्त चले आते है।" कृष्णबल्लभ की नकल
उतारते हुए बढ़ई ने कहा।

कालीशंकर को इस लहजे पर अनायास हँसी आ गयी। फिर हँसी

दारुलशफ़ा

आज की राजनीति पर आधारित
एक यथार्थपरक प्रामाणिक उपन्यास

राजकृष्ण मिश्र

कटौती करके पार्टी का रुपया बचा लेते। इन्हीं तमाम बातों से दीक्षित-जी का विश्वास घूसिया पर अच्छी तरह जम गया। फिर धीरे-धीरे घूसिया की नीयत बदलने लगी। लखनऊ की रंगीनी असर करने लगी थी। वह बेचारे करते भी क्या। मनोहरलाल नाम के एक ठेकेदार की बीवी से उनका इश्क हो गया। शान-शौकत की जिन्दगी बसर करने और पैसा जमा करने की बातें वह भी सोचने लगे। लगातार सोचने-विचारने पर उन्हें यह काम बड़ा आसान लगा। ऐसे-वैसे तमाम लोग अब तो उन्हीं के पास तक आकर रुक जाते क्योंकि दीक्षितजी के पास जाकर काम कराने से खर्चा काफी होता। फिर छोटे-मोटे काम दीक्षितजी से कहे भी नहीं जा सकते थे। इधर घूसिया की जान-पहचान कितने ही मंत्रियों, अफसरों से हो चुकी थी। किसे पता था दीक्षितजी ने कहलाया था या घूसिया ने अपना काम था। वैसे भी दीक्षितजी लाखों के मामलों को छोड़कर बात भी न करते। इस प्रकार जब घूसिया ने काफी पैसा जमा कर लिया तो उसका लालच बढ़ा और उन्होंने हिसाब-किताब में भी गड़बड़ शुरू कर दी। फिर धीरे-धीरे शिकायतें पहुँचने लगीं। पार्टी में कितने ही लोग उनसे जले-भुने बैठे थे। अब तो वह किसी से सीधे मुँह बात भी न करते। इधर उन्होंने मनोहरलाल के साथ मिलकर फरनीचर का कारखाना भी लगा लिया। इस कारखाने में लगा सारा रुपया दीक्षितजी के यहाँ से ही उन्होंने कमाया था। घूसिया पकड़े गये जब पार्टी के लिए करीब सौ कुर्सियों का आर्डर उन्होंने अपनी ही फर्म को दे डाला। आर्डर के जिस बिल के एवज में चेक बनाया गया, उस पर, मनोहरलाल के न मिलने पर, घूसिया ने स्वयं दस्तखत कर दिये। घूसिया निकाल दिये गये और उनके फरनीचर के कारखाने का किस्सा तमाम नेताओं को बता दिया गया। इस तरह दीक्षित के पैसे से घूसिया बढ़ई बने। तभी से इनका नाम बढ़ई दीक्षित पड़ गया।

अपने कमरे में यादवजी भोजन कर रहे थे। उनका मन आशा से भरा-पूरा, आने वाले गौरवमय क्षणों की याद में डूबा था। चौबीस घण्टों की तीव्रता अब उन्हें खलने लगी थी।.......अर्दली, फर्राशों से भरा ऊँचे-ऊँचे कमरों वाला बंगला होगा। नहरों, बाँधों, ट्यूबवेल की योजनाओं के उद्घाटन पर, उनके नाम के पत्थर लगेंगे। लम्बी, विलायती मोटर की पिछली सीट पर बैठे बस हाथ हिलाते हुए वह निकल जाया करेंगे।

देंगे । कोई बड़ी गड़बड़ है।"

"क्या···क्या कहा मेरा नाम कट गया···" यादवजी जैसे आसमान से गिर पड़े, "तुम क्या कहते हो। मुझे तो अभी हाल विमला देवी सुमन्त, डेनियल ने बताया··· पक्का-पक्का बताया, सिचाई मिलेगा। और फिर यहाँ आज लखनऊ के सभी अखबारों में खबर जो छपी वो अलग!"

"पहले यहाँ भी यही खबर रही। कुछ न पूछो, सबको कित्ता बुरा लगा। सारा मामला गड़बड़ा गया। मैं यू० एन० आई० के दफ्तर से बोलता हूँ। आपके मन्त्री न होने की खबर यहाँ से भेज दी गयी। कल सबेरे अखबार मा पढ़ि लेना। अच्छा तो काटता हूँ, सब चिल्लाते हैं।"

बलराम ने फोन रख दिया लेकिन यादवजी के कानों में उसकी अभी तक गूंज रही थी। आपका भी तो नाम कट गया। कुछ दे आश्चर्य, क्षोभ, पीड़ा, निराशा की मन स्थिति में खड़े रहे। उनके कोलाहल उमड़ने लगा। आँखों में आँसू आ गये। थके-थके हाथ से रिसी रखकर, वह अपने कमरे की ओर लौट चले। पैर इतने भारी हो रहे एक कदम भी चलना कठिन था। ··· सब गड़बड़ा गया।······न यह कैसी घड़ी आ गयी। एकाएक आशंकित होकर उन्होंने इधर-उ ताका कहीं कोई देख न ले, यह सोचकर तेजी से अपने कमरे की ओ बढ़ लिये। एक क्षण को उन्हें विमला देवी का ख्याल आया, फिर सोच ···· अब इस हालत में कहाँ जायेंगे?······कमरे में पहुँचकर उन्होंने दरवाजा बन्द कर लिया।

कृष्णवल्लभ पूरी रात न तो सोये, ना ही उन्होंने कुछ खाया-पिया। मन्त्रिमंडल में नाम कट जाने की खबर से बेचारे कटे पेड़ की तरह गिर पड़े। उनके सपनों का महल ढह गया। दुःख-वेदना का तूफान आ गया जिसमें घूमती-मंडराती काली छायाएँ डसने लगीं। धीरे-धीरे उन्हें सब याद आ रहा था। यशोदावल्लभ कमीना है। साला अफीम का खेत अगर मेरे नाम न चढ़वाता, उसका क्या घाटा था। श्रीकान्त पाठक गधा है, फाइलें अलमारी में बन्द कर देता, साला! तांबा काण्ड खुलने से अब कहीं का नहीं रहूँगा। नहीं··· नहीं तांबे के सौदे के बारे में लगता है, अभी अपना नाम कहीं नहीं आया। तब क्या हो सकता है? फूलदास के पास तस्करी से पकड़े गये कागजात कहाँ गये···और हाँ! यशोदा मेरा रिवाल्वर ले गया था। उसमें कहीं कुछ··

श्री राजकृष्ण मिश्र (आर० के० मिश्र) को यों तो कई वर्षों से जानता हूँ किन्तु 'दारुलशफा' के कई परिच्छेद झाँककर ही मैंने उपन्यासकार के रूप में उनका नया परिचय पाया है। यह उपन्यास कथ्य और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से रोचक है। कहानी कुछ घंटों की ही है; स्थल, विधायक निवास उर्फ़ दारुलशफा। विधायकों और मंत्री बनने के इच्छुक लोगों की कार-गुजारियाँ बड़े ही सजीव और रोचक ढंग से इस उपन्यास में प्रस्तुत की गयी हैं। उत्सुकदास, गुरुपदस्वामी, लोबीराम जैसे पात्रों के पीछे मुझे उनके असली चेहरे भी अक्सर नज़र आये जिससे यह अनुमान लगा कि श्री मिश्र ने वर्षों तक असली दारुलशफा के फेरे लगाकर इन राजनीतिक शतरंज के मोहरों की उठा-पटक को बहुत बारीकी से देखा होगा। चरित्र-चित्रण ठीक लगा। वर्णन रोचक हैं और शिल्प की दृष्टि से भी इसमें ताज़गी नज़र आती है। लेखक ने इसमें कुछ चरित्रों की कहानियाँ लिखी हैं किन्तु यह चरित्र एक दूसरे की समस्याओं में गुँथकर इन कहानियों मे इस तरह से गतिशील होते हैं कि कहानियाँ सब मिलाकर उपन्यास का रूप ले लेती हैं। श्री मिश्र एक उदीयमान लेखक हैं। भविष्य में इनसे अच्छे उपन्यासों की आशा भी की जा सकती है। मैं अपने नगर की इस नवोदित प्रतिभा का हार्दिक स्वागत करता हूँ। मुझे आशा है कि पाठक सब मिलाकर प्रस्तुत रचना तथा उसके रचनाकार की सराहना करेंगे।

छपी थी :

"मन्त्रिमंडल से कृष्णबल्लभ यादव का नाम कटा !"

उनके हाथ से चाय का प्याला छूटकर गिर पड़ा। थोड़ी-सी ही चाय पी पाये थे। नाश्ता खाया नहीं गया। सिर में चक्कर आने लगे, पैर कांप रहे थे। अब उन्हें पूरा विश्वास हो गया, वह कहीं के न रहे। थोड़ी दे गुमसुम बैठे रहे। खबर की एक-एक लाइन उनकी आंखों में बछियों की तरह चुभ रही थी। एक अखबार, दूसरा, फिर तीसरा सभी में उनके बारे में खबर वही थी। कुछ देर बाद उठकर उन्होंने दरवाजा बन्द किया और लेट गये। आंखों में आंसुओं की धारा बहती रही, फफक-फफककर रोते रहे कृष्णबल्लभ।

पूरे दिन वह न उठे। कई लोग आये, नौकर भी खाना पूछने आय लेकिन उन्होंने दरवाजा तभी खोला जब कालीशंकर, बढ़ई दीक्षित के साथ आया, शाम के करीब साढ़े-चार बजे।

कालीशंकर बढ़ई दीक्षित के साथ कृष्णबल्लभ के कमरे की ओर जाने वाले बरामदे के दाहिनी मोड़ पर पहुंचा तो रंगीनराय, लोबीराम के कमरे से बाहर निकल रहे थे। उन्हें देखते ही बढ़ई दीक्षित ने आवाज लगाई, "अरे आप ! इतनी जल्दी !"

कुछ विरक्ति से रंगीनराय बोले, "ससुरा लछमनिया के साथ लेटा है।" और फिर उत्सुकता से कालीशंकर की ओर घूमकर बोले, "अरे कालीशंकर ! तुम कैसे ?"

कालीशंकर रंगीनराय से काफी डरता था। उत्सुकदास के भ विरोधी होने के साथ उसकी कमजोर-दुखती हुई रगों के बारे में भी व कुछ वह जानते थे। उसने अदब से नमस्कार किया और फिर बोला, ाय साहब, हम जा रहे हैं, कृष्णबल्लभ को मंत्री बनाने।"

"वाह ! कितना नेक काम है ! चलो-चलो, हम भी चलते हैं। सा मिठाई-दावत के लिए कहा जाये। क्यों बढ़ई ?" बढ़ई दीक्षित, रंगीन र, कालीशंकर धीरे-धीरे शाम को बनने वाले मंत्रिमंडल के बारे मे चीत करते हुए जब कृष्णबल्लभ के फ्लैट के सामने पहुंचे तो दरवाजा था।

यहाँ से···आया है मेरी खिल्ली उड़ाने···नहीं तो···"

कमजोरी, बेबसी के मारे गले से आवाज नहीं निकल रही थी। उन्होंने फौरन पीछे हटकर भड़ाक से दरवाजा बन्द कर दिया। कालीशंकर भौंचक देखता रह गया। जैसे ही कृष्णवल्लभ पीछे हटे, कालीशंकर अपने सामने खड़े आदमी को बायीं तरफ ढकेलकर आगे बढ़ा···तब तक दरवाजा बन्द हो चुका था।

प्रदेश पार्टी के मूर्धन्य नेता गुरुपदस्वामी अब बूढ़े हो चले थे। कभी समय था जब पूरा प्रदेश उनकी जय-जयकार करता। खानदानी आदमी थे। जमीन-जायदाद का लोभ, घर का विलासितापूर्ण वातावरण छोड़कर उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में, सड़को की खाक छानी। बारह साल लगातार जेल जाते रहे। अंग्रेजी सरकार ने उनके ऊपर कितने जुल्म किये जिसकी कहानी तब घर-घर मे कही जाती। त्याग, बलिदान भरे उनके जीवन मे फिर भी अनेक कमजोरियाँ थी, जिन्हे खुलेआम उनके विरोधी बढ़ा-चढ़ाकर उछालते। उनकी सबसे बड़ी कमजोरी उत्सुकदास थे।

गुरुपदस्वामी के शिष्य, उत्सुकदास, अपने राजनैतिक जीवन की सबसे ऊँची सीढ़ी पर पहुँचने वाले थे। आज ही दिल्ली से संकट की नदी पार कर वापस लौटे। अपने तीन दिन के दिल्ली प्रवास मे, उन्होंने तिकड़म, उलटफेर से सभी महत्त्वपूर्ण नेताओं का आशीर्वाद प्राप्त कर लिया। यहाँ तक गुरुपदस्वामी के कट्टर विरोधी नेताओं ने भी उनका समर्थन कर दिया। वामपक्षी गुट के नेता गुरुपदस्वामी को प्रतिक्रियावादी, पूँजीपतियों का दलाल, जमाखोरों, जखीरेबाजों का प्रतिनिधि कहते। गुरुपदस्वामी गुट के लोग वामपक्षी गुट के नेताओ को विदेशी ताकतों, देश की साम्यवादी पार्टियो के घुसपैठी कहते। दोनो गुट पार्टी मे सरकार और संगठन की जोड़-तोड़ से अपनी-अपनी ताकत बढ़ाने मे भिड़े रहते। लेकिन उत्सुकदास को इन सबका समर्थन मिला, यही उनकी खूबी थी।

उत्सुकदास के पिता गोविन्दपुर महाराज के खजांची हुआ करते थे। महाराज की मृत्यु के समय रियासतें जब्त हो रही थी। आशंका, भय के वातावरण मे महाराज को सबसे बड़ा डर अपने खजाने का था। उनकी महारानी के दो छोटे-छोटे बच्चे थे। मरने के पहले उन्होंने अपने

उत्सुकदास के स्वतंत्रता-आन्दोलन मे भर्ती होने पर उन्हें बड़ा आघात पहुंचा। तब एक दिन खजाची दल-बल के साथ शहर पहुंचे। वहाँ पता चला, उनका बेटा जेल मे था। बस इस खबर ने उनकी कमर तोड दी। थोड़े ही दिनो बाद खजाची चल बसे। मरने से पहले वे उत्सुकदास से बहुत ही नाराज रहने लगे थे। सबसे कहते, मेरा ही बेटा ! मुझे देखने नही आया, अब मैं मजा चखाऊँगा ! सो उन्होने मजा तो चखा ही दिया। उत्सुकदास पैसे-पैसे को मोहताज हो गये। बस बूढे-दुखी खजाची के मन की जिद ही थी, नालायक बेटे को बेदखल करके उन्होने अपनी सारी जायदाद, सारा पैसा धर्ममडल को, तीर्थयात्रियो के लिए दान कर दिया।

जेल से छूटने पर उत्सुकदास ने देखा वह तबाह हो चुके थे। वकालत चल निकले, इस लालच में वे स्वतंत्रता आन्दोलन में सम्मिलित हुए थे। पर जेल ने उन्हे बरबाद कर दिया। उधर कुछ भाग्य का चक्र ऐसा चला, वह नेता बन गये। खजाची बाप के अत्याचार की कहानी, उनके माथे पर बलिदान का तिलक बनकर चमकने लगी। स्वतंत्रता-आन्दोलन मे उनके महान त्याग की चर्चा चारो तरफ आग की तरह फैल गयी। लोगों ने उत्सुकदास को कधो पर उठा लिया। दूर-दूर तक उनका नाम लिया जाने लगा। फिर धीरे-धीरे प्रदेश के बडे नेताओ के बीच पहुँचकर उन्हे अपने महत्त्व का पता लगा। तब कहाँ जाते, बस जेल, जुलूस, आन्दोलन मे उन्हें ढकेल दिया गया।

इस सबसे हालांकि, अब तक उन्हे घिन आने लगी थी। लेकिन दूसरी तरफ अपने खजाची बाप से उन्हे नफरत थी। क्यों···आखिर क्यो···अपने ही बाप ने पैसे-पैसे का मोहताज कर दिया। ऐसा भी क्या था। बेटे से खून का रिश्ता तोड दिया ! उनको साफ-साफ अपना गुजरा हुआ खजांची बाप बेवकूफ नजर आने लगा, जो वक्त का तकाजा, हवा का रुख नही पकड सका। उत्सुकदास लगातार जेल जाते रहे और वक्त के तकाजे, हवा के रुख को हमेशा अपनी मजबूत पकड मे रखा।

इसी तरह दिन गुजरते रहे। उत्सुकदास विधानसभा के सदस्य तो पहले ही हो चुके थे, अब प्रदेश पार्टी के दूसरी पक्ति के प्रमुख नेताओ में उनका नाम लिया जाने लगा। बात उन दिनो की थी जब काशी विश्वविद्यालय यूनियन के अध्यक्ष कृष्णबल्लभ यादव हुआ करते थे। कृष्णबल्लभ यादव अध्यक्ष तो थे लेकिन उनकी कुछ चलती नही। असल में

अनजाने रिश्तों को बाँधने चले हों।

कृष्णवल्लभ यादव ने भी उसी दिन, उत्सुकदास से कभी
समझौते कर लिये। हमेशा के लिए वह उत्सुकदास से बँध ग
वल्लभ यादव ने उत्सुकदास को न सिर्फ अपना नेता मान लि
पैरों पर गिर पड़े। तब उत्सुकदास ने उन्हें उठाकर जो गले से
कभी नहीं छोड़ा।

मीटिंग चल रही थी, इसी बीच उत्सुकदास ने कालीशंकर को
पीने का सामान और कुछ अन्य छात्र नेताओं को बुला लाने के लिए
दिया। उसके जाने के थोड़ी ही देर बाद, कृष्णवल्लभ भी अपनी मो
साइकिल लेकर चल दिये। डाकबँगले में अब रह गये सिर्फ उत्सुकद
और प्रतिभा। प्रतिभा को बाद में कालीशंकर के साथ जाना था।

चकिया के डाकबँगले में अँधेरा बढ़ने लगा था। सर्द हवा के झोंके
बर्छियों से चुभने को दौड़ रहे थे। संयोग ही था, रास्ते में जिस मोटर से
कालीशंकर आ रहा था, उसका पुरा टूट गया। जब काफी देर तक काली-
शंकर नहीं लौटा, उत्सुकदास प्रतिभा से ही विचार-विमर्श करने लगे।
बातचीत राजनैतिक विषयों से प्रारम्भ होकर कालिदास, संगीत रोमांस
और फिर यौनशास्त्र तक आ पहुँची।

उत्सुकदास उस समय चालीस के करीब रहे होंगे। अपने संघर्षमय
जीवन में उनको औरत का सुख बस गिनती का ही मिला था। पहलौटी
में बीबी गुजर गयी तो फिर उन्होंने शादी तो की नहीं, हाँ, पार्टी की अधेड़
औरतों के चक्कर में लगे रहते। इस भुतही औरतों ने उनका जी खराब
कर रखा था। कुछ दिन पहले वह ऐसी औरतों के कारण बी० डी
फँस गये तो बड़े दुखी रहने लगे थे। तब से उन्हें पूरी नारी जाति से
प्रकार की वितृष्णा हो गयी थी। दूर भागते थे उत्सुकदास उन दिनों औरत
से। लेकिन बिना उसके काम भी तो नहीं चलता! तभी कसमिया उन्हों
घरेलू औरतों से ही निबाह करने की ठान ली। पर घरेलू औरतों का
मिलना इतना आसान नहीं था। किसी कीमत पर बढ़ा के लिए भी वह
अपने राजनैतिक जीवन को खतरे में डालने को तैयार न थे। और बिना
खतरे के औरत मिल जानी मुमकिन नहीं हो पा रहा था।

आज इतने दिन बाद, बिना खतरे के कोई मामूली घरेलू औरत
नूर हुस्न से लदी, बेदाग, साफ-सुथरी १६-२० की

जून का महीना, १६ तारीख, चार-सवा चार का वक्त होगा। दोपहर ढलने पर भी गजब की लू चल रही थी। हवा के थपेड़े घू-घू की आवाज में दूर-दूर तक गोल गर्द के बवंडर को खौफनाक बना रहे थे। हल्का-सा झोंका, हमेशा दबी खामोशी में पडा रहनेवाला जर्रा, छोटा-सा दायरा बनकर उठता और बड़े बगूलों में समा जाता। ऐसे अनेक दायरों की कतार, फिर उनसे बड़े बगूले और पास ही मँडराते हुए बवंडर जैसे एक-दूसरे में समा जाने के लिए घूम रहे थे। जो दायरा भटक जाता, वह आगे जाकर हमेशा की तरह टूट जाता, बिखर जाता।

उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में उस दिन बड़ी हलचल थी। तीन महीने के राष्ट्रपति शासन के बाद पार्टी का मंत्रिमंडल बनने जा रहा था जिसमें अपने-अपने दाँव लगाकर कितने ही विधायक दारुलशफ़ा में दम साधे बैठे थे। रंगीनराय के कमरे में अखण्ड पाठ जमा तो लोबीराम के लिए एक पण्डित हवन कर रहा था। यशोदावल्लभ ने अपने भाई कृष्णवल्लभ के मंत्री बन जाने की चाहत में चंडिका का जाप लगा रखा था। उधर तांत्रिक नजूमी और हाल बुलाने वालों का धन्धा जोरों पर था। सभी मनौती-चढ़ावा मानकर, अपने-अपने कुलदेवता के नाम से प्रार्थना में मग्न थे। सत्ता-संघर्ष के अन्तिम दौर में दिलों में दहशत, आँखों में सवाल लिये, प्रदेश के कर्णधारों को सरकार बनने की सुनहरी घड़ी का बेचैनी से इन्तजार था।

मंत्रिमंडल के उम्मीदवार भावी मुख्यमंत्री उत्सुकदास से, इन दिनों, कई-कई बार मिलकर अपनी निष्ठा, दिल चीरकर दिखा आये थे। इन्हीं

अफसर किसका आदमी, किन जिलाधिकारियों पर कितना विश्वास किया जा सकता, विभागों में प्रभाव डालने के लिए किससे कहना होगा, इस सबका ज्ञान उनको था। पुलिस, आबकारी, बिक्रीकर, सिंचाई-बिजली, कृषि आदि विभागों की ओर उत्सुकदास ऐसा झुके, ऐसा चिपके जैसे शहद के छत्ते की ओर मधुमक्खी !

इसी बीच गुरुपदस्वामी प्रदेश के मुख्यमंत्री बन गये। अब क्या था, महत्त्वपूर्ण विभागों में चुने हुए लोग रखे जाते। फार्मूला सीधा था, या तो इन विभागों के मंत्रालय गुरुपदस्वामी गुट के मंत्रियों के पास रहते या इन विभागों में चुने हुए अधिकारियों को रखा जाता।

इधर विकासशील योजनाओं की असीम बढ़ोत्तरी से विभागीय अधिकारियों में भी सरफुटव्वल होने लगी। पदोन्नति, फायदे की जगहों पर पोस्टिंग के लिए अधिकारी एक-दूसरे की शिकायतें करके भंडाफोड़ किया करते। शासन में उत्सुकदास बड़ी चालाकी से इन शिकायतों का प्रयोग अधिकारियों के ऊपर करने लगे। उनको बाँधकर उखाड़-पछाड़ करने के लिए तबादला-तरक्की, विजिलेन्स जाँच, आमदनी वाली जगहों पर पोस्टिंग आदि हथियारों का प्रयोग किया जाता। आजादी के बाद जैसे भूखों-नंगों की बड़ी-सी फौज पार्टी सरकार को घेर रही थी।

गुरुपदस्वामी की आड़ उनके लिए बहुत बड़ी आड़ थी, जिसकी अ में उत्सुकदास अपना खेल सावधानी से खेलते रहे। गुरुपदस्वामी क कमजोरियों को सूझ-बूझ से समझकर उनके सरल स्वभाव का लाभ उठाते हुए, उत्सुकदास धीरे-धीरे उन पर पूरी तरह हावी हो गये। गुरुपदस्वामी करीब-करीब महात्मा थे। नयी राजनीति के तीन-तिकड़म उन्हें कहाँ आते। उत्सुकदास को वह लड़के सरीखा मानने लगे।

फिर एक दिन वह भी आया जब उत्सुकदास मंत्रिमंडल में ले लिये गये। मंत्री का ठाट-बाट देखकर पहले तो वह कुछ चक्कर में पड़े। उन्हें रखा क्या था, यही समझ न आता। तब लोगों ने उनको समझाया, मंत्री तो बादशाह का नया नाम है। उसे तो सिर्फ हुक्म देना होता है। हुक्म भला देते भी क्या? अपने विभाग के बारे में उन्हें कुछ भी तो मालूम न था। तब बड़े अफसर श्रीकान्त पाठक ने उन्हें बताया, मंत्री कोई हमेशा नहीं रहता। समय से मिले मौके में कुछ जमा-जोड़ लो! मंत्री न रहे तो कौन पूछेगा? राजनीति के दाँव-पेंच के लिए भी रकम चाहिए थी।

कृष्णवल्लभ को मंत्री न बनते देखकर उन्होंने उनका नाम प्रदेश पार्टी अध्यक्ष के लिए पेश कर दिया। हाईकमाण्ड के नेता उत्सुकदास की चाल समझ गये। इसके जवाब में उन्होंने रंगीनराय को अध्यक्ष बनाने का मुद्दा आगे बढ़ाया। सब जानते थे रंगीनराय को किसी कीमत पर अध्यक्ष बनाने के लिए उत्सुकदास तैयार न होंगे क्योंकि रंगीनराय के अध्यक्ष होने से न सिर्फ उनकी प्रतिष्ठा गिर जायेगी, खुलेआम उनका विरोध होगा, गालियाँ मिलेंगी। कदम-कदम पर पार्टी में, सरकार में टकराव होगा। नाकेबन्दी, विरोध, चक्रव्यूह रचना में रंगीनराय अभ्यस्त थे। उत्सुकदास से उनका पुराना झगड़ा कृष्णवल्लभ को लेकर शुरू हुआ था। धीरे-धीरे उस झगड़े में राजनैतिक सिद्धान्त तथा अन्य ढकोसले शामिल होते गये। वह असल में, उत्सुकदास को पूँजीपतियों का दलाल समझते।

कृष्णवल्लभ की हालत देखकर कालीशंकर कुछ दहल गया। दरवाजा बंद होने के बाद कुछ देर वहीं बरामदे में रुका रहा। फिर रंगीनराय की सलाह मानकर फौरन उत्सुकदास को इन हालातों की खबर देने चल दिया। उसे मालूम था कृष्णवल्लभ का शपथ समारोह में आना कितना आवश्यक था।

बड़ई दीक्षित, कालीशंकर के साथ ही मोटर में बैठ गया। रंगीनराय लोबीराम के कमरे की ओर चल दिये।

शाम के करीब पाँच बज रहे थे। उत्सुकदास अपने बंगले के ड्राइंग रूम में बीच वाले सोफे पर अधलेटे बैठे थे। काफी बड़ा कमरा विभिन्न प्रकार के नेताओं से भरा था। बाहर बरामदे में भी लोग-बाग खड़े थे, मुलाकात की प्रतीक्षा में। काफी कुछ लोग यूँ ही घटनाक्रम की सुराग में पिले थे। कई पत्रकार अन्दर, कई बाहर इधर-उधर भीड़ में घूम रहे थे। उस समय उत्सुकदास गुप्त स्वर में अपने सहयोगियों से मंत्रणा में मग्न थे।

इतने में कालीशंकर अन्दर आया। उत्सुकदास के कान में उसने सारी बात बतायी। उन्होंने मुस्कराकर कहा, "मेरे नाम से कृष्णवल्लभ को एक पत्र टाइप कर लाओ, वह उन्हें भिजवा दो, आ जायेंगे।"

कालीशंकर भागकर बगल के कमरे में गया, कुछ ही देर में पत्र टाइप कर लाया। उत्सुकदास ने उस पर हस्ताक्षर किये। कालीशंकर ने उसे [illegible]कर लिफाफे में रखा और बाहर निकल आया।

रोकते हुए उसने पूछा, "क्यों भला, हुआ क्या ?"

"लो अब इनसे पूछो, हुआ क्या ! होना क्या था भला, वही जैसे स्कूली लड़कों को एक्जामिनेशन फीवर, शहरों में डेन्यू फ़ीवर, गाँवों में पीला, काला फ़ीवर, उनको रहा मंत्रिमंडल फीवर 108 डिग्री !! कल तो अच्छे-भले थे। गयीरात तक उनकी हाज़िरी लगाकर गया था। क्या आलम था, उनका ! बस यही लगता है सबेरे के अखबारों ने उनका जायका बिगाड़ डाला। फिर भी चलते हैं तुम्हारे साथ, देखें आखिर होता क्या है !"

"हाँ...हाँ, चलो। अखबारों की खबर तो झूठी थी।"

जोड़-तोड़, निशानेबाजी में कृष्णबल्लभ तीन दिन, तीन रातों से सोये नहीं थे। मंत्रिमंडल के निर्माण की गतिविधियों के प्रथम दिन से कल तक उनको पूरा यकीन था, वह मंत्री बनेंगे। गँवई-गाँव के सैंकडों लोग आ-आकर बधाई दे गये। फोन, तार का सिलसिला लगा रहा। फिर कितनी सौगातें आयीं। दर्जनों प्रलोभन, आकांक्षी, उत्साहवर्धक चमचे बड़ी तादाद में बिखरे पड़े थे, महान अवसर की प्रतीक्षा में।

वैसे तो कल सबेरे ही अखबारों मे कृष्णबल्लभ का नाम आ गया था लेकिन शाम को डेलीन्यूज के विशेष संवाददाता सुमन्त और इंडियन न्यूज एजेन्सी के पत्रकार डैनियल ने उनसे दारू की दावत माँगी, तब कहीं जाकर उनको पूरा इतमिनान हुआ। इन लोगों ने कृष्णबल्लभ यादव को पका-पकाकर बता दिया, वह न सिर्फ कैबिनेट स्तर के मंत्री होंगे, उनको सिंचाई विभाग भी मिलने वाला था।

ला मार्टीनियर ग्राउण्ड के सन्नाटे में सुमन्त और डैनियल के साथ हुई दारू की दावत के बाद कल रात, कृष्णबल्लभ जब दारुलशफ़ा लौटे तो उनके पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। उनके मन के कोने-कोने में फुलझड़ियाँ फूटतीं और बड़े जोर से रगों में दौड़कर हर धड़कन में समा जातीं। सब कुछ होते हुए भी उनका मंत्री बन जाना इतना आसान नहीं था, इसीलिए आज इतने दिनों से वह भिड़े थे। अब सबेरे की अखबारी खबरें, फिर शाम दारू की दावत, ऊपर से सुमन्त और डैनियल जैसे चोटी के खबरनवीसों के कसमें उठा-उठाकर बोलने-बताने से वह पूरी

लेकिन घंटी तो बजी थी। कृष्णवल्लभ को लगा उनके जीवन, उनके शरीर, उनके दिमाग का सारा सिस्टम गड़बड़ चल रहा था। यह घंटी जरूर खतरे की घंटी···कहीं उनके दिमाग के अन्दर से ही बजती होगी। घंटी बजती रही···बजती रही। तब उन्होंने आँखें खोल दीं। उन्होंने सोचा, आँखें खोलकर देखने से शायद पता चले कहाँ से आ रही थी, यह घंटी की आवाज ! अपनी समस्त शक्ति, पाँचों इन्द्रियाँ एकसाथ जोड़कर, उन्होंने आवाज ढूँढ़ने में लगा दी। तब उन्हें पता लगा यह तो टेलीफोन की घंटी ही थी।

कृष्णवल्लभ उछलकर पलंग से कूदे। लम्बी छलाँगें लगाकर बाहरी कमरे में एक तिपाई के ऊपर रखे टेलीफोन के पास पहुँचे। तब तक घंटी बंद हो चुकी थी। वहीं टेलीफोन के पास ही जमीन पर वह पालथी मार-कर बैठ गये।

पिछले अठारह घंटों से जिस मानसिक पीड़ा की तपन में कृष्णवल्लभ जल रहे थे, एकाएक गायब होने लगी। उनके दिमाग में विचार आया, जैसे हालातों में कोई बहुत बड़ा परिवर्तन होने वाला था। उनके मस्तिष्क की सेल्स में, जो कल रात, बलराम के टेलीफोन के बाद, उलझ गयी थीं, एकाएक काम करना शुरू कर दिया। दोनों हाथ जोड़कर आँखें बंद करके वह ईश्वर से प्रार्थना करने लगे। एक बार, सिर्फ एक बार टेलीफोन आ जाये। उनके अचेतन मन में कोई लहर उठी, एक बार घंटी बजने से पिछले अठारह घंटों की व्यथा से मुक्त हो जायेंगे।

एक बार फिर उनकी सारी आशा टेलीफोन पर केन्द्रित हो गयी। टेलीफोन से उनके जीवन का महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध रहा था। विद्यार्थी जीवन से आज तक सभी शुभसूचनाएँ उनको टेलीफोन के जरिये मिलती आयीं। सामने आने से कृष्णवल्लभ की आधी शक्ति क्षीण हो जाती। रामायण के बालि की तरह लोग उनकी ताकत छीन लेते। टेलीफोन पर या सभा के मंच पर वह शेर बन जाते। उनके जीवन की परिचित आशा का केन्द्र था टेलीफोन !

उधर कालीशंकर को अधिकारियों से कृष्णवल्लभ का टेलीफोन ठीक होने की खबर मिली, तो उसने नम्बर मिलाया। पहली बार तो किसी ने उठाया नहीं लेकिन दुबारा नम्बर मिलाने पर जैसे ही घंटी बजी, झपटकर कृष्णवल्लभ ने रिसीवर उठा लिया।

तरह निश्चिन्त हो चुके थे। कहीं भी, किसी प्रकार की शंका उनके मन में तब बाकी न बची।

दारुलशफा, अपने कमरे में पहुँचकर कृष्णबल्लभ ने अपने खास सेवक जाटव को बुलाया। फिर उसे दस-दस के दो नोट देकर बोले, "जाटव! जरा जाकर चौधरी की मिठाई तो ले आ। मेरे लिए तो खाना ले आना और बाकी की मिठाई बाँट देना लोगों में जो आये हैं। लेकिन खाना, पहले जरा हमें खिलाय देना।"

जाटव, फूल-कुप्पा होकर बोला, "अरे का, बाबू सरकार मंत्री हुइ गये।"

"चल बेट्टा!" कहकर यादवजी हँसने लगे···हँसते ही गये। एक धौल जमायी जाटव को। फिर खीसें निपोरे, आँखें चढाकर बोले, "क्या समझता है रे, तू अपने बाबू सरकार को?"

जाटव ने लपककर यादवजी के चरण पकड़ लिये और लगा दहाड़ मारकर रोने। यादवजी उस समय बड़े अच्छे मूड में थे। उन्होंने जाटव को उठाकर खड़ा किया, आँखों से आँसू पोंछे, फिर दिलासा की वाणी में बोले, "अरे जाटव, क्या बात है, बोल ना!"

"हजूर! आप मंत्री हुइ रहे हैं ना! मंत्री तो भगवान होते हैं!! जौन चाहें करि दें। तौन हमरे सात साल बियाह कैन भये और एक औलाद न भयी। बाबू सरकार हम हाथ जोडकर आपसे विनती करित हैं आप मंत्री हुइ कै सबसे पहले हमार मेहरिया का औलाद दिऊ।"

कृष्णबल्लभ कुछ समझे, कुछ न समझे लेकिन जाटव के सर पर आश्वासनपूर्वक हाथ रखकर बोले, "जा रे! तेरा काम हो जायेगा।"

जाटव एक बार पुनः चरणस्पर्श करके भागा कामन हाल में खबर प्रसारण करने।

अपने कमरे में यादवजी ने घुसकर सारे कपड़े उतार डाले। दीवाल से शीशा उतारकर मेज पर रख दिया। डगमगाते कदमों से बार-बार कमरे में एक ओर से छलाँग लगाते और कहते, 'वो मारा'। साथ ही शीशे में मुग्ध भाव से अपने को निहार लेते। उनकी आकांक्षाओं का स्वर्ग अब उनके सामने था एक छलाँग की दूरी पर! इतने में दरवाजे पर धड़ाम-धड़ाम थापें पड़ने लगी।

"बाबू सरकार, खोलिये, जल्दी खोलिये, बाबू सरकार।"

करने को कहकर फोन उत्सुकदास के सामने रख दिया।

"अरे कृष्णवल्लभ कहाँ रहते हो? पता ही नहीं लगता! कार्यक्रम तो कालीशंकर ने बता दिया होगा। उसके पहले तुम यहाँ मुझसे मिलो। कामयाब सेठ का ताँबे वाला सौदा तुम्हें याद है उसकी फाइल कहाँ है? फसाद मचा दिया है सालों ने! अच्छा, फोन काट रहा हूँ, बाहर लगता है अध्यक्ष आ गये हैं।"

कृष्णवल्लभ भी फोन रखकर बाथरूम की ओर भागे। जल्दी-जल्दी दाढ़ी बनायी, स्नान किया, तौलिया से पोंछ-पोंछकर बुर्राक चद्दर व धोती-कुर्ता पहनकर बाहर निकलने से पहले बैठक के कमरे में पंखे के नीचे पसीना सुखाने को खड़े हुए और उन्होंने कमरे का दरवाजा खोल दिया।

दो

जिस समय कालीशंकर की गाड़ी दारुलशफ़ा 'ए' ब्लाक के सामने आकर रुकी उससे कुछ ही देर पहले दुर्लभकाछी 'बी' ब्लाक के सामने जीप से उतर रहा था। उसने अपने सर पर बाँधे साफे का एक हिस्सा खोलकर मुँह के ऊपर बाँध लिया। छह फुट लम्बा, बड़ी-बड़ी मूँछ-दाढ़ी से भरे चेहरे के ऊपर लाल-लाल आँखें दहक रही थीं। लम्बा, घुटने तक का कुर्ता, हल्के किनारे वाली खादी की धोती, कीचड़-धूल में सनी हुई चमड़े की सैंडिल, पसीने से तर-बतर, घबड़ाया हुआ, इधर-उधर देखते हुए वह पहली मंजिल पर यशोदावल्लभ के फ्लैट की ओर चल दिया। चार बजे का समय, धूप तो कुछ कम हो चली थी मगर लू के झोंकों-झपेटों से उड़ती गर्द के गोल दायरे दारुलशफा की इमारत से टकराकर उसी प्रकार कोलाहल मचा रहे थे, जैसा उस समय दुर्लभकाछी के मन में उठा था। 'बी' ब्लाक की लिफ्ट की तरफ न जाकर वह सीढ़ियों से ही ऊपर की ओर बढ़ा।

दारुलशफा के 'बी' ब्लाक की सीढ़ियों के ऊपरी हिस्से से कमलासिंह उतरकर नीचे की ओर आ रहा था, जब उसकी आवाज सुनकर—

तौलिया लपेटकर यादवजी ने जों दरवाजा खोला तो सामने दारुल-शफ़ा दफ्तर का आदमी परशुराम खड़ा था।

"क्या बात है परशुराम! निपटने-नहाने जा रहा था।" यादवजी की हँसी रोके नहीं रुक रही थी।

"बाबू सरकार! दिल्ली से बलरामबल्लभ का फोन आया है। कहते हैं दौड़ो, बुलाओ!"

रात के दस बज गये थे। कृष्णबल्लभ ने खद्दर की सफेद तहमत लपेटी, ऊपर से कुर्ता पहना, पैरों में चप्पल डाली और चल दिये।···सोचने लगे न जाने बलराम को क्या सूझी, इस समय बधाई देने के लिए लगता है फोन किया। हमें तो पहले ही मालूम हो चुका था, बेकार परेशान किया।

इतने में बलिया के विधायक रामसिंह ने टोका, "यादवजी आप तो बन गये, और क्या-क्या हुआ?"

"नहीं भाई, जरा दिल्ली से फोन आया है, जल्दी में, अभी तो जरा चलें। लौट आयें तब बात हो। लगता है मुख्यमंत्री का फोन है।"

"फोन है! सो तो ठीक है लेकिन आपके कमरे वाला फोन क्या हुआ?"

"ऊ, ऊ ससुरा तो वही दिन सड़ गया जिस दिन से कैबिनेट बनना शुरू हुई।"

"जरूर रंगीनराय ने खराब करवाया होएगा। बड़ी पहचान है उनकी टेलीफोन एक्सचेंज में।" रामसिंह ने चुटकी ली।

और कोई वक्त होता तो बस यही कृष्णबल्लभ रुक जाते, बरंबराने लगते, रंगीनराय के नाम से भी उनके तनबदन में आग लग जाती। फिलहाल उनको जाना था इसलिए बस इतना बोले, "हाँ, तभी तो इत्ते दिन से खराब पड़ा है।"

गैलरी में इतनी बातें हो ही रही थीं, दो-चार विधायक अपने कमरों से निकल आये। उनके साथ दस-बारह लोग और जमा हो गये। सबने यादवजी को घेर-सा लिया। आपकी कृपा, आपकी कृपा—कहते-कहते, नमस्कार! तो अभी चलें, अभी चलें, कहते भी पाँच-एक मिनट का समय निकल गया! यादवजी जब तक दफ्तर पहुँचे, उनके पीछे एक-दो विधायक और दस-पाँच शोहदे लग लिये थे।

उधर दफ्तर में फोन पर तो बढ़ई दीक्षित धीमी आवाज में कुछ दस

से टूट रहा था। प्यास की तलब से सूखे हुए गले में रिस्ता घूंट निगलकर उस वक्त वह किसी भी तरह यशोदावल्लभ के कमरे में पहुँचने की फिराक में था। कमलासिंह के साथ की आवाजें और तेज हो गयीं। सीढ़ियाँ उतरने के साथ रुक-रुककर आपस में नोक-झोंक चल रही थी। उनमें से कोई आदमी जोर-जोर से चिल्ला रहा था। अपना नाम सुना उसने, फिर फूलदास का नाम सुना जिसके साथ ही उसके पेट में ठण्डी डरावनी मरोड़ उठकर एक क्षण जैसे सारी ताकत निकाल ले गयी। एकाएक घबड़ाकर उसने साफा खोल डाला। हाथ-मुँह पर बह रहे पसीने में सनी हुई गर्द को साफ करते हुए वह तेजी से नीचे उतरने वाला ही था, इतने में वे लोग सामने आ गये।

बजरबट्टू तो उसे देखते ही खामोश हो गया, जैसे साँप सूँघ गया हो। वह बढ़ई दीक्षित और रंगीनराय के साथ जरा-सा कतराकर नीचे उतर गया। तब कमलासिंह ने घबड़ाती आवाज में, आँखें निकालकर दुर्लभकाछी से कहा, "तुम्हें यहाँ अभी आना था? बाबू साहब की शपथ होने जाय रही है।"

दुर्लभकाछी तब परेशान, थकेहाल, बेहद ऊबा हुआ था। दाँत किट-किटाते हुए धीमी लेकिन सख्त आवाज में बोला, "कोई शौकिया दावत माँ नाही आये रे! नीचे जीप मा जालिम भी हैय। तुम अभी-हाल यशोदा के कमरे में उसका लै आओ, फौरन!" और तेजी से दुर्लभकाछी ऊपर की ओर बढ़ चला।

उधर बढ़ई दीक्षित, रंगीनराय और बजरबट्टू बरामदे में रुके खड़े थे। कमलासिंह को अब पास आता देखकर बजरबट्टू की मूँछों के बाल खड़े होने लगे और उसकी आँखें गोल-गोल घूमने लगीं। हाथ ऊपर की ओर उठाकर, रंगीनराय को देखते हुए, एक क्षण को रुका फिर कमला-सिंह की ओर घूमकर वह बोला, "क्यों बेट्टा! बाबूसाब को शपथ दिलवा रहे थे, मंत्री बनेंगे, सैंय्याँ! नाचूंगी मैं रात-भर कोई इनसे पूछे, भला कितने दिन रहेगा मन्त्रिमंडल? उसके बाद···उत्सुकदास भीख माँगेंगे! तुम्हरे बाबूसाब जायेंगे जेल, चक्की पीसेंगे! जमा बैठा हुआ है अपना फूल-दास जिला शाहजहाँपुर मा!"

"क्यों बे बजरबट्टू! कभी तो कायदे से बात किया कर! इनके तू आज मंत्री होय रहे हैं, कमालसिंह भिजवाय देगा आगरे अस्पताल

तरह बात कर रहा था जैसे वही बैठे-बैठे कैबिनेट बना रहा हो। उसने यादवजी को देखा और मुस्कराकर आँख मार दी। यादवजी भी तकल्लुफ में हँस दिये। उन्होने समझा बढ़ई बलराम से ही बात करता होगा। आगे मेज के पास कुर्सी पर बैठकर उन्होने फोन माँगा। बढई दीक्षित का व्यक्तित्व रहस्यमय था। टेरीकाट की पैण्ट के साथ खद्दर सिल्क की बुश्शर्ट, हाथ मे गोल्ड चेन की घड़ी, पैरो मे छीटदार जयपुर का नागरा, बुश्शर्ट की जेब मे विदेशी बाल प्वाइन्ट पेन की शानदार टिप झलक रही थी। मुँह मे पान दबाये हुए माउथपीस पर अपना हाथ रखकर उसने पूछा, "क्या ? आप बात करेंगे !" फिर पता नही, फोन पर धीरे से क्या कहा, और रिसीवर उनकी ओर बढ़ा दिया। तब परशुराम ने हँसकर यादवजी से कहा, "सरकार, बलराम का फोन तो कट गया। आपने इती. देर जो लगा दी। यह साला बढई तो बिमला देवी से बात कर रहा था।"

बिमला देवी का नाम सुनकर यादवजी की बाछें खिल गयीं। मुख्य-मंत्री की हम-बिस्तर, राजदार, जो चाहे करवा दे। यादवजी पर भी उसकी कृपा थी। वह पिछली बार बम्बई से उसके लिए टेपरिकार्डर लाये थे। बड़े उत्साह से उन्होंने फोन ले लिया।

"हलू, बिमलाजी, क्या मामले हैं ?"

"वाह यादवजी, वाह, मैं अकेले यहाँ बोर हो रही हूँ, और आपका कुछ पता नही। अब यहाँ आएँ तो बातें हों।"

"हाँ···हाँ······क्यों नहीं।" कहकर यादवजी ने फोन रख दिया फिर नजर उठाकर बोले, "ऐ परशुरामजी। यू० पी० निवास मिलाइयेगा।"

"अवश्य जी," कहते हुए परशुराम ने फोन अपनी तरफ खीच लिया।

तब यादवजी ने अपने पास ही खड़े बढई की ओर मुखातिब होकर कहा, "आओ बढई, क्या खबर है, कुछ सुनाओ !"

'ए' दारुलशफ़ा ब्लाक के आफिसनुमा कमरे में चार कुर्सियाँ पड़ी थी। करीब दस फुट का कमरा लम्बा-सा, चौड़ाई कुछ कम, फिर लगी हुई एक कोठरी थी। कमरे की छत ऊँची होने के कारण लगता था रास्ता काटकर कमरा बनाया होगा। पश्चिमी किनारे पर दरवाज़ानुमा खिड़की थी। खिड़की के पास कुछ जगह छोड़कर परशुराम छोटी-सी मेज के ऊपर पैर फैलाये बैठे थे। उसी खिड़की से लगी हुई अन्दर की

मुस्कुराहट से रंगीनराय ने उसकी ओर देखा। तब तक उसके मुँह 'फिचकुर निकलने लगा था। और फिर बढई दीक्षित को लेकर वे सोबी राम के कमरे की ओर चल दिये। उधर कमलासिंह जालिम खाँ को बाहर खड़ी जीप मे देखने चल दिया।

जालिमखाँ अभी जीप की पिछली सीट पर बड़े आराम से पैर फैलाये बैठा था। उसे अपने पहचाने जाने का तो डर था नहीं। फूलदास का कत्ल करने के बाद ही, उसने अपनी दाढ़ा-मूँछ मुड़वा दी थी। कुछ अजीब-सा आदमी जिसे देखते ही दया आने लगे, कौन कह सकता इतना बड़ा डकैत-खनी होगा। खाकी पैण्ट की जेब से उसने सिगरेट की डिबिया निकाली। फिर एक सिगरेट निकालकर जलाने के लिए जब माचिस ढूँढने लगा उसे याद आया, माचिस की तीलियाँ तो रास्ते में ही खत्म हो गयी थं गर्मी-लू, रास्ते की थकान, ऊपर से टूटी-फूटी सड़कों पर हिचकोले खा जीप ने उसके शरीर के अंजर-पंजर झकोरकर रख दिये थे। चला तो थ वह सवेरे ही लेकिन रास्ते मे जीप खराब हो जाने से देर हो गयी। माचिस न मिलने के कारण झुँझलाकर वह जीप से उतरा तो उसे सामने गेट के पास, मैदान की सिंचाई के लिए, बड़े मुँह वाला नल दिखायी दिया जिसकी तरफ, दाहिने पैर से, लँगड़ाता हुआ, वह पहले पानी पीने के लिए चल दिया।

जालिमखाँ का फूलदास से कोई झगडा नहीं था। झगड़ा तो दुर्लभकाछी का था। लेकिन दुर्लभकाछी का झगडा आज उसका झगड़ा था। हाँ, शुरू-शुरू मे दोनों की दोस्ती लूटमार और डकैती के सिलसिले में इलाकों के बँटवारे से पैदा हुई थी। तब तो दुर्लभकाछी, जालिमखाँ के गिरोह तक अलग-अलग थे। जाहिरी तौर पर दोनो गिरोह एक-दूसरे से लड़ते तो नहीं, फिर भी कभी-कभार इनके आदमियो मे छोटी-मोटी मुठभेड़ की वारदातें हुआ करती। वैसे तब जालिमखाँ को परोक्ष रूप से, कृष्णबल्लभ का संरक्षण, गिरोही के जरिए मिला हुआ था। ये गिरोही कृष्णबल्लभ की कृपा से कई एक बन्दूक, कारतूस वगैरा ले जा चुके थे।

उन दिनों, जालिमखाँ काफी मुश्किल मे था जब उसके गिरोही ने यशोदाबल्लभ से मीटिंग करवा दी। यशोदाबल्लभ ने जरा दूर की कौड़ी

तरफ की दीवार पर बाहरी लोगों के लिए फोन रखा था। खिड़की के बाहर काफी चौड़ी गैलरी सीधी जाती हुई, दाहिने-बायें मुड़ जाती। चलते समय दूर से देखने पर लगता जैसे ये गैलरी चलती हो, दीवारें रुककर तमाशा देख रही हों। दफ्तर वाली प्रवेश गैलरी में घुसते ही तीन बड़े बोर्ड दिखते जिनके ऊपर कमरों के नम्बर लिखे थे। प्रत्येक नम्बर के नीचे चौकोर कागज के टुकड़ों पर विधायक का नाम लिखकर क्लिप में फँसाया हुआ था।

काफी देर बाद यू० पी० निवास का नम्बर मिला। वहाँ से बलिया जिले के बहादुर सक्सेना ने परशुराम को बताया, बलराम अपने कमरे मे था नही, ना ही उसने वहाँ से लखनऊ फोन किया था। परशुराम ने उससे यादवजी की बात भी करा दी। फोन रखने के बाद यादवजी ने बढई से वही रुकने के लिए कहा जिससे बलराम का दुबारा फोन आये तो उन्हें कमरे से बुला ले। तब तक वे नहा लें, खाना-पीना कर लें।

बढ़ई दीक्षित वास्तव मे न बढ़ई थे और ना ही दीक्षित! वह था मनोहर-लाल घूसिया। प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष रामेश्वर दीक्षित के जमाने में उनके सेक्रेटरी की हैसियत से उन्होने करीब पाँच वर्ष काम किया था। यूँ तो काम कोई विशेष जब रामेश्वर दीक्षित के पास ही नही था तो उनके प्राइवेट सेक्रेटरी के पास कैसे होता? बहरहाल इन पाँच वर्षों के दौरान घूसिया उन तमाम उद्योगपतियों, व्यापारियों, बड़े अफसरों, छोटे-बड़े नेताओं, किस्म-किस्म की महिलाओं, उनके दलालो से, जो दीक्षितजी के यहाँ पार्टी के लिए रुपया-पैसा देने और काम कराने आते-जाते रहते थे, अपनी घनिष्ठता बढ़ाते रहे। ऐसे लोग जो पैसा देते, उसका आधा हिस्सा चेक, आधे का नगदी में भुगतान करते। नगद दिये गये रुपयें का भला हिसाब क्या था। दीक्षितजी असल मे घूसिया के पिता बिहारीलाल घूसिया के अनन्य मित्र थे जिसके कारण उनके ऊपर काफी भरोसा करते। शुरुआत में घूसियाजी ने बड़ी ईमानदारी से काम किया। अपने कई सहयोगियों की चोरियाँ पकड़ी, अनेक लोगों को वादा खिलाफी, पैसा-रुपया कम देने के लिए, चेक देकर, नगद रुपये की बात टाल जाने के लिए दीक्षितजी से फटकार सुनवाई। सुबह आठ बजे से रात ग्यारह बजे तक वह काम में लगे रहते। जब तक दीक्षितजी कई बार कहते नही, अपने खर्चे के लिए वह कुछ भी न लेते। जो भी दफ्तर के खर्चे के बिल आते, उनमें

कार्यवाही करते नहीं थे। इसके अलावा फर्जी लाइसेन्सों के आधार पर अच्छे-से-अच्छे हथियार इनके पास पहुँच जाते।

दुर्लभकाछी को जालिमखाँ की ही तरह लूट के माल को निकालने में बड़ी परेशानी होती थी। कई बार पैसे अच्छे नहीं मिलते। माल इधर-उधर करने में महीनों लग जाया करते। उधर यशोदाबल्लभ, कमलासिंह की दूर-दूर तक पहुँच थी जिसकी वजह से सब आसान हो जाता। तभी तो दुर्लभकाछी, जालिमखाँ ज्यादा-से-ज्यादा रुपया, सोना, जेवर यशोद बल्लभ के पास जमा करवा जाते। बन्दूक, रिवाल्वर, बल्लम-कान्ता कारतूस, हथगोले, लाठियाँ, आँसू गैस की गोलियाँ, लाइसेन्स बनवाने के खर्चे और अपने राजनैतिक जीवन को चलाते रहने की कीमत काटकर बाकी पैसा इनके आदमी को दे दिया जाता। तब यशोदाबल्लभ के जरिए, कमलासिंह की तरकीबों से, दुर्लभकाछी, जालिमखाँ का गिरोह पनपने लगा। पूरे इलाके में उन्हें रोकने-टोकने वाला कोई न था। हाकिमों-अफसरों की तरफ से उन्हें पूरी छूट मिली हुई थी।

इनके गिरोह के कारनामों के बारे में धीरे-धीरे अखबारों में भी खबरें छपने लगी थीं। कई किस्से इतने भयानक, घिनौने थे, जिनकी चर्चा दिल्ली में भी लगातार हो रही थी। तभी पुलिस के बड़े अफसरों ने फूलदास इन डकैती और तस्करी गिरोहबाजों को पकड़ने के लिए भेजा।

फूलदास असल में इस इलाके में पहले भी रह चुका था। इन लोगों से उसकी पुरानी दुश्मनी थी। पिछली बार उसने दुर्लभकाछी को तीन दिन थाने में बन्द रखा था। तब यशोदाबल्लभ ने रातों-रात उसका तबादला करवा दिया। इस बार दुर्लभकाछी और जालिमखाँ के आपस में मिल जाने से फूलदास को काफी कठिनाइयाँ भुगतनी पड़ी थीं। वह ईमानदारी, बहादुर पुलिस अफसर होने के साथ प्रदेश के बड़े नेता गुरुपदस्वामी का सम्बन्धी था।

गेट के पास मैदान में लगे नल से जालिमखाँ ने पानी पिया, हाथ-मुँह धोया, अपने कपड़ों पर लगी धूल झाड़ी। फिर तेज धूप की तपन में वहाँ उससे रुका न गया। लँगड़ाता हुआ, लगभग दौड़कर, दारुलशफ़ा के गेट से लगी हुई पान-सिगरेट की गुमटी पर पहुँच गया। वहाँ से माचिस के साथ डिब्बी पनामा लेकर वह चलने वाला ही था, उसने देखा नीले रंग की कार से यशोदाबल्लभ उतरकर कार का दरवाजा बन्द कर रहा था।

मील दूर जाकर मुवक्किलों से वीराने जंगल मे जाकर मिलना पड़ता। रुपये-पैसे की वसूली भी उसे ही करनी पड़ती।

यशोदावल्लभ को वह हमेशा खुश रखता। खूब ऐश कराता। उसे तरह-तरह की चीजें लाकर देता। वकील साहब ने दुर्लभकाछी के लिए एक दुनाली बन्दूक का लाइसेन्स बनवा दिया था, जिसे वह हमेशा अपने कन्धों पर लटकाय रहता। काफी मेहनत-मशक्कत के बाद यशोदावल्लभ को भी उसने आखिर बन्दूक चलाना सिखा दिया। जिस दिन यशोदावल्लभ ने पहली चिड़िया मारी, दुर्लभकाछी उसे कालीबाड़ी ले गया। देवी के सामने माथा टेककर उसने सौगन्ध दिलवायी। दोनो जिगरी दोस्त बन गये। उसी दिन यशोदावल्लभ ने दुर्लभकाछी के साथ मिलकर पहाड़पुर गाँव मे पहली बार डाका डाला, फिर सारा माल लेकर, फटफटिया पर भाग आये। यशोदावल्लभ उस दिन बहुत खुश था। पाँच सौ नगद, एक चाँदी की थाली उसके हिस्से मे पड़ी लेकिन लौटकर उसने देखा घर के सामने बेतहाशा भीड़ थी, वकील साहब गुजर गये थे।

यशोदावल्लभ की माँ पहले ही मर चुकी थी, अब बाप चल बसे। बड़े भाई का सहारा था। क्रिया-कर्म के बाद कृष्णबल्लभ ने बापू की तिजोरी खोली। उसमें से निकले दस हजार रुपये, पचास तोले सोने के बिस्कुट, अफीम की एक पेटी, और कुछ चाँदी-सोने के जेवरात।

कृष्णबल्लभ उस समय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की यूनियन का चुनाव लड़ने जा रहे थे। सो, पाँच हजार रुपये उन्होने ले लिये। बाकी हिस्से मे बँट गया लेकिन सब सामान उसी तिजोरी मे बन्द करके राधिकारानी को दे दी गयी। बलरामवल्लभ एल० एल० बी० पास चुका था। तो उसने बाप की गद्दी सँभाली।

अपनी चुनाव-यात्रा पर जाने से पहले दोनों भाइयों को बैठाक ष्णबल्लभ ने समझाया। बलरामवल्लभ का मामला सीधा-साफ था। ससे तो सिर्फ इतना कहा, "भैया वकालत जिस तरह बापू करते थे तुम कर पाओगे। फिर भी कुछ-न-कुछ करना ही है तो वकालत क्या बुरी। की जमायी हुई है, फालिज गिरने से तमाम मुवक्किल बिखर गये थे, बटोर लो। दुर्लभकाछी है ही, सब ठीक हो जायेगा। बस इतना ध्यान ा, कोई बात खुले नहीं। बापू की लोग-बाग बड़ी इज्जत करते थे। तो देखो, इतनी दौलत छोड़कर मरे हैं। एक बात और करना। बापू

हर तरफ लोग उनकी जय-जयकार करेंगे। पलक उठाते ही दर्जनों सवाल लोगों के मन में जागने लगेंगे। होंठों की जरा-सी हरकत पर, हर तरफ उनकी बात सुन लेने की होड़ होगी। मंत्रीजी आइये! मंत्रीजी बैठिये!! यहाँ नहीं···मंत्रीजी यहाँ बैठिये···नहीं······यहीं वहाँ बैठिये। वाह मंत्रीजी······वाह······वाह मंत्रीजी! हर वक्त, सबेरे से देर रात तक सैकड़ों-हजारों लोग, अपना भाग्यविधाता समझकर पूजेंगे उनको। क्या माहौल होगा······चारों ओर बस सम्मान, सजावट, भक्ति होगी। लड़ाई तो खत्म हो गयी। अब तो ऐश होगी······ऐश!

हुकूमत के नशे में उतराते हुए अभी यादवजी भोजन कर रहे थे इतने में बढ़ई दीक्षित ने आकर बताया, "फिर बलराम का फोन आ गया।" वह फौरन हाथ-मुंह धोकर, दफ्तर की ओर चल दिये। उनकी चाल में आत्म-सम्मान का बोझ था। दफ्तर पहुँचकर यादवजी ने रिसीवर उठाते हुए देखा, परशुराम भी जा चुके थे। वहाँ अब कोई न था। बढ़ई तो उनका साथ छोड़कर बाहर से ही खिसक गया था।

"हलू बलराम! बोलो क्या बात है?"

"भाईसाब! बड़ी बुरी खबर है!"

"क्या हुआ?" यादवजी ने घबराते हुए पूछा।······सहसा उनके अन्दर डर समा गया। उन्हें बलराम की आवाज बड़ी रहस्यमय लगी। उस समय रात के करीब ग्यारह बज रहे होंगे। बाहर कुछ सन्नाटा हो चला था। सडी हुई गर्मी के कारण उनका जैसे दम घुट रहा था। पसीने में लथपथ उन्होंने आशा के लिए छत पर लगे पंखे की ओर देखा तो उनको पंखा उल्टा घूमता लगा। तभी बलराम की रोती हुई आवाज उनके कान में पड़ी। वह जल्दी-जल्दी बोल रहा था।

"भाई साब, क्या आपकी मुख्यमंत्रीजी से बात भयी? मैं करीब आठ बजे उनसे मिला था। वह बड़े दुखी थे। हाईकमाण्ड ने उनके सब आदमी काट दिये।"

"मेरा क्या हुआ?" यादवजी को अपनी साँस रुकती हुई लगी। जैसे प्राण निकल रहे हों।

"अरे भाई साब, अब आपका क्या, आपका भी नाम कट गया। आप मुख्यमंत्री से सबेरे मिल लें। यहाँ तीन दिन उनको रगड़ा गया फिर बिना लिस्ट के वापस लखनऊ भेज दिया गया। बोले हैं लिस्ट पार्टी अध्यक्ष

में मुल्तानपासी मारा गया। दुर्लभकाछी तब गिरोह का सरदार बन गया।

दुर्लभकाछी ने यशोदावल्लभ वाली जमीन पर अपने गिरोह के एक आदमी को बसा दिया जिससे चारों तरफ की खबरें मिलती रहें। किसके खेत में कितनी अफीम डाली गयी, कटाई, बिनाई का माल कहाँ गया। इधर माल चला, लूटने की तैयारी होने लगती या ऊपर अफीम का नज-राना वसूल किया जाता। उधर रास्ते में जाती हुई बैलगाड़ियों, घोड़ा गाड़ियों के काफिले रोककर अफीम लूट ली जाती। यशोदावल्लभ, दुर्लभ-काछी लूटी हुई और अपने बीस एकड़ जमीन से मिली अफीम की तस्करी अपने गिरोह से करवाते।

यशोदावल्लभ ने तब तक तस्करी का अच्छा-खासा गिरोह बना लिया था। और उधर ग्राम-पंचायतों से पहले कई एकड़ जमीन हथिया ली। फिर उसे फार्म की शक्ल देकर, कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए भूमि बंधक बैंकों से लम्बी रकम झटक ली। कृषि विभाग से ट्रैक्टर आये, सिंचाई विभाग ने ट्यूबवैल बनवाये। जोड़-तोड़, तिकड़म तथा विभागीय अधि-कारी के सहयोग से जीप-ट्रक व अन्य कृषि सम्बन्धी यंत्रों की प्राप्ति हो गयी। पास के गाँव से निकाली गयी नहर का रुख मोड़ दिया गया। ऊबड़-खाबड़ जमीन पर लगे जंगल साफ करने के लिए बुलडोजर-क्रेन इत्यादि से महीनों बिला-लागत काम होता रहा। जब जंगल साफ हो गया, ट्यूबवैल बन गये, मशीनें जमा हो गयीं तो यशोदावल्लभ ने काँटेदार तारों का जाल बिछवाकर काफी ऊँची चारदिवारी बनवायी जिसके बीच में किला-दार लोहे का फाटक लगवाया। उसी फाटक के ऊपर काले रंग के ऊपर सफेद रंग से लिखा हुआ, 'राष्ट्रीय निर्माण संघ' का बोर्ड लगा। निर्माण विभाग द्वारा सड़कें पहले बन ही चुकी थीं। इस सबके बाद यशोदावल्लभ ने, दुर्लभकाछी के कहने पर, उस फार्म में भी अफीम की खेती करवा दी।

इन्हीं दिनों यशोदावल्लभ जिला पार्टी का अध्यक्ष बना दिया गया। इधर बलरामवल्लभ की वकालत का सत्यानाश हो चुका था। वे दीवानी के वकील। मुकदमे आते फौजदारी के। उस इलाके में दीवानी के मुकदमे नहीं के बराबर होते। अफीम की खेती वाली जमीन के लिए किसानों में भला क्या खाक मुकदमेबाजी होती। उनके मामले आपस में तय हो ही जाते। फौजदारी के मुकदमों में आमदनी बेतहाशा थी। किसान ही ऐसे थे, जिनके पास हराम का पैसा था। गिरोह का एक

आलीशान बँगला, मोटा बैंक-बैलेन्स, समाज में प्रतिष्ठा होगी, अखबारों में जिरह छपेगी, सारे देश में नाम होगा ! सपने सुन्दर थे लेकिन उसका पेशा गन्दगी, मक्कारी, चालबाजी, धूर्तता से सराबोर था। उसमें आदर्शों और सपनों का क्या मूल्य ? सफलता की सीढ़ियाँ मिल तो जातीं, उन पर चढ़ना इतना आसान नहीं था। फिर उन सीढ़ियों पर चढ़कर कुछ हासिल कर पाना दूसरी बात थी।

जब पहली बार गाउन पहनकर कमलासिंह कचहरी गया, उसके पैर जमीन पर नहीं रुक रहे थे। अपने को न्याय के तराजू का धुरा समझकर फरिश्ते सी भोली भावनाओं की मधुर छाया में उसने वकालत शुरू की। समाज का अत्याचार, अनाचार से रक्षा करने का, प्रत्येक व्यक्ति को उसके अधिकार दिलाने का मासूम वादा कितना भी मोहक रहा हो, थोड़े ही दिनों में कमलासिंह समझ गया, वकालत में यह सब नहीं चलेगा। वकालत की सनद लेते समय जिन कर्तव्यों की शपथ उसने ली थी वे कूड़े के ढेर से उड़ती हुई बिन्दियों की तरह, कचहरी की धूल में दूर कहीं गुम्बद की ऊँचाइयों से टूटकर गिरती हुई दिखाई देने लगीं।

करीब दो वर्ष बाद एक दिन दफ्तर में कमलासिंह ने अपने सीनि मंगलसिंह से पूछा, "वकालत भी क्या पेशा है, झूठ-फरेब के बिना काम नहीं चलेगा !"

"झूठे-फरेबी तो हम सब हैं, सवाल है, कौन बड़ा चोर-फरेबी है जितना बड़ा फरेबी होगा, उतना बड़ा वकील !"

"कम-से-कम जाली मुकदमे तो न लें।" कमलासिंह ने कराहते हुए कहा।

"तो क्या भूखे मरें ? सही मुकदमों का अचार तो नहीं डाला जा सकता। हम तो हैं वकील, जैसा भी मुवक्किल हो, मुकदमा हो, हमें तो पैसा चाहिए। कहो तो जज को फाँसी चढ़वा दें। कचहरी-कानून, हराम-जादे पेशकारों, मुहर्रिरों को, सभी को आग में झोंक दें, भुनवा डालें। उस साले हरीराम को देखो, जात का अहीर है, दो हजार कमाता है।"

"हाँ, वो कैसे ? उसने तो इस कचहरी में आपके बाद कदम रख ा।" कमलासिंह ने उत्साह से पूछा। लेकिन मंगलसिंह के घूरकर देखने उसका कौतूहल कुछ नष्ट होने लगा। फिर भी भयमिश्रित दाका में, लसिंह की रहस्यमय मूँछों से लेकर भौंहों तक फैली हुई विचित्र मुस्कान

कृष्णवल्लभ को बात कुछ समझ में नहीं आ रही थी, आखिर उनका नाम कटा कैसे ? उन्हें मंत्री बनने का पूरा विश्वास था। उत्सुकदास थे उनके नेता। पिछले दस वर्षों से उनकी सेवा बजायी, हुक्म माना। सही-गलत सारे काम किये। हजार एकड़ वाले फार्म मे, जिसमें अफीम की खेती यशोदा करवाता, उत्सुकदास का हिस्सा था। बाजरा, चावल, चोकर की तस्करी से लाखों बनते जिसकी बदौलत उत्सुकदास जब-तब रुपया मांगा करते। उनकी रुपये की मांग और मौत का कोई ठिकाना नहीं था। पचास हजार, लाख-दो लाख तो मामूली बात थी। कृष्णवल्लभ कमरा बन्द किये विचारधारा में बहे जा रहे थे। मन व्यथित था। उनके जीवन में तूफान आया था। कल से वह कुछ न रहेंगे। अब न जाने क्या होगा। सुना था रंगीनराय प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष हो जायेंगे। तो वहां से भी अपना पत्ता साफ !

रह-रहकर उन्हें अपने गुनाह याद आने लगे। बन्द कमरे में उनके सुप्त दिमाग की मशीन तेजी से चलने लगी। उनकी शंका का समाधान पिछले कारनामों के विश्लेषण से ही हो सकता था। गडबड क्या हुआ, मंत्रिमंडल से नाम क्यों कटा ? रातभर सोचते-विचारते, रोते-जागते, कभी कमरे में टहलते, कभी बालकनी में जाकर खड़े हो जाते। टहलते-टहलते थक जाने से वह कुर्सी पर बैठ जाते या फिर पलग पर लेट जाते। बदहवास हालत में, टूटे, बेचैन कृष्णवल्लभ को याद आया, तस्करी में जो ट्रक फूलदास ने पकडी थी, उसमें अफीम के अतिरिक्त विद्युत परिषद् के गोदामों से उठाया तांबा भी था। फिर भी कृष्णवल्लभ के मन में आशा की कोई किरण अनायास जागी। क्या पता बलरामवल्लभ की खबर गलत हो ? उत्सुकदास ने स्वयं कहा था। वे भला क्यों कहेंगे ? ···जब रात को दो से ऊपर बज गये, कृष्णवल्लभ ने अपनी अलमारी से ग्रैन्डमुगल का अद्धा निकालकर चांदी के गिलास में उँडेला और फिर धीरे-धीरे पूरी पी गये। कुछ चैन आया, कुछ नहीं भी आया। व्याकुलता बनी रही। आशा-निराशा के बीच हिचकोले खाते, पता नहीं कब थोड़ी-सी नींद आ गयी।

सबेरे उठे, अपने नौकर से चाय-नाश्ता लगाने को कहकर बाथरूम में घुस गये। कुछ देर बाद नौकर ने चाय-नाश्ते के साथ सबेरे के ताजा अखबार रख दिये। चाय की चुस्कियां लेकर उन्होंने अखबार देखा। पहले पेज पर ही कल रात बलरामवल्लभ की बतायी खबर डबल कालम में

बात हो। थोड़े ही दिनों में जिला पार्टी में उसने अपना सिक्का जमा लिया। उसी समय यशोदावल्लभ का प्रादुर्भाव शाहजहाँपुर की राजनीति में हुआ। अपने भाई कृष्णवल्लभ के प्रभाव से यशोदावल्लभ जिला पार्टी का अध्यक्ष बन गया। यशोदावल्लभ था अँगूठा टेक। उसे कमलासिंह जैसे पढ़े-लिखे आदमी की आवश्यकता थी जो लिखा-पढ़ी, जिला अधिकारियों से बातचीत, व्योहार के साथ, तस्करी के मामलों में भी उसकी मदद कर सकें।

रात के बारह बज गये थे। लेकिन कमलासिंह को अभी तक नींद नहीं आयी। बाप से मिली तीन कमरों वाली खपरैल के बाहरी कमरे में उसके सामने कई प्रश्नचिह्न घूम रहे थे। वही कमरा सवेरे दफ्तर में बदल जाता। किनारे रखी मेज के साथ, काँच की अलमारी में, कानून की किताबें भरी थीं।

जाड़े के दिन, दिसम्बर का महीना, कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी··· लिहाफ के अन्दर लेटा हुआ, कमलासिंह सोच रहा था। पन्द्रह दिन बाद ·सकी बहन का लगन था। तीन हजार गिनकर देने होंगे। कहाँ से ·येंगे?···उसकी बूढ़ी माँ तीन महीने पहले, तीर्थयात्रा की साध लिये, ·ी दिन चल बसी जिस दिन अपने सीनियर मंगलसिंह के घरनुमा दफ्तर कमलासिंह को आत्मज्ञान हुआ था। जिस दिन से कमलासिंह ने किसी ·ानपासी का सपना देखना आरम्भ किया था, जिस दिन से कमलासिंह ·पनी वकालत की सनद की सारी शर्तें भुला दी थी, हाईकोर्ट की जजी, ·ीवाला, दफ्तरी, कन्हैयालाल बनने की अभिलाषा हमेशा के लिए ·दी थी। जीवन के महान उद्देश्य, आदर्शों के प्रतीक न्याय की तरह ·रफ झुके पड़े थे। अब उस न्याय के तराजू को उठाने के लिए उसे ·िंह की आवश्यकता नहीं थी, मुल्तानपासी की लाटरी चाहिए

·छले तीन वर्षों से वह बिलानागा रोज कचहरी गया। सुबह-शाम ·ों के दिनों में भी दिन-भर दफ्तर मे बैठकर मुवक्किल की प्रतीक्षा ·ा। कचहरी मे, तख्त पर मंगलसिंह के मुवक्किल के साथ बैठा ·ामने से निकलने वाले हर आदमी को हसरत भरी निगाहों से ·ही कोई मुवक्किल मिल जाये। कोई गवाह, कोई अर्जी, अदावत, ·गा, फसाद, सीरदारी-जमीन का मामला, कहीं से किसी का

हुआ है। मालूम है, ऊकीलसाब, पाठकजी खुद बहुत घबड़ाये थे। ब डरा रहे थे। हमारे तो पसीना छूटने लगा। यह सब आज होना था उन्होंने यहाँ जो आने को कहा तो मैंने, इन मूर्तियों के कारण मना क दिया।" यशोदाबल्लभ ने दुर्लभकाछी, जालिमखाँ की ओर देखकर मुँह बनाया, "मैंने कह दिया, खुद ही उधर आता हूँ।"

"कमाल है···अब यह क्या···तांबा तो बिजली बोर्ड ने उद्योग निगम को बेचा था।" कमलासिंह अपने वकीली दिमाग से तुरन्त बोला।

"हाँ, लेकिन जब कामयाब सेठ विद्युत परिषद के भंडार से माल उठवाकर ले जा रहा था, एक ट्रक फूलदास ने पकड़ ली। चुप्पे-चुप्पे मामला, केन्द्रीय गुप्तचर विभाग को पता नहीं कैसे भिजवा दिया। तभी दिल्ली में कामयाब सेठ के यहाँ रेड हुई और सारे कागजात जब्त कर लिये। राष्ट्रीय निर्माण संघ, बल्लभ इण्डस्ट्री, हरी एण्ड सन्स के एग्रीमेन्ट भी कामयाब सेठ के पास ही थे, पता नहीं उनका क्या हुआ?"

तांबाकांड की मुसीबत में अभी कमलासिंह की दिलचस्पी नहीं थी। उसे मालूम था, कुछ ही देर में कामयाब सेठ आने वाला है, तभी सब बात मालूम होनी थी। फिलहाल वह दुर्लभकाछी को घूर रहा था। हालात को तौलते हुए यशोदाबल्लभ की ओर मुखातिब होकर उसने पूछा, "अच्छा तो फूलदास की कोई रिपोर्ट आयी? पुलिस क्या कर रही है, किसी को पता है? कहीं इनकी गाड़ी का नम्बर तो नहीं नोट हो गया? ये लोग जिस जीप में आये, वह क्या राष्ट्रीय निर्माण संघ के नाम है?"

"हाँ।" धीरे से जालिमखाँ बोला।

"क्यों दुर्लभ! तुमको किसी ने देखा तो नहीं?"

"हम लोगों ने नम्बरप्लेट बदल दी थी। जीप तो उसके घर के साम ही जाकर रोकी थी, जिससे भागने में आसानी रहे। रात करीब दो बज गये थे तब काम खत्म करने के बाद जैसे ही हम भागे, वह ससुरा चौकीदार···वही फूलदास का चौकीदार न जाने कहाँ से उछलकर जीप के बोनट पर चढ़ गया। हमने फौरन उसे भी वहीं ढेर कर दिया। जिसकी वजह से सामने वाला सीसा थोड़ा-बहुत टूट गया। गोली उसमें छेद कर गयी थी।"

"क्या कहा? जीप के विण्डस्क्रीन में गोली का निशान? तुम पागल गये हो क्या? और वही जीप यहाँ लाये हो?"

कालीशंकर ने घंटी बजायी, कई बार बजाता रहा पर कोई जवाब नहीं मिला। तभी आगे बढ़कर रंगीनराय जोर-जोर से दरवाजा पीटने लगे। इस शोरगुल में अगल-बगल के दरवाजे खुल गये। विधायकों के साथ उनके चमचे भी निकलकर तमाशा देखने लगे। कुछ हर मौसम में, हर समय उपलब्ध रहने वाले डोलट्स पहले ही साथ लग चुके थे। दो-एक सामने से जाते-जाते रुक गये। एक अच्छी-खासी भीड़ जमा हो गयी। इस भीड़ मे कालीशंकर जरा कुछ पीछे रह गया। कई बार और घंटी बजाने, दरवाजा पीटने पर, अन्दर से चीखने-चिल्लाने की आवाज आयी। तभी क्रोध में भरे हुए कृष्णवल्लभ ने दरवाजा खोला।

उस समय साढ़े-चार का समय रहा होगा। दरवाजा खोलते ही कृष्णबल्लभ ने देखा रंगीनराय को और देखा बढ़ई दीक्षित के साथ आठ-दस आदमियों की भीड़ को। इनमें से कई लोग आपस में हँसी-मजाक कर रहे थे। कृष्णबल्लभ की उस समय अजीबो-गरीब हालत थी। उलझे हुए बाल, रोते-रोते सूजकर हुई लाल-लाल आँखें, बढ़ी हुई दाढ़ी। उनके बदन पर कोई कपड़ा नहीं था। सिर्फ एक जाँघिया पहने थे। लगभग रोते हुए वह कुछ बोले, लेकिन शब्द होंठों पर ही आकर रुक गये। तभी बढ़ई दीक्षित ने आगे बढ़कर कहा, "बाबू साहेब पता है! आप मंत्री बन रहे हैं! क्या हालत बना रखी है आपने, आपकी तबीयत···।"

बढ़ई दीक्षित का इतना कहना ही था, कृष्णबल्लभ की आँखों से लपटें उठने लगीं। नाक के नथुने आवेश-क्रोध में थरथराने लगे। बढ़ई दीक्षित की बात में कुछ व्यंग्य अवश्य था लेकिन वह उनके उस समय के हुलिये के ऊपर था।

कालीशंकर तो पीछे रह गया था। सामने दिखे रंगीनराय। उनके कट्टर दुश्मन! कृष्णबल्लभ के तनबदन में आग लग गयी। जरूर इसी ससुरे की बदमाशी होगी। अब आया है तमाशा देखने। साथ में इतने लोगों को लाया है। मेरी हालत···तभी कृष्णबल्लभ को अपनी हालत याद आयी। क्रोध की तेज लहर उठी, घृणा से होंठ सिकोड़कर उन्होंने कोई भद्दी गाली दी। रंगीनराय कुछ कहने ही जा रहे थे तभी कृष्णबल्लभ ने लगभग चीखते हुए कहा, "ऐ बढ़ई! तू चला जा यहाँ से! नहीं तो जूतों से मारते-मारते बेदम कर दूँगा!··· हजरतगंज तक दौड़ाऊँगा!" घूमकर उन्होंने रंगीनराय की ओर देखा, "और कह दे इस कमीने से चला जाय

"हाँ भई, हमें खिलाने-पिलानेवाले तो हैं नहीं। खुद लाया हूँ। प्लेट पकौड़ी, दो ग्रण्डे और दालमोट!"

"अरे वाह राघव इतना सब ले आये। फिर खिलाने-पिलाने वालों ना होने का गम भला क्या करना?"

"गम तो है ही यार! बस जलन होती है ससुरे पार्टी नेताओं के ऐश देखकर!"

"ओह, तो आपको उत्सुकदास का वैभव खलता है।"

"वैभव क्या, सब फ्राड है गुरु!"

"लेकिन बस यही फ्राड अब चलता है।"

"चलता नहीं दौड़ता है। एक झटके में सत्ता हथिया ली ससुरे ने!"

"तो अब देखना कैसा समाजवाद आयेगा? क्या लम्बी लपेट होगी?"

"सो तो है यार! आओ, चाय लेलें।"

राघव ने वहीं से दो प्यालियाँ निकालकर उनमें चाय उड़ेली और ए अंडा मुँह में ठूँस लिया। फिर पकौड़ी के साथ चाय की चुस्कियाँ लेने लगा उधर मंजूर ने भी एक ही झटके में नाश्ता साफ कर दिया और तब बोला :

"राघू! चाय क्या गूँगी रहेगी?"

"वाह! वाह···वाह मंजूर भाई! क्या आइडिया है! लेकिन यह काम तो आप करो।"

"मेरे साथ एक मजबूरी है।"

"वह क्या?"

"मजबूरी बड़ी छोटी-सी है, कुछ बुर्जुवा किस्म की!"

"बोलो भी। बुर्जुवा तो तुम हो!"

"मेरे पास लोबीराम है।"

"और मेरे पास उत्सुकदास।"

"क्या कहा, चारमीनार रही।"

"हाँ···हाँ।" राघव ही···ही कर हँसने लगा।

"तो तुम उत्सुकदास ले लो, मैं लोबीराम पीता हूँ।"

"लोबीराम का धुआँ तुम्हारे सिर को दिनो दिन घुनता जाय रहा।"

"और तुम!"

शख्सियत भुला देने-सी बात से मंजूर कुछ परेशान-सा हो लिया। उसे लगा, उससे कुछ छुपाया जा रहा है। लेकिन फिर भी सीधे सवाल से राघव शायद टाल जाए, इसीलिए मंजूर जरा नजर मिल जाने का मौका ताड़ रहा था। लेकिन राघव तो सचमुच उसकी वहाँ पर मौजूदगी के अहसास के बिना तीसरी बार बाहर बरामदे पर निकल आया और दूर-दूर तक कुछ चाहा हुआ न दिख पाने से फिर अन्दर आकर टहलने लगा। अब मंजूर से रुका न गया तो उसने कहा, "अरे राघू, चल जरा बाहर चक्कर लगा लें।"

एकदम मंजूर के शब्द जैसे बड़ी दूर से कहे हुए उसे लगे। कुछ और आगे जाकर वह रुक गया और पीछे की ओर घूमकर उसने मंजूर की ओर देखा, जैसे वह खुद सवाल कर रहा था, कुछ पूछ रहा था। बस एक पल को जैसे उसकी नजर मिली या न मिली और फिर जरा ऊपर उठकर दीवार से लगी हुई खिड़की से बाहर की ओर देखने लगी। कितना जादू था इन निगाहों में। मंजूर ने सोचा। काश! ये सब कोई पढ़ पाता, समझ पाता। बहरहाल, यह सब देखकर मंजूर ने उसको फिर कुछ देर तक छेड़ा नहीं।

राघव कुछ भी नहीं था फिर भी बस अकेला ही जैसे सब कुछ कर लेना चाहता। उसे न तो किसी सहारे की जरूरत थी, ना ही किसी से वह अपने अन्दर की बात कहता ही। लेकिन ऐसा भी नहीं था कि उसे मंजूर से कुछ खास छिपाना था। फिलहाल उसके अन्दर एक खास किस्म की कोशिश छिड़ी हुई थी। यह कोशिश न अपने खिलाफ थी ना ही दूसरों के खिलाफ। यह तो भागते हुए वक्त को पकड़ लेने-सी कोशिश थी जिसमें वह जूझा हुआ कुछ कर गुजरने को जुटा था।

जब चौथी बार राघव बाहर निकलकर आया तो मंजूर से रहा नहीं गया। वह भी पीछे से आकर वहीं दरवाजे से लगकर खड़ा हो गया। दूर-दूर तक बरामदों और सामने मैदान पर की भीड़ में कुछ खोज न पाने के बाद राघव वापस कमरे में मुड़ चलने के लिए घूमा तो मंजूर से उसकी नजर जा मिली। मंजूर उस समय प्रतिक्रियाविहीन-सा खड़ा था। जान-बूझकर उसने अपनी प्रतिक्रियाओं को अपने अन्दर ही दबा रखा था जिससे राघव उसे कहीं गलत न समझ बैठे। अब तक उसने राघव के अन्दर चल रही कोशिश को जरा कुछ तौल लिया था। एक बार उसने फिर कुछ देर पहले कही बात को ही दुहराया, "चलो न, जरा बाहर हो आयें!"

खजांची से खजाना खुफिया तहखाने में छिपाने के लिए कहा। जब सारा महल शोक मना रहा था, महाराज की अन्तिम क्रिया की तैयारी हो रही थी, खजाची ने मोहरों, अशर्फियों से भरे दो-तीन बोरे पार कर दिये।

इसके पहले भी खजाची के यहाँ किसी चीज की कमी न थी। दूध-घी की नदियाँ बहा करतीं। उनकी हवेली में अन्नपूर्णा का भंडार था। दर्जनों पड़े रहते। बसर-बसेरा डालने वालो की क्या कमी होती। खजांची बड़े शान-बाट वाले थे।

अपने लड़के को पढ़ा-लिखाकर बैरिस्टर बनाने की उनकी इच्छा बहुत पहले से थी, जो समय के साथ बढती ही जा रही थी। उनका सारा ध्यान लडके की पढाई पर लगा रहता।

उधर उत्सुकदास ने धीरे-धीरे वकालत की डिग्री हासिल कर ली। उन्होंने वकालत शुरू की, तो चली नहीं। कुछ दोस्तो की संगत में, कुछ इस सलाह में कि जेल जाने से वकालत चल जायेगी, वह स्वतंत्रता-आन्दोलन में भर्ती हो गये। पर जुलूस मे जाने से पहले पता कर लेते, लाठियाँ-गोलियाँ चलेंगी या नहीं। पुलिस में उनके गाँव के एक-दो आदमी थे, जो उन्हे खबर कर दिया करते। लाठियों-गोलियों से उनको बडा डर लगता।

जेल से बाहर रहने में भी तकलीफें कम न थी। पर्चे छापो, पोस्टर लगाओ—दाम अपने खीसे से दो, मीटिंग के लिए दरियाँ बिछाओ, स्टेज बनाओ, अखबारों के दफ्तर के चक्कर लगाओ। सबसे खतरनाक काम था जुलूस निकालना जिसमें लाठियाँ चलती, गोलियों के घेरे के बीच, अपनी जान हथेली पर लेकर जूझना पडता। इन सब मुसीबतो से बचने के लिये, मौका निकालकर उत्सुकदास जेल में घुस जाते—सीधे तरीके से दफा १४४ तोड़कर। फिर जेल मे कोई खास तकलीफ उनको लगी नहीं। कुछ चकल्लस ही रहती। फूलमालाओं, जिन्दाबाद के नारों से स्वागत किया जाता। जेल जाने से पहले आरती-तिलक लगाया जाता। अखबारो मे नाम छपता, फोटो छपती।

वहाँ खजांची अपने बेटे की नालायकी पर बेहद दुखी थे। हमेशा उन्होंने उत्सुकदास को हृदय के टुकड़े की तरह पाला। इकलौते बेटे की एक-एक इच्छा पूरी करने में उन्होंने कभी दौलत का मुँह नहीं देखा। उसी बेटे ने उनकी आशाओं पर पानी फेर दिया था, उनके सपनों को तोड़ डाला था।

किसी और का इन्तजार था ?"

"क्यों नहीं, तुम्हारा साला क्या पता ?"

"पता कोई करे तब न ?"

"किसको पड़ी है ! तुम चिड़िया हो क्या ?"

"हाँ या फिर चिड़िया कोई साथ हो तब...।"

"छोड़ो...छोड़ो," मंजूर को लगा खामखाह रीतू का जिकर आने वाला था। उसने बात घुमा दी, "क्या राजनीति चला रहे हो'?"

"अब तो राजनीति सिर्फ मंत्रिमंडल के विरोध की है।"

"धत ! पिद्दी, फिर पिद्दी के शोरबे !! तुम का खा कै उत्सुकदास का विरोध करोगे। उसमें तो बिजली की कड़क है रे !' वह तो बड़ा खिलाड़ी है !"

"क्यों कुछ पहुँचा दिया उसने ?" सी० पी० ने चुटकी ली।

"अरे ! सर पै कफन बाँधकर जो निकले हैं उन्हें कौन का लाल खरीदेगा।" अब तक राघू से रुका न गया तो वह बोल ही दिया।

"राघू, तुम राघू इस लोफर की तरफदारी में ?"

"क्यों, बात जरा कड़वी थी। बस यह कहना राघू भूल गया, किरा के जुलूस कब तक निकालोगे !" मंजूर ने कहा।

"हाँ मंजूर भई, इससे तो इत्तफाक कर लें। जुलूस दिनोदिन महँगे होते जा रहे हैं।"

"क्या रेट चलता है ?"

"मुझे अभी का तो नहीं पता। हाँ पहले..."

"ढाई रुपया लगता था। और अब तेरे को अभी का पता चल जायेगा।"

"वह कैसे ?"

"क्यों, आज का जुलूस नहीं निकलेगा ?"

"निकलेगा।"

"फिर क्या किराया नहीं देना ?"

"नहीं तो।"

"क्या कहा, किराया नहीं देना।" राघव कूदकर आगे आ गया, "सुना मंजूर भई, यह सी० पी० क्या कहता है।"

"हाँ सुना, कहते हैं मुर्गी के किराया नहीं देना !" मंजूर ने चिढ़ाया।

"हमने एक गधे को तैयार कर रखा है !"

"गधे को ?"

"हाँ, वह गधा सज-सँवरकर बनेगा उत्सुकदास !"

"उत्सुकदास गधा नहीं है ! गधे हो तुम ! गधे हैं पार्टी के तमाम लोग जिनके ऊपर सवार होकर वह सत्ता छीन लेगा।"

सी० पी० एकदम से हड़बड़ा गया फिर सँभलकर बोला, "देखो··· देखो मंजूर भई अब बीच में झोल न डालो। यह सब तुम्हारी बातें होंगी। हमें तो अपना काम करने दो ! हमारा जुलूस जायेगा ! उसमें अपने कुछ स्टार्मट्रूपर्स भी होंगे जो राजभवन में घुसकर उत्सुकदास का ताज छीन लेंगे।"

"ताली · तालियाँ ! ···कोई है···चलो हम ही ताली बजायें।" कहकर मंजूर हाथों से तालियाँ बजाने लगा, "अरे सी० पी०, आज तुम मारे जाओगे। अरे राघव सुना तुमने।" मंजूर जवाब न पाकर जो घूमा तो उसने पाया राघव तो वहाँ था ही नहीं। तब हक्का-बक्का इधर-उधर चक्कर काटने के बाद उसने सी० पी० की ओर देखा, लेकिन उसे भी कुछ नहीं मालूम था, राघव कब खिसक गया था।

कुछ ही देर सी० पी० से और बात करने के बाद मंजूर अपने कमरे की ओर चल दिया जहाँ उसे राघव के मिल जाने की उम्मीद थी। पहले तो सी० पी० भी उसके पीछे लगने लगा था लेकिन राघव जरूर किसी खास मकसद में गहराई तक डूबा हुआ था। और ऐसे में सी० पी० का वहाँ जाना ठीक तो होगा नहीं, इसलिए वह सी० पी० को गेट के बाहर लालबाग चौराहे तक पहुँचा कर 'ए'-'बी' ब्लाक के बीच वाली सड़क का लम्बा चक्कर लगाकर अपने कमरे तक आया था।

इतनी देर में मंजूर ने राघव की अन्दरूनी हालत का काफी अन्दाज लगा लिया था। जिस बेचैनी से कमरे में वह बाहर जा-जाकर अन्दर आ रहा था और जिस तरह बाहर मैदान वाली सड़क पर टहलते हुए उसकी निगाहें कमरे के आस-पास ही मँडरा रही थीं, मंजूर को साफ-साफ कोई बड़ी चीज, कोई बड़ी खास बात हो जाने वाली-सी लगने लगी थी। कुछ ही दिनों पहले उसके बाप के समान बड़े भाई मुख्तार अहमद ने उससे राघव का जरा ख्याल रखने को कहा था। जरा और कुछ जो उसने जानना चाहा था तो मुख्तार अहमद ने डाँट दिया था जिससे भी तब उसे हैरत ही हुई थी।

साम्प्रदायिक दलों की साजिश उनको उलटने की थी। लेकिन प्रदेश पार्टी के नेता उनको बनाये रखना चाहते थे। फिर भी हालत खराब थी। आम चुनाव नजदीक आते-आते, इन दलों का दबाव बेहद बढ़ता जा रहा था। पार्टी के बड़े नेताओं को पूरा जिला हाथ से निकलता हुआ लगता। तब तक उत्सुकदास अपनी फुर्तीली राजनीति के लिए, पार्टी में नाम कमा चुके थे। इसीलिए उनको काशी विश्वविद्यालय के साथ जिले की पूरी राजनीति ठीक करने को भेजा गया।

उन दिनों, वहाँ प्रोफेसर ब्रजकिशोर की बड़ी लड़की प्रतिभा, कालीशंकर के साथ पार्टी का काम कर रही थी। वह बचपन से ही स्वभाव की जिद्दी, मनमौजी, लोगों मे घुल-मिल जाने वाली थी। पढने-लिखने में तेज होने से घर में कोई कुछ कहता नही था। सजने-सँवरने, घूमने-फिरने का उसको बड़ा शौक था। खुलता हुआ चंपई रंग, कँटीली चितवन, तीखे नाक-नक्श, छरहरे बदन मे उभरते-उतराते चढाव-कटाव बेहद नशीले थे। कालीशंकर के साथ के कारण विश्वविद्यालय की राजनीति में प्रणाली को दिलचस्पी तो थी ही जिसकी वजह से उसको यूनियन का लाइब्रेरियन बना दिया गया था।

कालीशंकर के माँ-बाप नही थे। उसके बाबा उत्सुकदास के खजांची बाप के यहाँ कारिन्दे हुआ करते थे। उत्सुकदास से कहकर उन्होंने कालीशंकर की पढ़ाई-लिखाई का इन्तजाम करवा दिया। गरीबी के आतंक से पीडित कालीशंकर को उत्सुकदास का सहारा, डूबते को तिनके का सहारा था। फिर उत्सुकदास तिनका नहीं, खम्भा बन गये। जैसे कालीशंकर के जीवन की बेल उसी खम्भे से लिपटकर रह गयी। मेहनत, लगन, ईमानदारी से कालीशंकर ने उत्सुकदास का मन जीत लिया। इधर जब से वह पढ़-लिखकर बड़ा हुआ, उत्सुकदास के व्यक्तिगत सहायक के रूप में काम करने लगा।

काशीयात्रा के दौरान उत्सुकदास वहाँ तीन दिन रहे। इसी बीच चकिया डाकबंगले में एक गुप्त मीटिंग बुलायी गयी जिसमें उन्हें पार्टी के विशेषी विद्यार्थी नेताओं को, राजनीति सम्बन्धी दिशा-निर्देश देना था। इस मीटिंग मे आये यूनियन के अध्यक्ष कृष्णवल्लभ यादव, कालीशंकर, प्रतिभा। नवम्बर का महीना था। कड़ाके की सर्दी, साथ में बरसात। तूफानी हवाओं के झोंके जैसे अटल भाग्यरेखा की तरह उस दिन

यह सवाल···बिलकुल सीधा सवाल राघव को अच्छा तो नहीं लगा लेकिन एक तो मंजूर भाई ने पूछा था फिर उसके कमरे में ये अनजाने लोग आये थे, इसलिए अपने को सँभालकर राघव ने कहा, "क्या है मेरे भाई! यह लोग कोई गैर नहीं अपने ही इंकलाबी हैं।" दो ये वे और एक राघव, तीन इंकलाबी अपने कमरे में, आज के दिन, जब उत्सुकदास का मंत्रि-मंडल बनने जा रहा था, पाकर मंजूर का माथा ठनका। बड़े भाई राघव के बारे में कही बातें उसके जहन में बैठी हुई थीं। ऊपर से गूँगी चाय क हिसाब कर लेने के बाद से अब तक की उसकी हरकतों ने उसके अन्द और दहशत-सी पैदा कर रखी थी। वैसे तो मंजूर खुद तरक्कीपसंद इंकलाबी था लेकिन इन दिनों बड़े भाई की बातों ने राघव के सिलसि में उसके अन्दर एक जिम्मेदारी-सी पैदा कर दी थी जिसकी वजह से व हर वक्त उसे पूरी तरह से अपनी निगरानी में रखना चाहता था। लेकिन राघव ऐसा ही रहा था आजकल, बस टुकड़ों में छुटपुट ही कभी कुछ कह देता, अन्दर की पूरी बात तो बताता नहीं था।

"अच्छा, तो अब क्या कार्यक्रम है।" कुछ और खोदकर जानने के लिए मंजूर ने कहा फिर अन्दर की तरफ बढ़ आया।

"अभी एक-आध घंटे तक तो कुछ भी नहीं।"

"एक-आध घंटे! इसका मतलब क्या हुआ?"

"मतलब···मतलब है आठ-एक बजे तक मुझे कहीं जाना नहीं है।"

"तो राघू ऐसा करें, जरा गुसल कर लें···बेहद गर्मी सता रही है।"

"ऊपर से साला लोबीराम जो चढ़ा होगा।"

हो··हो···हो···काफी देर तक छोटे बच्चों की तरह मंजूर ता जा-बजाकर हँसता रहा। फिर माहौल को और हल्का बनाने के लि उने कमरे के अन्दर एक-दो छलांगें भी लगा दी।

अब जरा हँसी का दौर कम हुआ तो नहा लेने के लिए मंजूर अन्दर के रे से अपनी तौलिया लेने गया। वहाँ एकाएक उसकी निगाह खटिया ास वाले किनारे पर सफेद चद्दर में बँधी हुई एक गठरी पर पड़ी। हुई चद्दर उसकी ही थी जिससे उसे लगा शायद धोबी अभी हाल धोकर रख गया होगा। गुसल के बाद ताजा धुले कपड़े पहन लेने भ उससे रोका न गया। कंधे पर तौलिया डालकर वह धीरे-धीरे

चार

दारुलशफ़ा की बेजान दीवारों से टकराकर ढलते सूरज की अन्तिम किरणें दूर-दूर तक फैले पेड़-पौधों की डालियों, शाखों, फूल-पत्तियों को छूकर विदा माँग रही थीं। धरती की तपन, जलते हुए हवा के झोंके, अनजाने भय में चीखकर इधर-उधर भागते पक्षियों का कलरव, आकाश में एक ओर सिंदूरी अवसान, दूसरी ओर से उगती जड़ता के प्रतिरूप में रात्रि का प्रवेश किसी खोज में, तलाश में, भटककर यहाँ आ गया। डालों को छूकर विदा माँगती अन्तिम किरणों को आज कौन देखेगा? आज यहाँ आग लगी थी, संघर्ष की ज्वाला से उठती भीषण तपन, किसी टकराव, किसी विस्फोट की प्रतीक्षा में जैसे दारुलशफ़ा के बरामदों के कोनों-कोनों में किनारों तक हर कमरे के अन्दर-बाहर छायी हुई थी। रंगीनराय अपने संघर्ष के अन्तिम चरण में थे। उत्सुकदास को मंत्री बनने में सिर्फ पाँच घण्टे बाकी थे। कृष्णवल्लभ को चिन्ता गुनाहों पर पर्दा डालने की थी, अफ़ीम की तस्करी, डकैती की कमाई, राष्ट्र निर्माता संघ के घपले, लोबाकांड, कामयाब सेठ से मिलने वाले पाँच लाख रुपयों के लिए उनका मंत्री बनना उतना ही जरूरी था जितना ब्रह्मा का सृष्टि रचना। कृष्णवल्लभ भी उत्सुकदास के साथ पाँच घण्टों में इन विपदाओं से ऊपर उठ जायेंगे। शक्ति का अमोघ अस्त्र उनके पास होगा फिर उन्हें कोई छू भी न सकेगा। यशोदावल्लभ, कमलासिंह, दुर्लभकाछी, जालिमखाँ, कामयाब सेठ सभी मंत्रिमंडल में छाते के नीचे होंगे। बौछार में उनको भीगना नहीं होगा।

लोबीराम उस समय उत्सुकदास और रंगीनराय के मध्य कुछ तोल रहे थे, कुछ माप रहे थे। शान्तिप्रणाली बजरबट्टू की तलाश में, प्रतिभा उत्सुकदास के लिए, बढ़ई दीक्षित अपनी घरवाली के लिए, सभी अपनी-अपनी सीमाओं में स्वार्थ-आकांक्षा, विपदाओं के घेरे में चक्कर लगा रहे थे। समय की अनन्त गति, जिसे शताब्दियाँ युग नहीं नाप सके, किन्तु ये सबके सब एक-एक पल के लिए समय के साथ दौड़ रहे थे, जैसे कहीं कुछ छूट न जाय। अपनी-अपनी भूख मिटाने के लिए यह सब हजम कर लेना चाहते थे, दारुलशफ़ा की फौलादी दीवारों को भी जिन्हें इतिहास बनाने

सामने बैठी थी। अकेला मौका, सर्दी में अकड़े हुए बदन की माँग, ऊपर से मोहक अदाएँ बार-बार उनके अन्दर सिहरन उठा रही थी। कमर से नीचे जाँघ तक रोएँ-रोएँ से मीठी-मीठी गुदगुदी उठ रही थी, फिर लगता मुँह से कलेजा निकलकर गिर पड़ेगा।

उत्सुकदास का दिमाग उस वक्त बड़ी तेजी से काम कर रहा था। उनके मन का कोना-कोना बस यही दुआ माँगता, कालीशंकर अभी कुछ देर और ना आये। जहाँ एक तरफ उनकी जुबान दुनिया-भर का ज्ञान और तमाम सरपट दौड़ते आँकड़े भरे किस्से सुनाने में लगी थी, उनके हाथ और पैरों ने हल्के-हल्के हरकतें करना शुरू कर दिया।

असल मे इतना लम्बा खींचकर उत्सुकदास ने हाथ डाला था। प्रतिभा कुछ बोली नहीं। उस समय उत्सुकदास की बातों का नशीला जहर पूरी तरह उसके ऊपर असर कर चुका था। विश्वविद्यालय के टटपुंजिए नेताओं की हमेशा की बातें उत्सुकदास के सामने अधकचरी ही लगी। क्या जादू था जो सिर पे उसके चढ़कर फुसफुसाने लगा। तभी जब उत्सुकदास का हाथ उसकी जाँघ की गोलाइयों को पकड़ में लेने लगा, उसने हया के मारे बस सिर झुका लिया था।

उत्सुकदास उन दिनों पार्टी कार्यकारिणी के सदस्य बन चुके थे। तब से कई बड़े नेताओं के पैर छूकर, हाथ जोड़कर अपने प्रभाव को बढ़ाने के अतिरिक्त वह युवक, मजदूर नेताओं, सरकारी अफसरों, पत्रकारों, अभियन्ताओं, खूनी-डकैतों, ठेकेदारों, कोटा-परमिट के धन्धेबाजों, कालाबाजारी करने वालों को अपने साथ बटोरते रहे। इनको शासनतंत्र का संरक्षण प्रदान किया। प्रत्येक जिले में कार्यकर्त्ताओं के गुट बनाये। गुरुपद-स्वामी के नाम पर उनके हजारों बिखरे हुए प्रशंसकों-समर्थकों को एकत्र करके, उन्होंने अपने प्रभाव में लेना शुरू कर दिया।

आजादी के बाद राजनीति का जो स्वरूप बन रहा था उसमें जन-सम्पर्क का अर्थ लोगों के गलत-सही कामों को ठीक कराना था। कानून के शिकंजे दिन-प्रतिदिन सख्त होते जा रहे थे। लगातार नये विधेयकों की गिरफ्त में आने वाले भागकर नेताओं के इर्द-गिर्द घूमने लगते। अन्य कई प्रकार के धन्धे चल निकले जिनमें कोटा, परमिट से लेकर ठेकेदारी तक मे सरकार का हस्तक्षेप होने लगा। लोगों में होड़ लगी थी, कौन लूट सकता है। कारु का खजाना सामने था, उत्सुकदास कैसे

दिन उनके चुनाव-क्षेत्र से भंगियों का चौधरी रोजगार की दारुलशफ़ा आया। लोबीराम के पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने आजकल मकानों में जब से फ्लश लैट्रिन, सीवर लाइनों का दस्तूर चल भंगियों की रोजी छिनती जा रही है। जिन घरों में फ्लैश लैट्रिन बनी थी, वहाँ भी रहने वाले, भंगियों को धमकाते। कमाई कम होने चौधरी की आमदनी भी कम हो चली थी। लोबीराम के इलाके में चा पाँच हजार भंगियों के वोट इसी चौधरी के हाथों में थे। पूरे कस्बे चौधरी की बड़ी धाक थी। चौधरी से लोबीराम बातचीत कर ही रा थे, इसी बीच उनके सामने रंगी सुनहरा सिगरेट केस, माचिस के साथ रख गया। लोबीराम ने सिगरेट निकाली, तो चौधरी ने भी फरमाइश कर दी। मजबूरी में उसको भी सिगरेट देनी पड़ी। सिगरेट सुलगाकर चौधरी झूम उठा। गाँजे की दम तो चिलम से रोज ही लगाता था लेकिन इसमें कुछ मजा ही और था।

चौधरी तब वहीं लोबीराम के यहाँ पड़ रहा। दिन-भर में दस-बीस सिगरेटें फूँक डालता। चन्द दिनों में उसके भाई-बन्द भी जमा होने लगे जिससे खर्चा बढ़ चला। उधर दारुलशफा के कमरों में लोबीराम छाप की सिगरेटों की माँग बेहद बढ़ गयी। अब वह घबड़ा गये। वह सब उनके बूते का नहीं था। उन्होंने चौधरी के लिए वहीं दारुलशफ़ा के बीच वाली सड़क पर अपने फ्लैट की दाहिनी खिड़की के नीचे, किसी ठेकेदार से कहकर छोटी ठेला-गुमटी बनवा दी जिसमें पान की दुकान खुल गयी।

भंगी चौधरी तमोली बन गया। लोबीराम का नौकर रंगी भी उसी दुकान पर बैठने लगा। इतने समय में सिगरेटों की माँग को लोबीराम ने इतना बढ़ा दिया, दारुलशफा के लोग एक-एक सिगरेट के लिए तड़पने लगे। तब उन्होंने चौधरी से सिगरेटें बिकवाना शुरू कर दिया। जो कोई माँगता, साफ कह देते, खरीदकर पियो। गुमटी के पीछे वाली जमी लोबीराम ने छोटा-सा छप्पर से घिरा हुआ गोदाम बनवा दिया। गोलाकार गोदाम का आखिरी सिरा लोबीराम के फ्लैट के पिछवाड़े जाकर मिलता था। लालबाग का बीड़ी वाला अब यहीं रहने लगा। उसने कुछ कारीगरों के साथ एक गुमास्ता भी रख लिया। गाँजा, चरस, असगर अली का इत्र, चूरे का मसाला आदि जोड़ने का काम करता चौधरी और सिगरेट बनाने का लालबाग बीड़ीवाला। मुनाफे का कुछ हिस्सा इन लोगों

निकलता दिख रहा था। इस मुसीबत से निकलने के लिए लोबीराम छटपटा रहे थे। बार-बार कोई रास्ता निकालने के लिए जोर लगाते।''' उन्होंने सोचा, क्यों न रंगीनराय को नेता-पद के लिए उम्मीदवार बनाया जाय। मानेंगे ? क्यों नहीं, उनकी शक्ति कौन नहीं जानता था'''। अब रंगीनराय के आगमन पर घने निराशा के अँधेरे बादलों के बीच सुनहरी आशा की एक किरण जागी।

रंगी से शिवबूटी में धतूरे के बीज मिलाकर तुरन्त लाने को कहकर, लोबीराम बैठक में आ गये।

"कहिये रायसाब, क्या समाचार है ?"

"नमस्कार लोबीरामजी ! समाचार अब क्या होगा।"

"क्यों ?"

"हमारे शत्रु उत्सुकदास होंगे मुख्यमंत्री, कृष्णवल्लभ बजायेंगे ढपली, हम सब नाचेंगे।"

"नाचेंगे ! गायेंगे !! वाह रायसाब।"

लोबीराम आगे कुछ न बोले, मन में सिसकियाँ उठने लगी, आँखें गीली हो गयीं। दोनों हाथ ऊपर उठाकर बोले, "रायसाब, अब तो न दादासाब अम्बेदकर हैं, ना महात्माजी हैं, हम हरिजनों को कौन पूछेगा !"

"अपनी इच्छा से न कोई पूछता है, न पूजता है। जोर-जबरदस्ती करनी पड़ेगी। उत्सुकदास तो अव्वल दर्जे का हरामजादा है। अब देखिये सालों ने कामयाब सेठ से मिलकर दो करोड़ का माल ऐंठ लिया ना ! आप बैठकर सब देखते रहिये।" रंगीनराय ने दाँव फेंका।

"दो करोड़ ? क्या आपने सच कहा ? दो करोड ?" लोबीराम की आँखों की पुतलियाँ निकलकर गिरने लगीं।

"हाँ जी ! दो करोड़, सिर्फ दो करोड़ !"

लोबीराम को गश आने लगा। लुढ़कने वाले ही थे, तभी रंगी शिवबूटी का अनार के बराबर गोला चाँदी की तश्तरी में सामने कर दिय यह सँभल गये, लपककर तश्तरी ले ली। फिर तकल्लुफ से रंगीनराय ागे बढ़ायी। थोड़ी-सी हिचक के साथ रंगीनराय ने एक गोली निकार ै। बेहद बढ़िया किस्म की ठंडाई के दो गिलास में से एक-एक गिलास नों ने उठा लिया। फिर गोली निगलकर लोबीराम ठंडाई डकार गये। ीनराय धीरे-धीरे पीने लगे।

फिर उत्सुकदास को हुक्म तो देना ही था। उन्होंने पहला हुक्म दिया, उन्हें पैसा चाहिए। बेतहाशा पैसा!

उत्सुकदास असल में करोडपति बनना चाहते थे। अपने पिता के जमाने में महाराज गोविन्दपुर के राजसी ठाट उन्होंने देखे थे। मन में कहीं ताकत और पैसे की भूख, फन उठाये नाग की तरह पल रही थी। इस तरह श्रीकान्त पाठक जैसा घाँसू अफसर बना उनका गुरु। सिर्फ़ एक दस्तखत करने पड़ते, एक हुक्म देना होता, हजारों आ जाते। धीरे-धीरे उत्सुकदास को मजा आने लगा। काफी-कुछ समझने लगे। धूर्तता की बातें उनकी भी समझ में आने लगीं। उन्हीं दिनों प्रदेश के व्यापार मंडल की ओर से उनको सम्मान दिया गया। अग्रवाल सभा, जैन सभा, सभी जगहों पर बुलाकर लोग-बाग उनको मानपत्र देने लगे। प्रदेश के व्यापारियों, पूँजीपतियों, उद्योगपतियों को अपना व्यापार बढ़ाना था। उनकी समस्याएँ ही कुछ ऐसी होती, जिसके लिए सरकार के संरक्षण की आवश्यकता पड़ती। उत्सुकदास मंत्री थे सिर्फ अपने विभाग के, फिर भी अन्य विभागों के लिए अफसरों से कह-सुन देते थे। लाइसेन्स, कोटा-परमिट, खरीद-फरोक्त, जाल-बट्टा करते-करते उन्होने अपना अच्छा-खासा गिरोह तैयार कर लिया।

पार्टी में भी उनका असर बढ़ चला था। गुरुपदस्वामी के जाने के बाद, जिनकी जड़ें रंगीनराय के अनुसार, उत्सुकदास ने ही काटी थीं, वह अब मुख्यमंत्री बनने जा रहे थे। कालीशंकर उनका प्राइवेट सेक्रेटरी था जिससे प्रणाली का विवाह हो चुका था। और कृष्णबल्लभ उनके सबसे खास आदमी थे। यूँ तो उत्सुकदास को आर्थिक सहायता देने वालों की कमी नही थी लेकिन कृष्णबल्लभ ही आड़े समय काम आते।

दिल्ली प्रवास में उत्सुकदास को मंत्रिमंडल बनाने में अनेक कठिनाइयाँ झेलनी पड़ी। पहले मंत्रियों की जो सूची स्वीकृत हुई उसमें उनके करीब-करीब सभी आदमियों को काट दिया गया। सच बात तो यह थी कि अगर कृष्णबल्लभ यादव को वह मंत्री न बनवा पाये, उनका मुख्यमंत्री बनना बेकार था। क्योंकि उत्सुकदास हमेशा दूसरों के कन्धे पर रखकर बन्दूक चलाते। कृष्णबल्लभ कंधा, उत्सुकदास की बन्दूक, निशाना होते गुरुपदस्वामी! गुरुपदस्वामी के समाप्त हो जाने पर प्रदेश राजनीति में उनका एकछत्र रामराज्य स्थापित हो सकता था।

रंगीनराय ने घृणा से जमीन पर थूक दिया।

उनके मतलब की बात उठती दिखायी न दी तो लोबीराम कुछ बोर होने लगे, अब शिवबूटी का प्रभाव आने लगा था। आँखें बंद करके विचार-मग्न लोबीराम दाँव लगाने की सोचने लगे।

रंगीनराय ने ठंडाई का खाली गिलास साइड टेबल पर रख दिया। इसी बीच रंगी सुनहला सिगरेट केस बीच वाली मेज के ऊपर रख गया था जिसे लोबीराम ने उठा लिया। सिगरेट निकालकर सुलगायी। रंगीनराय इन सिगरेटों का प्रयोग नहीं करते। उन्होंने अपनी विल्सफिल्टर की डिबिया से एक सिगरेट निकालकर लोबीराम से माचिस माँगी। लोबीराम में उत्साह के समुन्दर खुलने लगे थे, झपटकर उन्होंने सिगरेट सुलगा दी और खुद शुद्ध चरस की सिगरेट का गहरा कश खींचकर सारा धुआँ निगल लिया। एक सेकेण्ड को सर चकरा गया, लेकिन उसी के साथ, वह दाँव भी मिल गया, जिसकी तलाश में वह तड़प रहे थे।

"तो रायसाब अब कहिये, क्या विचार है ?"

"कैसा विचार ?"

"भई, आज पार्टी मीटिंग में नेता का चुनाव होगा।"

"लोबीरामजी, इसे आप चुनाव कहते हैं ?"

"जालसाजी है रायसाब, प्रजातंत्र के नाम से सबको चूतिया बनाया जा रहा है"'लोबीराम ने तड़पकर कहा, "हाईकमाण्ड को हमारे ऊपर उत्सुकदास को थोपने का क्या अर्थ ! पार्टी में उत्सुकदास के कितने समर्थक होंगे ? यही बीस-पच्चीस, तब कैसे हम उसे नेता मान लें।"

"आप भूलते हैं, गुरुपदस्वामी का भी समर्थन उस गधे के पास है, फिर पार्टी अनुशासन के डण्डे से सबको हाँका जायेगा।"

"अनुशासन किस चिड़िया का नाम है। जब नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आजादी के पहले अध्यक्ष हुए थे तब क्या इन लोगों ने अनुशासन माना था ? पुरुषोत्तमदास टंडन को किसने शहीद किया ? कहाँ गया था अनुशा- जब महात्मा गांधी की इच्छा के विरुद्ध हमने आजादी हासिल की ! प ने भंग नहीं किया ! नहीं'''नहीं'' रायसाब यह सब नहीं चलेगा। मु हुत बुरा लग रहा है। फिर भी कहना पड़ता है, हाईकमाण्ड की तान ही हम तो न सह सकेंगे। लोहियाजी ने हमको लड़ना ही सिखाया लड़ेंगे, उत्सुकदास के विरुद्ध आजु चुनाव लड़ेंगे, नेता-पद के लिए !"

कमाण्ड सभी उसके नेतृत्व में सरकार का गठन कभी नहीं होने देंगे। फिर भी अगर लोबीराम, आज की पार्टी मीटिंग में चुनौती दे दे ! चुनाव लड़ने की घोषणा बम के विस्फोट की तरह उत्सुकदास को उड़ा देगी ! उसी समय वह उत्सुकदास-कृष्णवल्लभ के ऊपर तांबाकांड, अफीम की तस्करी का आरोप लगा देगा और तब मन्त्रिमंडल बनाने का काम रुक सकता था। मीटिंग के बीच बाहर खड़े पत्रकारों को बयान दे दिया जाय, हलचल मच जायेगी। रंगीनराय किसी निष्कर्ष पर पहुँचने लगे थे, तभी लोबीराम का स्वर सुनायी दिया, "रायसाब, मैं आपका आदर करता हूँ। आपके ऊपर मेरी अनन्य श्रद्धा है। आप तो समाजवादी आन्दोलन के प्राण हैं। मेरा विरोध उत्सुकदास-कृष्णवल्लभ से होगा। अगर आप चुनाव लड़ें, मैं पीछे हटकर आपको पूरा सहयोग दूँगा।"

"मैं......यह कैसे संभव होगा ?" रंगीनराय घबड़ा गये।

"क्यों नहीं, आपसे अधिक उपयुक्त कौन होगा। उत्सुकदास हराम-जादा तो आपके चरणों की धूल भी नहीं। हाँ फरेब, जालसाजी में उसका कोई मुकाबला नहीं कर सकता। क्यों न ऐसा करें, आप अपने यहाँ, सात बजे के करीब विधायकों को पार्टी मीटिंग से पहले बुलायेंगे। मेरे भी दल के लोग आयेंगे। वहीं तय कर लिया जाय आज कि नेता कौन चुना जायेगा।"

लोबीराम को चारों ओर अपने अन्दर रेलगाड़ी के इंजन जैसी छक'''छक''', छक'''छक की आवाजें आने लगीं। उनको मालूम था, थोड़ी देर में सीटियाँ बजने लगेंगी। उनके मुँह से चरस का धुआँ निकल रहा था। इन्होंने अब तय कर लिया था इसी इंजन में अपने विधायकों को जोतकर पहले रंगीनराय, फिर उत्सुकदास जंक्शन पर रुकना चाहिए। ईंधन-पानी मिलेगा तो गाड़ी बढ़ेगी। नहीं तो इंजन पटरी पर रुका रहेगा। न कोई गाड़ी आयेगी, न कोई गाड़ी जायेगी। मंत्रिमंडल भुस जाय, सरकार न बने, हमारे ठेंगे से।

लोबीराम को एकाएक लछमनिया की याद आने लगी। अब अन्दर जाना चाहिए, बहुत हो चुका ! मलाई, दूध-पूरी का नाश्ता-पानी भी तो करना था। उनकी बेचैनी कुछ समझकर रंगीनराय उठ खड़े हुए और हाथ जोड़कर बोले, "अच्छा लोबीरामजी, चलता हूँ, आपका विचार ठीक है। हम लोग अपने गुटों की मिली-जुली बैठक बुलाकर आज का कार्य-

उसने बाहर निकलकर इधर-उधर देखा। किसके द्वारा यह पत्र कृष्णवल्लभ को भेजा जाय। इसी उधेड़-बुन में फँसा था तभी उसने बढ़ई दीक्षित को देखा जो किसी पत्रकार से बातचीत कर रहा था। उसने बढ़ई दीक्षित की बाँह पकड़कर अलग बुलाया और फिर धीरे से बोला, "बन्धु तुम्हारी मदद चाहिए!" पत्र दिखाते हुए उसने कहा, "किसी तरह यह कृष्णवल्लभ तक पहुँचाना है।"

"हाँ भई, लेकिन समस्या तो है उन तक पत्र भी पहुँचाया कैसे जाय? दरवाजा तो कृष्णवल्लभ खोलेंगे नहीं। और अगर खुदा न खास्ता दरवाजा खुल भी गया तो तुमने सुन ही लिया जूतों से मारने-पीटने की बात।"

"तो फिर···" कालीशंकर को लगा, इतनी मुसीबत उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनने में भी नहीं आयी। मैं अगर जाऊँ तो भी बात वहीं की वहीं रहेगी। तभी उसे कुछ याद आया। आगे बढ़ते बढ़ई दीक्षित को लपककर उसने पकड़ा जो फिर पत्रकारों की तरफ बढ़ चला था।

"बन्धु फिर ऐसा करते हैं, यह पत्र तुम ले जाकर यशोदावल्लभ को दे देना। परिस्थिति समझाकर उससे कहना, हर हालत में, चाहे दरवाजा तोड़ना पड़े, इसे कृष्णवल्लभ तक पहुँचाना होगा। कहना उन्हे अपने साथ लेकर आये। अच्छा गुरु, अब तुम चलो, मैं इधर का काम देखता हूँ।"

बढ़ई दीक्षित को गाली देकर भगा देने के पश्चात् कृष्णवल्लभ अपने बेडरूम में आकर लेट गये। उस समय वह हाँफ रहे थे। धौंकती साँस, तेज धड़कन, उन्हें न तो कुछ दिखायी दे रहा था न सुनायी। काफी देर तक लेटे रहने पर उनकी तंद्रा लौटने लगी। तभी उन्हें लगा, जैसे कहीं घंटी बजी है।

जब पहली बार टेलीफोन की घंटी बजी तो कृष्णवल्लभ को विश्वास नहीं हुआ। पिछले तीन दिनों में, वह एक प्रकार से भूल चुके थे, उनके यहाँ एक अदद टेलीफोन भी लगा है। फिर टेलीफोन ने कल रात उन्हे बड़ा दुखी किया था जब दो बार दफ्तर के चक्कर लगाने के बाद, अपने ही भाई बलराम ने गोलाबारी करके उनके सपनों का महल ढहा दिया था।

शान्तिप्रणाली को धीरे-धीरे बजरबट्टू की बातों में मजा आने लगा। उससे मिलकर खूब खुश होती···हँसती रहती···कहती, 'यार ! आदमी तुम एवन हो !'

बजरबट्टू के आगे-पीछे कोई न था। बेसहारा-मजबूर···बचपन उसे प्यार न मिला। रास्ते की ठोकरों से उसने आगे बढ़ना भी अपने आ ही सीखा। किसी ने उँगली पकड़कर उसे चलना भी न सिखाया, कि ने हाथ पकड़कर उसे कभी सड़क भी न पार करायी। उसके मन में जीवन में कहीं खालीपन था। रात में जब सोने के लिए लेटता, उसे अहसास होता अपने अकेलेपन का। इतनी बड़ी दुनिया में कहीं भी कोई न था। उसका खालीपन, एकाकी मन मातृत्व की भावना के लिए तड़पता। शान्तिप्रणाली में उसने नारी का वासनामय रूप ही नहीं, किसी अनजाने मातृत्व को भी देखा था, जिसे वह बचपन से मन के अँधेरों में सदैव ढूंढ़ता आया था।

जिस दिन शान्तिप्रणाली यशोदावल्लभ की पत्नी बनी, बजरबट्टू फूलदास के कंधे पर फूट-फूटकर रोया। फूलदास ने उसे सहारा दिया, सँभाला। हमेशा उसका खयाल रखता। लेकिन होनी तो हो चुकी थी। बजरबट्टू के अन्दर कहीं कुछ टूट चुका था। उसके बाद वह क चला गया, न जाने कहाँ मुँह छिपा लिया उसने। अपने जीवन में पहली ब तब फूलदास को अहसास हुआ था, ऐसे ही कहीं हर आदमी हारता है टूटता है। उसी दिन फूलदास ने संकल्प किया था, अगर कभी मौका आय तो बजरबट्टू का बदला लेगा।

यशोदावल्लभ से शादी हो जाने के बाद भयंकर क्रूरता की छायाएँ ान्तिप्रणाली के जीवन को डसने लगीं। दर्शन, राजनीति, अंग्रेजी साहित्य ी पढ़ाई, आधुनिक रहन-सहन, बातचीत का तरीका, शहरी जिन्दगी, कर, डाकुओं-खूनियों के बीच रहने वाले यशोदावल्लभ से कहाँ मेल ीं। देखने वाले हैरान रह जाते इन दोनों की जोड़ी देखकर। प्रोफेसर ो कृष्णवल्लभ को देखकर ही रिश्ते की बात कही थी। अपने जीवन न्तिम चरण में प्रतिभा का किस्सा सुनकर उनको जो धक्का लगा, त त न ताकत ही बची थी। मरणासन्न अवस्था में और करते भी क्या ?

विवाह के बाद शान्तिप्रणाली ने जो कुछ देखा, जो कुछ पाया उसकी ा से भी परे था। मान-सम्मान, धन-दौलत सभी कुछ मिला था उसे।

बट्टू को उसने सांसारिक वातावरण, अपने स्तर से नीचा दिखनेवा समझकर ठुकराया था।

तभी एक दिन फूलदास उसे मिला। बजरबट्टू के साथ वह विश्व विद्यालय आया करता था। वहीं अच्छी-खासी जान-पहचान हो चुकी थी। अब इतने दिनों बाद पुरानी यादों से जुड़ा हुआ एक टुकड़ा कहीं दूर से उड़कर आया था। उसे वह अपने सीने से लगा लेना चाहती थी। उन दिनों उसे तलाश थी जीने के लिए किसी सहारे की। ऐसे में कोई न सोचता है न समझता है। फिर उसके अन्दर तो ज्वालामुखी सुलग रहे थे। शादी के इतने दिनों बाद उसे लगा, बुझी हुई राख में कोई चिंगारी अभी बाकी थी। उसे लगा यह चिंगारी भी अगर बुझ गयी तो कुछ भी न बचेगा। जिन्दा लाश की तरह यशोदावल्लभ के नर्क में सड़ती रहेगी। और थोड़े दिनों में अपनी···खुद अपनी सड़ांध सही न जायेगी। पुरानी यादों से जुड़ा हुआ टुकड़ा जो फूलदास के संग उड़कर आया था, वह टुकड़ा बजरबट्टू की शक्ल ले चुका था। शान्तिप्रणाली में अपने जीवन के चारों ओर मँडराते भयावह वातावरण से, जो उसे पल-पल प्रतिपल सता रहा था, घिनौनी मनोवृत्तियों से जिन्होंने उसे साँप की तरह जकड़ रखा था, प्रतिशोध की भावना पनपने लगी। औरत जब मान्यताओं, कुंठाओं से विद्रोह करती है, नेपोलियन या हिटलर नहीं बनती, वह सीमाओं की लक्ष्मण-रेखा तोड़ देती है। वही करना चाहती थी शान्तिप्रणाली। फूलदास ने उसके जीवन में बजरबट्टू की छाया का आकार बनाकर रख दिया था। अच्छा ही था जो वही आया था नहीं तो शायद किसी और रूप में, किन्हीं और रास्तों पर उसे यह भावनाएँ ढकेल देतीं।

उधर फूलदास जानता था बजरबट्टू बेहद कमजोर था। उसे अपने कंधों पर उसका सुबकता हुआ निरीह, नादान चेहरा याद आ जाता।··· उस दिन बजरबट्टू ऐसे रोया था जैसे एक बच्चा अपना खिलौना खो देने के बाद फफक-फफककर रोये। बजरबट्टू के उस दिन के आँसू उसके दिमाग में एक लकीर बनकर खिंच गये थे। इतने दिनों बाद अब शान्तिप्रणाली की हालत देखकर खुद उसके अन्दर कुछ कर डालने की तमन्ना जागने लगी। उसने बजरबट्टू से उसको मिला देने का वादा कर लिया था। बस दो-एक दिन में ही लखनऊ जाकर बजरबट्टू को यहाँ ले आना था उसे।

शान्तिप्रणाली को फूलदास के मौत की खबर सबेरे जरा देर से

"हलू···मैं बोल रहा हूँ, कृष्णवल्लभ !"

"वाह ! भाईसाब···वाह !"

"कालीशंकर ! अच्छा तो तुमने अभी फोन किया था !" कृष्ण-वल्लभ आशाजनित विश्वास से बोले ।

"आप भी अजब तमाशा करते हैं, भाईसाब । टेलीफोन मैं ही मिला रहा था, उस समय जब आपने बढई दीक्षित को बिगड़कर भगा दिया, तब भी मैं वहाँ मौजूद था । वह लोग मेरे ही साथ आपके यहाँ गये थे । रंगीन-राय आपके विरोधी होंगे फिर *क्या···आपको बधाई देने नहीं आ सकते ?* आपने विश्वास कैसे कर लिया, बाबूसाब के होते हुए आप मंत्री नहीं बनेंगे ।"

"आज सारे अखबारों में तो यही छपा है, कालीशंकर ।" वे कुछ उदास स्वर में बोले ।

कालीशंकर ने खीझकर कुछ चिढ़ में कहा, "अब तो मैं ईश्वर, बाबू-साब और आपकी सौगन्ध उठाकर कह रहा हूँ, आप मन्त्री बनेंगे । यह बात सच है, आपका नाम कट गया था । लेकिन बाबूसाब ने लड़कर फिर से करा लिया । मैं आपको उस समय, यही सब बताने गया था ।"

कृष्णवल्लभ में हर्षोल्लास का सागर लहराने लगा । जैसे ऊँची मीनार से कहीं, एकाएक शहनाइयाँ बजने लगीं । अभी प्रार्थना की, और टेलीफोन की घंटी बजी । उनके जीवन पर आया संकट समाप्त हो गया । उनको विश्वास था, टेलीफोन की घंटी कभी धोखा नहीं दे सकती ।

"अच्छा-अच्छा भई ! कालीशंकर, तुम तो अपने ही हो ! क्या मुझे क्षमा नहीं करोगे ? कल रात दिल्ली से बलराम ने जब से नाम कटने की खबर दी, मेरा मानसिक संतुलन ही बिगड़ गया । हाँ तो राजभवन आठ बजे जाना है न ?"

"नहीं जी ! समय बदल गया है । शपथसमारोह अब दस बजे होगा । उसके पहले आठ बजे दल की मीटिंग में नेता का चुनाव होगा ।"

"क्या कहा, चुनाव होगा ?"

"इसमें घबडाने की क्या बात है । दिल्ली से गुरुपदस्वामी, पार्टी अध्यक्ष, अन्य बड़े नेता आये हुए हैं । मीटिंग तो महज फार्मेलिटी के लिए हो रही है । आप तुरन्त तैयार हो जायें ।"

कृष्णवल्लभ रिसीवर रखने ही जा रहे थे कि कालीशंकर ने होल्ड

उलझी हुई गाँठें खोलने लगे, "कृष्णवल्लभ मंत्री बन सकेंगे ! आग लगी है" कृष्णवल्लभ"'कुछ भी हो कृष्णवल्लभ का विरोध बढ़ता जा रहा है। आज शाहजहाँपुर, बरेली, रामपुर के पार्टी, गैरपार्टी, सभी विधायक केन्द्रीय नेताओं से मिलेंगे। इधर मेरे पार्टी अध्यक्ष बनने का समाचार अखबार में आने से कृष्णवल्लभ के विरोधी, जो पार्टी छोड़ने की सोच रहे थे, रुक गये हैं। मुझे तो लगता है, आज अगर लोचीराम ने दल की बैठक में कृष्णवल्लभ का नाम उछाल दिया, विधायक बड़ी संख्या में उनका साथ देंगे। मैं भी पीछे न रहूँगा। यह साला साँप की तरह मुझे डसता रहा है। अब इसके दाँत तोड़ने होंगे।"

रंगीनराम थोड़ी देर विचारमग्न होकर रुके, फिर मुस्कुराकर बड़ई दीक्षित से बोले, "लाओ, यह पत्र मुझे दे दो ! और अब तुम जाओ। सात बजे यहाँ, लोचीराम दल-बल सहित आयेंगे।"

8934

पाँच

उत्सुकदास के पास दारुलशफ़ा में उनके खिलाफ हो रही साजिशों की खबरें बराबर पहुँच रही थीं। लेकिन आज आने वाली ताकत के शहर में, उनको इन साजिशों में कोई खतरा नहीं दिखायी दिया। प्रधानमंत्री का आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद, अब तो सिर्फ राजसिंहासन पर बैठना-भर बाकी रह गया था। दिल्ली से लखनऊ की रेलयात्रा में, आधी रात तक लोगों ने उन्हें आराम नहीं करने दिया। हर तरफ फूल मालाएँ, भीड़-भाड़, नारेबाजी थी। आज सवेरे जब स्टेशन पर वह गाड़ी से उतरे तो वहाँ उनका भव्य स्वागत हुआ। भीड़ के उस अथाह समु में नारों, फूलमालाओं, जय-जयकार के बीच सबकी शुभकामनाएँ ले हुए, बाहर निकलते समय तक उनको आने वाला वक्त अपनी पकड़ नजर आने लगा था। सुबह की शानदार शुरुआत के साथ, उनको माल था, आज के दिन पूरा शहर किसी इन्कलाबी दौर से गुजरने वाला थ स्टेशन से घर तक साइकिल रिक्शा, साइकिल, स्कूटर, मोटरसाइकि स्कूटररिक्शा, जीप, मोटर, ट्रकों में भरे हुए हुज्जूम के बीच खुली

कोई आवाज उठाने की कोशिश भी करेंगे तो गुरुपदस्वामी, हाईकमान्ड के पर्यवेक्षक उनको कुचल देंगे। और फिर अब तो राष्ट्रीय पार्टी के अध्यक्ष भी वहीं मौजूद रहेंगे। उत्सुकदास को मालूम था, पार्टी अध्यक्ष से प्रधानमंत्री ने निर्विरोध, बिना किसी गड़बड़ के नेता का चुनाव करवाने के लिए कहा था।

वैसे तो सब कुछ ठीक ही था पर उत्सुकदास को टेलीफोन के जरिये ताँबाकांड की खबरें मिल रही थीं जिससे उनके संतुलन में फर्क आ गया था। ताँबाकांड कितने खतरनाक मोड़ पर पहुँच चुका था, उसके बारे में उनके आदमी बराबर उनको बता रहे थे।

उत्सुकदास जब दिल्ली में थे, ताँबाकांड की चर्चा तभी कई दिनों से चल रही थी। एक हद तक, ताँबाकांड की वजह से ही गुरुपदस्वामी गुट के लोगों ने उनको मुख्यमंत्री बनवाने में पूरा जोर लगा दिया। संसद विरोधी दल के नेताओं ने खूब शोरगुल किया, हुल्लड़-मचाया तब भी स्पीकर ने राज्य सरकार संबंधी इस मामले को संसद में उठाने की अनुमति नहीं दी। लेकिन साम्यवादी दल के वरिष्ठ सदस्य जीरो आवर में, करीब-करीब रोजाना इस मामले को उठाते रहे। उनका कहना था, प्रदेश में, उस समय राष्ट्रपति शासन था, इसलिए ताँबाकांड का मामला संसद में न उठाने की बंदिश हटा ली जाय। इन लोगों के अनुसार, ताँबाकांड महज भ्रष्टाचार का घृणित मामला नहीं, मुल्क के साथ गद्दारी करने वालों की साम्राज्यवादी देशों के साथ मिलकर की गयी एक बहुत बड़ी-साजिश थी, जिसका मुख्य उद्देश्य राष्ट्र की धन-दौलत को, चोर-रास्ते से बाहर ले जाना था। धीरे-धीरे सारे विरोधी दल साम्यवादी दल के सदस्यों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर, देश की अर्थव्यवस्था को अस्त-व्यस्त करने में लगे हुए गद्दारों को गिरफ्तार करने की माँग, संसद की कार्यवाही रोककर करने लगे। काम रोको प्रस्ताव, ध्यानाकर्षण प्रस्ताव, प्वाइंट ऑफ आर्डर, अन्य प्रश्नों के जरिये संसद में सरकार के ऊपर तूफानी हमले होते रहे। सारा समय जीरो आवर और सभी मामले ताँबाकांड बन चुके थे। कोई भी, किसी प्रस्ताव पर बहस के लिए तैयार नहीं हो रहा था। अब पार्टी के भी कुछ सदस्यों ने ताँबाकांड की जाँच की माँग उठानी शुरू कर दी। सरकार ने जाँच की माँग ठुकरा दी तो विरोधी दल के सदस्य सदन छोड़कर बाहर चले गये।

सीढ़ियों के बाद नीचे की ओर से चढ़ता हुआ दुर्लभकाछी रुक गया।

उस समय कमलासिंह के साथ बढ़ई दीक्षित, बजरबट्टू और रंगीनराय थे। बढ़ई दीक्षित और रंगीनराय, बजरबट्टू की बातें सुनकर हँस रहे थे लेकिन कमलासिंह बनावटी मुस्कुराहट के चोले मे अपनी खीझ छिपाने में लगा था। बजरबट्टू असल मे रंगीनराय के साथ लगा रहता। बड़े ही मजेदार किस्म का आदमी, स्कैण्डल उड़ाने में उसकी सानी का कोई और न था। पैरो में तो उसके जैसे चक्कर लगा था। इस कमरे से उस कमरे, इधर-उधर बस घूमता ही रहता।

दारुलशफा मे सैकड़ों विधायक, उनके नाते-रिश्तेदार, चुनाव क्षेत्र और इधर-उधर के हजारो लोग धधे वाले, चोर-उचक्के, पुलिस अधिकारी, अखबारनवीस, करीब-करीब रोजाना आते-जाते। बाहर मे शान्त दिखने-वाले दारुलशफ़ा में कितनी करवटें बदलती हलचलो के बारे में सब कुछ बजरबट्टू को मालूम रहता। ताजा-ताजा खबरें, राजनीति के दाँव-पेंच, दलबन्दी मे जूझे नेताओं की घटती-बढती शक्ति के विभिन्न कोण, प्रत्येक कोण की इकाइयों में टूटती-जुड़ती कड़ियों का सारा हिसाब बजरबट्टू के पास मौजूद रहता।

स्वार्थ-लोलुपता, आस्था-विश्वास के उसके अपने दृष्टिकोण थे। दुबला-पतला, करीब साढे पाँच फिट का कद, मैले-कुचैले कपड़े, टूटी चप्पलें, आम की गुठली-सा चेहरा, बड़ी नाक, खिचड़ी बाल, उसके व्यक्तित्व में सबसे आकर्षक उसकी आँखें थीं जो सदैव चमकती रहती। उनमे जैसे कोई सवाल हो, कुछ खोया हुआ तलाश कर रही हों। जोशीली बातें करते-करते वह चीखकर हाँफने लगता। कभी-कभी माँ-बहन की गालियो पर उतर आता। ऐसे मौको पर तब उसके मुँह से फिचकुर बह निकलता।

कमलासिंह को आता जानकर दुर्लभकाछी वही बीच मे रुका रहा। उसे लगा कमलासिंह अकेला नही था। कई और लोग उसके साथ हल्ला-दार आवाजो में बात करते हुए नीचे आ रहे थे। एक क्षण उसने सोचा, वापस जीप मे जा बैठे। तब कमलासिंह को मौका देखकर पकड़ेगा। लेकिन जीप तो वहाँ से दूर थी। उसमे फिर जालिम लेटा था। अब यहाँ अपने दोनो का एकसाथ रुकना उसे ठीक न लगा। गर्द-गुब्बार मे भरी लू, ऊपर से रास्ते की थकान। उसका सारा बदन रात-भर न सोने की वजह

त तो, प्रधानमंत्री के सामने साफ थी, ताँबाकाण्ड का वाकया जिस
य हुआ, कृष्णवल्लभ उस समय वित्त मंत्री थे।

ाफी दिनों पहले की बात है, लखनऊ की सड़कों पर कामयाब सेठ 'रद्दी-
ीन बोतल बेच डालो' की बुलन्द आवाज में फेरी लगाया करता था। भरी
वानी में पकता हुआ गेहुआँ रंग, कटारीदार मूँछें! तिरछी गर्दन के
पर छोटी डलिया में रखे हुए वह तराजू-बाट के भार को सिर से टेढ़ा-
ढ़ा करके सँभालते, पीठ पर बोरा लिये हुए गली-कूचे में सेर-दो सेर रद्दी
ी तलाश में घूमता। तब आठ-दस आने सेर का भाव चल रहा था।
दस रुपये की जमा पूँजी से आना-डेढ़ आना सेर यही उसका मुनाफा था।
शुरू में पैदल चलकर फेरी लगानी पड़ती, फिर कुछ समय बाद किराये की
साइकिल लेकर दूर-दूर तक धावा मारने लगा। इन्हीं फेरी के चक्करों में
वह दारुलशफा आया जहाँ से उसे रद्दी के साथ शराब की खाली बोतलें
मिलने लगीं। कई लोग सौदा रद्दी का करते, बोतल यूँ ही खाते में दे देते।
काफी तादाद में अच्छी-खासी रद्दी मिलने से दारुलशफ़ा कामयाब सेठ को
कुछ पसन्द आ गया। धन्धे के साथ चटपटी बातें सुनने को मिलतीं और
साथ में समाज के सरपरस्तों को इतने करीब से देखने का सुख भी। बस
गया था, फेरी के इलाकों में दारुलशफ़ा का नाम, उसने सबसे ऊपर जमा
लिया।

एक दिन 'रद्दी-टीन बोतल बेच डालो' की बुलन्द आवाज लगाते हुए,
दारुलशफ़ा के चक्कर लगाकर कामयाब सेठ लौटने वाला था। आम चुनाव
में फँसे विधायकों के वापस न लौटने से धन्धा अभी मंदा चल रहा था,
कुल जमा दो-तीन सेर कबाड़ की छोटी-मोटी चीजें ही उसे आज मिली
थीं।

उन दिनों आम चुनाव में हार जाने की वजह से उत्सुकदास जरा तंगी
में चल रहे थे। चुनाव के दौरान कर्ज चढ़ गया था। कर्जदारों से मुँह
छिपाये पच्चीस नम्बर कमरे में पड़े रहते। लोग-बाग रुपये-पैसे की माँग,
चाय-नाश्ते की फरमाइश से बचने के लिए उनको दूर से ही देखकर कतरा
जाते। पिछले कई दिनों की उधारी के बाद आज उनको न उधार मिलने
की आशा थी, न कोई चिल्लर बची थी। उस समय उत्सुकदास गैलरी

मुख्यमन्त्री गुरुपदस्वामी के यहाँ पहुँचो, उसी दिन बढ़ई दीक्षित का भाँडा ट गया। रामेश्वर दीक्षित ने अपने यहाँ से उसे निकाल दिया। साथ ही रुपदस्वामी ने भी उसे बर्खास्त कर दिया। उस दिन शाम को दफ्तर से जो ाइलें बढ़ई दीक्षित, दूसरे दिन सवेरे गुरुपदस्वामी के घर ले जाने के लिए ो गया था, उनमें से एक फाइल ताँबे की बिक्री वाली भी थी। रातों-रात शहर छोड़कर बढ़ई दीक्षित को भागना पड़ा। इस तरह ताँबाकांड की फाइल बढ़ई दीक्षित के कबाड़ में रखे हुए लकड़ी के संदूक के अन्दर पहुँच गयी।

इधर फाइल खो जाने से सारा काम रुक गया। फाइल की तलाश होने लगी। विधानभवन के एक-एक सेक्शन में फाइलों के ढेर लगा दिये गये, बाबुओं-,सेक्शन अफसरों, अधीक्षकों, अन्डरसेक्रेट्री से लेकर बड़े अधिकारियों तक से पूछ-ताछ होने लगी। मुख्यसचिव, उद्योगसचिव, विद्युतसचिव लोगों को फटकार बताने लगे। पूरे विधानभवन में यह मामला 'ताँबे की मुसीबत' के नाम से मशहूर हो गया। चारों ओर दो-तीन दिन तक तहलका मचा हुआ था। लेकिन फाइल तो न मिलनी थी न मिली। हाँ यह जरूर हुआ स्क्रैपडीलरस सिंडीकेट के आदमियों के कान तक बात पहुँच गयी।

स्क्रैपडीलरस सिंडीकेट के आदमी जो इधर निष्क्रिय से हो गये थे, दौड़-भाग करने लगे। उद्योगनिगम से टेन्डर ज्यादा दाम का होने की वजह से उनके प्रतिनिधियों ने मुख्यसचिव तथा अन्य बड़े अधिकारियों से मिलकर आधा माल मिलने का प्रतिवेदन दिया। साफ जाहिर था, बात चारों ओर फैल चुकी थी। अब श्रीकांत पाठक का माथा ठनका। उनकी योजना के अनुसार सारा काम चुपके-चुपके होना था। उधर बम्बई के तस्करीकोस्ट पर जहाज आने की तारीख पक्की हो चुकी थी, जिसके कारण कमर्शियल अटैची बराबर दबाव डाल रहा था। सबको मालूम था, पूरे प्रदेश में फैले हुए ताँबा को बटोरने में काफी समय लगेगा।

इसके बाद श्रीकांत पाठक ने बड़ी तेजी से काम करवाया। विद्युत--परिषद् ताँबा केस की समरी के साथ अपने प्रस्ताव की प्रतिलिपि भेजने के लिए एक दिन का समय दिया। दूसरे दिन उन्होंने खुद नोट लिखकर, फाइल उद्योगसचिव को सिर्फ चार घंटे के लिए दी। उसके बाद फाइल

मा।"

"भैय्या रंगीनराय ! हमने आगरा देखा, बरेली, रांची देखा। अब देखते हैं यह दारुलशफा जहाँ रात-रात भर दीवारों से लहू टपकता है। जहाँ परेत-चुड़ैलें नाचती हैं। अब सुनो ! कल आधी रात जो नींद टूटी तो हम बड़ी देर जागते रहे। जब जी उकताय गया, उठकर वहीं बरामदे मा टहलने लगे। उस छोर से जब लौटे तो क्या देखा, वर्मा के कमरे से क्या-क्या आवाजें आय रही हैं।"

"फिर वही भूत-चुड़ैल का किस्सा !"

"ना राय साब, ना, तनिक सुना···"

"छोड़ो···छोड़ो बजरबट्टू ! यह सब यहाँ रोजाना होता है। मेम्बर साले, खुद तो रहते नहीं, कमरे किराये पर चढ़ाये हैं। कई ने दोस्तों-मुलाजिमों को दे रखा है। और वह ससुरा वर्मा तो लोफर है ही। उसका का ठिकाना ?"

"हाँ, राय साहब मुझे क्या है। समाज के ठेकेदार, राष्ट्रसेवक, जनता के प्रतिनिधि रसातल तक दल-दल में धुसे रहें···मुझे क्या ? बस यह सब देखा नहीं जाता इसीलिए कह देता हूँ।" बजरबट्टू ने निराशा भाव से कहा।

इतने में कमलासिंह जाने के लिए आगे बढ़ा। बढ़ई दीक्षित ने तभी रंगीनराय का हाथ दबाकर चलने का इशारा किया। तब रंगीनराय ने उसे जरा रोकते हुए बजरबट्टू से पूछा, "अच्छा गुरु। असली खबर तो बताओ।"

"क्या असली, क्या नकली ?"

"अरे वही मंत्रिमंडल वाली !"

फिर तो बजरबट्टू बड़े जोर का ठहाका मारकर हँसा···काफी देर तक हँसता रहा। एकाएक गंभीर हो गया। चमकती आँखों को, गोल-गोल नचाते हुए, पहले रंगीनराय को उसने चुनौतीभरी, प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा और फिर बोला, "कैसा मंत्रिमंडल, कहाँ की सरकार ? सब टूट जायेगा। जाओ, देखो लोबीराम के यहाँ कौन षड्यंत्र चल रहा है ? गयी सरकार···गयी। कृष्णवल्लभ घुस गये ! चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरा पाख···" गाते-गाते वह नाचने-कूदने लगा।

बजरबट्टू के प्रलाप से मतलब की बात मिल आयी।

ी जाती। पपले विशेष अफसरो के माध्यम से गुरुपदस्वामी के विभागों
होते जिनका लाभ उत्सुकदास को मिलता, बदनामी गुरुपदस्वामी को!
लदास स्वामी की उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ से कभी नही बनी। वह इन्हीं
ोगों को गुरुपदस्वामी का सबसे बड़ा दुश्मन मानता।

राष्ट्रपति शासन समाप्त होने का दिन करीब आ रहा था। १० जून को उत्सुकदास के मुख्यमंत्री होने की खबर मिल चुकी थी। फूलदास-स्वामी को मालूम था मुख्यमंत्री होते ही उसे किसी मामले में फँसाकर कृष्णवल्लभ निलम्बित करवायेंगे या तुरन्त किसी पहाड़ी जंगली इलाके में उसका तबादला होगा। इससे पहले वह प्रतिशोध की आग बुझाकर बजरबट्टू, गुरुपदस्वामी तथा स्वयं अपना हिसाब बराबर करना चाहता था। स्क्रैपडीलरस सिण्डीकेट को ताँबे के टेण्डर में कुछ भी न मिला था इतनी दौड़-धूप, खर्चे के पश्चात् निराशा-कटुता, पराजय ही हाथ लगी आगे आने वाले अन्य अवसरो की भूमिका के लिए वे लोग, कामयाब से उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ का पर्दाफाश करने में लगे थे। जब तक उन पूरी कहानी का पता लगा, कामयाब सेठ की ट्रकें माल लेकर उड़ चुकी थी। फिर भी यशोदावल्लभ की जिम्मेदारी पर छोड़े गये इलाको से अभी माल नही जा सका था। विद्युत भडारों पर इनके आदमी तैनात थे। उद्योगनिगम से फर्जी कम्पनियों की बाबत पता चल ही चुका था। शाहजहाँपुर में विद्युत विभाग के एक अधिकारी ने फूलदास की कृष्ण-वल्लभ और उत्सुकदास से दुश्मनी की बात स्क्रैपडीलरस सिण्डीकेट के एक आदमी को बतायी तो उसने फूलदास से सम्पर्क स्थापित किया। फर्जी कम्पनियों को एलाट किये ताबे के सबूत को एकत्रित करने के पश्चात् वे लोग लोकीराम से मिल ही चुके थे। अपने दूसरे आदमियों को उसने सबूत के साथ दिल्ली भेजा जहाँ संसद सदस्यों, बड़े अखबार के पत्र-कारो को पूरे काण्ड के बारे में ब्रीफ किया गया। स्क्रैपडीलरस सिण्डीकेट की व्यूहरचना हो चुकी थी। उनकी पराजय देश के उन उद्योगपतियों की पराजय थी जिनके संरक्षण में ताँबा खरीदने की योजना बनायी गयी थी। कमर्शियल अटैची के द्वारा की गयी साजिश के भी कुछ सूत्र मिले थे जिनके कारण राष्ट्रीय हितों की भूमिका में देशभक्ति का नारा दे दिया गया।

चार बजे के करीब कानपुर से लौटकर यशोदावल्लभ ने अपनी

दिन जब बढ़ई कबाड़खाने में झाड़-पोंछ कर रहा था, उसे नेवटिया की याद आयी। पहले जमाने में टेलीफोन नम्बरों की बनायी हुई सूची में न नेवटिया जी का, ना ही कामयाब सेठ का, कुछ पता लगा। तब उस टूटी-फूटी कुर्सियों, मेजें, पुराना तख्त, पतीला इत्यादि हटाकर लकड़ी का संदूक खोला। एक-एक करके, पिछले कई वर्षों की डायरी के पन्ने उलटने पर भी कुछ नहीं मिला। डायरी के बाद, बण्डलों में बँधे अनगिनत विज़िटिंग कार्ड, लेटरहेड, कागजों के पुर्जे खोल-खोलकर देखता रहा। थककर चूर हो जाने के बाद वह संदूक बन्द ही करने वाला था, उसे सिलेटी रंग की एक सरकारी फाइल दिखायी दी। उसके ऊपर लाल रंग का बँधा फीता अब तक घुमकर टेढ़ा-मेढ़ा हो गया था। कीड़े-मकोड़े, चूहों की गंध में सड़ी हुई कुतरनों से भरी फाइल उसके हाथ में थी। यही तांबाकाण्ड की फाइल, जिसे बढ़ई गुरुपदस्वामी के यहाँ से अपने अन्तिम दिन लेकर आया था। उसे याद आया कामयाब सेठ, उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ सभी उन दिनों इसी के लिए काफी बेचैन थे। उस समय उसे सिर्फ कामयाब सेठ का टेलीफोन नम्बर चाहिए था। कबाड़खाने में रोशनी कम होने से, संदूक बन्द करके, वह कबाड़खाने से बाहर निकल आया। बाहर आकर उसने देखा फाइल के कई कागजातों को दीमक चाट गयी थी। फिर उसने फाइल को झाड़-पोंछकर साफ किया। फर्म के लेटरहेड पर तांबा खरीदने के लिए उसके प्रतिवेदन की प्रतिलिपि निकालकर उसने कामयाब सेठ का टेलीफोन नम्बर, दिल्ली का पता इत्यादि नोट करके फाइल ड्राइंगरूम की मेज पर रख दी।

आज पूरे दिन दारुलशफ़ा में हर जगह तांबाकांड की चर्चा चल रही ी। बढ़ई करीब-करीब पूरे दिन वहीं था। रंगीनराय के साथ भी वह ाफी देर तक रहा। पहले तो उसे कामयाबसेठ में रंगीनराय की दिलस्पी उसकी समझ में नहीं आयी।

लोग जानते थे कामयाब सेठ उत्सुकदास का आदमी है लेकिन इसका प्रमाण न होने से तांबाकाण्ड की जिम्मेदारी उत्सुकदास पर नहीं लादी ती, न ही कृष्णवल्लभ को फाँसा जा सकता था। एक

र देखने के बाद भी कहीं कोई ऐसा इन लोगों

पधार बनाकर कृष्णवल्ल से-कम बाँध

फेंकी और जोर-समझ से दुर्लभकाछी के साथ जालिमखां का करार ठहरा दिया। तभी पहले-पहल इलाके बँट गये। शाहजहाँपुर का इलाका मोहम्मद पुरवा, शंकरगाँव, ढिलियाना के पूरब-दक्षिण के बीच बँट गया। और उसके कुछ ही दिनों बाद दोनों गिरोह साथ-साथ मिलकर लूट-डकैती करने में लग गये।

इसी इलाके से यशोदावल्लभ के भाई कृष्णवल्लभ विधानसभा के लिए चुने जाते। जिला परिषद्, नगरपालिका, पंचायतों पर उनके लोग पहले से जमे-जमाये थे। गाँव-सभा, पंचायत, तहसील, नोटीफाइड एरिया आदि सभी जगह, यशोदावल्लभ ने अपने खास लोगों को रख छोड़ा था। पूरे इलाके के गुंडे, बदमाश, गिरहकट, चोर-उचक्के, अपने-अपने धंधे में लगे थे। पुलिस-कचहरी, थाना-दरोगा, कृषि, बिजली, सिंचाई, चकबन्दी के अधिकारी स्वाभाविक रूप से जैसे किसी अज्ञात नियम-कानून से बँधे यशोदावल्लभ और कृष्णवल्लभ का काम किया करते। कृष्णवल्लभ तब तक प्रदेश मंत्रिमंडल में मंत्री बन चुके थे जिसकी वजह से अधिकारियों को भय, लिप्सा और प्रभाव की मिश्रित प्रतिक्रियाओं ने फाँस रखा था। गँवई-गाँव के लोगों को अपनी समस्याओं को निपटाने के लिए इनके चक्रव्यूह से निकलने की न तो जरूरत थी और ना ही निकल पाना उनके लिए मुमकिन था।

पिछले चुनाव में दुर्लभकाछी ने पूरे इलाके मे तहलका मचा दिया था। जिस गाँव में कृष्णवल्लभ का विरोध होता, वह गाँव लूट लिया जाता, घरों में आग लगा दी जाती। आशंका, भय के वातावरण मे लोग अच्छी तरह समझ गये, अगर चैन से जिन्दा रहना है तो वोट कृष्णवल्लभ को ही देना होगा। चुनाव के बाद विरोधी दल तो दिखायी नहीं देते। उधर विरोधी दल के उम्मीदवार भला क्या करते, उनकी खुद भी वही हालत होती, जो वोट न देने वालों की।

वैसे बन्दूक-कारतूस दिलवाने मे यशोदावल्लभ का भी कोई मुकाबला नहीं था। तमंचे वगैरह तो डाकू लोग खुद बनवा लेते या अवैध कारखानों से बराबर आमद होती रहती। अच्छी बन्दूकें सरकारी लाइसेन्स के बिना मुश्किल से मिलती। लेकिन यशोदावल्लभ ने कमलासिंह की मदद से अपना पूरा इन्तजाम कर रखा था। जिला और पुलिस अधिकारी कारखानों और लाइसेन्स से गायब हुए हथियारों के बारे में मिली रिपोर्ट पर कानूनी

बड़े सोफे पर टाँग के घुटने पर दूसरी टाँग रखकर लेट गया। उसने से कृष्णवल्लभ का नम्बर देखकर टेलीफोन की किताब हवा में उछ दी। सोफे के हत्थे पर फोन पकड़े हुए उसने कृष्णवल्लभ का नम्ब डायल किया।

"हलो! मैं कमलासिंह………" आवाज सुनते ही बढ़ई ने फोन काट दिया था। कमलासिंह तो चमचा है, उससे क्या बात करूँ…बढ़ई ने यह सोचकर फोन काट दिया, फिर भी इतना तो पूछना था, कृष्णवल्लभ थे कहाँ…क्या पता वहीं बैठे हों…सात बजने वाले थे…आठ बजे पार्टी मीटिंग…उसके बाद मन्त्रिमंडल की शपथ…मंत्रिमंडल बनने के बाद…नहीं…तो पार्टी मीटिंग के बाद, लेकिन मंत्रिमंडल के पहले …नहीं…, पार्टी मीटिंग का इस बार महत्त्व ही दूसरा था…ताँबाकाण्ड का धमाका वहीं होगा…, रंगीनराय के शब्द उसके कान में गूँज रहे थे।…लेकिन अगर कृष्णवल्लभ आठ बजे तक ना मिले तो।…यह कमलासिंह वहाँ कर क्या रहा है? क्या कृष्णवल्लभ का भूत उतर गया …लगता उन्होंने दरवाजा खोल दिया था…उत्सुकदास से उनकी बात हुई होगी या फिर रंगीनराय ने वह चिट्ठी किसी तरह पहुँचा दी होगी …उसने कृष्णवल्लभ को ताँबाकाण्ड के लिए यह सोचकर चुना था दुखी, टूटे हुए कृष्णवल्लभ के लिए मन्त्री बनना जीवन-मरण का प्रश्न था।… जल्दी-जल्दी में कुछ दे मरेंगे! तभी उसे यशोदावल्लभ की याद आयी… फिर उत्सुकदास का नाम आया…क्यों ना उनसे बात की जाय…नहीं पहले यशोदावल्लभ को ट्राइ करे…कृष्णवल्लभ ने तो कुछ देर पहले ही मार-पीट की धमकी दी थी…चलो पहले यशोदावल्लभ को फोन करें।

"हलो! आप किसे चाहते हैं?" किसी महिला की आवाज थी। ढ़ई ने सोचा कहा जाय…आपको चाहते हैं…मिलेंगी…अब दारू सर के र चढ़ रही थी। फिर सोचा न जाने कौन है, जवान है, या बुढ़िया, ली है या गोरी, खूसट है या खूबसूरत! चलो छोड़ो, पहले काम की , ऐश के लिए तो जिन्दगी पड़ी है।

"हाँ, आप कौन बोल रही हैं?"

"मैं!…मैं हूँ, शान्तिप्रणाली!"

अच्छा… भाभीजी! नमस्कार, मैं हूँ बढ़ई दीक्षित।"

बढ़ई दीक्षित!" शान्तिप्रणाली ने हँसकर कहा।

इसलिये अपनी योजना के अनुसार वह कृष्णवल्लभ के जरिये ही बात उत्सुकदास तक पहुँचाना चाहता था। उसका खेल, इ लम्बा था। पाँच लाख की रकम, उसे पता था एक आधा घंटे में लेना, कृष्णवल्लभ के बूते से बाहर था। और उत्सुकदास दस मि पचास लाख जुटा सकता है। इस समय उनके मुख्यमंत्री बनने में तीन घंटे की देरी है। उसे मालूम था रंगीनराय के यहाँ हमले तैयारियाँ चल रही हैं। लोबीराम ने विद्रोह का झंडा उठाने का संक ले लिया है। दिल्ली से लेकर लखनऊ तक सभी जगह तांबाकाण्ड की च थी। असली फाइल सामने आ जाने से सारा मामला उलट जाएगा, उसके साथ ही उत्सुकदास का मंत्रिमंडल भी।

उधर कृष्णवल्लभ के यहाँ टेलीफोन की घंटी बजती जा रही थी··· बढ़ई ने सोचा, कहीं ससुरा टेलीफोन न खराब हो···लेकिन अभी तो कमलासिंह बोला था'' यशोदावल्लभ न जाने कहाँ होगा···अब इसी से बात करे···मामला कुछ आगे तो बढ़े। तभी उधर से कमलासिंह ने फोन उठा लिया।

कुछ जोश में, हड़बड़ाये स्वर में वह बढ़ई बोला, "कौन कमलासिंह! मैं बढ़ई हूँ।"

"हाँ! हाँ!! आप बढ़ई हैं, किसको नहीं मालूम आप बढ़ई। कुछ मखौल के स्वर में कमलासिंह ने कहा।

लेकिन बढ़ई इस समय मखौल के मूड में बिल्कुल नहीं था। कोई वक्त होता तो एक की दो सुनाता। इसके पहले वह आगे कुछ ब कमलासिंह बोल उठा "हाँ भई, सुनाओ, क्या हालचाल है?"

"हमारे हाल तो ठीक हैं, अपने कृष्णवल्लभ के हाल तो बताओ!"

"अरे भई, उनको क्या हुआ, आज फिर मंत्री हो जाएँगे। अभी जरा गये हैं मुख्यमंत्रीजी के पास, वहाँ पार्टी के अध्यक्ष दिल्ली से आये हुए हैं।"

"मुख्यमंत्री के पास? कौन से मुख्यमंत्री! अभी तक प्रदेश का मुख्यमन्त्री कोई नहीं बना और तुमने अंग्रेजी की कहावत सुनी है—'देयर र साट आफ स्लिप्स बिटविन कप्स एण्ड लिप्स!'"

"अब क्या होगा यार! फकत तीन घंटे बाकी हैं।"

"फकत तीन घंटे?" कमलासिंह की नकल उतारते हुए, बढ़ई

जालिमखाँ उसी तरफ बढ़ चला।

यशोदाबल्लभ मिडिल फेल था। उसकी भाभी राधिकारानी के अपनी कोई औलाद थी नहीं जिससे यशोदाबल्लभ को वह अपने बच्चे की तरह प्यार करती। उनके लाड़-प्यार ने ही शुरू-शुरू में उसे बिगाड़ दिया। छोटी उम्र से ही आवारागर्दी में फँसकर वह घर से गायब रहने लगा। पढ़ाई-लिखाई से कतराने की तो उसकी आदत बन गयी। बाप के पास वकालत के पेशे के सिलसिले में उन दिनों एक से एक शातिर बदमाश आया करते। चोर-उचक्के, कातिल, डकैतों-तस्कर गिरोहों से उसके वकील बाप हमेशा घिरे रहते। वकील साहब का बेटा यशोदाबल्लभ उन तमाम मुवक्किलों का लाडला प्यारा, सबकी आँखों का तारा बना हुआ था। वे लोग अपने-अपने पेशों के किस्से-कहानियाँ, मौज-जोश में, यदाकदा यशोदाबल्लभ को सुनाया करते, जिन्हें वह बड़े चाव-मन से सुनता। और साथ में समझने की भी कोशिश करता।

इन लोगों में यशोदाबल्लभ का दोस्त बना दुर्लभकाछी। दुर्लभकाछी वकील साहब का खास दलाल था। उस समय दुर्लभकाछी करीब तीस का रहा होगा। तब वह मुवक्किलों को फाँसकर लाया करता जिसके लिए वकील साहब उसे दस प्रतिशत कमीशन दिया करते।

सब ठीक-ठीक चल रहा था। इसी बीच वकील साहब बीमार पड़ गये। काम-काज करीब-करीब, उनके खाट पकड़ने से, बन्द हो गया। थोड़े ही दिनों बाद, वकील साहब को जो फालिज गिरा, दुर्लभकाछी घबड़ा गया। उसके खर्चे तब तक बढ़ चले थे। दारू, जुओं के अड्डे और औरतबाजी की वजह से उसकी आदतें खराब हो चुकी थीं। कभी-कभार उन दिनों वह यशोदाबल्लभ को भी इन जगहों पर ले जाया करता। यशोदाबल्लभ तब तक काफी कुछ समझने लगा था। पतली मोहरी की पैंट, छीटदार रंगीन बुश्शर्ट, घुंघराले बाल, चिकना चेहरा, सब मिलाकर माडर्न-सा लगता वह शाहजहाँपुर के इलाके में। वकील साहब की पुरानी फटफटिया इधर-उधर चलाया करता। यशोदाबल्लभ को साथ रखने का, दुर्लभकाछी का एक और मतलब था। उसे मुवक्किलों की तलाश में दूर-दूर तक धावा बोलना पड़ता। वहाँ जाने के लिए अक्सर कोई सवारी मिलती नहीं। ऐसे मौकों पर वकील साहब को बताए बिना तब यशोदाबल्लभ की फटफटिया वह माँग ले जाता। कभी-कभी तो रात में, शहर से दस-बीस

"तो फिर ठीक है ! मैं उनसे फोन पर ही बात करने के बाद, प्र फोन करता हूँ । आपका नम्बर ?"

"मेरा नम्बर फिलहाल चार सौ बीस ! आपका आठ सौ चालिस कृष्णवल्लभ यादव का नम्बर है सोलह सौ अस्सी ।" बढ़ई ने चीखते हु कहा ।

"नहीं ··नहीं, मैं तो टेलीफोन नम्बर पूछ रहा था ।"

"२२४२०" कहकर, बढ़ई ने फोन काट दिया ।

एकाएक उसको अपनी घरवाली की याद आने लगी जो दो बरस पहले, उसकी छिछोरी हरकतों से तंग आकर शिकोहाबाद, अपने बाप के घर चली गयी थी । झगड़ा ठेकेदार की बीवी के साथ, उसके इश्क से शुरू हुआ था ।

बढ़ई ने उठकर कपड़ों की अलमारी से उसकी फोटो निकाली । दो बरस पहले, घरवाली के चले जाने पर उसने एक दिन उसकी फोटो कबाड़खाने के उसी लकड़ी के संदूक में डाल दी थी, जहाँ से तांबाकाण्ड की फाइल के साथ उसे आज ही बाहर निकाली । काफी दिनों तक कबाड़खाने में पड़ी रहने से, फोटो के ऊपर धूल, गर्द जमी हुई थी । आज, इतने दिनों बाद फिर से प्यार उमड़ने लगा । उसने कुर्ते से अपनी धूल पोंछी । फिर कुर्ते से कुछ धूल लेकर उसने अपने माथे पर लगायी । वापस आकर ड्राइंगरूम में सोफे पर पालथी मारकर बैठ गया और अपनी घरवाली का फोटो प्यार से देखने लगा ।

इसी बीच रम के अद्धे में बाकी बची रम उठाकर बढ़ई सीधे बोतल से ही घूंट ले-लेकर पीने लगा । कुछ सनसनीखेज घटनाओं की तारतम्यता के दबाव में, कुछ पाँच लाख रुपये मिलने के बाद भागकर शिकोहाबाद जाने की भूमिका में, घरवाली के लिए उमड़ते हुए अथाह स्नेह की छाया में, सोफे पर पालथी मारकर बैठा बढ़ई, मन ही मन प्रार्थना करने लगा··· ! भगवान ! हे प्रभो आनन्ददाता···तुम तो एक हाथ से ज्ञान, एक हाथ क्षमादान देते हो ! मैंने महान् अपराध किया···जो दो बरस पहले, े बाप के घर चले जाने दिया । फिर उसकी फोटो···दोनों हाथ जोड़े ···सेन्टर टेबल पर, सामने ही रखी हुई, फोटो की तरफ उसने झुका- इशारा किया···कबाड़खाने में लकड़ी की संदूक में डाल दी ! जहाँ ां कीड़े-मकोड़े, चिलचिले, मच्छड़ दिन-रात रहते ।···उसने भला

यह सोचकर उसे थरथरी होने लगी। न जाने अब क्या होगा। उसे अपनी पूरी योजना में समय का अभाव बुरी तरह खटकने लगा था। उधर से कमलासिंह कह रहा था :

"बाबूसाब को खबर कर दी है। उत्सुकदास जी से सलाह करने के बाद, बस पाँच-दस मिनट में आते ही होंगे। उनके साथ ताशकाण्ड का हीरो कामयाब सेठ भी आ रहा है। आप विलम्ब न करें, तुरन्त ही चल दें, नहीं तो पार्टी मीटिंग का समय हो जायेगा।"

"ओ० के०, मैं आता हूँ।" कामयाब सेठ का नाम सुनकर बड़ई का दिल बल्लियों उछलने लगा। वह जानता था, पैसा देने वाला साथ लेकर कृष्णवल्लभ दारुलशफ़ा लौटेंगे।

काफी देर से, मुलाकात की प्रतीक्षा में, बाहर खड़े हुए लोगों को, इकट्ठा ही अन्दर बुला लिया गया था। उत्सुकदास उस समय इसी भीड़ में घिरे हुए बैठे थे। पैरों तक गांधी आश्रम की चप्पलों को छूती हुई, खद्दर की चुन्नटदार धोती, उसके ऊपर खद्दर का भुर्राक कुरता, मोटी गर्दन पर, पसीने से चिपचिपा रहा था। गोल चेहरे के ऊपर, चमकते हुए माथे के दाहिने कोने से, तिरछी टोपी, कनपटी के सफेद बालों को छिपाती हुई, पीछे गद्दी तक चिपटी हुई थी। उनके संघर्षमय जीवन की सारी निशानियाँ आँखों के नीचे पड़े हुए काले धब्बों में आकर सिमट गयी थीं। यूँ तो, देखने में, उनका सफेद चेहरा, तरबूज की तरह रंग बदलता रहता, पर आँखों के धब्बों से लगी हुई, गालों की हड्डियाँ, कुछ तिकोने आकार में, ठुड्डी तक पहुँचकर, होठों के ऊपर, किसी कुत्सित लिप्सा की, कुछ छायाएँ छोड़ जाती। मोटे-मोटे होंठों को सिकोड़कर, हँसते वक्त, उन्हें देखकर ऐसा लगता, जैसे हँसी उनके हृदय के फेफड़ों से नहीं, सीधे गर्दन पर उभरते हुए कोओं को पीछे ढकेलकर निकलती।

उस समय, उत्सुकदास, सभी लोगों की बधाइयाँ, शुभकामनाएँ, वहीं सोफे पर, एक टाँग के ऊपर दूसरी टाँग रखे हुए, सम्मानपूर्वक हाथों को जोड़कर, स्वीकार कर रहे थे। हर बार, हाथ जोड़ने के साथ, उनके चेहरे पर खिलखिलाती हुई मुस्कुराहटें अठखेलियाँ करने लगतीं। लेकिन हाथ अलग होते ही, किसी यांत्रिक ब्रेक की तरह, मुस्कुराहटें गायब हो जातीं

ने दो-तीन साल पहले, बीस एकड़ जमीन का एक मुकदमा खरीद लिया था। यह मुकदमा बापू मरने से पहले जीत गये थे। कागजात तिजोरी में रखे हैं जो राधिकारानी से कहकर ले लेना।" फिर यशोदावल्लभ की ओर घूमकर उन्होंने कहा, "और तुम क्या करोगे?"

यशोदावल्लभ भाई के पढ़े-लिखे होने के कारण कुछ डरता था, इसीलिए कुछ बोला नहीं।

कृष्णवल्लभ ने कहा, "हमारी राय मानो तो तुम दुर्लभकाछी को कर दो साफ। मुवक्किल लाया करो। दस प्रतिशत कमीशन देना पड़ता है। सो घर ही में रह जायेगा। सारे मुवक्किल घर पकड़ो। तुम्हारा, बलराम दोनों का काम चल जायेगा। मुझे तो राजनीति में जाना ही है। अगले साल भगवान की इच्छा भई तो यहाँ से विधानसभा का चुनाव लड़ूँगा। फिर बापू के प्रताप से, मंत्री तो बन ही जाऊँगा। तुम तनिक पार्टी के दफ्तर चले जाया करो। कुछ यही सब सीखो! इन सबमें कौन पढ़ाई-लिखाई की जरूरत होती है।"

कृष्णवल्लभ के जाने के बाद यशोदावल्लभ ने दुर्लभकारी को सब बातें बतायीं। दुर्लभकाछी बोला, "यशोदावल्लभ! सच पूछो तो अब हमारा मन इस दल्लाली के काम में लगता नहीं है। खर्चे बढ़े हैं। हम तो अब डाका डालेंगे, भय्या चल सको तो तुम भी चलो।"

"न दुर्लभ! यह काम तो हमसे न होगा। पहली बार तुम्हारे साथ गये थे, तो पैंट मा पिशाब हुय गयी। डर के मारे आधी जान वहीं निकल गयी। लगता था अब घरे गये, अब मारे गये।"

"तो ठीक है जैसा कृष्णा भैय्या कह गये, तुम करो दल्लाली—हम डालेंगे डाका। वकील साहब की दिलवायी दुनाली है ही। काली माँ की इच्छा भई तो मुल्तानपासी अब बूढ़ा हुइ गया है। हम अपना गिरोह बनायेंगे।"

उसी दिन से यशोदावल्लभ-दुर्लभकाछी में जीवन-भर का करार हो गया। कालीबाड़ी में सौगन्ध ले ही चुके थे। अब भाग्य की लिख गयी।

बीस एकड़ जमीन जो वकील बाप के खरीदे हुए मुकदमे से यशोदावल्लभ को मिली, उसमें दुर्लभकाछी की सलाह से अफीम की खेती होने लगी। उधर दुर्लभकाछी मुल्तानपासी के गिरोह में, वकील साहब की दिलवायी बन्दूक लेकर भर्ती हो गया। एक डकैती के बाद पुलिस मुठभेड़

में मंत्रिमंडल की सूचियाँ टाइप कर रहा था। कमलासिंह को, करने को कहकर, वह कृष्णवल्लभ को देखने चल दिया।

कृष्णवल्लभ उस समय सामने के बड़े सोफे पर भीड़ में घिरे उत्सुकदास के पास पहुँचने ही वाले थे, तभी अन्दर के दरवाजे से निकल कालीशंकर ने उन्हें पकड़कर खींच लिया।

शाम के धुँधलके में उत्सुकदास, उस भीड़ में जुझे हुए थे। इतने उनके सोफे के पीछे दीवाल पर लगी हुई घड़ी से सात बजने की आवाज आयी। अब वह, बाकी बचे हुए लोगों से माफी माँगकर अन्दर की ओर चल दिये। लेकिन नेतागण थोड़ी दूर तक उचक-उचककर उनके कान में कुछ-न-कुछ कहते रहे। उधर सामने के दरवाजे पर खड़ा हुआ कामयाब सेठ, जमीन पर रखे हुए ब्रीफकेस को उठाकर भीड़ के पीछे की ओर मुड़ने से पहले ही बाहर बरामदे में निकल आया, जहाँ श्रीकांत पाठक, यशोदावल्लभ के साथ, कृष्णवल्लभ के लौटने का इंतजार कर रहे थे।

उत्सुकदास के यहाँ, चाय पीने के बाद दिल्ली से आये हुए पार्टी अध्यक्ष, अपने पर्यवेक्षकों के साथ, राजकीय गेस्टहाउस को चल दिये। ऐसे तमाम विधायक, नेता, जानने-सुनने वाले जो उत्सुकदास के यहाँ उनसे मिलने न आ सके वहाँ उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रदेश का मुख्यमंत्री उत्सुकदास को बनाने का फैसला तो दिल्ली में हो ही चुका था, लेकि हाईकमाण्ड के नेताओं को कुछ गड़बड़ी होने का अंदेशा था। ताँबाका तथा कई अन्य मामलों की वजह से, विधायकों में बढ़ते हुए असंतोष के खबरें बराबर दिल्ली पहुँच रही थीं। उधर संसद में, ताँबाकाण्ड के धमाके से गुरुपदस्वामी का नैतिक बल गिर चुका था।

चुनाव तो फर्जी होते। नेता कौन बनेगा, सरकार कब बनेगी, किस स्तर के कितने मंत्री होंगे, किन मंत्रियों को कौन-सा विभाग मिलेगा, यह सारी बातें हमेशा की तरह दिल्ली में तय हो चुकी थीं।

दिल्ली में पार्टी के ढाँचे में जब इस प्रकार का कोई जाता तो पार्टी के अन्दर विभिन्न प्रका गुट दबाव डालने लगते। दबाव डालने के के जो

को कहते या फिर अगर उनका रुख कब तक स्पष्ट हो जाता, उनको बधायी देकर उनके द्वारा नामांकित, उम्मीदवार के समर्थन में, एक नया'' :बिल्कुल नया, सधा-बँधा हुआ बयान जारी कर देते ।

पार्टी के विभिन्न गुटों के उम्मीदवारों, जहाँ व्यक्तिगत स्वार्थों, पदों की सौदेबाजी, तथा सत्ता के नियंत्रण के लिए हुआ करते, प्रधानमंत्री के यहाँ से, निकलने वाला सफल उम्मीदवार, राजनैतिक मुहरों की उठापटक के साथ, पूँजीपतियों तथा नौकरशाही के प्रभाव से चुना जाता । पार्टी के अध्यक्ष, यह कठपुतली का खेल, आज कितने वर्षों स देख रहे थे। उनक मालूम था, वामपक्षी, दक्षिणपक्षी, मध्यमार्गी, लेफ्ट टू सेन्टर आदि सभी गुटों की डोर, प्रधानमंत्री के हाथों में थी। इनके खेल-तमाशे, उछल-कूद, प्रधानमंत्री के सामने जाकर खत्म हो जाते।

प्रदेश में, राष्ट्रपति शासन खत्म करने की जिस दिन से बात उठी थी, उस दिन से ही पार्टी अध्यक्ष को पता था, उत्सुकदास को राजगद्दी मिलेगी । इसलिए, जब उनसे राय माँगी गयी, तो उन्होंने सारा मामला, प्रधानमंत्री के ऊपर छोड़ने का सुझाव दिया था । पार्टी अध्य'' उत्सुकदास के पुराने दुश्मन थे । कभी कोई मौका मिलने पर छोड़ेंगे नहं यह उत्सुकदास को मालूम था । इसलिए आज ताँबाकाण्ड स्कैन्डल के बारे में काफी देर तक पूछताछ करते रहे । कई एक और मामलों का जिक्र भी किया । मंत्रिमंडल की सूची में उलटफेर करने की कोशिश की तो उत्सुक-दास ने कह दिया, सूची प्रधानमंत्री द्वारा स्वीकृत की जा चुकी थी।

पार्टी अध्यक्ष पहले उत्सुकदास के साथ राष्ट्रीय पार्टी के मंत्री हुआ रते थे । उनकी ईमानदारी, शराफत के विपरीत उत्सुकदास तब चाल-जी, मक्कारी, धूर्तता की चालें चला करते जिसके कारण उत्सुकदास हर ह दो कदम आगे रहते । फिर संगठन पर उनका ही कब्जा था । बड़े-नेताओं को घेरकर जो चाहते करवा लिया करते । दिल्ली में पश्चिमी के दूतावासों से उत्सुकदास का सम्पर्क उन्हीं दिनों स्थापित हुआ था। समाजवाद पर आस्था रखने वाले पार्टी अध्यक्ष को वामपक्षी कहकर र दिया जाता । बड़े नेताओं की शक्ति के बूते पर उत्सुकदास ने चारों पनी धाक जमा रखी थी । पार्टी अध्यक्ष उन दिनों कटी पतंग की समय की हवा में बहे जा रहे थे । उनका न तो कोई सम्मान होत' नकी कहीं गिनती थी । नागवर्य, चुप, निराश वह उन दिनों उत्सु

आदमी पकड़ा गया तो जैसे गिरोह में नहीं पूरे इलाके में खलबली मच जाती। वकील को सिर्फ जमानत करवानी थी, मुँहमाँगी फीस मिलती। यह सब बलराम के बस के बाहर था। दुर्लभकाछी के गिरोह्ही धर-पकड़ में फँस रहे थे। नुकसान पर नुकसान हो रहा था। यशोदाबल्लभ को रात-रात-भर नींद नहीं आती। अध्यक्ष की प्रतिष्ठा किसी भी दिन खतरे में पड़ सकती थी। वह चिन्ता में घुला-भरा जा रहा था।

तभी एक दिन दुर्लभकाछी कहीं से आधी रात को उसके घर घुस आया। वैसे दुर्लभकाछी को जब कभी मिलना होता, यशोदाबल्लभ खबर पाने के बाद, देर रात नहर के डाकबंगले पर चला जाता। उस दिन दुर्लभकाछी को खबर भिजवाने का मौका ही न मिला। काफी घबड़ाया हुआ था। यशोदाबल्लभ से आकर बोला, "यशोदा! अब अंत आ पहुँचा है। बलराम तो कुछ कर नहीं पाते। तीन आदमी बड़े थाने में पहिले ही बंद थे, आज अपने तस्करी गिरोह का कारिन्दा पकड़ लिया, उस ससुरे फूलदास ने।"

"फूलदास कौन ?"

"फूलदास वही, जो नया डी० एस० पी० आया था। कारिन्दे के पास कागजात भी हैं। तुम्हारी बीस एकड़ वाली जमीन का पट्टा भी है। सब धरे जायेंगे। हम तो यशोदाबल्लभ अब जा रहे हैं अड्डे पर, दस-बारह दिन न निकलेंगे।"

फिर दुर्लभकाछी ने अपनी धोती के फेंटे से, इतना कहकर, पाँच हजार रुपये दस-दस के नोट में, सोने का एक भारी हार, यशोदाबल्लभ के सामने मेज पर रख दिया और बाहर खड़ी जीप में बैठकर चला गया।

कमलासिंह ने वकालत जब शुरू की तो उसमें जोश का समन्दर लहरा रहा था। कानून की सनद में ईमानदार पेशे की बाबत उसने कुछ कसमें खायी थीं। दफ्तरी, पालकीवाला, कन्हैयालाल आदि चोटी के वकीलों के बारे में उसने सुन रखा था। पचास हजार रुपये महीने की कमाई, सालाना दो-ढाई लाख का टैक्स! बड़ी हसरत थी उसमें ऐसा कुछ करने की! चोटी के वकीलों के कितने किस्से उसे जबानी याद थे। कन्हैयालाल की डिलिवरी, दफ्तरी, पालकीवाला की कानूनी व्याख्या, कृष्णामेनन, नीरेनडे की वक्तृता कितनी उच्चकोटि की थी! कमलासिंह स्वप्न देखता, हसीन-खयालों की बुलन्दियों पर पहुँच जाता। एक नहीं कई एक मोटरें

जाओ। बिरजू के लिए चमकी को भूलना नामुमकिन था। वह दीवानों की तरह कई दिनों तक भाग-दौड़ करता रहा, तब कहीं जाकर, दोस्तों, जानने वालों, पुराने ग्राहकों के कहने-सुनने से, जुम्मनबाई ने उसे दस दिन का समय दिया। चमकी का सौदा बिरजू के साथ हो गया छह हजार रुपयों में। तीन हजार नथ उतरवायी के, तीन हजार खर्चे-पानी के जो तय हुए थे, उसे दस दिन के अन्दर जुम्मनबाई को देने थे। बिरजू के पास तो छह रुपये भी नहीं थे। तब उसे अलीगढ़ का ख्याल आया, करीम-भाई याद आये! लेकिन वहाँ किस मुँह से जाता। इतने दिनों से आना-जाना खत-किताबत बंद थी। इधर भिण्डीबाजार से करीमभाई के सख्त बीमार होने की भी खबर आयी, तब भी वह न तो वहाँ गया ना ही उसने खत लिखा। फिर चमकी को यहाँ अकेले छोड़कर अलीगढ़ जाता भी तो कैसे! जब सब रास्ते बंद हो जाते हैं तो ऊपर वाला कोई न कोई रास्ता सुझा देता है। यही हुआ बिरजू के साथ। तिजोरी ताले वाली कम्पनी, जहाँ बिरजू काम करता था, अभी तक नहीं खुली थी। उसके साथ के कई अच्छे कारीगर काफी दिनों से बेकार थे। पेट की भूख बड़ी चीज है जिसकी मार बड़ों-बड़ों का ईमान-धर्म बिगाड़कर रख देती है। भूख से बिलखते बच्चों का चीत्कार, घर के बूढ़े माँ-बाप की, अन्न के एक-एक दाने को तरसती हुई निगाहें, और खुद अपनी,. कभी न खत्म होने वाली तकलीफों का मंजर कितना दर्दनाक था, कोई बिरजू के साथियों से पूछता। बिरजू इन लोगों से बराबर मिलता रहता। वह इनकी हालत से वाकिफ था, और उधर वह लोग, बिरजू की इकतर्फी मोहब्बत के बारे में जानते थे। सभी हुनरमंद कारीगर थे, कुछ करना चाहते, लेकिन किसी के पास रुकने के लिए न तो वक्त था, ना हिम्मत बाकी बची थी और ना ही किसी के पास पूँजी थी। उधर नौकरी ढूँढ़-ढूँढ़कर सभी हार गये थे। वह लोग हुनरमंद कारीगर थे, उनके लायक नौकरी सिर्फ ताले-तिजोरी के बड़े कारखानों में ही मिल सकती। ऐसे कारखाने, उस समय दो-तीन थे, जिनमें से एक में तालाबंदी हो जाने की वजह से, काफी लोग बेकार हो गये। दूसरे कारखाने छोटे-मोटे थे, जहाँ इन कारीगरों के लायक जगह नहीं थी। नौकरी के अलावा, मरम्मत का काम था, जिसके लिए दुकान या गुमटी चाहिए थी। फिर मरम्मत के पेशे में पहले से लोगबाग लगे हुए थे।

जिस घर पर हमला हो, वहाँ ज्यादा लोग न रहते हों। दूसरे, वहाँ से विपरीत दिशा में भागने का रास्ता हो, एक-दो गली-गलियारे हों और आस-पास कोई भीड़-भाड़ वाली जगह हो जैसे सिनेमाघर, सब्जीमंडी, भीड़वाले बाजार, ताड़ीखाना। तीसरे, अपनी खोली से जगह दो-तीन मील दूर, दो मील के दायरे में हो।

लखनऊ में बिरजू को वह इलाका, जहाँ बँगले एक दूसरे से अलग थे, पहली बार में पसंद आ गया था। एक बँगला आगनरायन रोड पर, एक जापलिंग रोड पर, एक शाहनजफ रोड, अशोक मार्ग, क्लाइड रोड के बीच में उसने चुना था। फिर वह इन बँगलों के चारों ओर मँडराने लगा। बारीकी से हालातों को समझने-बूझने की कोशिश में उसके सामने दो खतरनाक बातें आयीं। एक तो, इन बँगलों में खतरनाक किस्म के कुत्तों के साथ कोठरियों में नौकर, माली, ड्राइवर या चौकीदार रहते, दूसरे घेरे जाने पर, भागने के लिए, दूर-दूर तक खत्म न होने वाली सड़कें थीं। अमीनाबाद की तरफ, भागने से दो पुलिस थाने पड़ते, हुसैनगंज की तरफ भागने पर भी दो थाने, एक पुलिस चौकी पड़ती। फिर सड़कों पर मच्छरों की तरह ट्रैफिक पुलिस, खाकी वर्दी वाले पुलिस, मंत्रियों, अफसरों की चौकीदारी से लौटते हुए पी० ए० सी० के सिपाही या फिर दफ्तर के चौकीदार मौजूद रहते। किसी भी समय, कुछ भी हो सकता था। फिर इस इलाके में स्कूटर, मोटर साइकिल, कार, जीप हर वक्त सड़क पर जैसे चिपकी रहतीं। वह तो पैदल या बहुत हुआ तो साइकिल से दौड़ेगा लेकिन अगर किसी ने स्कूटर या मोटर से उसे दौड़ाया तो मारा जायेगा। खतरा कुछ ज्यादा जानकर, बिरजू ने यह इलाका अपने दिमाग से निकाल दिया।

बिरजू को लखनऊ आये हुए तीन महीने से ऊपर हो चुके थे। अभी तक उसने कहीं भी हाथ साफ नहीं किया था। इसकी एक खास वजह थी, एक तजुर्बेकार चोर की हैसियत से बिरजू दावे के साथ कह सकता है, लखनऊ का माहौल चोरी के खिलाफ था। यह बात वह अच्छी तरह जानता है। कुछ शहर, माहौल से चोर होते हैं, कुछ टिकियाचोर लखनऊ आते ही वह समझ गया था, यहाँ चोरी की बास नहीं थी। यह भोली अदाओं, नाजुक हालातों में बेहोश आदमी के अन्दाज, सबको अप- ---- देने। मखौटे तो सभी ने पहिन रखे थे, लेकिन इन मुखौटों के नी

से आतंकित होकर भी वह चुपचाप उसकी ओर किसी आशाजनित विश्वास से देखने लगा, जैसे गिरते हुए न्याय के तराजू को संभालने के साथ पेट में दहकती हुई भूख मिटा देने का अवसर आने वाला था।

"अरे भय्या ! अपनी-अपनी किस्मत है। हम भी तो कोई हरिश्चन्द्र नहीं हैं। उसके हाथों लग गयी लाटरी ! मुल्तानपासी ने..." मंगलसिंह ने चीखते हुए कहा, "डाकू मुल्तानपासी ने उस गदहे की वकालत चलवा दी। शरीफजादों के मुकदमों में भला कोई जी सकता है। मंगलसिंह क्षोभ, घृणा, लिप्सा और ईर्ष्या-मिश्रित भाव में चोट-खाये उस सर्प की तरह फुंफकार रहा था जिसे डँसने का अवसर नहीं मिला।

धीरे-धीरे कचहरी की हकीकत देखकर कमलासिंह को आत्मज्ञान होने लगा। चारों ओर चोरी-चकारी, घूस-दस्तूरी का बाजार गर्म था। आदर्शों की टोकरी वह उसी दिन मंगलसिंह के घूरे पर फेंक आया था। दफ्तरी, पालकीवाला, कन्हैयालाल की ऊँचाइयाँ टूट गयीं। हाईकोर्ट की जजी के सपने राख हो गये। न्याय की तराजू उसे एक ओर झुका दिखायी देता और वकालत की सनद फर्जी। कचहरी की खस्ता इमारत की दीवारों से उसे किसी मुल्तानपासी डकैत का अट्टहास सुनायी देता। कचहरी बन्द होने के बाद, अक्सर कमलासिंह वहाँ की इमारत को शाम के अँधेरे में डूबती हुई देखता रहता। जैसे उसके मन के चारो ओर अँधेरा घिरता जा रहा था। गर्दिश में पैवन्द वाली पेंट की जेब में पड़े दो-चार पैसे, जैसे फुसफुसाकर उससे कह रहे थे, जीना है तो मनाओ, मनौती मांगो, तुम्हारे हाथों भी लाटरी लग जाये। कोई मुल्तानपासी, किसी दिन आकर वकालत चलवा दे ! वर्ना बेटा भूखो मरने के दिन अब ज्यादा दूर नहीं।

मंगलसिंह के कहने से कमलासिंह जिला पार्टी का सदस्य हो गया। मंगलसिंह स्वयं दूसरी सोसलिस्ट पार्टी के सदस्य होने के कारण समर्थकों और कार्यकर्त्ताओं के मुकदमे झटक लिया करते। अपने जूनियर कमलासिंह को, जिला पार्टी का सदस्य उन्होंने बनवाया था जिससे जिला पार्टी के समर्थकों, मतदाताओं, कार्यकर्त्ताओं के मुकदमे भी मिलने लगे। लेकिन भाग्य का चक्र कुछ और ही चक्कर चला रहा था।

कमलासिंह पढ़ने-लिखने में तो तेज था ही, अंग्रेजी तथा इतिहास का भी उसे अच्छा ज्ञान था। महात्मा गांधी, नेहरू को उसने पढ़ रखा था। अक्सर बातचीत में उनका नाम लेकर कुछ भी कह देता, भले अपनी ही

दफ्तर था। दफ्तर के बाहर लकड़ी के बोर्ड पर चौकोर खानेदार खाँचों मे कागज की पर्चियों पर कमरे के नम्बर के नीचे रहने वाले विधायकों के नाम लिखे हुए थे। वहाँ रुककर बिरजू काफी देर तक उन पर्चियों को पढ़ता रहा, बीच-बीच मे तिरछी निगाहों से दफ्तर में आने-जाने वालों को भी देखता जा रहा था। कुछ देर तक खड़ा रहने के बाद वह सामने वाली प्रवेश गैलरी की ओर चल दिया। गैलरी के अन्तिम छोर तक बायीं तरफ के बरामदे से दायें कमरों को बाहर से देखता हुआ आखिरी छोर पर सीढ़ी से ऊपर जाकर उसने बी ब्लाक की तरह तीनों मंजिलों का पूरा चक्कर लगाया। तीसरी मंजिल से नीचे आने के लिए उसने ए ब्लाक के दफ्तर के सामने आने वाली सीढ़ी चुनी, जहाँ से निचली मंजिल पर बाकी कमरों के सामने से चक्कर लगाता हुआ बिरजू डी शक्ल की इमारत के बीचोबीच लगे हुए लोहे के फाटक के सामने पहुँच गया। यहाँ से सामने ताड़ीखाने वाली सड़क का फाटक दिख रहा था। अब तक वह बेहद थक चुका था। पाँच एकड़ के इलाके पर बनी हुई तीन-तीन मंजिलों की दो इमारतों के पूरे-पूरे चक्कर लगाने से उसकी साँस बुरी तरह फूल रही थी। पैरों के जोड़ों में बेहद दर्द था। किसी तरह बाहर निकलकर बिरजू भागा भेड़ीमंडी की अपनी खोली की ओर।

उस दिन के बाद बिरजू नियम से रोजाना दारुलशफा आने लगा। उसने अपने तीन अड्डे बनाये—एक तो बी ब्लाक की सीढ़ियों के दाहिनी ओर कैंटीन, दूसरा लोबीराम छाप सिगरेट की गुमटीनुमा ठेले के सामने नीम के पेड़, तीसरा ताड़ीखाने वाली सड़क और ए ब्लाक के पिछवाड़े वाले फाटक के पास के इमली के पेड़ के नीचे, जहाँ लोग चिलम, कुज्जियाँ, सिलबट्टा लेकर बैठते, जहाँ जुआ, ताश की महफिलें जमा करतीं। बिरजू दिन-भर इन्हीं अड्डों पर बैठा रहता। बीच-बीच में उठकर बारी-बारी से बी ब्लाक ए ब्लाक के बरामदों में चक्कर लगाया करता। कभी-कभी ए ब्लाक के दफ्तर के सामने खड़े होकर नाम की पर्चियाँ पढ़ने के बहाने दफ्तर के अंदर होने वाली गतिविधियाँ ताड़ता रहता। पिछले दस दिनों में बिरजू दारुलशफा के कोने-कोने से परिचित हो चुका था। ए और बी ब्लाक की सीढ़ियाँ चढ़कर तीन मंजिल में इधर, तीन मंजिल में उधर, एक-एक गैलरी, बरामदे मे चक्कर लगाने से न तो अब उसे थकान आती, ना ही साँस धौंकती। इन दस दिनों में, उसने

वालों ने करवायी थी क्योंकि कुछ चुनाव क्षेत्र से आने वालों की उम्मीद में, कमरा बंद कर चाभी वहीं दफ्तर में उसने जमा करवायी थी। घंटे-आध घंटे में लौटकर आने पर उसने दफ्तर से ही चाभी ली। तब तक जिन लोगों के आने की उम्मीद थी, वे भी नहीं आये थे। कमरे में ताला बंद था, जैसे किसी ने छुआ भी न हो, लेकिन अंदर से सामान गायब था। उस नेता के साथ बैठे हुऐ चमचे दारुलशफा के दफ्तर वालों को गंदी-गंदी गालियाँ बकने लगे। वहाँ बैठे हुए, मुफ्त की कॉफी पीने वाले और लोग भी इनकी विवेचना से पूरी तरह सहमत थे। नेताजी चिल्लाए जा रहे थे, बिरजू वहीं बैठकर चुपचाप यह सब सुनता रहा। थोड़ी देर बाद स्वाभाविक रूप से जब एक-आध लोग उठे तो वह भी उठकर चल दिया हजरतगंज की ओर। उसे एक बात की, उस समय, खुशी थी, उसके ऊपर क्या अभी तक किसी भी चोर के ऊपर इन लोगों को शक नहीं था।

उस समय कॉफ़ीहाउस से उठने का बिरजू का एक मकसद और था। जिस टेबल पर वह बैठा था, उसके सामने वाली टेबल पर एक मोटा-सा आदमी, उसकी ओर पीठ किये हुए बैठा था। बिरजू के उठने के कुछ ही देर पहले, जब बैरा बिल लेकर आया, तो पहले तो, खादी की बुश्शर्ट की जेब से उसने दस का नोट निकाला, फिर शायद यह देखकर छुट्टे इसके बाद उसके पास नहीं बचेंगे, उसने अपना ब्रीफकेस खोला। ब्रीफकेस से सौ-सौ के नोटों की गड्डी से उसने एक सौ रुपये का नोट बैरा को बिल के साथ दे दिया। सौ के नोट का छुट्टा कॉफी-हाउस के कैश काउण्टर पर शायद था नहीं, इसीलिए बैरा नोट बाहर से तुड़वाने के लिए चला गया। ब्रीफकेस खोलने, बंद करने के बीच ही बिरजू ने पीछे से जरा स्वाभाविक रूप में झुककर देख लिया था, उस काले रंग के ब्रीफकेस में नोटों की कई और गड्डियाँ थीं। बिरजू जानता था बैरा छुट्टा लेकर आयेगा, तभी मोटा आदमी उठकर बाहर जायेगा। कुछ सोचकर वह अंदर से उठकर बाहर चला आया।

कॉफी-हाउस से बाहर निकलकर बिरजू ने बरामदे में बैठे हुए पनवाड़ी से एक सिगरेट खरीदी। फिर उसे सुलगाकर, वहीं सड़क पर गुजरती हुई मोटर कार, स्कूटर, साइकिल, रिक्शा पर दफ्तरों में काम के बाद लौटती हुई भीड़ को देखने लगा। आगे के कार्यक्रम के बारे में उसने अभी कोई फैसला नहीं किया। शाम के आठ बजे तक उसे कोई काम नहीं

मुकदमा मिल जाये। और वकीलों को देखता कैसे मुवक्किलों से घिरे रहते।

इसी तरह जाने कैसे तीन वर्ष बीत गये। अब कमलासिंह के सामने टेढ़ी समस्याएँ थीं···पाँच वर्ष शादी के बीत गये, पत्नी को क्या सुख दिया, सोच रहा था···उसका लिहाफ में दम घुटने लगा। नीचे खिसककर वह अधलेटा हो गया। बाहर दिसम्बर की सर्दी में बरफ-सी जम रही थी। लगता, कोल्डवेव चलने लगी थी। लिहाफ खोलने से, कोल्डवेव उसके बदन के अन्दर, ऊपर से नीचे तक घुस गयी। खपरैल की छत का कोई कोना टूट गया था। बड़े जोरों से सूँ-सूँ की तेज आवाज के साथ सारा कमरा बरफीली हवाओं से भर गया। उसके दिमाग की जड़ें हिल गयीं। बेचैनी होने लगी। उसने लिहाफ खींचने को हाथ बढ़ाया।···अनायास हाथ रुक गया, इतना भी नहीं सह सकोगे! बेचारी रूबी को देखो। इतनी रात में भी जागकर, इतनी ठंडक में भी, घर के जूठे बर्तन साफ कर रही है। कितने दिनों से सोच रहा हूँ उसके लिए एक ऊनी शाल तो लाऊँ। नहीं ला सका···फकत पन्द्रह सौ रुपये में मोटर साइकिल मिल सकती है।··· यशोदावल्लभ अब फटफटिया पर कहाँ चढ़ता है। उसके पास मोटर है, जीप है। मोटर साइकिल मिल जाये तो रूबी को लेकर दूर, काफी दूर, जंगल के किनारे, पहाड़ी के नीचे, निकल जाऊँ, जहाँ घर के जूठे बर्तन न माँजने पड़ें।

तभी कहीं से उसके दिमाग में एक कीड़ा रेंगने लगा, उसकी विचारधारा में विघ्न पड़ गया। उस कीड़े की खरोंच, गुदगुदी मचाने लगी।··· उसे याद आया, रूबी आज शाम कह रही थी, हाँ कह रही थी, माँ बनने वाली है। ओह!···बस एकाएक, दिमाग में घुसा कीड़ा रेंगने-रगड़ने, गुदगुदी मचाने वाला वह कीड़ा, तपते हीटर के एलीमेंट मे बदल गया। उसे गर्मी लगने लगी तभी उसने ऊपर खपरैल को देखा, कुछ चिड़ियों ने वहाँ घोंसले बनाये थे। कहीं किसी कोने से भी उन घोंसलों में ठण्डी हवा अन्दर नहीं जा पा रही थी। खिड़की बन्द थी, दरवाजा बन्द था। उसने लिहाफ हटा दिया फिर धीरे से पैरों में नीचे पड़ी हुई प्लास्टिक-चप्पल डाल ली। एक बार उसे महसूस हुआ, चप्पल में ठण्डी हवा घुसी बैठी थी जो पैरों में अनेक सुइयों की तरह चुभ गयी।···लेकिन नहीं, नथिंग डूइंग माई गाड! आई एम टू बी फादर! नाव ओनली नाव! देयर

फिर भी क्या पता कब मौका मिल जाये। यह तो उसे इतमीनान था ही, ब्रीफकेस के अन्दर सौ-सौ के नोटों की गड्डियाँ थीं। बस इन्हीं गड्डियों की खुशबू बिरजू को उसके पीछे खींचकर ला रही थी। मोटे आदमी को मिठाई की दुकान मे घुसते हुए देखकर बिरजू ने जल्दी में सड़क पार की। फिर उल्टी तरफ से, उसी फुटपाथ पर स्वीटहाउस के सामने, उसके दो साथियो के बगल मे जाकर खड़ा हुआ। बिरजू को जब उनकी बातों से यह पता लगा, मोटा आदमी मिठाई लेने के बाद दारुलशफा जायेगा, अनायास ही उसके अन्दर खुशियों की लहरें दौड़ने लगीं। उसे लगा, सगुन अच्छा था। तभी उसने देखा, मोटे आदमी ने ब्रीफकेस खोलकर मिठाई के दो डिब्बे उसके अन्दर रख दिये और दो डिब्बे हाथ में लेकर बाहर निकल आया।

मोटे आदमी को रिक्शे में बैठकर जाते हुए देखकर बिरजू ने एक गहरी सांस लेकर चैन मिल जाने जैसी मुद्रा मे सांस बाहर की ओर छोड़ी। तुरन्त पीछे घूमकर बिना जल्दबाजी किए हुए बिरजू चुपचाप, दबे पाँ सीढियो से दूसरी मंजिल की ओर चल दिया। दूसरी मंजिल पर इधर उधर देखते हुए, बिरजू ने पहले तो सामने की गैलरी तक का पूरा चक्कर लगाया। फिर दो मिनट तक सामने वाली गैलरी की मुंडेर से नीचे व ओर झाँकता रहा, साथ में ऊपर के बरामदो से जाते हुए दो-चार आ मियों को ध्यान से देखता रहा। पिछले तजुर्बे की बिना पर उसे मालू था, अभी भी पांच-सात मिनट का समय, जो मोटे आदमी के चले ज और किसी नये आदमी के दफ्तर से चाभी लेकर ऊपर कमरे तक आने बाकी था। बिरजू ने मोटे आदमी को कमरा खोलकर अन्दर जाते हु फिर ब्रीफकेस मिठाई के डिब्बे अन्दर छोड़कर खाली हाथ कमरे मे ता बंद करके नीचे उतरते हुए, सामने की मुंडेर पर इसी तरह खड़े हो कुछ देर पहले देखा। उस समय, उसने यह भी देखा था, अगल-बगल कमरो से कुछ लोग निकले, कुछ और लोग इधर-उधर से बराम निकलकर भी गये थे लेकिन किसी ने उस मोटे आदमी से बात नहीं ना ही किसी से उसकी दुआ-सलाम हुई। जाहिर था, उसी मोटे आ की तरह अब, उसे कमरे का ताला खोलकर अन्दर घुसने पर किस शक नहीं होगा।

यह महज इत्तफाक नहीं था जो बिरजू के जीन की पैण्ट में, उ

टू बि ए लाटरी ग्राफ मुल्तानपासी !

उसी समय बाहर के दरवाजे की कुण्डी खटकी। कमलासिंह उधर देखकर मुस्कुराया। और कोई समय होता, समझता मुवक्किल आ गया। मुल्तानपासी आ गया ! ...डैम इट ! डैम इट ! ब्लडी कोल्डवेव ! पहले खपरैल का कोना तोड़कर कमरे मे, ऊपर-नीचे जूँ...जूँ रेंगती रही : अब खिड़की-दरवाजे खटखटायेगी...डैम इट ! नेस्टी-कोल्डवेव !...लेकिन नहीं, कोई दरवाजे की कुण्डी बराबर खटखटाये जा रहा था...अरे हाँ, किसी ने वकील साहब कहकर मुझे ही पुकारा।...कहीं पास में जो दूसरे वकील रहते हैं, उनका घर समझकर कोई...इतनी रात मे...नहीं...नहीं ये आवाज जानी-पहचानी लगती है।...

कमलासिंह ने धड़कते दिल से दरवाजा खोला; मानो आज अपने ही भाग्य का दरवाजा खोलने जा रहा हो। दरवाजा खुलते ही बड़ी जोर से ठंडी हवा अन्दर आयी, उसके साथ ही काले कुहनी तक के दस्तानों, ओवरकोट, मफलर, ऊनी मोजों-जूतों में बँधा हुआ यशोदावल्लभ भीतर घुसा। उसने ओवरकोट की बायी जेब से पाँच हजार रुपये, दस-दस के नोट, दायीं जेब से, भारी-सा सोने का चमचमाता हुआ हार निकालकर कमलासिंह की मेज पर रख दिया।

रंगीनराय से अलग होकर कमलासिंह ने 'बी' ब्लाक के बाहरी तरफ जालिमखाँ को ढूँढने की कोशिश की। वहाँ उसे न तो जालिम दिखायी दिया, न ही कोई जीप थी। फिर बरामदे के दूसरे छोर पर जाकर उसने देखा, इमली के पेड के नीचे एक जीप तो खड़ी थी लेकिन जालिम वहाँ था नहीं ! उसके बाद रोक-टोक से बचने के लिए, पिछले जीने से कमलासिंह जब फ्लैट मे पहुँचा, जालिमखाँ वहाँ पहले से मौजूद था। वह यशोदावल्लभ के करीब एक कुर्सी पर उकड़ूँ बैठा ऊँघ रहा था।

उसी वक्त तरोताजा होने के बाद एक किनारे, दुर्लभकाछी तख्त पर लेटने चला। उसने अपना साफा खोलकर सर के नीचे टेक लगायी। बंडी की तिकोनी जेब मे पड़ा कृष्णवल्लभ यादव का रिवाल्वर बार-बार गड़ने लगता। तब कुछ झुँझलाकर उसने रिवाल्वर बाहर निकाला, जिस तख्त पर दुर्लभकाछी लेटा, उसके बगल मे एक छोटा स्टूल रखा था। रिवाल्वर

था। वहाँ पर जब उसने डिब्बा खोला तो उसे पहली नजर में ही डिब्बे के अंदर कुछ गड़बड़ नजर आया। मिठाइयाँ कुछ तरतीब से बिगड़ी हुई तो थीं, लेकिन देखने से पूरी लग रही थीं। मिठाइयों की ऊँचाई डिब्बे के ढक्कन तक को छू रही थी। चूँकि समय उसके पास कम था, इसलिए उसने मिठाइयाँ बिना छुए हुए डिब्बे के ढक्कन में गिरा दीं। तभी मिठाइयाँ ढक्कन पर गिरी तो उनके साथ डिब्बे के जमीन के ऊपर रखा हुआ कागज भी बाहर की ओर कुछ तेजी से आ गया। उस कागज के साथ ही सौ-सौ रुपये के तीस-चालीस नोट भी गिर पड़े। बिरजू ने फौरन नोट बटोरकर पेंट की जेब मे ठूस लिये और डिब्बे के नीचे वाले कागज को जमाकर उसके ऊपर मिठाइयाँ जमा दीं। फिर डिब्बे के ऊपर वाला ढक्कन बन्द करके, उसे पहले जैसे डोरे से बाँध दिया। अब तो दूसरा मिठाई का डिब्बा देखना जरूरी हो गया था। बिरजू को अन्दाज था, उसके बाहर निकलने का वक्त आ गया। करीब-करीब झपटकर उसने मिठाई का दूसरा डिब्बा उठाया। पैनी उँगलियों के नाखून से, एक सेकेण्ड मे उसने डोरे की गाँठ खोल ली। जल्दी से उसने ऊपर का ढक्कन, ऊपर का कागज हटाया। ढक्कन कागज सहित पास की मेज पर रखने के बाद, उसने डिब्बे के नीचे वाला हिस्सा भी मेज पर रख दिया। इस तरह उसे सारी मिठाइयाँ अलग नही करनी पड़ीं। उसने बस मिठाइयों के नीचे वाला कागज उठाकर देख लिया, वहाँ नोट नहीं थे। डिब्बे को पहली जैसी हालत में बाँधने के बाद बिरजू बाहर निकल आया। अपनी खोली पहुँचने पर बिरजू ने ब्रीफकेस दो कारणो से खोलकर नहीं देखा। एक तो उसे उस तरह का ताला खोलने के लिए एक प्रकार का तार बनाना था। दूसरे, उसने सोचा अगर ब्रीफ-केस से लम्बी रकम निकली तो भी, और अगर कुछ भी रकम न निकली तब भी उसका संतुलन बिगड़ सकता। बिरजू में सबसे बड़ी बात थी, खोज करने के बाद बनाये हुए कार्यक्रम की योजना को, कुछ भी हो जाने पर भी वह टालता नहीं था। उसके पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार उसे आज लोबीराम के यहाँ हमला करना था। फिर कॉफी-हाउस से निकलने के बाद, हजरतगंज के चौराहे से, उसने लोबीराम को, कालीदास मार्ग की तरफ जाते हुए भी देख लिया था। उसने पहले से पता लगा रखा था, लोबीराम को, कहीं रात के खाने पर जाना था।

भेड़ीमंडी से चलते समय उसने तीन तालियों के अलावा, एक लोहे का

निकालकर उसने उसी स्टूल पर रख दिया। साफा एक बार उसने जरा मजबूती से लपेटा और फिर नाक से सीटी बजाने की कोशिश करने लगा।

यशोदावल्लभ उस समय आँखें बन्द किये खयालों की दुनिया में उड़ा जा रहा था।...उसके लिए आज का दिन कितना सुनहरा दिन था जब उसका सबसे बडा दुश्मन फूलदास दुनिया में नहीं रहा।...फूलदास से यशोदावल्लभ चिढ़ा हुआ तो था ही। पहले भी एक बार उसका तबादला करवाया था लेकिन उसको जान से मारने का फैसला उसका नहीं था। यह फैसला तो दुर्लभकाछी ने किया। हाँ, इधर दो बातें ऐसी जरूर हुई जिससे यशोदावल्लभ की नफरत और बढ़ गयी। फूलदास ने इस बार जब शिकंजा इन लोगों की तरफ बढाया तो शक्ति से दबाता गया। फौलादी शिकंजे में दबोचकर उसने यशोदावल्लभ के एक-एक आदमी को पकड़ना शुरू किया। आखिर में, जब निर्माण संघ की ट्रक मे अफीम के साथ ताँबा पकड़ा गया, यशोदावल्लभ के हाथ-पैर फूल गये। उधर कामयाब सेठ बराबर कुछ करने के लिए जोर डाल रहा था। दूसरी बात, जिसे जानते हुए भी यशोदावल्लभ ने किसी से कहा नहीं, उसकी अपनी घरैतिन शान्ति-प्रणाली के बारे में थी। इतने में टेलीफोन की घंटी बजने लगी। यशोदा-बल्लभ को अचानक उलझे हुए विचारों से भागने का मौका मिल गया। विशेष रूप से शान्तिप्रणाली के नाम से इस समय उसे बेचैनी होने लगी थी। शान्तिप्रणाली की बात दिमाग में आते ही उसे लगता, किसी अंधी घाटी में वह तेजी से गिरा जा रहा था। उसने अपने को हल्का-सा झटका दिया और फिर टेलीफोन का रिसीवर उठा लिया।

वातावरण की संजीदगी समझकर कमलासिंह एक किनारे आरामकुर्सी पर बैठ गया। उसने आरामकुर्सी के हत्थों पर अपने दोनों पैर फैला लिये। कमीज की ऊपर वाली बटन खोलकर टाई की नाट ढीली करते हुए उसने देखा, यशोदावल्लभ काफी घबड़ाया हुआ टेलीफोन पर बात कर रहा था। जैसे ही बात खत्म हुई, कमलासिंह ने जोर से उससे पूछा, "क्यों, क्या मामला है?"

"मामला नहीं, मुसीबत कहो! पाठकजी का फोन था, कह रहे थे, ताँबाकाण्ड का बवेला खड़ा हो गया। दिल्ली के अखबारों में कई दिनों तक सुर्खीदार खबरें छप जो गयी। उधर कामयाब सेठ बुरी तरह फँसा

बेरज उस समय बेदीवर चोर नहीं था, तभी तो सामने की दीवार से लगी हुई तिजोरी को छोड़कर वह लछमनिया के पास पहुँच गया। लछमनिया उस समय लालशाम बीड़ी वाले की लड़की नहीं थी, जिसे दाहलदफ़ा में बूढ़ी-प्रधेड़ आँखें कितने दिनों से घूर रही थीं, जिसे लोबीराम ने शुरू-शुरू में अठन्नी देकर फुसलाना चाहा था। तभी तो उन क्षणों में, आत्मीयता के आकर्षण में बँधकर, बिरजू तिजोरी की दौलत छोड़कर उसके पास आ गया। बिरजू और लछमनिया, अपने-अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठकर, उस समय आदम और हव्वा की तरह, एक-दूसरे में पूरी तरह लीन हो गये। उनके मिलन की वह मादक बेला कितनी मधुर थी जब वातावरण में सदिग्धता नहीं थी, किनारों में जड़ता नहीं थी। भूख, लिप्सा, ईर्ष्या, कमीनेपन से भरी हुई, इतनी बड़ी दुनिया में शायद बिरजू और लछमनिया की ऐसी ही स्थितियों के अनेक कोण बाकी थे। शायद इसी के लिए, ऐसे ही भोले, निश्छल क्षणों के लिए, आज तक आदम और हव्वा जिन्दा थे। बिरजू के लिए, उस समय लछमनिया, उसकी पूजा का मूर्त रूप बन गयी। उधर लछमनिया के लिए बिरजू वह मर्द बन गया, जिसका उसे कितने दिनों से इन्तजार था।

न जाने, कितनी देर तक एक-दूसरे की बाँहों में लिपटे हुए, दोनों अनन्त सुख की धारा में बहते जाते। लेकिन बिरजू के अंदर किसी आने वाले खतरे की घंटियाँ बजने लगीं। उसकी तंद्राएं जागने लगीं। तभी बैठक के बाहर वाले कमरे से ताला खोलने की आवाज आयी। पलक झपकते ही बिरजू ने पलंग से नीचे कूदकर, हाथों के फासले से, अपनी पैण्ट, बुश्शर्ट, जूतों के साथ पड़ी हुई लछमनिया की बाहिम उठा ली। कपड़े पहनकर बाहर निकल भागने का समय अब नहीं था। बाहर का ताला खोलकर बैठक में दरवाजा अंदर की तरफ से बंद करने की खटर-पटर की आवाजें आ रही थीं। कमरे में अँधेरा था फिर भी अट्टहास के जरिये तब तक लछमनिया भी पलंग के नीचे उतरकर बिरजू के करीब आकर खड़ी हो गयी। बिरजू इतनी देर में पहली बार फुसफुसाकर लछमनिया से बोला, 'किधर जायें?' तभी बाहर बैठक की बत्ती जलने से कुछ रोशनी फैलकर अंदर के कमरे तक आ गयी। कमरे से बाहर जाने का और कोई रास्ता तो था नहीं, इसलिए बिरजू को वहीं कमरे में रुकना पड़ा। अगले क्षण एक हाथ से कपड़े सँभाले हुए, एक हाथ से लछमनिया

वाले धीरे-धीरे खिसक रहे थे। चारों तरफ करीब-करीब सन्नाटा ही था। बस दूर पर बनी झोंपड़ियों से चूल्हा-अँगीठी सुलगाने से धुआँ उठने लगा था। कभी-कभी छोटे बच्चों के चीखने-चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। लेकिन बिरजू ने अभी भी चमकी और लछमनिया के बीच का फैसला तय नहीं किया था। लछमनिया उसे छोड़ने को राजी नहीं थी और चमकी को, जिसके लिए बम्बई की जेल से लेकर अलीगढ़, कानपुर और लखनऊ तक उसने जो संघर्ष किया था, एकदम निकाल फेंकना नामुमकिन था।

फिर भी एक बात थी जिससे बिरजू को लग रहा था, वह फैसला अब उसकी पकड़ में आ चुका। वह बात थी, उन काली लकीरों की तादाद जो उसकी खोली की दीवार पर बढ़ती-बढ़ती इतनी ज्यादा हो गयी थीं। बिरजू को कभी-कभी चमकी के पास वापस जाने से डर लगता। आज वह सोच रहा था, अब बम्बई लौटने पर इस तमाम दौलत के सहारे जो उसने इन दिनों दारुलशफा में इकट्ठा की थी, अगर चमकी न मिली, या मिली भी तो फटी हुई गुदड़ी की तरह तब वह क्या करेगा। उस वक्त अगर लछमनिया उसके पास नहीं होगी, तो वह जीयेगा कैसे? इस दौलत का आखिर करेगा क्या? फिर काली लकीरों के नीचे लाल खड़िया की लकीरें जो उसके और लछमनिया के पवित्र मिलन की निशानियाँ थी, उसके मन में मीठी-मीठी चुभन उठाने लगीं। उस चुभन के दायरे इतने घने होते जा रहे थे, जैसे बस कुछ देर और होने से साँसों का आना-जाना रुकने लगेगा। कहाँ चमकी की काली रातों की घिनौनी काली लकीरें, कहाँ लछमनिया के असीम प्यार की लाल लकीरें। जो कुछ मिला उसे, वह इतना मादक, इतना मधुर था जिसे पीछे छोड़कर भागना कितना मुश्किल लग रहा था। एक डर और था बिरजू को : लछमनिया उसे जान गयी है, पहचान गयी है। वह बम्बई जायेगा, यह भी लछमनिया को पता था। अब उसे छोड़-कर जाने का मतलब अपने गुनाहों का एक बड़ा सबूत पीछे छोड़कर जाना था। उसके चले जाने पर जाहिर था, लछमनिया को एक गहरा धक्का लगेगा और उस सदमे में अगर उसने भाँडा फोड़ दिया। अगर उसे धोखे-बाज समझकर उसने सब कबूल दिया! तो वहाँ बम्बई में चमकी अगर मिल भी गयी तो शायद पुलिस के लम्बे हाथ उसे पकड़कर वापस खींच लायेंगे। फिर से वह जेल में होगा और चमकी कोठे पर!

बिरजू का जवान दिमाग जो तजुर्बे की आग में तपकर खरा हो चु

"हाँ, ऊकील साहब।"

"लेकिन तुम लोग यहाँ आये ही क्यों, अड्डे पर छिप जाते, कहीं भाग जाते।"

दुर्लभ गुर्राया, "यशोदा ने कहा था, काम खत्म करते ही लखनऊ फौरन आ जाना, बाबूसाब के मंत्री होने का जश्न मनायेंगे।"

"उसी जीप में आये हो, वही जीप नीचे खड़ी है। बेवकूफी की भी हद है। मरवाओगे सबको! यह क्या किया है तुमने?" कमलासिंह चीखा, "अरे ओ यशोदा! सुना! जल्दी करो—जीप फौरन यहाँ से गायब होनी चाहिए, किसी को पता न चले। विण्डस्क्रीन के ऊपर से टाट-बोरा लपेटकर बाँध देना, जहाँ भी खड़ी करना। उठो जल्दी। भागो यहाँ से।"

यशोदावल्लभ को कुछ भी समझ नहीं आया, इन लोगों में क्या बातें हो रही थीं। उस समय उसका ध्यान ताँबाकांड के ऊपर था। श्रीकान्त पाठक ने घबड़वा दिया था। जब कमलासिंह ने उसका नाम लिया तो उसे होश आया। और कोई समय होता तो वह पीछे पड़ जाता, गहराई तक खोजबीन करता। एक-एक बात खोद-खोदकर पूछता। प्रत्येक सम्भव खतरे के विषय में सोचकर ही आगे कदम उठाता। लेकिन इस समय तो उसका पूरा ध्यान ताँबे के सौदे की ओर था। बला टालने की गरज से उसने दुर्लभकाछी से कहा, "वहाँ पिछवाड़े उधर मेनगेट के दाहिनी ओर वाली सड़क पर जो गैराज बने हैं उन्हीं में से एक में तिवारी मिस्त्री रहता है। उसके पास दो गैराज हैं, एक में रहता है दूसरे में मोटर बनाने के औजार और अंगड़-खंगड़ भरा है। तुम लोग जाकर जीप वहाँ खड़ी कर दो, मेरा नाम बतला देना। इस समय हम सब बहुत बड़ी मुसीबत में फँसे हैं, किया क्या जाय, कुछ समझ नहीं आता।"

फिर दुर्लभकाछी के सुझाव पर यशोदावल्लभ ने खाली सिगरेट की डिब्बी उठायी। उसमें तिवारी मिस्त्री को जीप सँभालकर रखने का निर्देश लिख दिया। दुर्लभकाछी, जालिमखाँ उसी समय निकल गये।

यशोदावल्लभ ने अपनी घड़ी मे देखा, पाँच बज रहे थे। दूसरे कमरे में गया। खादी का कुरता बदला। वासबेसिन में मुँह-हाथ धोये, बालों पर पानी के छींटे डाले और तौलिया से पोंछकर, बालों में कंघी की, फ्रिज से ठंडे पानी की बोतल निकालकर पानी पिया। फिर कुछ सोचकर उसने श्रीकान्त पाठक को फोन मिलाया, "पाठकजी ऐसा करिये, आप ही

आठ

आज रंगीनराय के जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण दिन था, जिसकी छाया में उभरती हुई उनकी आकांक्षाओं, सपनों के साकार होने की सम्भावना उसी प्रकार प्रकट हो रही थी, जैसे उत्सुकदास की आकांक्षाओं, सपनों के विलुप्त होने की। लोबीराम की लगायी चिंगारी, आग लगाने के लिए हल्ला बोल चुकी थी। अब रंगीनराय को उसे उभाड़कर जलती हुई लपटों में बदलना था। जिसमें उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ, यशोदावल्लभ सब भस्म हो जायें। लेकिन समस्या तो आग की लपटों को उभारने की थी। रंगीनराय जानते थे, ऐसे कुछ नहीं होगा। कोई धमाका होना चाहिए। ऐसा कुछ जिससे सारा दारुलशफ़ा हिल जाये, लोगों की आत्मा काँप उठे, उनकी नफरत, डर और संकोच के चोले छोड़कर कुछ कर गुजरने के लिए सामने आ जाये। फिर धमाके के साथ जैसे ही उत्सुकदास का विरोध चरमसीमा पर पहुँचे, पार्टी मीटिंग तोड़-फोड़, नारेबाजी, हुल्लड़ में ख़त्म कर दी जाये। लेकिन इसके लिए जहाँ एक तरफ तोड़-फोड़ करने वाले विधायकों को तैयार करना था, दूसरी तरफ गुरुपदस्वामी के जवाब में किसी केन्द्रीय नेता को अपनी तरफ मिलाना।

बढ़ई के चले जाने के बाद, रंगीनराय ने अपने चारों ओर मँडराने वाले खुराकी चमचों, चिलगोजों को इकट्ठा किया। फिर उनकी मदद से फ्लैट के सामने के लकड़ी के घेरे से मेज, कुर्सियाँ वगैरह निकवाकर बा बरामदे में रखवा दी। लकड़ी के घेरे और फ्लैट की बैठक के बीच लगा हुआ पर्दा भी हटा दिया गया। देखते-देखते बैठक और बाहरी ज को मिलाकर खुराकी चमचों के जरिये लायी हुई बड़ी दरियाँ बिछा दी गयीं। दरियों के ऊपर चाँदनी, चाँदनी के ऊपर दीवार के सहारे टेक लगाकर बैठने के लिए तरतीबवार अनेक गावतकिये रखवाये। बैठक, बाहरी जगह के बीच में, बड़े गावतकिये के सामने संदूकचीनुमा छोटी-सी मेज रखी थी जिसके ऊपर लिहाफ का कपड़ा बिछाकर क्लिप में कुछ कागज फँसाकर रखे थे। कागजों के साथ बयानों तथा प्रस्तावों की रूपरेखा बनाने के लिए कलम और स्याही की दावात भी थी। कुछ बैठक से लगे कमरे में मीटिंग में आने वाले नेताओं के नाश्ता-पानी के इंतजाम में जुटे हुए थे,

दारुलशफ़ा आ जाइये…"

"हाँ…हाँ…नहीं, यहाँ मेरे फ्लैट पर नहीं, नीचे कालीशंकर के कमरे में मिलेंगे। जल्दी आइयेगा। अभी बाबूसाहब से मिलना है। फिर पार्टी की मीटिंग भी है आठ बजे। उसके बाद राजभवन जाना होगा, कितनी देर में आयेंगे आप ?"

"यही कोई बीस-पच्चीस मिनट !"

तीन

"पूरे देश में समाजवाद आयेगा…पूँजीपतियों का मुँह काला।" आसमान में मुट्ठी तानकर राघव ने कहा।

"हाँ बन्धु, क्यों नहीं, ऐसे ही आयेगा ! आप होंगे घोड़े पर और मुट्ठी होगी हवा में !" मंजूर ने ठेंगा दिखाया।

"यह मुट्ठी…यह मुट्ठी तो मजदूर एकता का निशान है…इसमें बन्द है वक्त की वह सुबह…"

"जिसका हजारों…हजारों साल से दुनिया के तमाम मजदूरों को इन्तजार है ! ऐसे ही हवा में बँधी मुट्ठी ताने हुए तुम्हारे जैसे खपती आये और चले गये।"

"मुझे खपती कहते हो ? कुछ पता है क्रान्ति का इतिहास ? खाली दिमाग के तो तुम हो, मंजूर भाई !"

"हाँ…हाँ, अब बोलोगे फ्रांस की क्रान्ति फिर सोवियत गणतंत्र और चीन का इंकलाब !"

"यह सब सिर्फ अंधों को ही नहीं दिखता !"

"दिखता है यार लेकिन यह सब इतना थोड़ा है…इतना कम है और अपने आपसे इतना दूर है…"

"यह सब न तो थोड़ा है न अपने आपसे दूर। जहाँ क्रान्ति का दौर आया…"

"वहाँ नयी व्यवस्था के नये ठेकेदार पैदा हो गये।"

"छिः…छीः, कैसा वक्त आया है, कैसे-कैसे प्रतिक्रियावादी होने लगे।

भाई के दरोगा बन जाने के बाद दरोगा द्विवेदी के जीवन का पहला मकसद पूरा हो चुका था। अब तो जान हथेली पर रखकर वे निकल चुके थे। उनके जीवन का दूसरा मकसद था, गुरुपदस्वामी को नष्ट करना। यह काम साझे की सरकार में रहकर कहाँ पूरा होता। इसलिए दरोगा द्विवेदी साझे की सरकार के ऐशोआराम छोड़कर अपनी पुरानी पार्टी में, महज गुरुपदस्वामी से बदला लेने के लिए वापस आ गये। तभी से गुरुपदस्वामी के भूतपूर्व भक्त रामप्रताप द्विवेदी का नाम लोगों ने दरोगा द्विवेदी रख दिया।

उसके बाद दिन-रात दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी को नष्ट करने में लग गये। पहले तो इस महान यज्ञ में उनको असफलताएँ ही हाथ लगीं। साझे की सरकार टूटी तो गुरुपदस्वामी मुख्यमंत्री बन गये। वह उनके लिए बड़ा कठिन समय था। चारों ओर अराजकता, महँगाई, विद्रोह की आग भड़कने लगी थी। दरोगा द्विवेदी ने अपनी हरकतों से उस आग को भड़काने की हर कोशिश की। अन्दर से उत्सुकदास और बाहर से दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी की जड़ें खोद रहे थे। उन दिनों सरकारी कर्मचारियों के कई खतरनाक विद्रोह हुए जिनसे गुरुपदस्वामी का सिंहासन हिल उठा। लोग कहते हैं इन विद्रोहों के पीछे दरोगा द्विवेदी का हाथ था।

दरोगा द्विवेदी अब तक एक खतरनाक आदमी बन चुके थे। गुरुपदस्वामी के प्रदेश पार्टी की सरकार के पतन के बाद भी दरोगा द्विवेदी ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। इधर उत्सुकदास ने दरोगा द्विवेदी की हरकतों से तंग आकर उनके भाई भरतप्रताप द्विवेदी को मुअत्तल करवा दिया। असल में दरोगा बनने के बाद भी भरतप्रताप ने अपनी घूसखोरी की हरकतें जारी रखीं। कान्स्टेबल से एकाएक दरोगा बन जाने पर भी भरत-
प्रताप घूसखोरी कान्स्टे[illegible] ही से करते। [illegible] कौन
समझाता, दरोगा और [illegible] घूस लेने के तर [illegible] के
होता। इसी नासमझी [illegible] की जिसकी [illegible] से
[illegible] ये। अब तो यहाँ तक [illegible]
कान्स्टेबल बनाया जा [illegible]
[illegible] ड़ा कर [illegible] फिर
[illegible] सामने [illegible]
[illegible]

'अब सुनो'''आज तुमको सुनना ही पड़ेगा। मैं समाजवाद का आन्दोलन अभी यहीं से तुम्हारे से शुरू करने वाला हूँ''''

"लेकिन बकरा हलाल करने से पहले उसे खिलाना-पिलाना जो पड़ता है ?" कहते हुए मंजूर ने मुस्की छांटी।

"मतलब !"

"कुछ खिलाओ-पिलाओ।"

"धत् तेरी की। वही इकन्नी छाप बात !"

"सो तो है, फिर भी नाश्ता सामने हो तो उसके साथ बात भी गले से उतारने में आसानी हो जाती है।"

"अच्छा बेट्टा ! इसलिए नहीं फिर भी कुछ मँगाना तो चाहिए ही।" कहकर राघव वहाँ से उठकर चला गया।

राघव बड़े दिनों से इंकलाबी जद्दोजहद में लगा हुआ था। उसके मन, उसकी आत्मा में समाजवाद की गहरी आस्था टूट-टूटकर जुड़ी थी। बड़े धक्के खाये थे उसने। जब छोटा-सा था वह तब से लगा था मुख्तार महमूद के साथ। मुख्तार महमूद समाजवादी नेता थे—बड़े नेता ! उनकी राष्ट्रीयस्तर की राजनीति जोर-शोर से होती। तब वह समाजवादी पार्टी की राष्ट्रीय कार्यसमिति के सदस्य हुआ करते। लोग कच्ची उम्र के राघव को उनके साथ-साथ देखकर कई तरह की बातें किया करते। राघव ने इन लोगों की परवाह नहीं की और ना ही उनकी बातों की। जुलूस-हड़ताल और सत्याग्रह की राजनीति में उसे कितने-कितने दिनों तक जेल में सड़ना पड़ा था। एक लम्बी, कभी न खत्म हो पाने वाली, लड़ाई में वह एक हिस्सा बन चुका था। उसके साथ के काफी लोग धीरे-धीरे कुछ हासिल न कर पाने वाली लड़ाई से ऊबकर सत्तावाली पार्टी में घुस गये। लेकिन राघव आज भी हवा में मुट्ठी बाँधकर समाजवाद की सुबह का इन्तजार कर रहा था।

राघव बस थोड़ी ही देर के लिए बाहर गया था। वह जब लौटकर आया तो उसके साथ दारुलशफा कैन्टीन का छोकरा था जिसके एक हाथ में चाय की केटली और दूसरे में एक प्लेट पकौड़ी थी। खुद राघव अखबारी कागज वाले दो थैले लिये था। उसे देखकर ही मंजूर उठकर बैठ गया।

"तो आ गया अपना लंच !"

तीस साल के राजनैतिक जीवन में अपने को उन्होंने कभी इतना अकेला नहीं जाना। उनको अपना जीवन कभी भी इतना अर्थहीन, सतही, बेकार नहीं महसूस हुआ। उनका क्षोभ असफलताओं के कारण नहीं था, वह तो हालातों, रास्तों के बारे में अपनी अज्ञानता पर आश्चर्यचकित थे। फिर भी बलदेव चौधरी लगन के पक्के थे। सब कुछ होते हुए भी जहाँ एक तरफ वह मुख्यमंत्री बनने की आकांक्षा को छोड़ने को तैयार नहीं थे, दूसरी तरफ किसी कीमत पर उत्सुकदास को विधानसभा दल का नेता मानने को वह तैयार नहीं थे। सही माने में फिलहाल उनकी समस्या उससे भी बड़ी थी। उत्सुकदास के मुख्यमंत्री बनने पर मंत्रिमंडल की सदस्यता उनको ठुकरानी होगी? इस प्रकार उनके सामने अनेक प्रश्न चक्कर काट रहे थे। प्रदेश पार्टी अध्यक्ष के पद से उन्होंने पहले ही इस्तीफा मन्त्रिमंडल के लिए दे रखा था। उन्होंने प्रदेश पार्टी अध्यक्ष पद से इस्तीफा देते समय सोचा था इससे शायद मुख्यमंत्री बन जाने में सहायता मिलेगी या फिर हमेशा की तरह मंत्रिमंडल के सदस्य तो हो ही जायेंगे। लेकिन यहाँ तो लोग तैयार बैठे थे। उनका इस्तीफा तो मंजूर हो गया, लेकिन उनको नया अध्यक्ष नियुक्त होने तक काम चलाने के लिए कहा गया। उधर उत्सुकदास के मुख्यमंत्री बनने से मंत्रिमंडल में भी शामिल न हो सकेंगे। आज जीवन में पहली बार बलदेव चौधरी को अपना भविष्य बेकार लग रहा था। आज पहली बार उनके तराजू में बहुत बड़ा झोल आ चुका था। पुण्य की तरफ वाला उनके तराजू का पलड़ा जमीन पर होगा और पद-प्रतिष्ठा वाला पलड़ा खाली···बिलकुल खाली! लेकिन वह कर भी क्या सकते हैं! गुटबन्दी उनको आती नहीं। अपनी निष्क्रियता, अर्थहीन अंधकारमय भविष्य और तराजू के झोल के लिए वह बेहद बेचैन होकर बरामदे में इधर से उधर तक टहल रहे थे, जब दरोगा द्विवेदी ने उनको आ पकड़ा।

दरोगा द्विवेदी को सूत्र मिल चुका था। बलदेव चौधरी से मुलाकात के बाद हालातों ने नया मोड़ ले लिया। अब उनके प्रयासों का रस नदी दिशा की ओर बहने लगा था। कुछ लोग अभी बाकी थे, लेकिन दरोगा द्विवेदी सब कुछ छोड़कर रंगीनराय से अपने दिमागी प्लैन के बारे में सलाह-मशविरा करने चल दिये।

"काहे की चायपार्टी ?"

"पार्टी अध्यक्ष जो आये हैं।"

"उनसे बात कही।"

"जिसके लिए आपके पास आये !"

"अच्छा तो तुम लोग इधर आवो।" बलदेव चौधरी अंदर की ओर पार्टी अध्यक्ष के पास पहुँचने के लिए चल दिये। उनके पीछे-पीछे मनोहरलाल, मूलचन्द, रंगीनराय भी थे। पार्टी अध्यक्ष उस समय कुछ पत्रकारो से पार्टी के कार्यक्रमों के बारे मे बात कर रहे थे। बलदेव चौधरी ने उनको जरा-सा अलग बुलवाकर रंगीनराय से मिलाते हुए कहा, "रायसाब को तो आप जानते होगे ?"

"हाँ···हाँ, खूब अच्छी तरह, कहिये ?"

"प्रणाम ! आप अच्छे हैं।"

"बस ठीक ही है।"

"अध्यक्षजी, यह अपने रायसाब हैं ना ! इन्होंने आपके सम्मान में एक छोटी-सी चायपार्टी रख ली है। मैंने ही कह दिया था, आप थोड़ी देर के लिए आ जायेंगे।"

"वाह चौधरी साब ! आपने मुझसे बिना पूछे ही हाँ कर दी" पार्टी अध्यक्ष ने हँसते हुए कहा।

"वो क्या था, आठ बजे तो आपको पार्टी मीटिंग में जाना ही थ इसी······"

"अरे हाँ, मुझे तो पार्टी मीटिंग मे जाना था। रायसाब इस बार तो माफ करें···"

"इन्हें कुछ बातें भी करनी थी।" बलदेव चौधरी बोले।

"तो आइये, अदर के कमरे में चलें।" बलदेव चौधरी बोले। पार्टी अध्यक्ष पास ही एके पत्रकारो से माफी माँग अंदर की ओर चल दिये। ंदर जाते-जाते रास्ते में बलदेव चौधरी ने इशारे से मूलचन्द, मनोहर-ाल को बाहर ही रुकने को कह दिया। अंदर के कमरे में बड़े वाले सोफे ़ पार्टी अध्यक्ष, उनके दाहिनी ओर बलदेव चौधरी और बायी ओर रंगीन-ा बैठ गये। कुछ पलों को कमरे में सन्नाटा छाया रहा। सवाल था, बात ा शुरू करे ! बलदेव चौधरी का व्यक्तिगत मामला था, उनके ग्यारह ्मी उनके साथ थे, वह कैसे बोलते ? पार्टी अध्यक्ष तो फिर पार्टी

"मैं तो उत्सुकदास को पी जाऊँगा, चबा जाऊँगा।"

'बात छोटी-सी थी। चाय के बाद इनको सिगरेट पीनी थी। मंजूर लोबीरामछाप चरस की सिगरेट पीना चाहता था लेकिन राघव के डर से निकाल नहीं रहा था। इसलिए नहीं, सिगरेट चरस की थी, बल्कि इसलिए कि लोबीराम का नाम उससे जुड़ा था। फिर दोनों में समझौता हो गया। राघव ने अपनी चारमीनार सिगरेट निकालकर सुलगायी और उधर मंजूर चरस की सिगरेट से दम लगाने लगा। जरा देर के लिए दारुलशफ़ा में मंजूर के कमरे में खामोशी-सी आ गयी। चारमीनार और चरस की सिगरेटों का धुआँ गोल छल्लों से लेकर सीधी लकीर बनकर घुलने-मिलने लग गया।

चारमीनार सिगरेट का आखिरी कश ले लेने के बाद राघव ने उसे जमीन पर फेंक दिया और अपनी चप्पल से उसने सिगरेट के आखिरी हिस्से को रगड़कर मसल डाला। राघव जिसे ज्यादातर लोग राघू कहते थे, इस वक्त बेचैन-सा हो चला। बार-बार, सिगरेट पीने के दौरान कलाई पर बँधी घड़ी को देख रहा था। अब सिगरेट खत्म करने के बाद वह उठकर खड़ा हो गया और कमरे के एक ओर से दूसरी ओर तक बार-बार चहल-कदमी करने लगा। उसकी फ्रेंचकट दाढ़ी जरा कुछ बेतरतीबवार, गोरे-भरे चेहरे पर इधर-उधर फैली हुई थी। फिर भी पेशानी, बड़ी आँखें, चेहरे की नुकीली हड्डियों से हल्का-हल्का झटका बार-बार उठ रहा था। उसकी मुट्ठी बँधी थी और कुछ देर यूँ ही टहलने के बाद वह बाहर निकलकर बरामदे में दूर-दूर तक झाँक लेता।

कुछ राघव की खामोश चहलकदमी और कुछ चरस के मजे-मजे चढ़ने की वजह से मंजूर भी इस बीच कुछ बोला नहीं। शाम के पाँच बजने वाले थे। और अब ज्यादा देर तक कमरे में बन्द रहने से उसका भी जी उकताने-सा लगा। तख्त पर से उठकर वह राघव को देखने लगा। उसने सोचा, नजर मिले तो बाहर निकल लेने के लिए राघव से कहेगा। फिर उसे लगा, राघव इस समय कहीं और'''कहीं दूर जा चुका है। उसका जजबाती हिस्सेदार ही नहीं, राघव उसकी अपनी जिन्दगी का एक हिस्सा था। राघव दुनिया में अकेला था और हमेशा जान हथेली पर लिये रहता। उसका हर राज मंजूर को मालूम था फिर भी इस वक्त की उसकी चहलकदमी और उसके अलग-अलग बने रहकर वहाँ कमरे में एक

नही जायेगा, इतने कम समय मे इन्कलाबी माहौल पैदा करना न
था। शतरंज की बाजी तैयार थी और तब अपने हाथों से उसे
जाते देखकर रंगीनराय बेहद बेचैन हो रहे थे। उन्होंने तय किय
भी हो, भले ही पार्टी अध्यक्ष नाराज हो जायें, इस समय हमला य
सीधे उनको माध्यम बनाकर पार्टी हाईकमाण्ड पर करना होगा ि
गुलगपाड़ा मचने पर यह कुछ कह न सकें, हमें नहीं बताया।

रंगीनराय नाप-तोल में फँसे ही थे, तभी पार्टी अध्यक्ष ने बल
चौधरी की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा तो बलदेव चौधरी ने ही बात शु
कर दी, "हाँ तो, रायसाब कहाँ खो गये?"

'मैं जरा-सी देर के लिए दारुलशफ़ा में हो रहे उस हाहाकार में ख
गया था जिसे हमारी राष्ट्रीय पार्टी के अध्यक्ष सुनने तक को तैयार नहीं।"

"रायसाब यह आप क्या कह रहे है?" बलदेव चौधरी ने पार्टी
अध्यक्ष का बचाव किया।

"लेकिन पार्टी अध्यक्ष ने हाथ उठाकर उनको आगे कुछ कहने से
रोक दिया और रंगीनराय से बोले, "रायसाब आप निःसंकोच जो कुछ
कहना चाहे, कह सकते है। मुझे तो यहाँ भेजा ही इसीलिए गया। लेकिन
यहाँ आकर मुझे तो कोई हाहाकार दिखा ही नहीं।"

"हाँ आपको दिखता भी कैसे? आपके पर्यवेक्षकों ने रिपोर्ट दी
होगी।"

"वह तो है ही और आज हवाई अड्डे से लेकर यहाँ गेस्टहाउस तक
जितने विधायक हमसे मिले उन्होने पार्टी अनुशासन में पूरी निष्ठा प्रकट
की। जो कुछ आज होने जा रहा है, उससे न तो कहीं असंतोष लगता,
ना ही कोई हाहाकार। अब तो मुझे लगता है, यहाँ मेरे आने की आव-
श्यकता ही क्या थी।' पार्टी अध्यक्ष ने क्षोभ में कहा।

यही मौका है, इन्हें तोड़ने का, रंगीनराय ने सोचा। बलदेव चौधरी
की ओर सहारे के लिए देखते हुए, अपनी समस्त ताकत बटोरकर उन्होंने
वार किया, "कमाल है! मान्यवर! यहाँ आग लगी है और किसी को
कुछ दिखता ही नहीं। असंतोष कहाँ है, आप पूछते हैं? एक-एक विधायक
के मन में असंतोष की जो काली छाया निराशा के बादलों की तरह छा
गयी उसे अगर अभी अप्रजातान्त्रिक तरीके से कुचल दिया तो किसी अन्य
घातक रूप में उभरकर सामने आयेगी। कोई मन में झाँककर देखे तो पता

सबकी जिम्मेदारी वह अपने ऊपर ओढ़ लिया करते। सब कुछ होते हुए इन घपलों से उनके खानदानी रिश्तेदारों, भाई-भतीजों के दोस्तों को किसी न किसी रूप में फायदा ही पहुँचा था। कुछ घपले उन्होंने पार्टी के लिए भी किये थे। लेकिन ससुरा ताँबाकांड भी अजीब मामला था। करोड़ों की बात, इतना हल्ला ! और उनको कुछ पता भी नहीं था।

यह उनके बड़े सुख के दिन थे। तेइस साल तक प्रदेश राजनीति में जूझे रहने के बाद अब उनको भारत के गृहमंत्री का पद मिला था। उनकी प्रतिष्ठा, उनका सम्मान आकाश की ऊँचाइयों को छूने लगा था। इतने महत्त्वपूर्ण पद पर पहुँचने के बाद उन्होंने मन-ही-मन सौगन्ध उठायी, घपले ना करने की। खानदानी रिश्तेदारों, नातेदारों, भाई-भतीजों के धन्धे-बाज पिछलग्गू दोस्तों को उन्होंने बड़ी सौजन्यता से काट रखा था। जिले, प्रदेश की राजनीत में घपलों की बात और थी लेकिन यहाँ तो पूरे राष्ट्र की प्रतिष्ठा उनके साथ बँध गयी। सच्चे मन आत्मिक निष्ठा में, पूरे अनुष्ठान सहित उन्होंने अपना यह नया जीवन शुरू किया था। नियति-चक्र निष्ठा और अनुष्ठान में कहाँ बँधता। लोगों का कहना ठीक था, जहाँ गुरुपदस्वामी जाएँगे, उनसे दो कदम आगे घपले उनसे पहले ही पहुँचे होंगे।

आज गुरुपदस्वामी अंगारों पर जैसे लोट रहे थे। उनके जीवन में ऐसा धर्मसंकट कभी नहीं आया। आज ६५ वर्ष की अपनी उम्र में उनका अपने ऊपर से विश्वास उठने लगा। ताँबाकांड एक घपला था जो अभी सामने आया। ऐसे न जाने कितने घपले और होंगे जो अनजाने में उनसे रवाए गए होंगे। जब इसी तरह सब चलना है तो कभी भी कुछ भी जाएगा। कौन जाने कब कौन-सा संकट कालदूत की तरह उठ खड़ा।

इसी डर की वजह से पिछले कुछ दिनों में उत्सुकदास को मुख्यमंत्री ने के लिए उन्होंने पूरा जोर लगा दिया। हालाँकि इधर कुछ समय से दानी रिश्तेदार, पुराने श्रद्धालु लगातार उनको उत्सुकदास के फ भड़काते, तरह-तरह की बातें कहते, चुगली करते पर चिकने घड़े रह यह जानकर भी अनजान बने रहे। सच बात तो थी, उत्सुकदास और उनके पास कोई था भी नहीं। ताँबाकांड ने उनकी आँखें खोल ने न जाने और कितने मामले निकलेंगे मगर उनका कोई कट्टर

"नहीं भई, अभी तो जाना नहीं होगा।"

"क्यों भला, क्यों ?"

"अब तुम्हें क्या बतायें।"

"अच्छा···हमें क्या बतायें ? फिर भी कोई आने वाला है क्या ?"

"हाँ।"

"कौन, रीतू ?"

"ना।"

"फिर ?"

"कमाल है यार ! तुम तो ऐसे पूछते हो जैसे कोई घरेलू रिश्ते-नाते की बात है ?"

जाहिर था···मंजूर का अन्दाज सही निकला। उसने राघव को इतनी देर देखने के बाद यही ताड़ा था, बात रीतू की होगी या इंकलाब की। जब बात रीतू की नहीं थी तो इंकलाब की होगी। अब पकड़ में लेने की गरज से उसने खुद अपने अकेले ही बाहर हो आने की बात कहनी चाही फिर उसे ख्याल आया, ऐसे में, राघव को, जब रीतू को नहीं आना था, शायद उसकी ही जरूरत पड़े। फिर भी उसे जबरदस्ती तो करनी नहीं थी।

"अच्छा होगा राघू, थोड़ी देर को सामने बरामदे में या बाहर मैदान में चलें। या फिर तुम अकेले ही रहना चाहोगे ?"

"नहीं ऐसी तो कोई बात नहीं, और तुम गैर हो क्या ?"

"तो चल।"

दोनों गैलरी से होते हुए 'बी' ब्लाक के सामने वाले मैदान से लगी सड़क पर टहलने लगे। लेकिन राघव का वहाँ जी नहीं लग रहा था। वह बार-बार मंजूर के कमरे और उसके सामने के बरामदे को दूर तक देख रहा था। तभी किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखा जिसके साथ चौंककर उसने पीछे मुड़ते हुए कहा, "कहाँ रह गये थे ?"

"वाह भई वाह ! इतनी बेकरारी थी मिलने की तो पहले बताया होता।"

"अरे, सी० पी० तुम !" राघव के तमतमाये चेहरे पर से लाली उतरकर पीलेपन में बदल गयी। "धत तेरे की, यह तो सी० पी० था।···"

तभी मंजूर की ओर मुखातिब होकर सी० पी० बोला, "इनको क्या

वही राज्यपाल एक बार फिर उनके उत्सुकदास के मुख्यमंत्री बन शायद अड़चनें डालने की कोशिश कर रहे थे। वह केन्द्र सरकार के गृहमं थे। स्वयं उनकी उपस्थिति में केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने इन्हीं की सिफारि पर राष्ट्रपति शासन समाप्त करने का फैसला लिया था। दिल्ली से चल के पहले केन्द्रीय मंत्रिमंडल की सिफारिश राष्ट्रपति को आज सबेरे ही भेज दी गयी थी। यद्यपि राष्ट्रपति शासन समाप्त होने की अधिकृत घोषणा अभी नहीं हुई थी, अखबार के जरिये, दारुलशफ़ा से गली-कूचों तक सबको प्रजातांत्रिक सरकार के गठन के बारे में पता था। पार्टी अध्यक्ष, केन्द्रीय पर्यवेक्षक और वह खुद भी दिल्ली से उत्सुकदास को नेता बनवाने के बाद मंत्रिमंडल के शपथ समारोह में शामिल होने के लिए ही आये हुए थे। लेकिन राज्यपाल महोदय के अनुसार अभी तक राष्ट्रपति शासन समाप्त होने के घोषणा पत्र पर राष्ट्रपति ने दस्तखत भी नहीं किये। राज्यपाल ऐसा क्यों कहा? इसी के संदर्भ में उन्हें पार्टी अध्यक्ष के साथ हवाईजहा में आते समय की बातचीत याद आयी। लखनऊ में उनके कार्यक्रम ज जानते समय पार्टी अध्यक्ष ने इशारे से कहा था, पार्टी मीटिंग से पहले उनको दिल्ली बात करनी होगी। उस समय तो गुरुपदस्वामी ने कोई महत्व नहीं दिया, लेकिन राज्यपाल से मिलने के बाद, हवाई यात्रा के दौरान पार्टी अध्यक्ष की कही हुई छोटी-सी बात राज्यपाल की कही कुछ वैसी ही बात से मिलाकर उनके मन में खुजली मचाने लगी। उनको लगा, उनसे कुछ छुपाया गया। उनकी पीठ के पीछे कोई और खेल खेला जा रहा था। इस अनुभूति से, जहाँ एक तरफ, उनके अन्दर क्रोध की तीव्र लहर उठी, दूसरी तरफ वही लहर पेट में जाकर ठण्डी मरोड़-सी बन गयी। एक क्षण को लगा उन्हें धोखा दिया जा रहा था। गुरुपदस्वामी, परेशानी की हालत में, तथ्यों को तरतीबवार सजाकर उस गुप्त खेल को पकड़ने की कोशिश करने लगे थे, जो उनकी पीठ के पीछे खेला जा रहा था।

राजभवन में होनेवाले शपथ समारोह के लिए अभी भी दोनों तैयारियाँ की थीं। पहली प्रक्रिया राष्ट्रपति शासन के समाप्त होने की घोषणा, दूसरी उत्सुकदास को सरकार बनाने का निमंत्रण था। उत्सुकदास को सरकार बनाने का निमंत्रण राज्यपाल तभी देंगे, जब पार्टी मीटिंग में नेता चुनाव हो जायेगा। नेता का चुनाव करवाने के लिए पहले तो गुरुपदस्वामी को अकेले ही आना था लेकिन अब पार्टी अध्यक्ष भी भेज दिये।...

उसी समय गुरुपदस्वामी को कुछ फुसफुसाहट, कुछ गुरगुराहट की आवाजें आयी। राजभवन के विशाल कमरे में उन्होंने देखा, अधिकारियों का समूह उनकी विचारमग्न मुद्रा देखकर उनके सामने से हटकर दरवाजे के पास खड़ा था। वहीं बाहर से मुलाकाती उचक-उचककर अन्दर की ओर झाँकने की कोशिश कर रहे थे। बड़े स्वाभाविक रूप से उन्होंने सोफे के बगल की छोटी मेज पर रखा हुआ पान का डिब्बा उठाया। उसे खोलकर चार पान मुँह में ठूँस लिये। फिर हल्की-सी तम्बाकू चुटकी में लेकर मुँह में डाली और सींक से थोड़ा किमाम चाट लिया। तब मुख्य सचिव को अपने पास बुलाकर कहा :

"आपने ताँबाकाड पर रिपोर्ट भेज दी ?"

"ताँबाकाड की रिपोर्ट तो पी० एम० हाउस तीन बजे तक पहुँच गयी होगी।"

"क्या मैं उसे देख सकता हूँ ?"

"हाँ ! हाँ ! हम उसकी कापी मँगवा लें।"

"तो फिर ऐसा करिये उसे लेकर आप करीब बीस मिनट के बाद आइये। तब तक जरा मुलाकात कर लें।"

"हाँ सर ! बाहर लोगों का हल्ला मचा है।"

उनको प्रणाम करके मुख्यसचिव बाहर की ओर जाने लगे तो गुरुपदस्वामी ने उनको रोककर कहा, "देखिये ! बाहर मेरा पी० ए० होगा तो उससे कह दीजियेगा पी० एम० हाउस लगाकर टेलीफोन यहाँ ले आये।"

"अच्छा, सर !"

मुख्यसचिव के बाहर जाते ही मुलाकातियों का सिलसिला शुरू हो गया। गुरुपदस्वामी अपने मधुर स्वभाव के लिए मशहूर थे। उनके यहाँ भले ही मुलाकातियों को इन्तजार करना पड़ता लेकिन देर-सबेर वह सबसे मिल लिया करते। इसीलिए हमेशा की तरह मुलाकातियों की भीड़ धक्कमधुक्का कर रही थी। हर आदमी पहले जाना चाहता था। जिन लोगों ने अपना-अपना सूत्र बनाकर चपरासियों और व्यक्तिगत स्टाफ की मुट्ठियाँ गर्म कर रखी थी उनको तो मौका मिल गया। इसी तरह और मुलाकातियों की नौकरी, कोटा, परमिट, नहर का पानी, बिजली और बीवी भाग जाने तक की समस्याओं को उन्होंने एक-एक करके सुना जरूर, लेकिन मन उनका कहीं और था जिसकी वजह से आदतन ऐसे

"लेकिन बात क्या है?" राघव ने पूछा।

"बात यह है।" नहले पर दहला लगाते हुए सी० पी० ने कहा, "सारे किराये के लोग तो उत्सुकदास के जुलूस में चले गये!"

"ओह! तब क्या करोगे?"

"वही पूछने आया था।"

"हमसे? भला हम क्या बतायें?"

"कुछ तो करो! ना हो कुछ चमचे, कुछ नमकीन चिलगोजे ही दिलवाय दैव!"

"यह भला आज यहाँ मिलेंगे?" मंजूर ने जैसे किसी बेवकूफ़ी-भरी बात पर ताज्जुब किया।

"माना मांसाहारी चमचे मंत्रिमंडल बनने में ताजा गोश्त की बू खोजते होंगे। पर वे चकरबन्ध, वे चिलगोजे जिनके मालिक मन्त्री नहीं बन पाये वे तो खाली होंगे।"

"वे भी कहाँ खाली होंगे?"

"क्यों, उनको क्या आँसू पोंछने हैं?"

"उसके अलावा पार्टी मीटिंग में कुछ हुल्लड़ दिल्ली वाले नेताओं की परिक्रमा भी तो गयी-रात तक जो चलनी थी।"

"तब तो मारे गये गुरु! मैंने सबको जबान दे डाली थी।"

"लेकिन तुम्हारा जुलूस भला करेगा क्या? वहाँ उत्सुकदास का लाख-डेढ़ लाख का होगा! उस पर सौ-पचास लाकर करोगे भी क्या?"

"अरे यह तुम कहते हो, तुम मंजूर भाई। तुमने पाँच-दस लोगों को लेकर हजारों की भीड़ झेली थी। एक नहीं, कई-कई बार तुमने डण्डे, जुल्म, गोलियों के बीच जान हथेली पर लेकर नारे लगाये, खिलाफ़त की! अब..."

"नहीं, सी० पी० यह बात नहीं, खिलाफ़त तो होनी ही चाहिए। फिर भी प्लान क्या है?"

"प्लान तो बड़ा है। पर देखो होता क्या है।"

"क्यों भला?"

"मंजूर भाई, हम थोड़े से लोग लेकर जायेंगे और तब जायेंगे जब उत्सुकदास का हुज्जूम ट्रकों में...बसों में लदकर जा चुका होगा।"

"फिर!"

"सबेरे तक तो सब ठीक रहा। मोइ जो गण्डधारी रंगीनराय हैं ना, वही संझा का कौनो पट्टी पढ़ाइन हैं।"

"रंगीनराय ?" गुरुपदस्वामी को आश्चर्य हुआ, "लेकिन उनका नाम तो बलदेव चौधरी की जगह पार्टी अध्यक्ष के लिए चला था।"

"अरे गुरुजी, बलदेव चौधरी कम हरामी है। वही तो भुकुरे बैठे हैं।"

"काहे रे, चौधरी तो मंत्रिमंडल में दो नम्बर पर होंगे। गृहमंत्रालय या वित्त विभाग मिलेगा उनका।"

"इस पर भी उनकी छाती ठण्डी न होगी। वह तो मुख्यमंत्री बनने के चक्कर में हैं।"

"बलदेव चौधरी और मुख्यमंत्री ? पगलाय गएव हो का बलराम ?"

"पगलाय हम नहीं उइ गये है।"

"ई कैसी बात ? उन दिनों वह दिल्ली कई बार आये थे। हमसे भी मिले लेकिन यह बात तो उनने कही नहीं।"

"कहिते कैसे शर्माशात हैं ना !"

"चौधरी का छोड़ौ, मति मारी गयी जो कुछ करेंगे मंत्रिमंडल में मिली जगह भी छिनेगी।"

"उसका लिए वे तैयार हैं।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब साफ है गुरुजी, चौधरी विद्रोह पर उतारु हैं। मनोहरलाल र मूलचन्द कहि रहे थे वह उत्सुकदास के नीचे काम न करेंगे।"

"अच्छा।"

"हाँ गुरुजी, खुद तो पार्टी अध्यक्ष के पीछे लगे हैं और मनोहरलाल, न्द पूरे दारुलशफ़ा में घूम-घूमकर बलदेव चौधरी जिन्दाबाद के नारे रहे। ताजा खबर है, चौधरी के लोग रंगीनराय से मिल गये। उधर ाम का पहिले ही राय फुसलाइन है।"

ो यह लोग अब आखिर करेंगे क्या ?"

वेला गुरुजी ! पक्का बवेला !! सात बजे के बाद, पार्टी मीटिंग राय की बैठक मा इन लोगों की गुटबन्दी हुएगी।"

क्षण परिस्थितियों को तोलने के बाद गुरुपदस्वामी बोले, "का , चौधरी और राय तो गुड़गोबर हैं। इनके बस का तो कुछ है ान ऊ ससुरा लोबीराम जो इनके साथ मिलि गया तब बंटाधार

उनका जैसे ही फोन आयेगा, घोषणापत्र पर राष्ट्रपति के दस्तखत हो जायेंगे।"

गुरुपदस्वामी को कुछ भी समझ नहीं आ रहा था। विचारतंद्रा उलझकर कहीं फंस गयी थी। इधर बलराम शास्त्री सहित तीनों विधायक फटी-फटी निगाहों से टेलीफोन को घूर रहे थे, जैसे वहाँ से कोई बहुत खतरनाक किस्म की गैस निकल रही हो।

"तो आप, गृहमंत्रीजी, पार्टी अध्यक्ष से यहाँ फोन करवा दें, पी० एम० ने कहा है।"

"ठीक है।" कहकर गुरुपदस्वामी ने रिसीवर पटक दिया। फिर उनके कहने से बलराम शास्त्री ने पार्टी अध्यक्ष से बात करने के लिए स्टेट गेस्ट हाउस मिलाया तो पता लगा, पार्टी अध्यक्ष बलदेव चौधरी के साथ अभी-अभी कहीं चले गये। इसके बाद गुरुपदस्वामी का चेहरा देखने लायक था। हजार-हजार गर्द-गुबार उनके चेहरे पर पहुँचने लगे। होंठ सूख गये, उनके रुँधे हुए गले से आवाज ही नहीं निकल रही थी। वह बार-बार हाथ की हथेलियों को जान लाने के लिए रगड़ते।

गुरुपदस्वामी को उस समय अपने हाथों से प्रदेश की राजनीति के साथ ही अपनी सत्ता निकलती हुई दीख रही थी। उनको मालूम था, अगर किसी वजह से आज मंत्रिमंडल न बन सका तो आगे क्या होगा, नहीं कहा जा सकता। फिर कम-से-कम उत्सुकदास का मुख्यमंत्री बनना नामुमकिन हो जाएगा। उसके बाद कब सरकार बनेगी, कौन मुख्यमंत्री होगा? अगर उत्सुकदास के अतिरिक्त कोई और मुख्यमंत्री होगा तो वह खुद दिल्ली में और कितने दिन रह सकेंगे? उनके जैसे इतने बड़े नेता के लिए जो केन्द्र का गृहमंत्री था, जो कुछ भी आज हो रहा था, कितना शर्मनाक था। सरासर बेइज्जत करके, पीठ पीछे जो खेल आज खेला जा रहा था उससे उनकी प्रतिष्ठा को कितना धक्का लगा होगा? उन्हें मालूम था यह सब ताँबाकाण्ड की वजह से ही हो रहा था।

हमेशा की तरह आज एक बार फिर ताँबाकाण्ड ने उनकी जड़ें हिला दी थीं। उनके जीवन में इस तरह कांडों ने हमेशा ही उनको जलील किया था। वक्त कितना भी बदल गया, वह कितने बड़े नेता हो गये, इतने ऊँचे पद पर थे, फिर भी उनके जीवन का रवैया वैसा ही था। इन घपलों ने उनका पीछा कभी नहीं छोड़ा। हर बार उनको दूसरों ... ों के

हाँ यह बात और थी तब डाँट देने के बाद मुख्तार अहमद ने इतना तो कह ही दिया था 'राघव को पहले जैसा न समझते रहना।' मुख्तार अहमद वैसे भी अब कहीं आते-जाते तो थे नहीं, बस खटिया पर पड़े-पड़े अपनी बीमार जिन्दगी की आखिरी साँसें गिन रहे थे। फिर भी राघव वहाँ जरूर जाता और अपनी सारी बातें जी खोलकर बस इन्हीं से कहा करता। उस बात के बाद आज पहली बार मंजूर को राघव की हरकतों में साफगोई नजर नहीं आ रही थी।

मंजूर जब अपने कमरे पर जा पहुँचा तो राघव तो वहाँ था ही लेकिन उसके साथ दो आदमी और थे। खटखटाने पर कमरे का बन्द दरवाजा जैसे ही खुला तो राघव से छेड़खानी के अन्दाज में वह कुछ कहना चाह रहा था तभी उसकी नजर राघव के पीछे खड़े हुए दो और आदमियों पर पड़ी। उन आदमियों को उसने पहले कभी तो देखा नहीं था, इसलिए पहले तो उसने कुछ जान लेना चाहा फिर वहाँ एक खास तरह का डरावना माहौल महसूस किया जिससे वह चुप ही रहा। उसके बाद दोनों आदमी आँखों-ही-आँखों में राघव को कुछ इशारा करके चुपचाप बाहर निकल गये।

अब तक राघव का मूड काफी हल्का हो चुका था। पहले जैसा उसके अन्दर का तनाव गायब हो गया तो उसकी जगह उमंग और जोश की लहरें उठने लगी थीं। दोनों आदमियों के जाते ही वह फिर से चहकने लगा, "अरे मंजूर भाई, इतनी जल्दी सी० पी० ने बख्श दिया!"

अपनी सारी प्रतिक्रियाओं को दबाकर सामान्य बनने की कोशिश कर लेने के बाद मंजूर ने कहा, "क्या करें राघू, तुम तो चले आये थे!"

"मेरे चले आने से क्या? तुमको तो बाहर घूमने की भड़ाँस थी?"

"जो तुम कह आते तो कुछ देर और रह लेता। आज तो बड़ा जश्नेमाहौल है यहाँ, वक्त काटने की बात तो थी नहीं।"

"हाँ, मुझे तो आना ही था, मैंने तो पहले ही जाने तक को मना किया था।"

"हाँ, इन लोगों का ही इन्तजार था तुमको?" मंजूर ने हकीकत जैसे बयान कर दी।

"हाँ मंजूर भाई!"

"कौन थे ये लोग?"

इतना बड़ा मामला उनकी आँख के नीचे से निकल गया, लेकिन तब उनको कुछ भी नजर नहीं आया। तांबाकांड ने एक बार फिर उनको ऐसे मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया, जहाँ उनकी शराफत या कुछ हद तक राजनैतिक जीवन का लुच्चापन उनके ऊपर कोड़े बरसा रहा था। लोग पत्थर फेंक रहे थे, कीचड़ उछाल रहे थे, उनकी सादगी, उनके भोलेपन ने एक बार फिर तिकड़मबाजों के सामने उनको जलील करके खड़ा कर दिया।

पी० एम० हाउस से गुरुपदस्वामी की बात सुनकर, बलराम शास्त्री सहित तीनों विधायक सन्नाये बैठे थे। किसी को कुछ कहने की हिम्मत नहीं थी। उधर गुरुपदस्वामी हथेलियाँ रगड़ते हुए ब्रह्मांड की नश्वरता के विषय में सोच रहे थे। तभी बलराम शास्त्री ने हिम्मत करके पूछा, "तो गुरुजी उत्सुकदास को लगाएँ।"

फटी-फटी निगाहों से गुरुपदस्वामी ने कुछ देर देखने के बाद धीरे-से कहा, "अब देर न करें, बलराम !"

बलराम ने झपटकर फोन उठाया ही था, गुरुपदस्वामी का पी० ए० करीब-करीब दौड़ता हुआ अन्दर आया। दरवाजे के बाहर भी हड़बड़ी में हटो···हटो···रास्ता दो···की चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। पी० ए० ने आश्चर्यमिश्रित उल्लास में कहा, "बाईजी, आयी हैं।"

गुरुपदस्वामी ने अपने पी० ए० को देखा, जैसे उसने अनायास ही कोई बड़ी मूर्खतापूर्ण बात कह दी हो।

"क्या ?"

"हाँ सर ! बाईजी आयी हैं !"

"इस समय यहाँ···"

तभी गुरुपदस्वामी ने देखा, सामने के दरवाजे से, हरे किनारे की सफ़ेद धोती में, धवल, स्नेहयुक्त आभा बिखेरती हुई, सम्मान, सौन्दर्य की संगमरमर से तराशी हुई प्रतिमा जैसी वह स्त्री चली आ रही थी जिसके साथ उनका सम्बन्ध बड़ा गहरा, बहुत पुराना था।

बाईजी और कोई नहीं, गुरुपदस्वामी के छोटे भाई की दूसरी पत्नी थीं। आज बिना किसी पूर्वसूचना के अनायास उनके यहाँ आ जाने से गुरुपदस्वामी जहाँ एक तरफ आश्चर्यचकित थे, दूसरी तरफ उनके अन्दर की प्रतिक्रियाएँ उल्लासमय मनःस्थितियों में उलझी हुई थीं। पी० एम०

गुजर गये। छोटे भाई की मौत के संस्कार तो उसके लड़के ने ही किये लेकिन यह सब उनकी आँखों के सामने, यहीं उनके घर में ही हुआ था। यह पैंसठ दिन और फिर हर मौत के बाद के दस दिन तक कम-से-कम मनहूसियत छायी रहती। इस तरह १०५ या कुल १२५ दिन, १२५ रातें, गुरुपदस्वामी ने बड़ी तपस्या में गुजारे, भीषण मानसिक पीड़ा और संताप में गुजारे। मानसिक पीड़ा, संताप के इन क्षणों में साथ देने के लिए उनकी हवेली में सिर्फ बाईजी थी।

बाईजी जब विधवा हुईं तो वह उन्नीस-बीस के करीब होंगी। लम्बा कद, भरा हुआ बदन, बड़ी-बड़ी आँखों में जैसे शराब के समन्दर लहराते। गुलाबी महीन रसीले होंठ हर वक्त किसी से कुछ कहने को आतुर रहते। नाक-नक्श अजन्ता की गुफाओं की मूर्तियों सरीखे, सूरज की तपन और चांद की शीतलता से मिले-जुले जैसे रोशनी में नहाये थे। अंगों के कटाव, सफेद साड़ी से कितना ही ढकने पर उभरकर सामने आ जाते। उन दिनों बाईजी की सारी जवानी उनके सीने के उभार पर सिमटकर आ गयी थी। ब्लाउज के नीचे मांस की गोलाइयाँ जैसे कंचुकी को तोड़कर दूध में सने हुए दो कबूतरों की तरह उड़ जाने को बेताब रहतीं। बाईजी सिर्फ सुन्दर नहीं थीं, उनकी सुन्दरता में मादकता के साथ व्यक्तित्व और सम्मान की उन दिनों भी आभा झलकती। इन गोलाइयों के नीचे के कटाव में जैसे किसी कलाकार की तराशों से भरे हुए अनेक-अनेक रंगों के सैलाब और मांसपेशियों के उतार-चढ़ाव सब कुछ अपने अन्दर समेट लेना चाहते। उनका एक-एक अंग किसी अप्सरा की तरह मनुष्य के पुरुषार्थ का मर्दन करता, चुनौती देता। बाईजी जिधर से निकल जातीं लोग समय की नश्वरता, स्वर्ग की मोहकता, स्वार्थ, ईर्ष्या-द्वेष सब कुछ भूलकर बस एकटक उनको देखा करते। वह स्वयं में एक सम्पूर्ण संसार थीं जिसके करीब आने पर हवा भी महकने लगती, चारों तरफ का वातावरण मादक तरंगों में झूमने लगता।

यह सब, इतना सौन्दर्य, इतना आकर्षण, गुरुपदस्वामी के लिए बहुत था। नारी को उन्होंने सिर्फ रात के अँधेरे में आरामबिस्तर पर सोने से पहले अंगों की जकड़न समाप्त करने का ही साधन समझा था। जेल से बाहर आकर वह जब भी अपनी घरवाली से मिलते, बस इतने से सुख के लिए, बस इतना ही पाने के लिए। बाद के दिनों में तो उनको

सीटी बजाता हुआ उस गठरी को खोलने लग गया। गाँठ जरा मजबूत बँधी थी, कई परतें थीं उसमें। इस बीच वह याद करने लग गया, भला कुरता कौन-सा पहिन लेगा। कुछ लुंगी भी निकाल लेने जैसा ख्याल आया। लुंगी के ख्याल से जुड़ी कुछ और बातें झन्नाटे से उसके जहन में पैदा हुईं जिनके साथ एक बार फिर उसका हाथ रुक गया और वहीं धम से जमीन पर बैठकर हँसने लगा।

उसकी हँसी की आवाज सुनते ही दौड़ते हुए राघव अन्दर आ गया। वहाँ चादर में लपेटी हुई गठरी के सामने मंजूर को बैठकर हँसता देखकर वह सकते में आ गया। एक सन्नाटा···एक झटका माथे से बड़ी तेजी से गुजरकर उसके पेट की अन्तड़ियों तक को हिला गया।

कमरे में किसी को आया जानकर मंजूर की हँसी रुक गयी। फिर उसने घूमकर देखा, "अरे राघव तुम! भई यह तो बताओ···," गठरी की ओर इशारा करके उसने पूछा, "धोबी आया था या धोबन।" इतना कहकर वह फिर खी···खी करके हँसने लगा।

उधर राघव का बुरा हाल था। फिर अपने को सँभालते हुए उसने मंजूर को तीखी निगाहों से देखा। ऐसा करना···जब मंजूर भाई का हँसी से बुरा हाल हो उसे अच्छा तो नहीं लगा। फिर भी और कुछ उसे सूझा नहीं। उसकी तीखी नजर के अहसास से मंजूर की हँसी तो काफूर हो गयी फिर उसने गठरी की ओर देखा और फिर राघू की ओर। तब उसे भी कुछ और लगा। गले में दबी हुई खराश को निकालते हुए उसने कहा, "क्या है, राघू, क्या है इसमे?"

"इधर आओ मंजूर भाई, इसको न छूना। धोबन नहीं यह तो मेरे इन्कलाबी साथी लाये थे। मैंने तुम्हारी चादर में बाँध दिया था इसे।" बड़ी मोटी आवाज थी राघव की।

"फिर भी बोलो तो, क्या है भला इसमें?" मंजूर को जरा दहशत-सी होने लगी थी।

"इसमें मंजूर भाई···इसमें तो मोलोटोव काकटेलस है। इनको न छूना!"

बाईजी उसके बाद गुरुपदस्वामी के जीवन का सम्पूर्ण अंग बन गयीं। सब कुछ जो टूटा हुआ था, बिखरा हुआ था, वहीं आकर जुड़ गया। ऐसे जुड़ गया फिर कि कभी टूटा नहीं। घर में, बाहर, पार्टी में, सरकार में हर कदम पर बाईजी उनके साथ रहतीं। जो वह चाहतीं वही होता। गुरुपदस्वामी की चाहत, आकांक्षाएँ, अभिलाषाएँ, सम्मान सत्कार उनमें अलग अर्थहीन, कुछ भी नहीं था। बाईजी की बात सबसे बड़ी बात थी, उनका हुक्म सबसे बड़ा हुक्म था। गुरुपदस्वामी की महानता, जानने-सुनने की सारी शक्ति बस बाईजी के सामने आकर बिखर जाती। एक छोटे अबोध बालक की तरह, अपनी ही मान्यताओं के घेरे में, झूठी-सच्ची माँगों के लिए वह हमेशा-हमेशा के लिए बाईजी से बँध गए। आत्मा पवित्र थी, मन की गहराइयों तक डूबा हुआ उनका निश्छल सम्बन्ध स्वाभाविक मानवीय प्रवृत्तियों से जन्मा था। लेकिन यह सब वह लोगों को कैसे समझाते? किसको-किसको सफाई देते? फिर लोगों में इस स्तर की समझ ही कहाँ थी। अपने-गैर, सभी पहले दबी ज़ुबान से फिर खुलेआम उनके ऊपर कीचड़ उछालने लगे। यहीं से, दस बरस पहले गुरुपदस्वामी के जीवन में घपलों की, कांडों की शुरुआत हुई थी। यह घपला तो उनका अपना था जिसकी सफाई में उनको न तो कुछ कहना था, ना ही किसी सहारे की जरूरत थी। लेकिन इसके बाद का सिलसिला जो उनके ऊपर थोपा गया वह लोगों की घिनौनी हरकतों से पैदा हुआ।

उधर बाईजी को अब अपने वैधव्य से कोई शिकायत न रही। गुरुपदस्वामी पहले से ही उनके लिए परमेश्वर थे, अब खुद उनके लिए एक ऊँची जगह मिल चुकी थी। घर में और कोई औलाद थी नहीं, इसलिए बाईजी ने दूर के रिश्तेदार के एक लड़के फूलदास को एक तरीके से गोद ले लिया था। फूलदास को बाईजी ने अपने कोख के जन्मे लड़के से कभी कम नहीं समझा। फूलदास भी बाईजी को बेहद मान देता। दुख और पीड़ा के पिछले कई वर्षों बाद अपना भरा-पूरा संसार पाकर बाईजी ने संतोष कर लिया। मन में सब कुछ साफ था, धुला हुआ था फिर भी दबी ज़ुबान से लोग कहा करते, "कोई स्त्री विधवा न हो, और अगर जन्मसिद्धी से विधवा हो तो बाईजी की तरह हो।"

फिर न जाने इतने साल कैसे गुजर गये। गुरुपदस्वामी गृहमंत्री

बाईजी का ऐसा रूप उन्होंने बड़े दिनों बाद देखा था। फिर भी कुछ समझ नहीं आ रहा था, बात कैसे शुरू करें। तभी बाईजी खुद बोल उठी, "आज मैं आपसे कुछ माँगने आयी हूँ।"

"माँगने ? अब यह क्या ? सब कुछ तुम्हारा ही तो है।"

"मेरे बेटे का खून कर दिया गया, क्या आपको पता है ?" सुबकते हुए बाईजी ने कहा।

लम्बी साँस खींचकर गुरुपदस्वामी ने कहा, "यहाँ आकर मुझे पता लगा। पार्टी मीटिंग के बाद वहाँ जाऊँगा तो ! यह पुलिस की नौकरी···"

"पुलिस की नौकरी की बात नहीं है।" आँसू पोंछकर बाईजी जरा सख्ती से कहा।

"फिर ?"

"कोई बहुत बड़ी साजिश है। सब मेरे बेटे के पीछे पड़े हुए थे। उसका जीना हराम कर दिया उन लोगों ने और फिर उसे मार डाला।" बाईजी फिर से रोने लगी।

बाईजी को इस तरह रोते हुए गुरुपदस्वामी ने कभी नहीं देखा था। आज उनके नारी-हृदय की ममता दुख का सागर बनकर सामने आयी थी। उनका मन हुआ आगे बढ़कर आँसू पोंछें, दिलासा दें लेकिन यह राजभवन था, और फिर सामने का दरवाजा खुला हुआ था।

"वैसे तो मैं अभी चलता, लेकिन यहाँ जरा गड़बड़ी चल रही थी।"

"आप चले चलें तो अच्छा है लेकिन उससे पहले मुझे मेरे बेटे का कातिल चाहिए।"

बाईजी के इन शब्दों ने गुरुपदस्वामी के सिर पर एक हथौड़े की चोट का काम किया।···उनको लगा···यह कैसी विडम्बना है ! इतने विशाल राष्ट्र के गृहमन्त्री के भतीजे का खून हो जाए, और कातिल पकड़ा न जाय। और फिर उनकी अपनी मालकिन बाईजी को उनके सामने आँचल फैलाकर कातिल के पकड़े जाने की भीख माँगनी पड़े ! गुरुपदस्वामी के हलक में बोल फँस गये, उनके मुँह में मितली आने-सा स्वाद पैदा हो गया। तभी सोफे के बगल में तिपाई पर रखी घंटी पर उन्होंने बड़े जोर से हाथ मारा जिसके साथ ही राजभवन का एक चोबदार हाजिर हो गया।

"चीफ सेक्रेट्री और गृहसचिव को फौरन बुलाओ !" गुरुपदस्वामी

सौगन्ध थी।

उत्सुकदास को सरकार बनानी थी, रंगीनराय को सरकार गिरानी। लोबीराम इनके बीच की दूरी बाँधकर कुछ बटोरना चाहते थे। पार्टी, नेता, देश, विश्व-ब्रह्माण्ड में कहीं कोई भी ऐसा धरातल नहीं था जो उनके तराजू में तौला नहीं जा सके। असल में एक तिजोरी ही थी जो उन्हें प्रेरणा देती किधर जायें, क्या करें? जब कभी मन की शंका लोभ के तराजू में तौली नहीं जा पाती, कहीं कोई भटकाव आने लगता, पहुँच जाते लोबीराम अपनी उसी तिजोरी के सामने। मन खोलकर तिजोरी के पट के सामने रख देते। शंका, भटकाव से बचने के लिए फौलादी तिजोरी से फौलाद-सी शक्ति माँगते। जब तक तिजोरी के पट बंद रहते, लोबीराम अँधेरे में भटकते रहते।

आज एक बार फिर लोबीराम को अवसर मिला था। सरकार बनाने में उत्सुकदास, गिराने में रंगीनराय संघर्षरत थे। लोबीराम की व्याकुलता बढ़ जाती। जैसे-जैसे समय बीतता, उनकी तरलता, स्निग्धता विलुप्त हो जाती। सौम्यता, आदर्श, नम्रता की मूर्ति लोबीराम में धीरे-धीरे जड़ता, कर्तता, विद्रूप लिप्सा जागने लगती। जहरीले साँप की तरह अपनी केंचुल छोड़कर उस समय असली लोबीराम निकल आते। तब कोई नहीं जानता, उस समय कहाँ विष उगलेगा, किसे काट लेगा। इन दिनों लोबीराम का रोम-रोम जलती हुई भट्ठी की तरह सुलगता रहता। आँखों में घृणा, कुत्सित वितृष्णा के डोरे उग आते, भौंहें सिकुड़कर पलकों पर चढ़ जाती। दुखी मन की मजबूरी में लोबीराम वक्त गुजारने के लिए हर समय नशे की गहराइयों में डूबे रहते।

सुनहले रंग के सिगरेटकेस से लोबीराम सिगरेट निकालकर लगातार पीते रहते। उनकी सिगरेट लालबाग में एक बीड़ीवाला बनाया करता। तम्बाकू में चरस-गांजा मिलाकर असगर अली के इत्र में भींजकर सुखा लेने के बाद ये सिगरेटें तैयार होतीं। सुगंध से बदबू का पता नहीं चलता। धीरे-धीरे कई एक लोगों को उनकी सिगरेटों का भेद पता चल गया। चर्चा कुछ लोगों में ऐसी चली कि उनको परेशानी होने लगी। कहाँ तक मुफ्त में सिगरेटें बाँटते। गांजा तो आसानी से मिल जाता, चरस जरा दिक्कत से मिलती थी। बीड़ी वाले का चूरा, असगरअली का इत्र, तम्बाकू, कागज़ सब मिलाकर काफी महँगा पड़ता। तभी एक

"हाँ, कृष्णवल्लभ और उत्सुकदास !"

"हे, ईश्वर !"

"मेरे बेटे का खून यशोदावल्लभ ने करवाया है !" कहकर बाईजी न सहे जाने वाले दुख से सुबक-सुबककर रो पड़ीं। इतने में मुख्यसचिव ने आकर कहा "सर !" उनके साथ गृहसचिव भी थे।

गुरुपदस्वामी ने आग्नेय नेत्रों से उनको देखा। तब तक मुख्यसचिव सोफे पर बैठ चुके थे, लेकिन गृहसचिव अभी तक खड़े थे। गुरुपदस्वामी कुछ पलों तक उनको यूँ ही देखते रहे, शायद बाईजी की बातों के असर से अपने को सँभालने की कोशिश कर रहे थे। तभी उनकी तेज आवाज राजभवन के उस कमरे में गूँज उठी :

"क्या आपको पता है, फूलदास का खून कर दिया गया।"

"हाँ सर ! खूनियों की तलाश जारी है।" फिर गृहसचिव ने धीरे से कहा, "आपसे उनका सम्बन्ध मालूम है, हम बड़ी सरगर्मी से…"

"एक रिश्ता और था आपका उससे ! वह आपकी पुलिस फोर्स का अफसर था। कितनी शर्म की बात है, एक पुलिस अफसर को गोली मार दी गयी और अभी तक खूनी पकड़े नहीं गये।"

"सर, आपको कुछ कहने की जरूरत नहीं है, आई० जी० से लेकर नीचे तक सारी पुलिसफोर्स के लोग इस शर्मनाक वाकये से बुरी तरह झल्लाये हैं। फूलदास से सभी प्यार करते थे, सबके ऊपर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा है।"

"यह सब मैं नहीं जानता, आप अभी सख्त हुक्म जारी कर दें, कातिलों को फौरन धर पकड़ने की युद्धस्तर पर कोशिश की जाय। मुझे आज रात तक गिरफ्तारी की खबर चाहिए। ओ० के० !"

"ओ० के० सर !"

"आप अब जा सकते हैं। और हाँ, देखिये, कोई भी हो, छोड़ा नहीं जायेगा।"

"ठीक है सर, और यह ताँबाकांड की रिपोर्ट की कापी आ गयी, है।"

"उसे रख दीजिए।"

बाईजी अब तक सँभल चुकी थीं। आँखों में तरलता तो थी, लेकिन आँसुओं की धारा नहीं थी। गुरुपदस्वामी के सामने रो लेने से, उनका जी

"अच्छा तो दरोगा भी जुटा है ?"

"हाँ, ई उत्सुकदास की करामात है, उनके भाई का मुग्रत्तल करद दिया। इधर दिल्ली मे न जाने वह क्या कर आये हैं, संसद सदस्यों टेलीफोन आ रहे हैं, विधायकों के पास उनका विरोध करने के लिए।"

"संसद सदस्य कौन ?"

"एक तो वही ठाकुर गुट के नेता भब्बरसिंह, झाँसी वाले मुरली और गोरखपुर के शत्रुघन।" बलराम शास्त्री ने आँकड़े गिनाना शुरू कर दिया, "फिर सुनते हैं यह लोग प्रधानमंत्री से मिले थे।"

"प्रधानमंत्री से ?"

"हाँ, पार्टी मीटिंग टालने के लिए। उत्सुकदास ने भी तो किसी को छोड़ा नहीं। तब तो जिनने जो कहा हाँ करि दिया, अब निभाने की हैसियत बची न थी।"

"अच्छा बलराम, एक बात बताओ, हम यह कैसे मान लें, ई सब चल रहा है और उत्सुकदास को पता नहीं ?"

"क्या है, गुरुजी, यह सब चल नहीं रहा था, पक रहा था। बड़े धीमे-धीमे, मध्यम-मध्यम, एक खास तरीके से, कुछ पुरानी कुंठाओं, कुछ उत्सुकदास की करनी से, कई चीजें, कई बातें, इकट्ठी होती गयी। इनको पंक्तिबद्ध होते तो अभी देखा, बस घंटे-दो घंटे पहले। मैं उत्सुकदास के पास गया था लेकिन क्या हालत थी, मुलाकातियों का क्या हजूम था, यहाँ आना था, सो चला आया। फिर इस वक्त हमरी बात वह सुनेंगे ?"

कुछ देर गुरुपदस्वामी स्थिति की गम्भीरता को तौलते-नापते र पहले दिल्ली में तबादला काड के हंगामे फिर पी० एम० हाउस से कुछ देर प मिला झटका, उनको उत्सुकदास के साथ अपना भाग्य एक महीन धागे बंधा हुआ नजर आने लगा। लेकिन बाईजी से बातचीत के बाद भी अभी बलराम की बातों से, फूलदास के कत्ल सम्बन्धी कई रहस्य जो खुले तो उनका संकल्प हिलने लगा था। फिर भी वह जानते थे, उत्सुकदास वह जहरीला निवाला था जिसे निगलने में विनाश था लेकिन उसे थूका भी नहीं जा सकता क्यों उसमें खुद उनका अपना भी सत्व था।

"तो बलराम, मेरी समझ मे तो एक ही बात आयी।"

"हाँ गुरुजी !" बलराम जरा ठसककर बैठ गये।

"इस सारी साजिश में शक्ति है तो लोबीराम की।"

को देकर, बाकी लोबीराम तिजोरी में रख लेते।

लालबाग बीडीवाले की लड़की लछमनिया काफी दिनों से लोबीराम के यहाँ काम करती थी। लछमनिया पहले एक-दो बार सिगरेटें लेकर आयी। रंगी उन दिनों था नही। लोबीराम को कुछ-न-कुछ तकलीफ बनी रहती। उन्होने लछमनिया को काम पर लगा लिया। बाद में लछमनिया से अनुराग ऐसा लगा, ऐसा लगा, लोबीराम ने उसे बैठाल लिया। लछमनिया ने अभी दुनिया देखी ही कहाँ थी। गरीबी, आपदाओं, भुखमरी के सिवा लालबाग बीडीवाला उसे क्या दे सका। यहाँ पेट भर खाना, अच्छे कपड़े पहनने को मिलते। चार पैसे अपने बाप को भी दे आती। नशे की तादाद जरा भी कम होने से लोबीराम को उन दिनों नीद नहीं आती थी। बीच रात मे उठकर तिजोरी के सामने बैठ जाते, कहाँ-कहाँ की उड़ानें भरते। लछमनिया के आने से आराम हो गया। जब कभी नशा कम हो जाता, वह पूरा कर देती। पाँव दबाती, सेवा करती।

लोबीराम तो बेहद खुश थे लेकिन लछमनिया को जवानी का तूफान उड़ा ले जाना चाहता था। लोबीराम लछमनिया को अपनी मुट्ठी मे बन्द नहीं कर पाते, लगता वह समायेगी नही। उधर लछमनिया के लिए अब क्या अच्छा, क्या बुरा। शिवबूटी, चरस के नशे में कौन आता, वह कहाँ जाती, कुछ पता नही। पहले रंगी, बढई दीक्षित, फिर चोधरी, उसके बाद यशोदावल्लभ, न जाने किसके-किसके पास दारुलशफ़ा में लोबीराम-छाप सिगरेटों की तरह पहुँचने लगी। उसका शबाब निखरता ही गया। लछमनिया की पहुँच सभी जगह थी, हर कोई उसे जानता था।

रंगीनराय जब लोबीराम के फ्लैट पर पहुँचे तो लछमनिया उनके पाँव दबा रही थी। रंगी शाम की खुराक के लिए शिवबूटी तैयार करने में लगा था। रंगीनराय को बैठक में छोडकर लोबीराम को जैसे ही उसने खबर दी, वह बाहर आ गये। उसका धन्धे का समय आ गया था। उस समय उनके उदास मन में चिन्ता, सैकड़ों बिच्छुओं की तरह डंक मारने लगी। बार-बार उनकी आँखों के सामने तिजोरी नाचने लगती। आज मंत्रिमंडल बनेगा। आठ बजे रात नेता का चुनाव होगा। पाँच बजने वाले थे, अभी तक न उत्सुकदास का फोन न कोई संदेश, उनको इस बार मौका हाथ से

"हाँ सर !"

इसके बाद एकदम लहजा बदलकर गुरुपदस्वामी ने पूछा, "यह तांबा-कांड के बारे में सुना है आपने ?"

"तांबाकांड की तो बड़े जोरों से जांच चल रही है।"

"कहाँ ?"

"आज भी एस० पी० विजिलेन्स के मातहत एक पार्टी कानपुर में, दूसरी पार्टी शाहजहाँपुर, बरेली, बदायूं आदि इलाकों में गयी हुई है। उधर विद्युतपरिषद् को जिन भंडारघरों से तांबा उठा लिया गया उसकी पूरी सूचना देने को कहा गया। आज ही सुना, अब मामला सी० बी० आई० को दिया जा चुका है।

आई० जी० की आखिरी बात सुनकर गुरुपदस्वामी को एक जबरदस्त धक्का लगा। वह राष्ट्र के गृहमंत्री थे और उनको यह मालूम ही नहीं था, तांबाकांड सी० बी० आई० को सौंपा जा चुका था। लेकिन उन्होंने अपनी प्रतिक्रिया को दबाते हुए कहा, "आखिर कुछ पता भी लगा ?"

"हाँ सर ! अभी तक जो बातें पता लगी उनके अनुसार तो यही लगता, कोई बहुत बड़ा गिरोह काम कर रहा था।"

"वो कैसे ?"

"इतनी जल्दी उतना सारा तांबा जो गायब हो गया।"

"तांबा गायब हो गया ?"

"हाँ सर, विद्युतपरिषद् के गोदामों से रातों-रात इतनी बड़ी तादाद में तांबा उठाने के बाद स्टेट के बाहर कहीं पहुँचा दिया गया। यह सब गैरकानूनी ढंग से यह सोचकर किया गया था, किसी को पता तो लगेगा नहीं या फिर मामला दबा दिया जायेगा।"

"गैरकानूनी ढंग का क्या मतलब ?"

"मतलब साफ है सर, स्टेट के बाहर तांबा ले जाने का परमिट कहाँ था ? जो तीन ट्रकें पकड़ी गयीं, उनको इसी बात की वजह से रोका गया।"

"अच्छा !"

"औद्योगिक निगम के कोटा लाइसेन्स पूरे तांबा के स्टाक के लिए न चार या पाँच पार्टियों के नाम जारी हुए उनके सबके पीछे एक ही मी था, कामयाब सेठ !"

मंत्रिमंडल की उठापटक के कुछ नये आयाम। लेकिन अब अचानक य
सब देखकर स्वाभाविक रूप से उसके अन्दर का मर्द जागने लगा था।

रंगीनराय की बैठक में उस समय होने वाली मिनी पार्टी मीटिंग की तैयारियाँ जोरों पर थी। इतनी ही देर में थोड़ा-थोड़ा बहुत जान लेने पर अब अलग-अलग खुफिया तौर पर खुसर-फुसर चलने लगी। रंगीनराय खुद देर तक मामले में उलझना नहीं चाह रहे थे, इसलिए बजरबट्टू के आ जाने से उनको कुछ सहारा मिला। कुछ मामूली-सी बात के बाद उन्होंने बजरबट्टू को अन्दर जाकर बढ़ई के पास रुके रहने के लिए कहा। जाहिर था बजरबट्टू के अन्दर जाकर बढ़ई के सँभल जाने के बाद ही सारी बात पता चल सकती थी।

बजरबट्टू अन्दर जाकर काफी देर तक बढ़ई के पास बैठा रहा। जरा देर बाद कुछ पानी की छीटों से ही बढ़ई को होश आने लगा। लेकिन बेहद कमजोरी और दहशत की वजह से वह अब भी कुछ कह सकने की स्थिति में नहीं था। तब बजरबट्टू ने उसके लिए नीचे से मौसमी रस का एक गिलास मँगवाया और हथेलियाँ रगड़ता रहा, उसके सर पर हाथ फेरकर धीरे-धीरे उसकी दहशत को दूर भगाता रहा।

फिर बढ़ई की दिमागी हालत ठीक होने लगी और अपने को खतरे से बाहर रंगीनराय की सुरक्षा में, बजरबट्टू की दिलासा को तौलकर नापने के बड़ी देर बाद उसने सर उठाया।

"रा-साब को बुलाओ!" बढ़ई ने कमजोर आवाज में कहा।

बजरबट्टू ने कमरे में मौजूद कुछ खुराकियों को बाहर जाने के लिए कहा और फिर उठकर कमरे का दरवाजा बंद कर दिया और वापस आकर समझदारी की आवाज बनाते हुए वह बढ़ई से बोला :

"यार बढ़ई! अब डरने की क्या जरूरत है? रायसाब तो बाहर हैं ही, जब कहो बुलाय लेंगे। लेकिन इस समय जरा मामला संगीन है। बाहर बैठक में अभी हाल पार्टी अध्यक्ष बलदेव चौधरी के साथ पार्टी के नेताओं की मीटिंग चलने वाली थी। सो, इसीलिए, उन्होंने ही हमें यहाँ बैठाया है, तुमसे सारी बात समझ लेने के लिए!"

"लेकिन कुछ बात है, जो हम उनको ही बतायेंगे।"

"ठीक है—ठीक है'''उनको बुलाता हूँ, फिर भी कुछ तो बोलो र!"

अब लोबीराम की चेतना करवटें बदलने लगी। बूटी का प्रभाव अभी भले ही न हुआ था, उसकी स्वाभाविक अन्तरछाया व्यक्तित्व में उभरने लगी थी।

"रायसाब, तो दो करोड आये कैसे ?"

"आपने क्या अखबार नहीं देखा ? संसद में तांबाकांड पर कैसा धूम-धड़ाका मचा है। मामला प्रधानमंत्री के सामने है, फँसे हैं गुरुपदस्वामी।"

"गुरुपदस्वामी को भला कामयाब सेठ से क्या मतलब ? वो तो ससुरा उत्सुकदास, कृष्णबल्लभ एण्ड कम्पनी में आठ आने का साझीदार है।"

"अभी तक जो बातें सामने आयीं, उनमें इन दोनों का नाम नहीं है।"

"नाम होगा भी कैसे रायसाब ! उत्सुकदास ससुरे ने तो फाइल ही गायब करवा दी।"

"खुद माल काट लिया ! इन लोगों ने और गुरुपदस्वामी को फँसा दिया। इस पर उनको देखिये इसी कमीने को मुख्यमंत्री बनवा रहे हैं।"

"यह सब जानकर भी !" लोबीराम ने आश्चर्य से कहा।

"देखिये लोबीरामजी, उत्सुकदास का नाम आगे बढाने में गुरुपदस्वामी का उद्देश्य महज यही था, भक्त होने के कारण उनके मंत्रिमंडल में हुई गडबड़ियों को उभरने नहीं देगा।" रंगीनराय ने रहस्यपूर्ण स्वर मे कहा।

"कामयाब सेठ तो है उत्सुकदास का आदमी। उसी के दम पर उत्सुक-दास ने पाँच लाख फर्जी सदस्य बनाये थे, पार्टी के चुनाव में।"

"सभी को पता है ! लेकिन बिना सबूत के करें भी क्या ! न जाने फाइल ससुरी कहाँ गायब कर दी गयी। विद्युत परिषद् के मुख्य अभियन्ता, ज्ञानचन्द्र मेरे पास आये थे, कहने लगे मैं निर्दोष हूँ, सौगन्ध ले जो एक भी पैसा लिया हो, गंगाजली उठाने को तैयार है। बात लोबीरामजी उस समय की है, जब उत्सुकदास उद्योग मंत्री, कृष्णबल्लभ बिजली के मंत्री थे। ज्ञानचन्द्र के पास हुक्म आया, कामयाब सेठ के लिखित आवेदन पर कृष्ण-बल्लभ ने स्वयं बुलाकर फटकार जमायी, तुरन्त केस बनाकर लाने को कहा। कई-कई बार उसने समझाने का प्रयास भी किया। काम तो गलत ही था पर सुनता कौन है। अब ज्ञानचन्द्र के मर सारा दोष मढ़कर साले अलग हो जायेंगे। माल खाया इन्होंने, गू खायें और !"

ना ही कुछ पाने की तमन्ना।

बैठक के सोफे के हत्थे पर सिर रखकर लेटे रहने से उसकी गर्दन दुखने लग गयी थी। इसीलिए वह उठकर बैठ गयी। चारों तरफ उसने किसी सहारे के लिए देखा। आधी बैठक तक पहुँचकर उसकी निगाह रुक गयी। एक अजीब-सी उबाई आने लगी थी। खाने-पीने, चलने-फिरने, उठने-बैठने, लेटने किसी चीज का कुछ भी कर लेने का उसका मन नहीं हो रहा था। रास्ते की थकान तो उतर चुकी थी लेकिन कोई और थकान थी जो उसके सुनहरे बदन को हिस्से-हिस्से में तोड रही थी।

पहले मन हुआ बाहर निकल ले, फिर उसका मूड बना नहीं। अन्दर बने रहने पर उसे डर था कि कभी किसी वक्त कोई आ सकता था। किसी के भी आ सकने की बात से उसको याद आया अभी नहीं तो थोडी देर बाद, शायद चन्द घंटों बाद उसी फूहड जंगली यशोदावल्लभ को झेलना पडेगा। आज हर हालत में वह यशोदावल्लभ से दूर बने रहना चाहती थी। फिर उसे अपनी दीदी प्रतिभा का खयाल आया जो भी आज के दिन यहीं होगी। लेकिन न जाने क्यों प्रतिभा के खयाल से उसे और घिन आयी। यह सब उनका ही तो कराया था। बाबूजी तो मर रहे थे। इनको खुद समझना चाहिए था।

जब कमरे से बाहर निकलकर किसी के पास कहीं भी जाने या कुछ भी करने का उसका मन नहीं हुआ, कमरे के अन्दर यशोदावल्लभ के आ जाने का डर बना रहा और बैठे भी न रहा गया तो शान्तिप्रणाली उठकर खडी हो गयी। वह उस समय कोई बिन्दु, कोई कोण, किसी वजह या बात का सहारा ढूँढ रही थी जिससे अन्दर-बाहर उसके चारों ओर हर चीज जो ठहरी हुई थी कुछ बढ़े, बढ़ चले। यह ठहराव जैसे कसा-कसा मन को जकडने लगा और इस जकडन में उसका दम घुटा जा रहा था। शान्तिप्रणाली बैठक वाले कमरे के सोफे से उठकर दो कदम आगे चली फिर बेमन-सी घसीटती हुई वह बैठक के दूसरे छोर पर पड़े तख्त पर फिर से ढेर हो जाने को आगे बढ़ी। तख्त के पास पहुँचते ही उसकी निगाह के सामने बगल के स्टूल पर रखा हुआ रिवाल्वर, जो शाम दुर्लभ-ाठी वहाँ भूल से छोड गया था, आ गया। फटी-फटी आँखों से काले ा के ठंडे लोहे को वह बस देखती रही।

ऐसे माहौल में घुटन और जकड़न की अजीब मन.स्थिति में शान्ति-

उधर पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी में हरिजन तथा पिछड़े वर्गो जो नेता थे, उनको लोबीराम ने कभी घास तक नहीं डाली। जहाँ एक तरफ लोबीराम, कभी भी, राष्ट्रीय राजनीति में कोई बड़ी ताकत न बन सके किन्तु प्रदेश स्तर पर वह हरिजनों और पिछड़े वर्गों के बड़े, काफी बड़े नेता बने रहे। यहाँ तक केन्द्रीय स्तर के हरिजन नेताओं को वह समय-समय पर चुनौती दिया करते। अपने आपमें, अपने स्तर के दायरों में, घुसे रहने में उनका एक खास मतलब होता था। वह अपना स्तर और अपने चाहने वालों तथा अपने समर्थकों का स्तर अच्छी तरह···खूब अच्छी तरह से जानते थे। उनको मालूम था एक मेहतर या एक पासी या एक कसाई कभी भी राष्ट्रीय स्तर की राजनीति नहीं समझ सकता। वह तो खुद चाहते थे, यह लोग कभी हिम्मत वाले या अक्ल वाले हों ही ना। तभी तो जब भगी चौधरी अपने इलाके के मेहतरों की आमदनी में कमती हो जाने से दारुलशफ़ा आया तो उन्होंने उसके लिए कुछ और करने की जगह उसके जरिये चरस की सिगरेटें बिकवाना शुरू कर दिया था।

वैसे तो लोबीराम बड़ी सख्त जान थे। शर्मोहया से दूर राजनीति में उनकी हर चाल अपने स्वार्थों के दायरों में घूमा करती। लेकिन आज और रास्ते बंद हो जाने के बाद, वह ऐसे मुकाम पर पहुँच चुके थ, जहाँ उनके जहन में नयी रंगीनियाँ, नये मोड़ उभरने लग गये। तभी तो एक झटके में असंतोष की आँधी खुद अपने कंधे पर उठाकर वह आगे बढ़ आये थे। अब तो उनको लग रहा था, यह दाँव महज चन्द नगदी रकम तक सीमित नहीं रहने वाला था। अब तो सत्ता की ताकत में उनका हिस्सा होने वाला था। अधकचरे पार्टी अध्यक्ष, ताँबाकांड से पीड़ित गुरुपदस्वामी के सँभाले कुछ भी सँभलने वाला नहीं था। और फिर जैसा साफ-साफ नजर आ रहा था, अगर पार्टी अध्यक्ष ने सीधे-सीधे ढंग से उत्सुकदास के खिलाफ बोल दिये गये जेहाद को बढ़ावा दे ही दिया, तो मंत्रिमंडल की रचना खतरे में तो होने ही वाली थी।

लोबीराम इतना तो जानते ही थे, नयी राजनीति के नये खेल खेलने के लिए समय चाहिए। अभी तक विरोधी दलों से कोई सम्पर्क सूत्र तो बना नहीं था, इसलिए जो कुछ करना था, वह पार्टी के अंदर ही करना था। पार्टी के अंदर आज कुछ कर लेने के लिए काफी बड़ी तादाद में, बलदेव चौधरी, रंगीनराम और दरोगा के आदमी आ गये थे। अब पार्टी में, नेता

"क्या कह रहे हैं आप !" रंगीनराय भौंचक्के से हो गये।

"हाँ रायसाब, यह मेरा निर्णय है। हम हरिजनों का शताब्दियों से शोषण होता आया है। हाय बापू तुम कहाँ हो ! देखो अब। भारत के हृदय के समान सबसे विशाल प्रदेश में आज बीस वर्षों में भी किसी हरिजन को मुख्यमंत्री नहीं बनाया गया। रायसाब मेरा फैसला अब कोई नहीं बदल सकता, मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं सबकुछ छोड़ सकता हूँ। मेरा जीवन ही त्याग का जीवन है। लेकिन मुझे बापू का सपना पूरा करना है। मैं बनूं या कोई और, अब एक हरिजन ही इस प्रदेश का मुख्यमंत्री बनेगा।"

रंगीनराय को एकाएक झटका लगा, लोबीराम की बातें तीर की तरह आ रही थीं। उनमें उस समय एक तड़प, बिजली-सी तेजी और आत्मविश्वास था।

रंगीनराय जानते हैं लोबीराम का चरित्र, स्तर। उत्सुकदास से भी गिरा हुआ आदमी है। लछमनिया, चरस की सिगरेटों के किस्से तो कुछ भी नहीं, तीन-चार कोल्डस्टोरेज, कुछ पक्के गोदाम उसके अपने थे। बस्ती जिले के कोने-कोने में उसका जाल बिछा था। जिले का अनाज, आलू, बनस्पति, साबुन, किराना, सीमेन्ट, मोटे कपड़े का स्टाक गोदामों में भर लिया जाता। प्रदेश के बड़े-बड़े जखीरेबाज, ब्लेकमार्केटियर, मुनाफाखोर, उसके साथ थे। इन लोगों के मुनाफे में हिस्सा-बाँट करता। मिलों का उत्पादन कम करके, उत्पादन-क्षमता घटाकर बाजार में कृत्रिम कमी पैदा की जाती। दाम बढ़ते, माँग पूर्ति का संतुलन बिगड़ने पर काले-बाजार में धीरे-धीरे माल निकाला जाता। शराब बनाने के कारखानों में गेहूँ-जौ सड़ाकर सप्लाई करने का भी काम करता। देश में अकाल, भुखमरी होगी, विदेशों से अनाज की भीख माँगी जायेगी, उसकी बला से। गेहूँ-जौ सड़ाकर शराब बनाने का काम नहीं रुक सकता। लेकिन सभी साले चोर हैं, लोबीराम, कृष्णवल्लभ, उत्सुकदास सभी को गिराना था। सबमे शक्तिशाली होने के कारण, पहला शिकार उत्सुकदास को ही बनाना होगा। उत्सुकदास के नाम से उसके अन्दर घृणा का उबाल आया। भ्रष्टाचार, दुराचार, अनर्थ, अन्याय का प्रतीक होने के साथ ही उनका पुराना शत्रु था, जिसके विनाश की कामना उनके हृदय में दहकती रहती। वह जानते थे लोबीराम स्वयं मुख्यमंत्री नहीं बन सकता। गुरुपदस्वामी, हाई-

तक एक किनारे पर, अपनी नाप-तौल में लगे थे, आगे बढ़ आये। उनके पास आ जाने से रंगीनराय को जोश आ गया। तब सबने मिलकर, पार्टी अध्यक्ष को मसनद के सहारे बैठा दिया। और खुद रंगीनराय जरा हटकर, बलदेव चौधरी, दरोगा, मूलचन्द, मनोहरलाल के गोल में घुस गये। फिर लोबीराम को वहीं पीछे झुकने से रोककर उन्होंने, पार्टी अध्यक्ष के ठीक बगल में उनके लिए जगह बना दी। हालांकि लोबीराम इस वक्त बलदेव चौधरी से बातें करने के मूड में थे, फिर भी पार्टी अध्यक्ष के पास ही रुक जाने पर उनको कोई खास एतराज नहीं था।

लेकिन लोबीराम को, लोगों ने पार्टी अध्यक्ष के पास ज्यादा देर तक रुक लेने नहीं दिया। पैर छू लेने के चक्कर में, विधायकों की टोली भी वहाँ तक आ जाती, तो वहीं फिर उनसे दो-दो बातें कर लेने में रुत रहती। इस तरह एक के ऊपर एक लदे हुए थे सब! और लोबीराम को बार-बार खिसकना पड़ रहा था। इन हालातों से तंग आकर, अपने और बलदेव चौधरी के बीच के दो-एक लोगों को ढकेलकर उन्होंने वहाँ हो रही बातों में अपने कान लगा दिये।

लोबीराम को मौका मिला था, इसलिए वह दिल लगाकर बलदेव चौधरी और रंगीनराय की बातें सुनने लग गये थे। ऐसा नहीं था, करीब आ जाने पर, इन लोगों ने उनकी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। यह तो हो जाना भी मुमकिन नहीं था। लोबीराम खुद इन लोगों की सारी योजना की वह निर्णायक कड़ी थे, जिसके ऊपर ही उनकी सारी खुद्दारी का दारोमदार तय होना था। लोबीराम के पास खिसककर आते ही रंगीनराय और बलदेव चौधरी ने उनको अपने अन्दर समेट लेने की अदा तो दिखायी थी। फिर भी उनकी बातों का सिलसिला तो रुकने वाला नहीं था। वे असल में, जितनी देर में पार्टी अध्यक्ष उत्साही नेताओं की अधकचरी बातें सुन रहे थे, अपनी व्यूह-रचना पूरी कर लेना चाहते थे।

बलदेव चौधरी अब तक प्रदेश पार्टी अध्य... ले छोड़कर साफ़-
फ़ सबकुछ कह लेने... ए जा र... ाब क्या सोचा
ापने ?"

"अरे चौधरी सा... व ... तो बस
ा है...हमला...र...
'लेकिन आपने उद

"तो ठीक है, आप करार ढूंढो, हम चले ठेके पर कुर्सियाँ डालने, डोलें खादने !" राघू ने जड़ दिया, "और हाँ रमजानी से मेरा आदाब कहना न भूलियेगा। हमें भी चाहती हैं वे, कैसे दीदे फाड़कर देखें जैसे समूचा लील जायँ।" इतना कहकर, इससे पहले मंजूरभाई धौल जमायें, राघू उछलकर कमरे के बाहर हो गया। पीछे-पीछे सी० पी० भी निकल आया।

फिर मंजूरभाई ने राघू को टोका, "अरे भाई, खाना तो खाओगे !"

चलने को कदम बढ़ाकर भी राघव रुक गया। बस मंजूरभाई को यही अदा कातिल थी। "खाना-वाना अब कहीं कुछ बाहर ले लेंगे। आप हमारी फिकर न करना।" फिर कुछ सोचकर उसने सी० पी० से कहा, "तुम आगे चलो, मैं अभी आया," फिर जरा पीछे लौटकर वह उनसे बोला, "मंजूरभाई ! अगर बुआ के यहाँ जाना तो कमरे में ताला मार देना !"

"हाँ, और क्या खुला रहेगा।"

"नहीं, यह बात नहीं···मैं कह···" आगे राघव से बोला नहीं गया।

"ठीक है ! ताली है ना तेरे पास ?"

"हाँ वो तो है।"

"तो जाओ·· ऐश करो !"

"वाह, ऐश तो आज आप करोगे मंजूरभाई !" राघव ने आँख मारी।

"कुछ तो लिहाज किया करो।" मंजूरभाई ने घुड़का।

मसखरी में तीन बार आदाब बजाकर राघव आगे बढ़ गये सी० पी० को पकड़ने चल दिया।

राघव और सी० पी० के चले जाने के बाद कुछ देर मंजूरभाई वहीं के वहीं खड़े रहे। उस समय उनके जहन में न तो कोई खयाल था, ना ही किसी तरह की हरकत ! चुपचाप, खामोशी की घाटियों में बहक जाने जैसा अहसास होता जा रहा था। एक खालीपन, एक हल्कापन अंदर से बाहर तक उतरने लगा। फिर धीरे-धीरे नहाने के लिए जाने के बाद से अभी तक की तमाम बातें कहीं दूर से घुटी-घुटी आवाजों की शक्ल में सिर उठाने लगीं। उन बातों की फुसफुसाहट खाली दिमाग के हिस्सों में करवट बदलकर दस्तक देने लगी। और जिसके साथ ही अपने आगोश में

क्रम तय कर लें। मैं जाकर तैयारी करता हूँ। वहीं आपसे भेंट होगी। तो सात बजे आप कष्ट करेंगे?" रंगीनराय ने कुछ उत्सुकता, कुछ भय में पूछा। क्या पता इसकी बातों का?

"वाह रायसाहब! क्यों नहीं! अपना ही काम है।" लोबीराम खीसें निपोरकर बोले।

उसी समय कई-एक विधायकों ने धावा बोल दिया। लोबीराम उनको बैठाकर भागे तेजी से लछमनिया के पास दूध-मलाई ग्रहण करने!

जिस समय रंगीनराय अपने फ्लैट में घुसे, बरामदे को काटकर बनाये गये लकड़ी के घेरे मे बजरबट्टू बैठा हुआ अखबार पढ़ रहा था। उसकी तनी गर्दन, तिरछा चेहरा, माथे पर बल पड़ रहे थे। इन लोगों के आने पर न तो उसने उधर देखा, न कुछ बोला ही। बढ़ई दीक्षित वैसे भी बजरबट्टू के मुँह नहीं लगता। कितनी ही बार उसके इतिहास की विवेचना करते हुए, सबके सामने, बखिया उधेड़ चुका था। लेकिन रंगीनराय ने भी ऐसी मुद्रा में देखकर उसे छेड़ा नहीं। थोड़ा हटकर वहीं आरामकुर्सी पर बैठ गये। उस समय वह लोबीराम के यहाँ से लौटे थे। उनके चेहरे पर हल्की-सी व्यंग्यभरी मुस्कुराहट खेल रही थी। इस मुस्कुराहट में छिपे रहस्य को पढ़ने की कोशिश में बढ़ई दीक्षित ने उन्हें गुदगुदाया।

"तो रायसाब! लछमनिया के गुरु से मुलाकात हो गयी ना?"

रंगीनराय ने पान चबाते हुए, खीसें निपोरकर कुर्सी के पास रखे पीकदान की तरफ झुकते हुए हुंकारी भरी। फिर पीकदान में तम्बाकू भरी पीक का फुहारा छोड़कर, आनन्दपूर्ण भाव से बोले, "हाँ भई! लोबीराम ने तो ठान ली है। लगता है आज की पार्टी मीटिंग में बलवा होगा। हमसे सहयोग-माँगने के चक्कर में था, सो हमने कह दिया अब करोगे क्या? हाईकमाण्ड के निर्देश का क्या होगा? गुरुपदस्वामी भी तो वहाँ रहेंगे···जानते हो बढ़ई तब क्या बोला···" लोबीराम की धीमे स्वर में, धीरे-धीरे बोलने की नकल उतारते हुए रंगीनराय ने आगे बताया, "गुरुपदस्वामी मेरे भी गुरु हैं···लेकिन उत्सुकदास के कारनामे कौन नहीं जानता? केन्द्रीय नेताओं की मति पर तो पर्दा पड़ गया है जो उस

इतमिनान था। और वह मिला हुआ कीमती वक्त बिला जाया किये हुए अपना काम पूरा कर लेना चाहते थे। चहलकदमी रोककर वह अन्दर आ गये और उन्होंने बाहर का दरवाजा बन्द कर दिया। एक बार उनका मन हुआ लोबीराम सुलगा लेने का, फिर बारूद का और कम होते हुए वक्त का हिसाब लगाकर उन्होंने अपना इरादा छोड़ दिया। उनके अल-साये हुए बदन मे फुर्ती की लहरें मचलने लगी। तभी उनको खिड़कियों का ख्याल आया, करीब-करीब उछलते हुए उन्होंने एक-एक करके पहले बैठक की और फिर अन्दर के कमरे की खिड़कियाँ बन्द की। एहतियातन उन्होंने रोशनदान भी बन्द कर दिये और बाहर की सभी बत्तियाँ बुझा दीं।

अब अन्दर के कमरे में मंजूरभाई बारूद के गट्ठर के सामने जा खड़े हुए। कुछ देर तक वह हसरतभरी निगाहों से गट्ठर को देखकर, उससे जुड़ी हुई राघव की कोशिशों का अन्दाज लगाते रहे। कुछ डर भी लग रहा था उन्हें। पटाखों तक से कतराने वाले मंजूरभाई के सामने बारूद के गोले थे और फिर उनको अपने नाजुक हाथों से उन्हें ही उठाना भी था। आँखों से तौल पाने में जब वह नाकाम रहे तो आगे बढ़कर उन्होंने गट्ठर की गाँठ को पकड़कर उठा तो लिया लेकिन काफी वजन होने की वजह से उसे वहीं छोड़कर बाहर निकल आये।

पहले तो खुद अकेले ही गट्ठर हाथों मे उठा ले जाने का इरादा था मंजूरभाई का। लेकिन सही वजन का अदाज लगाकर उन्होंने अपना यह इरादा छोड़ दिया। देर होने का खतरा भी बढ़ता जा रहा था। वह राघव के लौट आने से पहले अपना काम पूरा करके रहमानी के आगोश मे पहुँच जाना चाहते थे। वहाँ राघव के आ जाने का भी खतरा नहीं था, क्योंकि राघव या कोई और रमजानी के ठिकाने का पता मालूम नही कर सकता था। बल्कि बहुत से लोग तो, रमजानी को महज उनके ख्यालो की सनक माना करते। तभी तो बुआ का खिताब लोगों ने जोड़ रखा था।

बाहर निकलकर इधर-उधर ताँक-झाँक कर लेने पर भी जब उन्हें कोई सवारी नही मिली तो दरवाजा उढ़काकर वह जरा आगे बढ़ आये। तभी उन्हें दारुलशफ़ा के फाटक से एक रिक्शा अन्दर की तरफ आते हुए दिखा। उनको असल मे, बाहरी रिक्शेवाले को ठीक कर लेने मे कुछ ज्यादा इतमिनान लगा। वहाँ अड्डे के रिक्शे शायद उन्हें पहचान जायें, इसलिए

कमीने को मुख्यमंत्री बनाकर हमारे ऊपर थोपने जा रहे हैं। हमारा
का भाग्य फूट जायेगा जो यह मुख्यमंत्री बन गया। यह सब होगा कै
पार्टी के अध्यक्ष और गुरुपदस्वामी के रहते कैसे होगा ?" रंगीनराय
दोनों हाथ मटकाते हुए बढ़ई दीक्षित से कहा, "लेकिन ससुरा जुटा है
बोला, 'मैं तो पार्टी मीटिंग में अपना नाम, नेतापद के लिए प्रस्तावि
करवाऊँगा। अगर गुरुपदस्वामी या पार्टी अध्यक्ष नाम वापस लेने के लि
पीछे पड़ेंगे, तो साफ कह दूँगा कृष्णवल्लभ के रहते यह मंत्रिमंडल नहीं
बन सकता।'···बढ़ई कहता है सभी हरिजन, और पिछड़े वर्गों के विधायक
मेरे साथ हैं···बात तो कुछ हद तक सच है, मगर गुरुपदस्वामी निष्पक्ष
हो जायें तो उत्सुकदास हार जायेगा। लेकिन यार ऐसा होगा नहीं, सब
कुछ जानते हुए भी उसको ही नेता···"

एकाएक कुछ दूर किनारे पर बैठा बजरबट्टू, अखबार को मोड़कर
मेज पर फेंकने के बाद, उनकी बात बीच में ही काटकर बोल उठा, "राय
साब···" उसका गला रुंधा हुआ था, आँखों में नमी थी, "सुना आपने !
कल रात फूलदास का खून हो गया।"

फूलदास को सभी लोग बेहद प्यार करते थे। निहायत खुले दिल का आदमी, दोस्तों का दोस्त, दुश्मनों का भी किसी हद तक दोस्त। जहाँ जाता सबको अपना बना लेता। रंगीनराय से तो उसकी पुरानी मुलाकात थी। वैसे भी, गुरुपदस्वामी का संबंधी होने के कारण पार्टी के करीब-करीब सभी पुराने लोग उसे जानते थे। सन् ४२ के आंदोलन में पढ़ाई-लिखाई छोड़कर आजादी की लड़ाई में वह भी कूद पड़ा। उसकी उन्हीं सेवाओं के लिए आजादी के बाद पुलिस की नौकरी मिली थी। पुलिस फोर्स में आने के बाद भी फूलदास में देशभक्ति की भावना कम नहीं हुई थी। बुराइयों के बीच रहते हुए भी, उसकी सख्त जान हमेशा गुनाह के खिलाफ लड़ती रही। हालातों से वह समझौता क्या करता, पुलिस में रहते हुए भी उसके अन्दर इन्सानियत का जज्बा, मासूमियत की भोली अदाएँ विशाल व्यक्तित्व की सीमाओं में अठखेलियाँ करतीं, किसी का दुख देखकर उसका हृदय भर आता। लेकिन गुनाह में पलते हुए दरिन्दों से उसे सख्त नफरत थी। मुल्क का दुश्मन समझकर उन्हें तबाह करने में जुटा

नीचे पहुँचकर विरजू रुका नहीं। वह लोबीराम के कमरे की तरफ ़ चला। उसने दूर से ही देख लिया था, बाहर खड़े हुए दोनों आदमी ा वहाँ नहीं थे। जरा और आगे बढ़ने पर जब वह लोबीराम के कमरे ठीक सामने आया तो एकाएक उसके दिमाग से उतरकर खास तरह झुनझुनी पेट में अँगड़ाई ले गयी। खुशियों की एक तरंग उसके सूखे को जैसे तर कर गयी। यह अहसास विरजू को लोबीराम के कमरे में ते हुए ताले को देखकर हुआ था। लेकिन उसे वहाँ रुकना नहीं था। तो उसे एक ठंडा पीना था। लेकिन कमरे की खिड़कियों से अन्दर धेरे को देखकर उसे वहाँ किसी के ना होने का विश्वास हो चुका

हरी बरामदे में पहुँचकर विरजू ने जो देखा, वह उसके पुराने तरीकों र बड़ा हौसला बढ़ाने वाला था। उसकी नजर के सामने बड़े ी औरत, दो आदमियों से घिरे हुए लोबीराम लपकते हुए सामने अम्बेसडर गाड़ी की ओर जाने लग गये थे। वह झुनझुनी, वह लोबीराम के दरवाजे पर लटकते हुए ताले को देखकर उठी थी ा बार-बार बलबले उठकर उसके दिल में, हैरतंगेज अंदाज में होने लगी।

रहता।

सन् ४२ के आंदोलन की कुर्बानियाँ उसने अपनी आँखों से देखी थीं। उस आग में वह खुद भी जला था। सैकड़ों, हजारों शहीदों के खून से सिंचकर पैदा हुआ आजादी का नन्हा-सा पौधा जब उसके सामने आया, जोश और जज़बे में घिरे फूलदास ने सौगन्ध उठायी थी उस नन्हे से पौधे की हिफाजत करने की। आजादी के बाद भी उसमें वह जोश, वह जज़बा कभी कम नहीं हुआ। जैसे किसी जेहाद के लिए उसने खाकी वर्दी पहनी हो।

बजरबट्टू से फूलदास का सम्बन्ध बहुत पुराना था। दोनों एक ही गाँव में साथ-साथ पढ़े-लिखे, खेले-कूदे। बजरबट्टू के बाप गाँव के स्कूल में मास्टर और फूलदास के बाप डाकखाने में मुंशी हुआ करते थे। बजरबट्टू तब काफी साफ-सुथरा, पढ़ने-लिखने में तेज और कुशाग्र बुद्धिवाला था। पढ़ाई-लिखाई खत्म करने के बाद वह काशी विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी में क्लर्क हो गया। उन दिनों गुरुपदस्वामी का सितारा सातवें आसमान तक चमक रहा था। कृष्णवल्लभ यादव विश्वविद्यालय यूनियन के अध्यक्ष चुन लिये गये थे। उन्हीं दिनों उत्सुकदास विश्वविद्यालय राजनीति की बागडोर सखियों के हाथ से छीनने में लगे हुए थे। तभी चकिया के डाकबँगले में, जाड़े की उस अँधेरी रात को प्रतिभा ने अपना सर्वस्व उत्सुकदास के हाथों सौंप दिया था।

प्रतिभा की छोटी बहन शान्तिप्रणाली उठती हुई उम्र...जैसे अपने आपमें एक शोला थी। घुँघराले बालों के बीच दमकता हुआ नूरानी चेहरा, उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में एक भूख चमकती रहती। मँझले कद की जवानी, उमंग, बला की खूबसूरती बटोरे हुए जिधर से वह निकलती बिजली-सी चमक जाती। चिकने गालों पर ठुड्डी के बीचोबीच बोलने, हँसने पर हल्के-हल्के गड्ढे पड़ते जिनके ठीक ऊपर दाहिनी तरफ गालों के बीच में छोटा-सा काला तिल उसकी खूबसूरती में और चाँद लगाता। पढ़ने-लिखने के लिए वह अक्सर लाइब्रेरी जाया करती। वहीं उसकी मुलाकात बजरबट्टू से हुई।

चन्द मुलाकातों में ही बजरबट्टू चुम्बक की तरह, उसकी ओर खिंचने लगा। वह शान्तिप्रणाली को अन्दर से किताबें वगैरह ढूँढ़कर ला देता। उसके विषयों की जब भी नयी किताबें आतीं, अलग निकालकर रख लेता। जब भी वह मिलती, किताबें दिखलाता, समझाया करता।

॥ सवाल है : कामयाब सेठ कौन है ? कोई बतायेगा हमें, आठ आने सेर की रद्दी खरीदने वाला कामू कबाड़ी, कामयाब सेठ कैसे बना ?

सरा सवाल : कामू कबाड़ी अगर उत्सुकदास की शह पर कामयाब सेठ बना तो ताँबे के फर्जी लाइसेन्स उसे किसने दिये ?

।सरा सवाल : बिजली बोर्ड ने ताँबे की लाइनें क्यों उखाड़ फेंकी ? क्या इसके पीछे गुरुपदस्वामी मन्त्रिमडल के उद्योगमंत्री और बिजलीबोर्ड की साठ-गांठ नहीं थी ?

ौथा सवाल : बिजली बोर्ड ने ताँबा उद्योगनिगम को क्यों बेचा ? सिर्फ करोड़ों की चीज दस लाख पर क्यों बेची ? इतना घाटा किसलिए ? फिर वह सारा ताँबा गया कहाँ ? मैं पूछता हूँ, आपको मालूम है ताँबा कहाँ गया है ? आपकी आँखों की पुतलियाँ उल्टी होकर गिर जाने लगेंगी, आपको गश आ जायेगा, आपके होश फाख्ता हो जायेंगे जब आप इस हैरतंगेज कारनामे का चिट्ठा सुनेंगे। आप सब अपने आपको चालाक समझते है ना ? इत्ती बड़ी राजनीति करते हैं, लाख-डेढ़ लाख लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं ? हाथ की तरंग, चेहरे के हाव-भाव, आवाज की गरिमा, शब्दों का प्रवाह असर डाल चुका था। हर बार पुरानी तरह रंगीनराय का जादू सिर पे चढ़कर बोलने लगा था। जो एक घंटा इनको इसी तरह बोलने दिया जाता तो इस भीड को ले जाकर वह आग लगवा दें, तोड़-फोड़, हड़बंग मचवा दे सकते थे या फिर उत्सुकदास की हड्डी-पसली तक तुड़वा दे सकते थे। लेकिन अगर आप इनके हथकंडे सुन लें, इस ताँबाकांड की हद तक जान लें, तब आपको पता लगेगा आप कित्ते पानी में हैं। इन्होंने पहले तो अल्मूनियम के करोड़पति उद्योगपति से मिलकर, मिली भगत के जरिये ताँबे के तार उखड़वा दिये जिससे अरबों का तुरन्त फायदा हुआ अल्मूनियम के कारखानों को। ऊपर से उस ताँबे की छीजन में घन्धा करके एक करोड़ का सौदा कर लिया। पहले तो बिजली

लेकिन उड़ती हुई नाजुक तितली-सा उसका मन, अनेक-अनेक फूलों की खुशबू जो बटोर लिये था, उन्मुक्त वातायन की दूरियों तक उड़कर चले जाने वाले कल्पना के निरीह ससार में, बार-बार लौट जाना चाहता। यह सब न महज एक धक्का था, एक चोट थी, यह सब तो उसे लूट लिए जाने जैसा, बरबाद होने, मिट जाने जैसा लगा। जहाँ एक तरफ विश्वविद्यालय की ऊँची दीवारों से लगे ज्ञान के मीनार खड़े किये थे, वहीं झुरमुटों, बाग-बगीचे, होटल पिकनिक, सैर और संगीत की अलग दुनिया भी उसने बसायी थी। इतनी तेज रफ्तार में उड़कर उसने अभी तक की जिन्दगी गुजारी थी और अब शब्दों से गूँगा, ख्यालों से नंगा, धड़कनों से बेजान उसे शौहर कहलाने वाला आदमी मिला था जो बेदम लड़खड़ाता हुआ उसकी रफ्तार नापने लगा। खाने-पीने, उठने-बैठने, आने-जाने, मेल-जोल, मुलाकातों में हर बार, हर जगह उसे एक छिछोरापन, छोटापन दिखायी देने लगा। संकीर्ण, संकुचित मनोवृत्तियों, हास्यपद सम्पर्क के क्षणों में यह सब घृणित, निम्न स्तर का लगता उसे। उसकी लड़ाई यशोदाबल्लभ से नहीं, स्वयं अपने से थी।

उधर यशोदाबल्लभ हैरान था। इस अनजानी उपलब्धि को सामने देखकर वह स्तब्ध रह गया। उसके इलाके में दूर-दूर तक कहीं ऐसी लड़की पहले कभी नहीं आयी। उसका रूप, उसके गुण, पढ़ाई-लिखाई, व्यौहार के तरीके, उसके व्यक्तित्व का अधिकारी देखकर डरे हुए जानवर की भाँति दुबका हुआ, एक गुलाम की तरह वह उसकी सेवा करता।

शान्तिप्रणाली के लिए अपने से अधिक शक्तिशाली के ऊपर शासन करने का, उसकी हीनता, प्रवंचना से ऊपर उठकर ऊँचाइयों को छूने का यह एक नया सुख था, लेकिन परिवर्तन की भी अपनी सीमाएँ होतीं। वह अपने को बदलना तो चाहती किन्तु यशोदाबल्लभ के पास आते ही घृणा, वितृष्णा, निराशा के सांघातिक आक्रमण उसे दबोच लेते। कितने दिन, कितनी रातें मनोविकारों से जूझते हुए उसने अपने आपसे संघर्ष किया था।

फिर कुछ ही दिनों में यशोदाबल्लभ का आत्मसमर्पण स्वाभाविक धूर्तता की ओर, और शान्तिप्रणाली का संघर्ष स्वयं अपने से यशोदाबल्लभ की ओर बढ़ने लगा। वह भाग जाना चाहती। कहीं भी, कहीं दूर, सम्भवतः बजरबट्टू के पास। आदमी छोटा या बड़ा नहीं होता, समय की धारा में, बहते हुए शिलाखंडों की तरह, मान्यताएँ उसे महान बनाती हैं। बजर-

मिली। पहले तो विश्वास नहीं हुआ, फिर भयावह दृश्य की घनी छाया उसे ग्रसित करने लगी। आँखें बंद कर ऊपर वाले कमरे में लेटी वह बेहद घबरायी हुई थी। उसे यह लाशों का शहर लग रहा था, जिसमें चारों ओर सिर्फ लाशें घूम रही थीं। गोल-गोल दायरों में चक्कर काटती हुई भद्दी, घिनौनी, खून से लथपथ जिनकी सड़ी बदबू से उसका दम घुटने लगा। फूलदास, कृष्णवल्लभ, यशोदावल्लभ, उत्सुकदास, कालीशंकर, दुर्लभकाछी सभी बेजान मुर्दों की तरह, लाशों के शहर में नाच रहे थे, नाचते रहेंगे। इन्हें कोई रोक नहीं सकता। इनसे निकलकर आयेगा सड़ाँध का बदबूदार राक्षस, जिसके बड़े-बड़े दाँत, भयानक चेहरा, प्रत्येक जीवित को मुर्दा बना देगा।

आज सात वर्षों से भग्न आशाओं के खँडहर में प्रेतात्मा की तरह भटकते-भटकते वह अब थक चुकी थी। जीवन से कुछ छीनने की आकांक्षा तो कभी की जन्म ले चुकी थी। यशोदावल्लभ के घृणित जीवन से ऊबकर उसने जब फूलदास की बाँहों में शरण ली, उसे पता था विनाश की ओर यह पहला कदम था। लेकिन करती भी क्या, मजबूर थी, थोड़ा कुछ भी ढूँढ़ने-पाने की जिद उसे ढकेल रही थी विनाश की किन्हीं अनजानी घाटियों की ओर जहाँ उसे भी गिरना होगा, मिटना होगा। असहाय, मजबूर, बेबस, जैसे किन्हीं जकड़नों में बँधी शान्तिप्रणाली जानती थी अब बस एक···केवल एक आशा की किरण···दूर कहीं दूर से उसे सारे बन्धन तोड़कर आने के लिए बुला रही थी। धीरे-धीरे वह किरण रंगीन, मोहक, सप्तरंगी इन्द्रधनुष में खो गयी। ढूँढ़ती रही, खोजती रही उन रंगों के घेरे में···और फिर उसने पहचान लिया बजरबट्टू को··· जिसका आकार सप्तरंगी वितान से ऊपर उठकर उसे बुला रहा था। इसी तलाश के अन्तिम दौर में जूझती हुई शान्तिप्रणाली, राधिकारानी के साथ मोटर में चल दी लखनऊ की ओर जहाँ दारुलशफ़ा में बजरबट्टू उसका इन्तजार कर रहा था, आज कितने वर्षों से।

जब बजरबट्टू ने रंगीनराय की बात काटकर फूलदास के मौत की खबर दी, बढ़ई दीक्षित एकाएक चौंक गया। कुछ ही देर पहले वह यशोदावल्लभ के फ्लैट पर जब गया वहाँ कोई न था। बाहर का दरवाजा उढ़काकर

यशोदावल्लभ, कमलासिंह के साथ श्रीकान्त पाठक से मिलने जा चुका था। दुर्लभकाछी, जालिमखाँ उनसे भी पहले तिवारी-मिस्त्री के मोटरखाने में जीप खड़ी करने चले गये। यशोदावल्लभ का नौकर सौदा-सामान लेकर अभी बाजार से लौटा नहीं था।

बढ़ई दीक्षित बैठक का दरवाजा आधा खुला देखकर भीतर गया। उसने बुशर्ट की जेब से उत्सुकदास का पत्र निकाल लिया। कमरे में दोनों तरफ बिजली खुली हुई थी, और तेज रफ्तार में पंखा चल रहा था। अन्दर के बरामदे में लगे वाशबेसन के नल से पानी गिरने की आवाज आ रही थी। कमरे में तो कोई था नहीं। पानी गिरने की आवाज की तरफ यशोदावल्लभ को पुकारते हुए वह आगे बढ़ा। लेकिन वहाँ भी कोई न था। वापस आकर वह सड़ी हुई गर्मी में बुरी तरह निकल रहे पसीने को सुखाने के लिए पंखे के नीचे खड़ा हो गया। थोड़ी देर खड़े रहने के बाद, उसने सोचा इन लोगों की गैरहाजिरी में, इस तरह यहाँ रुकना ठीक नहीं। उस समय वह बाहरी दरवाजे की ओर मुँह किये खड़ा था। बाहर निकलने के लिए आगे बढ़ा तो उसकी निगाह बायीं ओर सामने पड़े तखत से होती हुई दीवार से सटाकर रखे हुए स्टूल पर पड़ी। उसके बढ़ते हुए कदम एकाएक रुक गये। वहाँ दूर से, काले रंग के चमकते हुए रिवाल्वर को देखकर वह चौंक गया।

कुछ देर पहले वहाँ तखत पर दुर्लभकाछी लेटा था। बंडी की अन्दरूनी जेब से, बार-बार गड़ने पर, उसने रिवाल्वर निकालकर स्टूल पर रख दिया था और नाक से सीटी बजाने में लग गया था। श्रीकांत पाठक से तांबाकाड के बारे में टेलीफोन पर बात होने के बाद फूलदास के हादसे का जिक्र छिड़ गया। तब जीप के टूटे हुए विण्डस्क्रीन का भेद खुला। कमलासिंह के बिगड़ने पर दुर्लभकाछी फौरन जालिमखाँ को साथ लेकर बाहर निकल गया। कमलासिंह ने मामला, इतने सनसनीखेज तरीके से पेश किया था, दुर्लभकाछी के दिमाग से रिवाल्वर वाली बात बिलकुल निकल गयी। वह रिवाल्वर अभी तक वैसे ही स्टूल पर पड़ा हुआ था। तांबाकांड के चक्कर में उलझे हुए यशोदावल्लभ ने भी उधर नहीं देखा।

उत्सुकदास का पत्र वापस बुशर्ट की जेब में डालकर बढ़ई दीक्षित ने अगला कदम उठा ही लिया। एक बार बाहर निकलकर उसने अन्दाज या किसी ने उसे देखा तो नहीं। रुककर सोचने लगा, इधर कुछ काम-

धन्या तय ही है। मंत्रिमंडल बनने के दस-बारह दिनों तक शायद ही कोई मौका मिले। फिर उसे लगा, यहाँ अब देर करने से खेल बिगड़ जायेगा। घबराहट की वजह से उसके माथे पर पसीने की बूंदें झलकने लगी थीं। इतने में बाहर गैलरी में किसी के चलने की आवाज सुनायी दी। बिना हिले-डुले वह चुपचाप खड़ा रहा। आवाज पास आते-आते फिर दूर निकल गयी। कोई आया होता भी तो उत्सुकदास का पत्र उसके पास था ही। उसने दुबारा उलझाव-फँसाव के बारे में सोचा। उसे अपने लिए कोई खतरा नहीं लगा।

बढ़ई दीक्षित दुबककर कोने में रखे स्टूल के पास पहुँच गया। अब उसके और रिवाल्वर के बीच मुश्किल से एक-दो फिट का फासला था। फिर भी रिवाल्वर एकदम उठा लेने की उसकी हिम्मत नहीं हुई। वहीं खड़ा-खड़ा उसे घूरता रहा। न जाने क्यों घूरते-घूरते उसके अन्दर एक प्रकार की दहशत बैठने लगी। काले रंग के रिवाल्वर की पतली-सी नली से उबलती हुई आग धीरे-धीरे उसके दिमाग पर छाने लगी। इतने करीब से इस प्रकार शायद पहली बार उसने रिवाल्वर देखा था। इस दहशत से बचने के लिए उसने अपनी निगाह जरा ऊपर उठायी तो सामने की अल-मारी में उसे बेहद खूबसूरत टाइमपीस दिखायी दे गयी। पलक झपकते बढ़ई दीक्षित ने फैसला कर लिया। फिर भी अब फूलदास के मौत की बात जानकर न जाने क्यों वही रिवाल्वर उसकी आँखों के सामने घूम गया।

रंगीनराय को फूलदास के कत्ल की खबर सुनाकर बजरबट्टू थोड़ी देर गुमसुम बैठा रहा। फूलदास के न रहने का अहसास उसके मन में सैकड़ों सुइयों की तरह चुभने लगा था। दूर रहते हुए भी फूलदास ही उसके सबसे अधिक करीब था। वही शान्तिप्रणाली के साथ उसके खुफिया रिश्ते का गवाह था। शान्तिप्रणाली के ख्यालों में डूबता-उतराता आज भी वह उसकी तलाश में भटक रहा था। इसके अतिरिक्त जैसे उसके जीवन में और कोई उपलब्धि ही नहीं थी। अधूरी, निर्मोह, बीती हुई स्मृतियाँ आज भी उसे कुरेद-कुरेदकर रुला जातीं। कहीं से एक बार, सिर्फ एक बार वह शान्तिप्रणाली से मिलकर अपना अपराध जानना चाहता था। यह सब फूलदास के बाद अब कैसे होगा ? बेसहारा, बेग़ैरत कैद रहेगा दारुल-शफ़ा की दीवारों में, हमेशा'''हमेशा के लिए।

सिर झुकाये निःशब्द, टूटा हुआ बजरबट्टू तिवारी मिस्त्री के घर की तरफ़ चल दिया। तिवारी मिस्त्री उन दिनों दारुलशफ़ा के दूसरे गेट से दाहिनी तरफ़ जाने वाली पतली-सी सड़क पर बने हुए गराजों की कतार में से एक में खुद रहा करता और उससे लगे हुए दूसरे गराज में उसने मोटर, जीप आदि की मरम्मत के लिए एक छोटा-सा कारखाना खोल रखा था। बजरबट्टू सड़क के किनारे-किनारे चला जा रहा था तभी साइकिल पर पुलिस-थाने के इंचार्ज चरणजीत को देखकर उसने गुहार लगायी।

चरणजीत फूलदास का गहरा दोस्त था। फूलदास ने उसे बजरबट्टू से मिलाते हुए एक बार कहा था, "यह आदमी हीरा है।" तब से मिलने पर हमेशा रुककर दो बातें अवश्य कर लेता, न जाने फूलदास के लिहाज के कारण या बजरबट्टू के अपने व्यक्तित्व के आकर्षक तत्त्वों के कारण। लेकिन आज वह रुकने के मूड में नहीं था। फिर भी साइकिल एक पैर से सड़क पर रोककर बोला, "यार! आज जरा जल्दी है। अब तक तो तुम लोगों को फूलदास के मर्डर के बारे में पता लग गया होगा। कहीं खूनी साला इधर ही न आया हो?"

बजरबट्टू लगभग कूदकर बिलकुल करीब आ गया, "क्या कहा, खूनी इधर आया है! किसने खून किया है? कहाँ है वह?"

"कहाँ है वह?" मुँह बिचकाकर चरणजीत ने कहा, "मालूम होता तो पकड़ न लेता सालों को। दाहकर्म ... देर पहले आ... नवर दायाँ को इमेभयाथी नाम का ... हुए हैं, उसे ... आदमी के साथ मिलकर फूलदास का ... यह लोग ... हैं लखनऊ की तरफ़ जाते देखे गये हैं ... तो ... पर नोट कर लिया गया था लेकिन ... जा...

बहुत धीमी आवाज़ में इधर-उधर ... करते बोला, "अ... , ...

हवलदार... न...

"... दा...

... नायब न...

... की ओर

... दुश्मन है। जाने द...

कच्चा खा जाऊँगा।" दाँत किटकिटाते हुए, घृणा से मुँह बनाकर बजरबट्टू चिल्लाने लगा।

"अरे···अरे बजरबट्टू! यह क्या···जरा धीरे बोलो, किसी ने सुन लिया तो खैर नहीं। तुम यशोदावल्लभ को शायद ठीक से नहीं जानते। बहुत बड़ा चालाक है। उसका भाई कृष्णवल्लभ तो उसका भी बाप है। कृष्णवल्लभ को अब मंत्री बनने में देर ही कितनी बची है। लेकिन यार तुमको एक बात बताऊँ, फूलदास-मर्डर से सारी पुलिसफोर्स इन लोगों के खिलाफ हो चुकी है। आई० जी० साहब का हुक्म है, किसी को छोड़ा नहीं जाएगा। दुर्लभकाछी कमीने कुत्ते को कोई बचा नहीं सकेगा।···अच्छा ···अच्छा अब मैं चलता हूँ।" कहकर चरणजीत ने साइकिल आगे बढ़ा दी।

बजरबट्टू को दुर्लभकाछी का नाम सुनकर मितली आने लगी। यशोदावल्लभ से वह वैसे ही घृणा करता था, अब अपने अजीज दोस्त के खूनी के साथ उसका सम्बन्ध जानकर, उसके अन्दर भयंकर क्रोध की चिंगारियाँ सुलगने लगीं।

तिवारी मिस्त्री के गराजनुमा घर पर पहुँचा तो वहाँ उसका लड़का खाना बना रहा था। सारा गराज कच्ची लकड़ी के धुएँ से भरा हुआ था। धुएँ को हाथों से आँखों के ऊपर हटाते हुए उसने लड़के से कारखाने वाले गराज की चाबी माँगी।

ऐसा कई बार होता, बजरबट्टू कारखाने वाले गराज में ही लेट जाया करता। आज वह बेहद थका हुआ था। उदासी-भरे मन के आँगन में दुख के बादल उमड़ रहे थे। उस समय वह अकेले में बैठकर खूब··· खूब रोना चाहता था।

लड़के से चाबी लेकर उसने कारखाने वाला गराज खोला तो सामने वही जीप थी जिसे दुर्लभकाछी वहाँ थोड़ी देर पहले खड़ी कर गया था। बजरबट्टू ने गराज में लगे टीन के फाटक को अन्दर से उढकाकर सोचा, अब जीप की ही गद्दी निकालकर उसके ऊपर लेटा जाय। आगे की सीट जब खींचने पर भी नहीं निकली, वह बोनट के सामने से घूमकर पीछे की तरफ जाने के लिए मुड़ा तो उसकी निगाह विण्डस्क्रीन पर अनायास रुक गयी। कुछ अजीब-सा लगा जैसे किसी गोल चीज से सुराख किया गया हो, आस-पास का सीसा दूर तक चिटक गया था।

कुछ छीन ही सका। जितना जबरदस्त उसका प्यार था, उससे कहीं ज्यादा नफरत थी उसके अन्दर। कितने ही वर्षों से प्यार, नफरत, विद्रोह, सब-कुछ अपने ही में बटोरे हुए वह घुट-घुटकर जी रहा था। कभी-कभी उसके अन्दर कुछ कर गुजरने की तीव्र इच्छा जागती। कुछ भी चाहे अच्छा ···चाहे बुरा हो। लेकिन अपनी हैसियत देखकर तरस-तरसकर रह जाता।

लेकिन आज, भागते हुए बजरबट्टू सोच रहा था, पूरा ब्रह्माण्ड उसकी हथेलियों के ऊपर आकर टिक गया है।

दुर्लभकाछी यशोदावल्लभ के फ्लैट से पाँच बजे के करीब निकला था। कमलासिंह के बिगड़ने पर अब बात उसकी भी समझ में आ गयी। विण्डस्क्रीन की वजह से जीप को यहाँ बाहर पार्क नहीं करनी थी।

जालिमखाँ के साथ जब वह दारुलशफा के मोटरखाने पर पहुँचा, तिवारी मिस्त्री उस समय वहाँ नहीं था। वहीं रुककर दोनों आगे का कार्यक्रम बनाने लगे। साँझ के समय अब सबसे पहले दारुलशफ़ा के पीछे "यही है अपनी मधुशाला" में जरा कसके देशी सन्तरा छनेगी। सात-आठ यूँ-ही बज जाएँगे; उसके बाद हजरतगंज में जमकर जीमेंगे और फिर रात का सनीमा देखें या जरीनाबेगम का मुजरा सुनें, इस पर दोनों में बहस होने लगी। आखिर में सनीमा की बात ही दोनों को कुछ ज्यादा माकूल लगी क्योंकि जरीनाबेगम के यहाँ जाने के लिए जीप की जरूरत होती।

करीब साढ़े-पाँच बजे तिवारी मिस्त्री आया। तब यशोदावल्लभ का लिखा हुआ कागज देखकर उसने दुर्लभकाछी से कारखाने वाले मोटर-खाने में जीप रखने के लिए कह दिया। मोटरखाने के फाटक खोलकर उसने दुर्लभकाछी से फौरन जीप लाने को कहा फिर उसे वहीं दारुलशफ़ा में एक गाड़ी ठीक करनी थी। दुर्लभकाछी जिस तरफ से जीप लेकर मोटरखाने में रखने आया वहीं दारुलशफ़ा के गेट पर सड़क के किनारे कुछ ही देर बाद चरणजीत से बजरबट्टू बात कर रहा था।

जीप रखने के बाद दुर्लभकाछी को अपनी मूँछों पर हाथ फेरते हुए देखकर जालिमखाँ को अपनी दाढ़ी याद आने लगी। लेकिन फिल-हाल मधुशाला में देशी सन्तरे की बोतलें और कलिया, कलेजी की प्लेटें उन्हें पुकार रही थीं। उस पतली सड़क को पीछे छोड़कर वह लोग 'ए'

ब्लाक के पिछवाड़े की तरफ घूमने ही वाले थे तभी हाँफते हुए कमलासिंह ने धर पकड़ा। कमलासिंह, दुर्लभकाछी की बाँह पकड़कर जरा सड़क के किनारे ले गया तो जालिमखाँ भी साथ में आकर खड़ा हो गया। फिर साँस को दम देने के लिए कुछ पल रुककर उसने यशोदाबल्लभ की बात उन लोगों को समझानी शुरू की।

"देखो! यहाँ खतरा है! खादी ड्रेस में लगता है पुलिस लग गयी है। जरा और शाम ढलते ही तुम लोगों को यहाँ से निकल जाना चाहिए। जीप कहाँ है?" कमलासिंह ने अधीरता से पूछा।

"वहाँ मोटरखाने मा खड़ी कर दी।"

"अच्छा अब कहाँ जात हो तुम लोग?"

कुछ मुस्कुराते हुए दुर्लभकाछी ने जालिमखाँ की ओर देखकर आँख मारी, फिर तरन्नुम में बोला, "अपनी मधुशाला मा जाते हैं, अब जरा छान्नेंगे।"

"तो जल्दी से थोड़ी-बहुत पी लो, बाकी बँधवाकर चल देना। उधर कमरे पर भूलकर भी न आना।"

दुर्लभकाछी का पीने में मन नहीं लगा। इस समय चले जाने का हुक्म मिला था। खून का घूँट पीकर रह गया। न शाम का जश्न होगा, न जरीनाबेगम का कोठा, सनीमा सैर-सपाटा कुछ नहीं। दोनों ने सलाह-मशविरा करके यहाँ से फौरन निकलना तय किया। शाम के करीब साढ़े छह का समय था। दोनों ने सोचा, आठ-सवा आठ तक हरदोई पहुँच जायेंगे, अब खाना-पीना वहीं किया जायेगा। मंत्रिमंडल का जश्न चूल्हे-भाड़ में, अपना जश्न होगा हरदोई में। रातभर पीयेंगे, गायेंगे। ढूँढी जायेगी वहीं कौनो पतुरिया, न होगा किसी को उठा लायेंगे रात-भर के लिए और फिर चैन से ऐश करेंगे। रास्ते के लिए दो-चार बोतलें, कुछ कबाब, बोटी लेकर दोनों तिवारी मिस्त्री के मोटरखाने पर पहुँचे। जीप निकालने के लिए जब दुर्लभकाछी ने मोटरखाने का दरवाजा खोला तो सबसे पहले उसकी निगाह जीप के पिछले हिस्से पर पड़ी। वहाँ दाहिनी तरफ की सीट आधी बाहर की ओर निकली हुई थी। थोड़ा आगे बढ़ा तो फर्श पर असली वाली नम्बर-प्लेट दिखी।

फिर भी दुर्लभकाछी घबड़ाया नहीं। जल्दी से फर्श से नम्बर-प्लेट उठायी फिर उसने सीट ढकेलकर ठीक की। लेकिन उसके अन्दर किसी

आने वाले खतरे की घंटियाँ बजने लगीं। इधर-उधर गढ़ी निगाहों से देखते हुए बाकी बचे समय और आने वाले खतरे के बीच फासले का अन्दाज करने की कोशिश करते हुए जालिमसिंह से उसने फौरन गाड़ी में बैठने के लिए कहा। खुद भी करीब दौड़ते हुए आगे की सीट पर बैठ गया। बैठते ही उसने गाड़ी स्टार्ट की। साथ ही क्लच दबाकर पिछला गियर लगाया। गाड़ी रफ्तार में मोटरखाने से बाहर निकल आयी। मोटरखाने से बायीं तरफ थोड़ा मोड़कर दारुलशफ़ा के मेनगेट की तरफ से जाने के लिए अगला गियर लगा ही रहा था फिर कुछ सोचकर उसने क्लच दबाया, गाड़ी का गियर तेजी से न्यूट्रल किया, पिछला गियर लगाकर गाड़ी एकदम सड़क के किनारे तक ले गया और फिर पूरा स्टीयरिंग काटकर दाहिनी ओर से सीधे लालबाग की तरफ निकल गया।

"जिस जीप में खूनी आये हैं, उसका नम्बर यही है ना ?" अपनी बायीं हथेली चरणजीत की आँखों से थोड़ी दूर पर फैलाकर हाँफते हुए बजरबट्टू बड़ी मुश्किल से कह पाया।

तिवारी मिस्त्री के मोटरखाने से दौड़कर बजरबट्टू पतली सड़क पार करके मेन गेट से बायीं तरफ 'बी' ब्लाक के सामने पहुँच गया। उस समय दोनों हाथ आसमान की तरफ उठाये हुए वह दौड़ता चला जा रहा था। किसी तरह भागकर वह चरणजीत के पास पुलिस थाने पहुँचना चाहता था। 'बी' ब्लाक के बूटेदार छज्जों पर खड़े हुए, झुक हुए लोग शाम के वक्त नीचे की चहल-पहल, सामने सड़क के नजारे का जायजा ले रहे थे। बजरबट्टू को पुलिस थाने तक की दूरी बहुत बड़ी दूरी लग रही थी। काश, उसके पंख लग जाते, काश, किसी तरह उड़कर वह चरणजीत के पास पहुँच जाता। बस इसी धुन में सारा दम लगाकर वह दौड़ता चला जा रहा था।

चरणजीत थोड़ी देर पहले ही बजरबट्टू से बातचीत करके 'ए' ब्लाक में स्थित दारुलशफ़ा के दफ्तर में गया। वहाँ दफ्तर के लोगों को दुर्लभकाछी का हुलिया बताकर बाहर कुछ लोगों को लगाकर फिर 'बी' ब्लाक होते हुए डी० पी० ओ० की तरफ के मेन गेट पर खड़ा हुआ लोगों से

समय पूछताछ कर रहा था। साथ में 'बी' ब्लाक की बूटेदार इमारत से बार-बार घूमती हुई उसकी निगाहें सड़क पर से होते हुए दूर-दूर तक फैले हुए बरामदों और दिखने वाले दरवाजों, खिड़कियों को देख रही थीं। एकाएक उसने देखा दूर से एक आदमी पूरा जोर लगाकर दोनों हाथ आसमान की ओर उठाये दौड़ता हुआ चला आ रहा है। चरणजीत सतर्क हो गया। दौड़ता हुआ आदमी अब धीरे-धीरे पास आता जा रहा था। पलक झपकते ही चरणजीत ने पहचान लिया, यह बजरबट्टू है। वह किनारे से बढ़कर बीचोंबीच सड़क पर खड़ा हो गया।

बजरबट्टू उस समय दारुलशफ़ा के पहले गेट से निकलकर पुराने जी० पी० ओ० के अन्दर से निकलने के लिए बचे हुए फासले को पूरा करना चाहता था, तभी सामने की सड़क पार करने के लिए उसने जो आँखें जरा नीची की तो चरणजीत को सड़क के बीचोंबीच खड़े हुए अपने सामने पाया। उसकी दौड़ खतम हो गयी जैसे किसी ने रफ्तार में भागती हुई गाड़ी का स्विच आफ कर दिया, जैसे दूर से दौड़ता हुआ घोड़ा अपनी मंजिल पर पहुँचकर रुक जाता है। बजरबट्टू चरणजीत के ठीक सामने जाकर रुक गया। उसने पहले बायाँ हाथ फिर दायाँ हाथ नीचे गिरा लिया।

बजरबट्टू के चेहरे की ओर से नीचे हथेली की तरफ देखते हुए चरणजीत ने शंका से पूछा, "···खूनी···जीप ? बजरबट्टू, कहीं तुम फूलदास के खूनी की बात तो नहीं करते हो !"

बजरबट्टू अब भी हाँफता जा रहा था। पसीने से तर-बतर, उसके मुँह से फिचकुर निकल रहा था। प्यास से सूखे गले से आवाज ही नहीं निकली। उसने बस आगे की तरफ गर्दन झुकाकर हाँ का इशारा कर दिया।

उसकी हथेली की ओर देखकर चरणजीत ने अपनी ऊपर वाली जेब से लाल रंग की एक स्लिप निकाली। मुड़ी हुई स्लिप को झटककर सीधा किया। फिर बजरबट्टू की ओर देखकर बोला, "नहीं···नहीं··· उस जीप का नम्बर तो २४५० था।"

"तो फिर चलिये मेरे साथ।" दाहिनी हथेली दिखाकर बजरबट्टू ने कहा।

दारुलशफ़ा के दूसरे मेन गेट से बायीं तरफ की पतली सड़क के पश्चिमी

किनारे पर चरणजीत जब बजरबट्टू के साथ पहुँचा, तिवारी मिस्त्री मोटरखाना बन्द कर चुका था।

"गराज खोलो।" चरणजीत ने कड़ककर कहा।

तिवारी मिस्त्री ने खाकी वर्दी में जो चरणजीत को देखा, घबड़ाकर जल्दी-जल्दी ताला निकालकर मोटरखाना खोल दिया। बजरबट्टू जो चरणजीत के साथ न दौड़ पाने से जरा पीछे रह गया था तब तक वहाँ आ पहुँचा। मोटरखाना खुलते ही दोनों ने देखा, जीप वहाँ नहीं थी। लेकिन चक्के के ताजा निशान दूर अन्दर से बाहर तक वैसे ही दिख रहे थे जैसे बजरबट्टू की दोनों हथेलियों पर बिगड़े हुए जीप के असली और नकली नम्बरों की गिनतियाँ!

"देखो तिवारी, मामला खून का है, इसमें तुम फँस जाओगे। सीधे तरीके से बता दो, जीप यहाँ कौन खड़ी कर गया था? वह लोग किधर गये? जीप कहाँ है?"

चरणजीत पुलिस के खास लहजे में तौलकर तिवारी को घेर चुका था। तिवारी मिस्त्री खून का मामला सुनकर, डर के मारे थर-थर काँपने लगा। फिर उसने सहारे के लिए बजरबट्टू की ओर देखा। उसे क्या पता था दुर्लभकाछी कोई एक खतरनाक मुजरिम होगा।

"तिवारीजी, इसमें डरने की क्या बात है, आप बताइए ना।" बजरबट्टू ने दिलासा दी।

"देखिये……" बजरबट्टू की ओर घूमकर उसने कहा, "मुझे इन लोगों के बारे में कुछ भी पता नहीं। मैंने तो इनको आज के पहले कभी देखा भी नहीं। यहाँ जीप आयी जरूर थी लेकिन भाईजी का नाम इन लोगों ने लिया था, तभी मैंने मोटरखाना खोल दिया।"

"कौन भाईजी?" चरणजीत बोला।

तिवारी मिस्त्री मे जो [illegible] हो गया। कायरता की मूर्ति बनकर उसने [illegible] दिया। यशोदावल्लभ का नाम [illegible] गया।

"तुम जानते हो! [illegible] का नामी डकैत दुर्लभकाछी है। [illegible] प्यारे दोस्त [illegible]!"

तिवारी मिस्त्री की रूह काँप उठी। इतने में बजरबट्टू बोला, "चरणजीत, यह बेचारा निर्दोष है। मैं तो यहीं रहता हूँ इसके साथ। मुझे तो असली गुनहगार यशोदावल्लभ लगता है।"

तिवारी मिस्त्री ने बजरबट्टू को आगे बोलने न दिया। बीच में बात काट दी, "हाँ दरोगाजी, मैं यहाँ साढ़े-पाँच के करीब आया, दोनों यहाँ मौजूद थे। उन्होंने यशोदावल्लभ का लिखा हुआ एक कागज भी दिया था।"

"कहाँ है कागज···निकालो! जल्दी निकालो!!" चरणजीत ने आगे बढ़कर कहा।

तिवारी मिस्त्री ने अपनी जेब में हाथ डाला। पहले पेंट, फिर कमीज की सभी जेबें देख डालीं, यशोदावल्लभ का लिखा हुआ कागज नहीं मिला। उसकी घबड़ाहट बढ़ती जा रही थी। उधर चरणजीत कड़ी निगाहों से उसे घूर रहा था।

बजरबट्टू ने सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा, "तिवारीजी, तुम बस वह कागज दे दो, बाकी सब हम देख लेंगे।"

तिवारी मिस्त्री मोटरखाने के अन्दर गया। दो-तीन मिनट तक इधर-उधर ढूँढता रहा। फिर बाहर आया तो उसके काँपते हुए हाथों में सिगरेट की डिबिया का नुचा हुआ एक टुकड़ा था। उस समय उसका जी उस टुकड़े को चूमने का हो रहा था लेकिन घबड़ाहट में उसे चरणजीत के हाथों सौंप दिया।

थाने लौटकर चरणजीत ने बड़ी चुस्ती से सारा काम किया। कंट्रोल रूम से टेलीफोन पर जीप का असली नम्बर, फर्जी नम्बर, दुर्लभकाछी क हुलिया बताकर फौरन सर्च पार्टी भेजने को कहा। शहर पुलिस, ट्रैफि पेट्रोल को एलर्ट करने के बाद वायरलेस पर रास्ते के तमाम थानों खबर भेजी। बीस-पच्चीस मिनट के अन्दर पुलिस की पाँच गाड़ि कानपुर, सीतापुर, बाराबंकी, सुल्तानपुर और हरदोई रोड की त दौड़ा दी गयी।

दुर्लभकाछी उस समय हरदोई रोड पर चेक पोस्ट पार कर चु था। इधर कृष्णवल्लभ यादव, श्रीकान्त पाठक और यशोदावल्ल उत्सुकदास के यहाँ जाने वाले थे। रंगीनराय के यहाँ उस समय लोबी गुट के विधायक पहुँच रहे थे। बढ़ई दीक्षित अपने फ्लैट में ब्लैकमेल

योजना को अन्तिम रूप दे चुका था। शान्तिप्रणाली की मोटर उसी समय 'बी' ब्लाक के सामने आकर रुकी।

बजरबट्टू ने फूलदास के मौत की खबर के धमाके से रंगीनराय के धारा-प्रवाह भाषण को एकदम से ब्रेक लगा दिया था। उसके संजीदा चेहरे और आँखों की नमी देखकर रंगीनराम ने कुछ और पूछा भी नहीं। कुछ ही क्षणों में बिना कहे-सुने वहाँ से बजरबट्टू चला गया। तभी थोड़ी देर के लिए बढ़ई दीक्षित की आँखों के सामने यशोदाबल्लभ के यहाँ तिपाई पर रखा हुआ रिवाल्वर घूम गया था। हालांकि फूलदास के कत्ल की खबर सुनकर रंगीनराय को धक्का लगा था लेकिन इस समय उनके सर पर लोबीराम का भूत सवार था। फिर गहरी साँस लेकर वह अन्दर गये। लौटकर आने पर उनके हाथों में चाय के दो प्याले थे और होंठों पर वही लोबीराम का किस्सा। बढ़ई दीक्षित ने यशोदाबल्लभ के यहाँ तिपाई पर रखी रिवाल्वर को पीछे छोड़कर फौरन चाय का प्याला उनके हाथ से ले लिया। अपनी आरामकुर्सी पर बैठकर रंगीनराय सुड़-सुड़ की आवाज में चाय पीने लगे। चाय के हर घूँट में लोबीराम उनके पेट में पहुँचकर खलबली मचाने लगा। प्याला मेज पर रखने के बाद जब उनसे रहा नहीं गया तो बढ़ई दीक्षित की आँखों मे आँखें डालकर बोले, "क्या है बढ़ई ! मेरी समझ में एक बात नहीं आती, अपना लोबीराम, कृष्णबल्लभ के इतना खिलाफ कब से हो गया ? पहले तो दोनों में दाँतकाटी दोस्ती थी।"

"अरे आपको नहीं पता···" बढ़ई दीक्षित कलई खोलने के लहजे से कुछ बड़प्पन में बोला, "ताँबे की छीजन वाले धंधे से दोनों में खटक गयी। लोबीराम का सौदा सिंडीकेट के साथ पाँच-दस लाख में तय था पर बीच में कामयाब सेठ ने लँगडी मार दी।"

"सब काम तो जनहित में हुआ होगा।" रंगीनराय ने हाथ पर ताली मारकर कहा।

"जनहित की मारिये गोली ! अब हमें बतायें, इस मुसीबत को गले से कैसे उतारूँ ?" बढ़ई दीक्षित बुश्शर्ट से उत्सुकदास का पत्र निकालकर हाथों में उछालता रहा।

"पत्र देखकर अब करोगे भी क्या···" रंगीनराय गूढ़ रहस्य की

मोटर मे फूलमालाओ से लदे हुए उत्सुकदास को लगा, कभी न खत्म होने वाली उड़ान की ओर वह बढ़ चले हैं।

उस समय तक कानपुर, सीतापुर, हरदोई, वाराणसी, इलाहाबाद, प्रदेश के कोने-कोने मे सैंकडो बसों मे भरकर हजारों लोग, दोपहर के बाद होने वाले विशाल प्रदर्शन में शामिल होने के लिए आ चुके थे। आस-पास के गाँव, दूर-दूर के इलाको से पिछली रात से ही दर्जनों ट्रकों, ट्रैक्टर-ट्रेलर में ढो-ढोकर लोगो को जमा किया जा रहा था। पूरे शहर में, चौक-चौराहों पर बड़े-बड़े सिंहद्वार, सड़कों के एक सिरे से दूसरे तक खीचकर टाँगे गये कपड़े के बैनर, दिवालों पर चिपके हुए लाखों पोस्टर सुर्ख लफ्जों मे उनकी महानता की जय-जयकार कर रहे थे।

इसी दिन के लिए तो उन्होने अपना गिरोह बनाया था। दिल्ली में उत्सुकदास उधर तो मुख्यमंत्री बनने की पैंतरेबाजी में जुटे हुए थे, लेकिन साथ ही साथ प्रदेश के जिले-जिले मे उनके समर्थन में बैठकें हो रही थी, जिनमें उन्हे मुख्यमंत्री बनाने के लिए प्रस्ताव पास किये जाते। वैसे तो ज्यादातर ये बैठकें कागजी और प्रस्ताव हवाई होते लेकिन इनकी रूपरेखा, इनका आडंबर असरदार तरीकों से जोड़-तोड़कर बनाया जाता। फसली और असली किरायेदार मिल-बाँटकर सारी जिम्मेदारी उठा रखते। कभी-कभार जब जवाबी हमले की चोट देनी होती तो लाउडस्पीकर, झंडियो-झंकाड़ों के जरिये ठीक बीच चौराहे पर बैठक बुला ली जाती। इस तरह न तो दरी का भाड़ा पडता और ना ही भाड़े के टट्टू जोड़ने में खर्चा होता। बस कुछ तालियाँ बजा सकने वाले स्वयंसेवी और कुछ दन्तमंजन छाप वक्ता मिल-बाँटकर ऐसा समाँ बाँध लेते जो रास्ता चलते लोग रुकने लगते। कुछ ठलुए मक्खियों की तरह भिनभिनाने लगते। तभी खोमचे, ठेले, बीड़ी-पान की डलिया वाले भी आ धमकते। इस तरह भीड और भीड़ का समाँ इतना काफी हो जाता तो कीमती खबरनवीस भला कहाँ पीछे हटते।

कलाबाजी, तिकड़मबाजी, बैठकबाजी, प्रस्तावबाजी, जुलूस-नारे-बाजी के जरिये इस तमाम शक्ति-प्रदर्शन के बाद आत्मविश्वास के इन क्षणों मे अब उत्सुकदास को कोई डर नही रह गया था। उनको विश्वास था, लोबीराम, रंगीनराय अब अकेले पड़ जायेंगे। यह लोग विधानमंडल पार्टी का नेता चुनने के लिए बुलायी गयी मीटिंग मे अगर उनके खिलाफ

जिस समय विरोधी दल के सदस्यों ने संसद की कार्यवाही का बहिष्कार किया, प्रधानमंत्री सदन में ही थे। उन्होंने गुरुपदस्वामी से ताँबाकांड के बारे में पूछा तो वह बताते कहाँ से, यह मामला अब तक उनकी समझ में नहीं आया। इधर संसद के गुल-गपाड़े में बार-बार कामयाब सेठ का नाम उछाला जाने लगा, तब गुरुपदस्वामी को इतना अवश्य याद आया, जब वह मुख्यमंत्री थे, उत्सुकदास और कृष्णवल्लभ, ताँबा खरीदने के सिलसिले में उनके पास कामयाब सेठ को लाये थे। उनके मंत्रिमंडल में उस समय उत्सुकदास उद्योगमंत्री, कृष्णवल्लभ विद्युत मंत्री थे। कामयाब सेठ से बस वही एक मुलाकात उनके लिए आज मुसीबत का पहाड़ बनकर सामने आयी। इसके पहले भी उत्सुकदास कामयाब सेठ का नाम अक्सर लिया करते।

उन दिनों मुख्यमंत्री होने की वजह से गुरुपदस्वामी, प्रदेश कमेटी के खर्चों के लिए, दस हजार रुपया महीना दिया करते थे। जब कभी उन्हें समय न मिलता, वह प्रदेश पार्टी के खर्चों के लिए उत्सुकदास से रुपया भिजवाने के लिए कह दिया करते। इसी संदर्भ में और पिछली बार पार्टी के सदस्यता अभियान में, फर्जी मेम्बर बनाने के लिए, उत्सुकदास ने, कामयाब सेठ से सहायता ली थी। उसके थोड़े ही दिन बाद ताँबाकांड के सिलसिले में, गुरुपदस्वामी से कामयाब सेठ का, पहली मुलाकात में, परिचय कराते हुए उत्सुकदास ने यही बात उनको बतायी थी। मामला स्क्रैप का होने की वजह से, गुरुपदस्वामी कुछ समझे कुछ न समझे। स्क्रैप भी भला मंत्रियों, अफसरों, सेठों के बात करने की चीज थी, उसे तो कबाड़ी लोग खरीदा-बेचा करते।

उस समय कामयाब सेठ की पिछली जिन्दगी से सम्बन्धित किस्सों को उत्सुकदास ने न बताया, ना ही गुरुपदस्वामी ने पूछा ही था। उनको तो कामयाब सेठ विलायती सूटबूट में अच्छा, भला-सा आदमी नजर आया था। वैसे भी रद्दी, टीन, बोतल, लोहा-लक्कड़ देखकर गुरुपदस्वामी मुँह घुमा लिया करते। उनके घर में दस-बीस अखबार, दर्जनों पत्र-पत्रिकाएँ आतीं। इन सबसे चालिस-पचास सेर रद्दी हर महीने निकलती। काफी दिन पहले जब उनको बताया गया, घर पर रहने वाला सेक्रेटरी सब रद्दी बेच खाता था, बहुत बिगड़े थे, गुरुपदस्वामी, यह सूचना देने वालों पर। रद्दी की बात सुनना भी गवारा नहीं था। स्क्रैप से उनको

एलरजी थी, शायद इसीलिए उनका पूरा जीवन टोटल स्क्रैप था।

जब उत्सुकदास ने मिलाते समय उनको बताया कामयाब सेठ विद्युत परिषद् का स्क्रैप खरीदेगा, गुरुपदस्वामी काफी देर तक हँसते रहे। अब प्रधानमंत्री के पूछताछ करने पर उनको सब याद आ रहा था। काश, उस दिन वह न हँसते, तो आज प्रधानमन्त्री के सामने रोनी सूरत बनाकर न बैठना पड़ता। संसद से ही प्रधानमंत्री ने अपने सचिव को नोट लिखकर भिजवा दिया, ताँबाकाड का पूरा विवरण शाम तक उनके सामने रखा जाय ? उसके बाद भी ससद की लाबी में ताँबाकांड की चर्चा होती रही। पार्टी के ससद सदस्यों मे उत्तेजना व्याप्त हो चुकी थी।

स्क्रैपडीलर्स सिंडीकेट के नुमाइन्दे संसद सदस्यों के घरों पर चक्कर लगा रहे थे। गुरुपदस्वामी के विरोधियों को ताँबाकाड में, उनको नीचा दिखाने का सुनहरा मौका दिखायी दे रहा था। तभी स्पीकर ने विरोधी दल के सदस्यों के बराबर दबाव के कारण ताँबाकांड के ऊपर कुछ देर की बहस का प्रस्ताव मान लिया। बहस के बाद सरकार को बयान देना था।

इसके बाद घटनाक्रम का चक्र बड़ी तेजी से घूमने लगा। प्रदेश के बीस संसद सदस्यो का गुट प्रधानमन्त्री से मिला। संसद सदस्यों ने प्रधानमन्त्री को विस्फोटक परिस्थितियों से अवगत कराया। इधर प्रदेश के मंत्रिमंडल मे उम्मीदवारों के चयन मे कई एक गुटों के नाम कट गये थे। प्रधानमंत्री से मिलने वाले कुछ संसद सदस्य अपने-अपने उम्मीदवारो के, मंत्रिमडल मे न लिये जाने से रुष्ट थे। उनके लिए गुरुपदस्वामी, उत्सुकदास, दोनों को एक ही तीर से शिकार करने का मौका सामने था। संसद सदस्यों के दुश्मन गुरुपदस्वामी थे, उत्सुकदास नहीं। लेकिन उत्सुकदास के मुख्यमंत्री बन जाने से, गुरुपदस्वामी के शक्तिशाली हो जाने का अंदेशा था। इन लोगों ने गुरुपदस्वामी का विरोधी होने पर भी, उत्सुकदास का समर्थन किया था। जिससे उनके उम्मीदवारो को प्रदेश मन्त्रिमंडल में ले लिया जाय। अब अपने उम्मीदवारो को मंत्रिमंडल मे शामिल न किये जाने पर इनके लिए उत्सुकदास, गुरुपदस्वामी के खिलाफ, राजनीति का एक मोहरा बन गये। फिर उत्सुकदास ने अभी से झूठे वादे करके मुकर जाना शुरू कर दिया तो, आगे भला क्या होगा ? उनके असंतोष की दरारों मे ताँबाकाण्ड ने

ल्द का काम किया।

उत्सुकदास अपने मुख्यमंत्री पद के लिए दिल्ली से चुन लिए जाने के द कुछ निश्चिन्त हो गये। उसके बाद वह शपथ समारोह के दिन के स्वागत-कार के विशाल प्रबन्ध मे जुट गये। अपने मुख्यमंत्री चुने जाने के लिए होंने संसद के सदस्यो से जो सौदेबाजी की थी, उसे अपनी तरफ से ी करने में वह कतराने लगे। कुछ यह भी था, इनकी चली नहीं। रुपदस्वामी ने अपने सभी आदमियो को करा लिया था। कुछ प्रधानमंत्री ।ा दिल्ली के अन्य महत्त्वपूर्ण नेताओं के आदमी ले लिये गये। इसी क्कर में यहाँ तक कृष्णवल्लभ का नाम भी कट गया था। फिर कृष्ण-ल्लभ का नाम तो उत्सुकदास ने लड़कर शामिल करवा लिया लेकिन कुछ हत्त्वपूर्ण संसद सदस्यों से, इस सौदेबाजी में, किये गये वादे वह पूरे न र पाये और चुपचाप दिल्ली से खिसक गये।

संसद सदस्यों की, प्रधानमंत्री से हुई बातचीत, उस समय ताँबाकाण्ड क ही सीमित न रही। अफीम की तस्करी, राष्ट्र निर्माण संघ की कर-तें, बड़े पैमाने पर फर्जी सदस्य बनाने तथा अन्य घपले भी उनके सामने खे गये। गुरुपदस्वामी के पुराने घपलों में उत्सुकदास के सम्बन्धों की ात उठायी गयी। संसद सदस्यों ने स्पष्ट रूप से प्रदेश में होने वाले त्रिमंडल के गठन को, जाँच न होने तक, स्थगित कर देने की माँग ी।

संसद सदस्यों के विचार सुनकर प्रधानमंत्री ने पार्टी के अध्यक्ष, गृह-त्री, उद्योगमंत्री तथा अन्य चोटी के नेताओं से सलाह-मशविरा किया। हले तो सिर्फ गुरुपदस्वामी को विधानमंडल पार्टी के चुनाव को शान्ति-र्वक करवाने के लिए भेजा जा रहा था। लेकिन अब ताँबाकाण्ड में फँसे ाने की वजह से उनका प्रभाव-बल घट गया था यह सोचकर प्रधानमंत्री पार्टी अध्यक्ष को लखनऊ जाने का सुझाव दिया।

प्रदेश मंत्रिमंडल के शपथ-समारोह को स्थगित करने की माँग को फिलहाल प्रधानमंत्री ने ठुकरा दिया था। पार्टी अध्यक्ष को बताया जा चुका था, उत्सुकदास मुख्यमंत्री बनेंगे। इसलिए विधानमंडल पार्टी मीटिंग में उनका चुनाव सर्वसम्मति से होना था।

प्रधानमंत्री ने अपने सचिव से ताँबाकाण्ड का जो पूरा विवरण माँगा था, वह उनके पास अगले दिन सुबह तक पहुँच गया। इस विवरण से एक

की मुंडेर पर लटके हुए किसी शिकार की तलाश में नीचे की ओर झांक रहे थे। अब 'रद्दी टीन बोतल' की पुकार सुनकर उनके जेहन में कहीं विचार आया जिससे उनके अन्दर खुशी की लहर दौड़ गयी और उन्होंने कामयाब सेठ को ऊपर बुला लिया।

उत्सुकदास का उस समय भूख से बुरा हाल हो रहा था। सबेरे से एक कुल्हड़ चाय के सिवा कुछ भी नहीं लिया था। आगे दिन कैसे कटेगा, सोच-सोचकर उनका बुरा हाल था। कामयाब सेठ के आने पर उन्होंने मोलभाव करके बारह आना सेर का भाव तय किया। उसके बाद उसे अन्दर बुला लिया। स्टोररूम की दुछत्ती पर ३ साल के सरकारी बजट की पाँच-पाँच प्रतियाँ पड़ी थीं, जिनका वजन दो सेर से कम न रहा होगा। साथ में नीचे ढेर में सरकारी गजट, विधानसभा की कार्यवाहियों का एजेण्डा, विभिन्न प्रकार के बिल, ऐक्ट, आर्डिनेंस, कमेटियों की रिपोर्ट, नियमावलियाँ, कार्यप्रणालियों की रूपरेखा, पंचवर्षीय योजना का अनन्य प्रकार का साहित्य, कृषि-विकास, बिजली, सिंचाई हरिजन कल्याण, स्वास्थ्य शिक्षा प्रसार, ग्राम विकास के विविध विस्तारमय कार्यक्रमों, आधारभूत नीतियों, दिशानिर्देशक सिद्धान्तों का छपा-छपाया विवेचन भी था जिसे पढ़ना-समझना तो दूर, उन्होंने कभी खोलकर देखा भी नहीं था।

कामयाब सेठ का तराजू इन सबको तौल न पाया। उठाकर ढेर लगाने के बाद पचास रुपये में सौदा तय हो गया। रुपये पूरे न थे उसके पास इसलिए बीस रुपया एडवांस देने के बाद सरकारी बजट, पंचवर्षीय योजना का साहित्य लेकर वह चल दिया। दूसरे दिन बाकी रुपया लेकर रद्दी उठाने वह आया तब तक उत्सुकदास ने अपनी योजना बना ली थी। तीस रुपये झटककर उन्होंने उसको समझाया। बात कामयाब सेठ की समझ में आ गयी। रद्दी के काम में उसने उत्सुकदास को साझीदार बना लिया। उन्होंने फिर उसे श्रीकांत पाठक से मिला दिया।

उन दिनों हिन्दी के राजभाषा बन जाने के कारण तमाम अंग्रेजी में छपी स्टेशनरी, फार्म, विभागीय नियमावलियाँ, प्रोसीडर हैंड बुक्स, सिड्यूल्स, टैबलेटेड विवरण, विश्लेषणकारी किताबें, टिप्पणियाँ, रजिस्टर आदि को फालतू घोषित करके हिन्दी में छपाने का कार्यक्रम चल रहा था। श्रीकांत पाठक उस समय विधानभवन के कुछ महत्त्वपूर्ण विभागों के सचिव की हैसियत से कार्य कर रहे थे। उनकी उत्सुकदास के साथ पुरानी

उठक-बैठक गुरुपदस्वामी के कारण घनिष्ठता के स्तर पर पहुँचने लगी थी। श्रीकांत पाठक बदलते युग के राजा-महाराजाओं की सेवा-सत्कार में कोई कमी न रखते।

कामयाब सेठ का काम चल निकला। एक-दो सेर, एक-दो मन नहीं सौ-दो सौ मन रद्दी हर महीने निकलने लगी, जिसे ठेलों, ट्रकों में उठवा-कर वह बड़ी-बड़ी मिलों के गोदामों में गिरवा देता। या फिर सीधे कलकत्ता, बम्बई, सहारनपुर, टीटागढ़ रेल से बुक करवा देता। काउन्सिल हाउस के फर्राश, चौकीदार, बाबू, छोटे-मोटे अफसर भी उसकी मदद करने लगे। अच्छी-अच्छी किताबें, स्टेशनरी रिपोर्टें रद्दी बनकर कामयाब सेठ की ट्रकों में लदकर जाने लगीं। इधर हजारों मन रद्दी बेचने के बाद कामयाब सेठ ने काफी पैसा, चौकीदारों, बाबुओं, अफसरों को दस्तूरी देने के बाद भी बना लिया। दो मन की रद्दी का नीलाम एक मन करके होने लगा। मुनाफे की कोई हद न थी। दारुलशफ़ा की सीढ़ियाँ चढ़कर उस दिन कामयाब सेठ उत्सुकदास के पास गया था, उसके बाद वक्त ने उसको सँभलने-ठहरने का मौका ही नहीं दिया। एक के बाद एक सीढ़ियाँ जैसे उसे ऊँचाई की ओर ढकेल रही थीं। गली-कूचे घूमकर आना-डेढ़ आना सेर रद्दी के मुनाफे पर गुजारा करने वाला कामू कबाड़ी धीरे-धीरे लाखों के खेल खेलने लगा। उन सीढ़ियों पर चढ़कर उसने उत्सुकदास को पाया तो फिर कभी छोड़ा नहीं। बराबर उनके हाथों में मुनाफे का दसवाँ हिस्सा रख आता। तब तक खुद उत्सुकदास की गरीबी दूर हो चुकी थी। इसलिए हिसाब लेना तो उन्होंने छोड़ ही दिया था। कामयाब सेठ की भेंट तो वह बस इज्जत आफताई के तौर पर रख लिया करते।

कुछ ही समय बाद गुरुपदस्वामी ने उत्सुकदास को विधान परिषद का सदस्य बनवाकर अपने मंत्रिमंडल में ले लिया। श्रीकान्त पाठक की सलाह-मशविरे से सारा काम चलने लगा। श्रीकांत पाठक बड़े धाँसू किस्म के अफसर थे। पूरे विधानभवन में उनकी तूती बोला करती। कामयाब सेठ उनसे कभी खाली हाथ मिलने नहीं जाता। फिर अपनी औकात और उनकी हैसियत के बीच के फासले को कभी तोड़ने की कोशिश नहीं की। उत्सुकदास एक बार कहते तो श्रीकान्त पाठक दस बार, दो कदम आगे बढ़कर कामयाब सेठ की मदद किया करते।

बिजली विभाग में हर साल लाखों मील लम्बी लाइनें खींची जा

[…] लाइनेंज की नपाई, उन दिनों शायद ही कभी होती। […] की लाइन पर सौ मील का तार बचाकर मार दिया जाता। […] वाले सरकारी गिरोह, लाइनें काटने वाले […] काम करते जहाँ दिन में लाइनें खींचने में रिकार्ड […] का ध्यान रखकर, धीमी रफ्तार से घपला किया जाता। महीनों, […] बड़ी तादाद में तार का जखीरा जमा हो पाता। […] के अँधेरे में दूर-दूर तक फैली हुई लाइनों के जाल को काटकर […] सैकड़ों मील से हजारों मन तार खींच लेते। उन दिनों […] कर देने वाले कई एक गिरोह काम कर रहे थे। […], ओवरसियर, लाइननिरीक्षकों के साथ मिलकर […] तारों का जखीरा जमा करते रहते जिसे […] नीलाम में खरीदे हुए ड्रमों में लपेटकर […] की पूर्ति में मिला दिया जाता। और कुछ […] से लैस, ट्रकों में लादकर, रातों रात […] काटकर तारों का जखीरा कलकत्ता, बम्बई, […] पिरोहदारों के साथ नीचे से लेकर […] बड़े अधिकारी सब कुछ जानकर भी अनजान […] उन्होंने भी यही सब करवाया था। […] यही शौक पूरी करते।

[…] करोड़ों रुपये का धन्धा चल रहा […]

[illegible]

स के पास
नी बड़ी
ो कहते हैं
कोई पकड़
ा। दस की

कर लिया।
म्बन्धित था,
ने, उत्सुकदास
त्पन्न औद्योगिक
नगारी, कैपिटल
विद्युतपरिषद् में
के आदेश दे दिये

र से दो करोड़ कम
। फिर भी श्रीकान्त
का मामला सरकार
। अपना पासा फेंका।
न, विद्युतपरिषद् की
भेज दी। उत्सुकदास
के आदेश के संदर्भ
में बीच बाँटने का
गों से सम्बन्धित था,
स्वीकृति के लिए भेज

धंधे रुक जाते, चोरी, डकैती, खून, जुर्म, राहजनी बढ़ने लगती।

अपनी इस आर्थिक हानि, जनता को लगातार बिजली मिलती रहने की आवश्यकता पूरी करने की जिम्मेदारी निभाने के लिए उन्हीं दिनों सरकार ने सारी तांबे के तारों की लाइनों को अलमूनियम के तारों में बदल देने का निर्णय लिया। इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता भी नहीं था, लाखों मील के घेरावदार बिजली की लाइनो के दूर-दूर तक जंगलों में गाँव-गाँव तक फैले होने से उनकी सुरक्षा असम्भव थी। रात के अंधेरे में आधुनिक साधनों-हथियारों से लैस लाइन काटने वाले गिरोह बिजली की सप्लाई बन्द करके तार काट ले जाते। सरकारी निर्णय के अनुसार तांबे के तार हटाकर उनकी जगह अलमूनियम के तार की लाइनें बिछायी जाने लगी। तांबे के तार लाइनों से उठाकर मंडलीय भंडारों में जमा होने लगे। साथ ही साथ अलमूनियम के तारो के हजारों मन के बड़े-बड़े बंडल नई लाइनो के निर्माण तथा पुरानी लाइनो में लगाने के लिए आने लगे। उनके जमा करने की समस्या खड़ी हो गयी। भंडार के गोदामों मे तांबे की लाइनें गिराकर लाये गये स्क्रैप के भरने से, आने वाले अलमूनियम के तार रखने की जगह कम पड़ने लगी। इन्हीं दिनों विद्युत् निर्माण के बढ़ते हुए कार्यक्रमों के लिए बड़ी तादाद में अन्य सामान भी आने लगा। उन सामानों के रख-रखाव के लिए भंडारघरों में कहाँ से जगह उपलब्ध होगी। थोड़ी-बहुत पूंजी मिल जायेगी, अगर तांबे के तार जो अब बेकार हो चुके थे, बेच दिये जायें। भानचन्द्र को अलीगढ़ सर्किल के अधीक्षण अभियन्ता की सलाह पसन्द आ गयी। उन्होंने और भी यह सोचकर तांबे स्क्रैप को बेचने की मंजूरी दे दी।

उन्हीं दिनों उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ मिलकर गुरुपदस्वामी के पास कामयाब सेठ को ले गये। कामयाब सेठ कबाड़ खरीदना चाहता है, यह सुनकर गुरुपदस्वामी काफी देर हँसते रहे फिर भी उत्सुकदास के कहने पर उन्होंने मुख्य सचिव को अपनी मौखिक स्वीकृति बताकर मामला आगे बढ़ाने के लिए कह दिया। मुख्यसचिव ने विद्युत् सचिव श्रीकांत पाठक को बुलाकर इस मामले में मुख्यमंत्री के विचारो से अवगत कराया। इसी बीच कामयाब सेठ को पूरा माल देने का फैसला कर लिया गया। फिर भी स्क्रैप-डीलर्स सिण्डीकेट अपने समर्थक सूत्रों के द्वारा बराबर फैसला बदलवाने के लिए दबाव डाल रहा था। विधायकों, नेताओं के डेलीगेशन कृष्णवल्लभ,

गुरुपदस्वामी से मिलकर मामले की पूरी जाँच करवाने की माँग करने लगे। इन परिस्थितियों में कामयाव सेठ को टेण्डर की स्वीकृति दिन सम्भव नहीं हो पाया। उधर कर्माशियल अर्टची से उत्सुकदास सौदा फेर वाने के लिए एडवांस ले चुके थे। उसके दिल्ली से बराबर फ़ोन आते जल्दी न करने से सारी योजना गड़बड़ होने का अंदेशा पैदा हो गया था. यहाँ का माल समय से बम्बई पोर्ट पर न पहुँचा तो बाकी जगह का ताँवा लेकर जहाज चल देगा। उत्सुकदास के लिए प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया।

तभी रंगीनराय ने उद्योगनिगम की तरफ से मामला उठाया। गुरुपदस्वामी से मिलकर एक प्रतिवेदन दिया। रंगीनराय के प्रतिवेदन में सारा ताँवा उद्योगनिगम को देने की सिफारिश थी। ताँबे की बिक्री-टेण्डर में कामयाव सेठ के ऊँचे दाम होने का सबसे बड़ा कारण था, कर्माशियल अर्टची के साथ आगे का सौदा। उधर स्क्रैपडीलरस सिंडीकेट के टेण्डर में बिचकुलियों का हिस्सा होने से दाम नीचे थे। यह लोग एक हारी हुई लड़ाई लड़ रहे थे। इनका प्रमुख उद्देश्य उस समय बिक्री टेण्डर को रद्द करवाना था, जिससे आगे की कार्यवाही के लिए समय मिल सके और नया टेण्डर होने तक सारी योजना बना ली जाय। लोबीराम खुद चलकर गये। उन्होंने बड़े अधिकारियों, मंत्रिमंडल से सदस्यों का खुले बाजार में बढ़ते हुए ताँबे के दामों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए इस टेण्डर को दुबारा आमंत्रित करने की सलाह दी। इन लोगों का कहना था, टेण्डर दुबारा आमंत्रित करने से और ऊँचे दाम मिलेंगे। लेकिन ताँबे का धन्धा सट्टे के उतार-चढ़ाव की तरह रोज-रोज ऊँचा-नीचा होता रहता। अगर दाम कम आये, इसकी जिम्मेदारी कोई भी लेने को तैयार नहीं था, इसलिए लोबीराम का दुबारा टेण्डर आमंत्रित करने का प्रस्ताव जोर न पकड़ सका।

अब मामला हाथ से निकलता हुआ देखकर स्क्रैपडीलरस सिंडीकेट ने नयी चाल खेली। फर्जी कोटा, लाइसेन्स का धन्धा उन दिनों प्रदेश में बड़े जोरों से चल रहा था। एक कारखाने वाला तीन-तीन फर्जी कारखाने खोल लेता, जिनके नाम से आवश्यक कच्चे माल का कोटा एलाट होता। इस सारे कोटे का माल बम्बई, कलकत्ता के बड़े-बड़े उद्योगपतियों के पास, काले बाजार से पहुँच जाता। ताँबे के मामले में, चोरी का ताँबा

धंधे रुक जाते, चोरी, डकैती, खून, जुर्म, राहजनी बढने लगती।

अपनी इस आर्थिक हानि, जनता को लगातार बिजली मिलती रहने की आवश्यकता पूरी करने की जिम्मेदारी निभाने के लिए उन्ही दिनो सरकार ने सारी तांबे के तारो की लाइनों को अलमूनियम के तारो मे बदल देने का निर्णय लिया। इसके अतिरिक्त और कोई रास्ता भी नही था, लाखों मील के घेरावदार बिजली की लाइनों के दूर-दूर तक जंगलों में गांव-गांव तक फैले होने से उनकी सुरक्षा असम्भव थी। रात के अंधेरे में आधुनिक साधनो-हथियारो से लैस लाइन काटने वाले गिरोह बिजली की सप्लाई बन्द करके तार काट ले जाते। सरकारी निर्णय के अनुसार तांबे के तार हटाकर उनकी जगह अलमूनियम के तार की लाइनें बिछायी जाने लगी। तांबे के तार लाइनो से उठाकर मंडलीय भंडारों मे जमा होने लगे। साथ ही साथ अलमूनियम के तारो के हजारो मन के बड़े-बड़े बंडल नई लाइनो के निर्माण तथा पुरानी लाइनो में लगाने के लिए आने लगे। उनके जमा करने की समस्या खड़ी हो गयी। भंडार के गोदामों मे तांबे की लाइनें गिराकर लाये गये स्क्रैप के भरने से, आने वाले अलमूनियम के तार रखने की जगह कम पड़ने लगी। इन्ही दिनों विद्युत् निर्माण के बढ़ते हुए कार्यक्रमों के लिए बड़ी तादाद में अन्य सामान भी आने लगा। उन सामानों के रख-रखाव के लिए भडारघरों में कहाँ से जगह उपलब्ध होगी। थोड़ी-बहुत पूंजी मिल जायेगी, अगर तांबे के तार जो अब बेकार हो चुके थे, बेच दिये जायें। ज्ञानचन्द्र को अलीगढ़ सर्किल के अधीक्षण अभियन्ता की सलाह पसन्द आ गयी। उन्होने और भी यह सोचकर तांबे स्क्रैप को बेचने की मंजूरी दे दी।

उन्ही दिनों उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ मिलकर गुरुपदस्वामी के पास कामयाब सेठ को ले गये। कामयाब सेठ कबाड़ खरीदना चाहता है, यह सुनकर गुरुपदस्वामी काफी देर हँसते रहे फिर भी उत्सुकदास के कहने पर उन्होने मुख्य सचिव को अपनी मौखिक स्वीकृति बताकर मामला आगे बढाने के लिए कह दिया। मुख्यसचिव ने विद्युत् सचिव श्रीकांत पाठक को बुलाकर इस मामले में मुख्यमंत्री के विचारो से अवगत कराया। इसी बीच कामयाब सेठ को पूरा माल देने का फैसला कर लिया गया। फिर भी स्क्रैप-डीलर्स सिण्डीकेट अपने समर्थक सूत्रों के द्वारा बराबर फैसला बदलवाने के लिए दबाव डाल रहा था। विधायकों, नेताओं के डेलीगेसन कृष्णवल्लभ,

गुरुपदस्वामी से मिलकर मामले की पूरी जाँच करवाने की माँग करने लगे। इन परिस्थितियों में कामयाब सेठ को टेण्डर की स्वीकृति देना सम्भव नहीं हो पाया। उधर कर्माशियल अटैंची से उत्सुकदास सौदा फिर-वाने के लिए एडवांस ले चुके थे। उसके दिल्ली से बराबर फ़ोन आते, जल्दी न करने से सारी योजना गड़बड़ होने का अंदेशा पैदा हो गया था। यहाँ का माल समय से बम्बई पोर्ट पर न पहुँचा तो बाकी जगह का ताँबा लेकर जहाज चल देगा। उत्सुकदास के लिए प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया।

तभी रंगीनराय ने उद्योगनिगम की तरफ से मामला उठाया। गुरुपदस्वामी से मिलकर एक प्रतिवेदन दिया। रंगीनराय के प्रतिवेदन में सारा ताँबा उद्योगनिगम को देने की सिफारिश थी। ताँबे की बिक्री-टेण्डर में कामयाब सेठ के ऊँचे दाम होने का सबसे बड़ा कारण था, कर्माशियल अटैंची के साथ आगे का सौदा। उधर स्क्रैपडीलरस सिंडीकेट के टेण्डर में बिचकुलियों का हिस्सा होने से दाम नीचे थे। यह लोग एक हारी हुई लड़ाई लड़ रहे थे। इनका प्रमुख उद्देश्य उस समय बिक्री टेण्डर को रद्द करवाना था, जिससे आगे की कार्यवाही के लिए समय मिल सके और नया टेण्डर होने तक सारी योजना बना ली जाए। लोबीराम खुद चलकर गये। उन्होंने बड़े अधिकारियों, मंत्रिमंडल से सदस्यों का खुले बाजार में बढ़ते हुए ताँबे के दामों की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए इस टेण्डर को दुबारा आमंत्रित करने की सलाह दी। इन लोगों का कहना था, टेण्डर दुबारा आमंत्रित करने से और ऊँचे दाम मिलेंगे। लेकिन ताँबे का धन्धा सट्टे के उतार-चढ़ाव की तरह रोज-रोज ऊँचा-नीचा होता रहता। अगर दाम कम आये, इसकी जिम्मेदारी कोई भी लेने को तैयार नहीं था, इसलिए लोबीराम का दुबारा टेण्डर आमंत्रित करने का प्रस्ताव जोर न पकड़ सका।

अब मामला हाथ से निकलता हुआ देखकर स्क्रैपडीलरस सिंडीकेट ने नयी चाल खेली। फर्जी कोटा, लाइसेन्स का धन्धा उन दिनों प्रदेश में बड़े जोरों से चल रहा था। एक कारखाने वाला तीन-तीन फर्जी कारखाने खोल लेता, जिनके नाम से आवश्यक कच्चे माल का कोटा एलाट होता। इस सारे कोटे का माल बम्बई, कलकत्ता के बड़े-बड़े उद्योगपतियों के पास, काले बाजार से पहुँच जाता। ताँबे के मामले में, चोरी का ताँबा

खरीदने वाले, लाइनें काटकर ताँबे के तार जमा करने वाले और ताँबे का सरकारी कोटा काले बाजार से लेने वाले गिरोह किसी-न-किसी तरह एक-दूसरे से जुड़े रहते। बड़े पूँजीपतियों के दल्लाल तो दौड़-भाग कर ही रहे थे। इन लोगों ने उद्योगनिगम के अधिकारियों से भी साँठ-गाँठ करनी शुरू कर दी।

रंगीनराय घपले के कामों की सिफारिश बहुत कम किया करते थे। फिर भी कभी-न-कभी तो यह सब करना ही पड़ता। तब वह जनहित के नाम पर मामला उठाते। इस बार उन्हें स्क्रैपडीलरस सिंडीकेट के प्रतिनिधियों और पूँजीपतियों के दल्लालों ने घेरा। मामला चूँकि उद्योगनिगम की तरफ से उठना था, रंगीनराय राजी हो गये। उन्होंने गुरुपदस्वामी से मिलकर एक प्रतिवेदन दिया जिसमें विद्युतपरिषद् में पड़ा सारा ताँबा, प्रदेश के उद्योगधन्धों की जरूरतों के लिए, उद्योगनिगम को बेच देने के लिए कहा गया। गुरुपदस्वामी ने इस प्रतिवेदन को उत्सुकदास तथा कृष्णवल्लभ को विचारार्थ भेजा। कृष्णवल्लभ के पास से यह प्रतिवेदन जब विद्युत सचिव श्रीकान्त पाठक के पास पहुँचा तो कामयाब सेठ की समस्याओं का हल निकल आया।

इस मामले से सम्बन्धित उत्सुकदास की परेशानियों को श्रीकान्त पाठक अच्छी तरह जानते थे। और फिर ताँबे का सारा मामला शुरू से उनकी नजर के सामने से गुजरा था। वे असल में १६०० करोड़ हैसियत वाले उद्योगपति के एक अल्मूनियम कारखाने से सम्बन्ध रखते थे। ज्ञानचन्द के जरिये ताँबे के तार की लाइनें उखड़वाकर अल्मूनियम के तार की लाइनें लगवाने में उन्होंने काफी दिलचस्पी ली थी। अब ताँबे की लाइनों का पूरा स्टाक कामयाब सेठ को दिलवाने के लिए जी-तोड़ कोशिश कर रहे थे। उनके हाथ मुख्य सचिव के जरिये मिले हुए मुख्यमंत्री के आदेश के कारण और मजबूत हो चुके थे।

जब रंगीनराय का प्रतिवेदन पहुँचा, उनके अफसरी दिमाग ने अपनी चाल गढ़ ली। काफी दिनों से आधुनिक युग के राजा-महराजाओं के संगत में रहते हुए अब उनके अन्दर भी पैसे की भूख जागने लगी थी। उनके जैसे अफसर सीधे-साधे ढंग से किसी की जेब से पैसे नहीं निकालते, बल्कि अपने दिमाग से पैदा कर लेते। आज रंगीनराय का प्रतिवेदन देखकर उनको लगा, वह सुनहरा मौका अब आ गया। इस प्रतिवेदन से उनको

दस लाख रुपयों की खुशबू आने लगी।

रंगीनराय का प्रतिवेदन लेकर श्रीकान्त पाठक उत्सुकदास के पास गये। उनकी योजना सुनकर उत्सुकदास वाह-वाह कर उठे। इतनी बड़ी साजिश! श्रीकांत पाठक ने उनके होश उड़ा दिये! इसको कहते हैं दिमाग! सारा मामला कितनी सफाई से तय होगा। कहीं कोई पकड़ नहीं नजर आयी। कामयाब सेठ तो उनके पैरों पर गिर पड़ा। दस की जगह पन्द्रह लाख देने को तैयार हो गया।

फिर सरकार ने रंगीनराय का प्रतिवेदन स्वीकार कर लिया। मामला चूंकि उद्योगनिगम और प्रदेश के उद्योगों से सम्बन्धित था, फाइल उत्सुकदास के पास भेज दी गयी। उद्योग सचिव ने, उत्सुकदास के कहने पर ताँबा के असीमित अभाव से, प्रदेश में उत्पन्न औद्योगिक संकट का जिक्र करते हुए आने वाली छँटनी, बेरोजगारी, कैपिटल फ्लाइट का सनसनीखेज खाका खींचा, जिसके बाद विद्युतपरिषद् में पड़े ताँबे के पूरे स्टाक को कच्चा माल घोषित करने के आदेश दे दिये गये।

उद्योगनिगम का प्रस्ताव, कामयाब सेठ के टेन्डर से दो करोड़ कम था। इसमें विद्युतपरिषद् को दो करोड़ का घाटा था। फिर भी श्रीकान्त पाठक के आदेश पर विद्युतपरिषद् ने ताँबे के स्टाक का मामला सरकार के पास विचारार्थ भेज दिया। अब श्रीकांत पाठक ने अपना पासा फेंका। रंगीनराय के प्रतिवेदन पर हुई कार्यवाही की फाइल, विद्युतपरिषद् की फाइल के साथ लगाकर उन्होंने उत्सुकदास के पास भेज दी। उत्सुकदास ने ताँबे के स्टाक को कच्चा माल घोषित करने के आदेश के संदर्भ में इसे उद्योगनिगम के माध्यम से छोटे उद्योगों के बीच बाँटने का सुझाव दिया। मामला चूंकि अलग-अलग विभागों से सम्बन्धित था, उत्सुकदास ने मुख्यमंत्री गुरुपदस्वामी के पास स्वीकृति के लिए भेज दिया।

बढ़ई दीक्षित उस समय कुछ दिनों से गुरुपदस्वामी के व्यक्तिगत सहा-के रूप में काम कर रहा था। प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष रामेश्वर दीक्षित, गुरुपदस्वामी से भी बड़े नेता थे। गुरुपदस्वामी उन्हीं की कृपा से मुख्य-मंत्री बनाये गये थे। मुख्यमंत्री बनने पर उन्होंने बढ़ई दीक्षित को रूप से माँग लिया था। जिस दिन ताँबा बेचने की फाइल

मुख्यमंत्री के यहां पहुंचा दी। बढ़ई दीक्षित के हटने के बाद, उत्सुकदास ने वहाँ कालीशंकर को लगवा दिया था जिसे तब तक तांबा के पूरे मामले के बारे में पता चल चुका था। कालीशकर ने रात में, उस दिन फाइल पर गुरुपदस्वामी की स्वीकृति ले ली। तीसरे दिन कालीशंकर ने मुख्यसचिव से कहकर उसी दिन होने वाली मंत्रिमंडल की बैठक में मामला भिजवा दिया। मंत्रिमंडल की बैठक के बाद श्रीकात पाठक ने इंडियन एलक्ट्रिसिटी एक्ट की धारा......के अन्तर्गत प्रदेश सरकार की ओर से विद्युत-परिषद् को तांबां का सारा स्टाक तुरन्त उद्योगनिगम को बेचने का लिखित निर्देश दे दिया।

इसके बाद वही हुआ जिसकी योजना श्रीकांत पाठक के अफसरी-दिमाग ने उत्सुकदास को पहले ही बता दी थी। कामयाब सेठ की पाँच फर्जी कम्पनियों के नाम से आने वाले तांबे के स्टाक के लिए अर्जियों पर सारी कार्यवाही उद्योगनिगम के निदेशक ने उत्सुकदास के कहने से पूरी करवा दी थी। सारा मामला इतनी तेजी से तय हुआ, किसी को कुछ करने का मौका नहीं मिला। रंगीनराय ने जिन उद्योगपतियों के कहने से उद्योगनिगम को तांबे का स्टाक देने का प्रतिवेदन किया था, उनको विश्वास था, उद्योगनिगम से उनको काफी कोटा मिल जायेगा। ये सब पीछे रह गये। लोबीराम ने स्क्रैपडीलरस सिन्डीकेट से लिया एडवांस वापस तो नहीं किया, आगे मिलने वाली रकम डूब गयी, और कामयाब सेठ एक बार कमर्शियल अटैची, उत्सुकदास, कृष्णबल्लभ की कृपा से फिर कामयाब हुआ। लेकिन इस कामयाबी के पीछे देश के साथ गद्दारी की घृणित छाया छिपकर आने वाले तूफान की नई भूमिका तैयार कर रही थी। उद्योगनिगम ने सभी अर्जियां आगे मिलने वाले स्टाक के लिए पंजीकृत करके विद्युतविभाग से मिला माल कामयाब सेठ की पाँच फर्जी कंपनियों को एलाट कर दिया। माल अभी तक विद्युतविभाग के गोदामों में ही पड़ा था। वहीं से कामयाब सेठ को ट्रकों के जरिये उठाकर बम्बई ले जाना था। कच्चे माल के रूप मे कोटा मिलने के कारण, कानून के मुताबिक, ऐसे माल प्रदेश के बाहर ले जाने के लिए परमिट लेना पड़ता था। फिर भी माल तो ले ही जाना था। इसमें अपने साधनों के अतिरिक्त कामयाब सेठ ने यशोदाबल्लभ की मदद ली। राष्ट्रीय निर्माण संघ की ट्रकों के जरिये यशोदाबल्लभ अफीम की तस्करी का माल बम्बई भेजता ही था।

कामयाब सेठ से तय हुआ, उन्हीं ट्रकों में तांबे का कुछ स्टाक, शाहजहाँपुर के इलाके के भंडारों से उठकर अफीम की पेटियों के साथ जाएगा। चार ट्रकें, सीतापुर, हरदोई, शाहजहाँपुर से तांबा लादकर बम्बई की ओर रवाना होनी थी। कार्यक्रम के अनुसार दो ट्रकों से सीतापुर, हरदोई से, एक बरेली-रामपुर से जाकर माल उठाएगा। शाहजहाँपुर के एक जंगली इलाके मे चारों ट्रकों मे अफीम की पेटियाँ तांबे के तार के बीच छिपाकर रखी गयी। अफीम की पेटियाँ तो रास्ते में ही उतार ली जाने वाली थी, और जिनकी जगह और कुछ सामान रख लेना था लेकिन तांबा आगे बम्बई तक पहुँचाना था।

फूलदास काफी दिनों बाद शाहजहाँपुर के इलाके में डी० एस० पी० होकर आया था। दुर्लभकाछी, यशोदावल्लभ से उसकी पुरानी दुश्मनी चली आ रही थी। इनकी हरकतों का पूरा पता लगाकर वह किसी मौके के प्रतीक्षा करता रहा। पिछली बार उसने दुर्लभकाछी को पकड़कर बंद कर दिया था, तभी रातों-रात उसका तबादला हो गया था। उस अपमान को फूलदास कभी भूल नही पाया और प्रतिशोध की आग में सुलगता रहा। दुर्लभकाछी के बढ़ते हुए अत्याचारों से पूरे इलाके में खौफ का वातावरण बन चुका था। अफीम की तस्करी बड़े पैमाने पर चल रही थी। बम्बई पुलिस ने छापा मारकर अफीम ले जाने वाली ट्रकों की पकड़कर रिपोर्ट एक्साइज विभाग को भेजी। एक्साइज विभाग के अधिकारी यशोदावल्लभ की कृपा पर पलते थे। कुछ दुर्लभकाछी के भय से भी बोलते नहीं थे। लेकिन फूलदास दुर्लभकाछी और यशोदावल्लभ के गिरोह को समाप्त करने मे जुट गया। पहले उसने दुर्लभकाछी पर हाथ डाला। एक मुठभेड़ में ही उसके तीन आदमी पकड़ लिये गये। उसके बाद यशोदावल्लभ के कारिन्दे को धरपकड़ा जो अफीम की खेती का हिसाब रखता था। चुपचाप रात में साथ ले जाकर उसके घर की तलाशी ली जिसमें यशोदावल्लभ की बीस एकड़ जमीन, जिस पर अफीम की खेती होती थी, के कागजात जब्त कर लिये। कारिंदे को डरा-धमकाकर राष्ट्रीय निर्माण संघ के कारनामे पूछ लिए। और शाहजहाँपुर से बाहर जाने वाले सभी रास्तों पर नाकाबन्दी करवा दी। अगला कदम उसका राष्ट्रीय निर्माण संघ को नष्ट करने के लिए होता, तभी एक घटना घट गयी।

लखनऊ टाइम्स का पत्रकार सुमन्त, शाहजहाँपुर में अफीम की खेती

के ऊपर फीचर स्टोरी लेने आया। सुमन्त से फूलदास लखनऊ में मिल चुका था। दोनों में काफी अच्छे सम्बन्ध थे। शाहजहाँपुर आने के बाद सुमन्त फूलदास से मिला। फूलदास ने उसे दुर्लभकाछी, यशोदाबल्लभ के विषय में बहुत कुछ बताया। राष्ट्रीय निर्माण संघ के घपलों की भी बात हुई। सुमन्त ने बातों-बातों में फूलदास को विद्युत विभाग द्वारा बेचे गये ताँबे के स्टाक का जिक्र किया जिसमे कृष्णबल्लभ, उत्सुकदास की साजिश का सदेह सभी को था। सुमन्त ने लखनऊ जाकर अपने फीचर प्रकाशित करवा दिये जिसमे यशोदाबल्लभ, कृष्णबल्लभ के ऊपर भी परोक्ष रूप से कीचड़ उछाला गया। उसी फीचर की कापी दिल्ली के अखबारों में प्रकाशित हुई, जिससे राजनैतिक क्षेत्रों मे तहलका मच गया।

दुर्लभकाछी के गिरोह के तीन आदमियों को बन्द करने, यशोदाबल्लभ की बीस एकड़ अफीम के खेत के कारिन्दे को पकड़ने के बाद फूलदास कई महीनों तक निष्क्रिय रहा। कमलासिंह ने दुर्लभकाछी के गिरोह के आदमियों को छुड़ाने के लिए अदालत मे जमानत की अर्जी दी। उधर यशोदावल्लभ ने उसके तबादले की कोशिशों के साथ, जिलाधिकारियों, कचहरी, हाकिमों के ऊपर दबाव डाला। गुरुपदस्वामी का सम्बन्धी होने से उसके तबादले की बात तो न सुनी गयी लेकिन बड़े हाकिमों ने उसे राष्ट्रीय निर्माण संघ के खिलाफ कोई कार्यवाही न करने का आदेश दिया। फिर दुर्लभकाछी का गिरोह काफी दिनों तक उस इलाके को करीब-करीब छोड़कर चला गया।

इसी बीच फूलदास की शान्तिप्रणाली से घनिष्ठता बढ़ती रही, जिसका पता यशोदाबल्लभ को काफी बाद में लगा। मालूम हो जाने पर उसने फूलदास को खत्म करने का निश्चय कर लिया। शान्तिप्रणाली से यशोदावल्लभ डरता था, कहने-सुनने का साहस न था। फिर भी खूँखार भेड़िये की तरह अवसर की प्रतीक्षा मे रुका रहा। शान्तिप्रणाली की घनिष्ठता से फूलदासस्वामी की गतिविधियों में शिथिलता तो आ गयी लेकिन वह भी दुर्लभकाछी, यशोदावल्लभ को अपने दायरे मे फाँसने की प्रतीक्षा करता रहा। इसके बाद गुरुपदस्वामी को मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र देना पड़ा। उत्सुकदास, कृष्णबल्लभ के काले कारनामों से उनका मन्त्रिमंडल बुरी तरह बदनाम हो गया था। उन दिनों उत्सुकदास शतरंज की मोहरें लगा रहे थे, जिसकी हर चाल गुप्त रूप से गुरुपदस्वामी की जड़ें काटने को

फिएट कार जब दारुलशफ़ा के बी ब्लाक के सामने रोकी थी तब यही सोचा था, कुछ देर फ्लैट में आराम करेगा, फिर नहा-धोकर कपड़े बदलकर अपने भाई कृष्णवल्लभ के यहाँ पहुँच जायेगा। वहाँ कुछ देर रुककर कालीशंकर से मिलने जाएगा जहाँ उसे कामयाब सेठ के मिलने की उम्मीद थी। कामयाब सेठ के मिल जाने से एक तो शाम के नशे-पानी का इन्तजाम हो जाएगा, दूसरे उससे कई जरूरी बातें भी उसे करनी थीं। फिर रात शपथ-समारोह तक उसे कोई और काम भी नहीं था। कृष्णवल्लभ, उत्सुकदास, कालीशंकर, प्रतिभा, शान्तिप्रणाली, यह सभी पढ़े-लिखे थे, जिनके बीच यशोदावल्लभ ज्यादा देर तक बैठ नहीं पाता। उसका स्तर तो दुर्लभकाछी का स्तर था, पर दुर्लभकाछी के साथ, उठना-बैठना इधर, कई सालों से बंद ही था। फिर कामयाब सेठ तो उसी की तरह अगूँठाटेक था, इसलिए दोनों में खूब पटती।

लेकिन गाड़ी लाक करने के बाद, यशोदावल्लभ जैसे ही बी ब्लाक की लिफ्ट की ओर चला था, जालिमखाँ ने उसे आ पकड़ा। फ्लैट में पहुँचकर उसने देखा, दुर्लभकाछी वहाँ पहले से ही सोफे पर पड़ा था। इन लोगों से कुछ देर बात करते-करते, थोड़ी-सी झपकी आयी थी, तभी कमलासिंह आ गया। इसके जरा-सी देर के बाद ही श्रीकांत पाठक ने टेलीफोन पर ताँबाकाण्ड की बात कुछ इस ढंग से बतायी, यशोदावल्लभ डर के मारे पसीना-पसीना हो गया। फिर कमलासिंह-दुर्लभकाछी की तकरार में जीप पार्क करने की समस्या खड़ी हो गयी। तभी दुर्लभकाछी, जालिमखाँ को तिवारी मिस्त्री के मोटरखाने में, जीप रखने को भेजकर उसने श्रीकांत पाठक को फोन मिलाया। उसे अभी कृष्णवल्लभ से मिलना था, कालीशंकर के यहाँ से कामयाब सेठ को पकड़ना था, इसलिए उसने पाठक जी को यहीं दारुलशफा में कालीशंकर के फ्लैट पर आने के लिए कहा था।

दारुलशफ़ा के बी ब्लाक की सीढ़ियों से लगा हुआ उत्सुकदास का फ्लैट कालीशंकर के कब्जे में था। कमलासिंह के साथ वहाँ पहुँचते ही बूढ़े नौकर से यशोदावल्लभ ने टेलीफोन लाने के लिए कहा। उसने सोचा तब तक भाईसाहब को ताँबाकाण्ड की बात बोल दे। कल से लेकर अभी तक इधर-उधर फँसे रहने से उनसे न मुलाकात हुई, ना ही कोई बातचीत! यशोदावल्लभ बाहरी कमरे में सोफे पर अधलेटा श्रीकांत पाठक

का इंतजार करने लगा। इस समय उसको न तो धंधे की फिक्र थी और ना ही मंत्रिमंडल के बन जाने के बाद आ जाने वाले सुनहरे मौके की बात थी। इस समय जहाँ एक तरफ उसका वहशी दिमाग बार-बार बीबी की बदकारी का बदला ले सकने के अहसास मे, जीती हुई बाजी के दाँव का हिसाब लगा रहा था, दूसरी तरफ ताँबाकाण्ड की जिल्लत से बच निकलने का भी रास्ता ढूँढ़ निकालने की कोशिश में जुटा हुआ था।

कृष्णबल्लभ का टेलीफोन खराब था, इसलिए उनसे बात न हो पायी लेकिन कालीशंकर से उसने बात कर ली थी। कालीशंकर ने उसे तब तक टेलीफोन पर कृष्णबल्लभ के नाटक के बारे में सब कुछ बता दिया था। पढ़ा-लिखा न होने पर भी अपने भाई की हरकतों पर उसे ताज्जुब हुआ था। कालीशंकर ने तभी उससे कृष्णबल्लभ और श्रीकांत पाठक को पकड़कर उत्सुकदास के पास लाने के लिए कहा था।

कमरे के अन्दर यशोदाबल्लभ का दम घुटने लगा था जिसकी वजह से वह बाहर निकलकर वहाँ बरामदे में टहलने लगा। तभी उसने देखा, एक तरफ से कमलासिंह सिगरेट का धुआँ उड़ाता हुआ आ रहा था। वह उस तरफ बढ़ा ही था, उसी समय श्रीकांत पाठक को बरामदे के दूसरी तरफ से आता हुआ देखकर रुक गया। फिर पलटकर वह पाठकजी के करीब गया।

"पाठकजी! प्रणाम!!"

सिल्क के सूट मे, लाल रंग की टाई, आँखों के ऊपर पतली कमानी का चश्मा, बडी नाक के ऊपर टिका हुआ, पाठकजी के भरे हुए लम्बोतरे चेहरे पर खूब फब रहा था। कोट की ऊपरी जेब में बढ़िया किस्म के रूमाल की कोन बाहर निकली हुई थी। पालिस के चमकते हुए जूतों से सर के बालो तक पाठकजी बड़े अफसरी सम्मान में सजे हुए थे! बस! पेशानी पर थोड़ी-सी घबराहट के मारे पसीने की बूँदें उभर रही थीं।

"हाँ खुश रहो बेटे!" पाठकजी ने आशीर्वाद दिया।

यशोदाबल्लभ को कालीशंकर के कमरे मे छोड़कर कमलासिंह लोबीराम छाप सिगरेट लेने के लिए दारुलशफ़ा मे मंगी चौधरी की गुमटी तक गया था। चार-चार आने वाली चार सिगरेट लेकर उसने खाली

विल्सफिल्टर की डिबिया में रखी। साथ में लोगों को धोखा देने के लिए, असली विल्सफिल्टर का पैकेट भी ले लिया। फिर एक चरस की सिगरेट अलग से लेकर सुलगायी। पहले तो उसका मन हुआ तिवारी मिस्त्री के मोटरखाने तक जाकर दुर्लभकाछी को देख आये, लेकिन सिगरेट का धुआँ दिमाग के कोने-कोने में घुसकर गदर मचाने लगा था। कमलासिंह वहीं, सड़क के एक किनारे से दूसरे किनारे तक टहलते हुए सिगरेट पीने लगा।

टूटे हुए खपरैले से काटने को दौड़ती हुई कोल्डवेव में जूठे बर्तन माँजती हुई घरवाली के पेट में अपने बच्चे के ख्याल से जलते हुए एलीमेण्ट की गर्मी के बाद उसी जाड़े की बरसात में, काले ओवरकोट, घुटनों तक के बूट में पाँच हजार की मोटी रकम और जड़ाऊ हार यशोदाबल्लभ के आने से आज तक कमलासिंह गरीबी, विपदाओं से भागकर दारुलशफा के इस माहौल में आ गया था। अब उसके पास मोटर थी, बँगला था, हजारों का बैंक-बैलेन्स महीने-दर-महीने बढ़ता जा रहा था।

सिगरेट का काला धुआँ गोल-गोल छल्लों में, फेफड़ों तक घुसकर उसके हृदय में गुदगुदी मचाने लगा, अब कुछ और होना चाहिए। उत्सुकदास का मंत्रिमंडल बनने जा रहा था। कृष्णबल्लभ मंत्री होंगे, जो चाहे हो सकता था। लेकिन भला चाहे भी तो क्या···कमलासिंह सोच रहा था। बड़े दिनों से सीनियर सरकारी वकील बनने की अभिलाषा उसके मन में पल रही थी। उसे मालूम था सरकारी वकील बनकर ही वह ऊँचाइयों की ओर बढ सकेगा। अभिलाषा और उपलब्धि के बीच अब कितना कम फासला बचा था। चरस की सिगरेट अब खत्म हो गयी तो असली विल्सफिल्टर सुलगाकर अपनी नयी योजना के नशे में वह लौट चला यशोदाबल्लभ के पास जहाँ ही उसका अब ठिकाना था।

तब तक कमलासिंह भी वहीं आकर खड़ा हो गया। कमलासिंह को देखते ही यशोदाबल्लभ पाठकजी की ओर मुखातिब होकर बोला, "क्या है पाठक जी! लीजिए यह कमलासिंह अपने वकील भी आ गए। अब यहाँ रुकना बेकार ही है। सीधे, पहले हम लोग भाईसाहब के यहाँ चलते हैं। वहीं बात होगी। और हाँ, कालीशंकर से मेरी अभी टेलीफोन पर बात हुई थी। वह कह रहा था, उत्सुकदास जी आपको याद कर रहे थे।"

"हाँ जी, उनको अब तक सारी बातें पता चल चुकी होंगी। दिल्ली से

घोषयाजी के आरोपों से बढ़ई को गुरुदत्तस्वामी के यहाँ से बर्खास्त करवाया, उस दिन विद्युतपरिषद् में तांबे के बिक्री की फाइलें उसके घर पर थीं। गयी रात तक, उस दिन गुरुदत्तस्वामी किसी मीटिंग से लौटकर जब नहीं आये तो अगले दिन सवेरे ही उनके यहाँ जाने के लिए बढ़ई अन्य फाइलों के साथ, तांबाकाण्ड की फाइल भी लेकर चला गया। वह अगला दिन आने तक उसका भांडा फूट गया, मुँह पर कालिख पुत चुकी थी। इसके साथ ही तांबाकाण्ड की पहली फाइल खो गयी। बढ़ई दीक्षित के हटने पर, उत्सुकदास ने वहाँ कालीशंकर को लगा दिया। कालीशंकर ने उत्सुकदास की आज्ञा से तांबे की फाइल ढूंढ़ने की बहुत कोशिश की। लेकिन फाइल मिलती कहाँ, वह तो बढ़ई के साथ गायब हो चुकी थी। भांडा फूटने के बाद डर के मारे बढ़ई काफी दिनों तक इधर-उधर भागता रहा।

जिस तरह तूफान के बाद चिड़िया अपने उजड़े हुए घोंसले को, तिनका-तिनका बटोरकर फिर से बनाती है, उसी तरह बढ़ई ने अपना संसार नये सिरे से बसाना शुरू किया। लालबाग के पास उसको तीन कमरे का मकान मिल गया। उस मकान में एक की दुछत्ती थी जिसमें अंगड़-खंगड़ डाल दिया गया। बढ़ई असल में स्वभाव से उठाईगीर था। बचपन से ही छोटी-मोटी चीजें उठाने की उसकी आदत बन चुकी थी। स्कूल, कालेज के दिनों में कितनी ही बार उसे इन हरकतों के लिए पीटा गया था। जहाँ भी जाता, संदेह की निगाहों से इधर-उधर देखता-जाँचता! जब भी मौका मिलता कुछ-न-कुछ उठा लाता। कलम, पेंसिल, कागज, किताबें, पेपरवेट, घड़ी, प्लेट, प्याले, गिलास तथा जरूरी सजावट के अनगिनत सामान उसके पास जमा थे। छोटी-से-छोटी चीज भी उठाने में उसे सुख मिलता। बिना खतरे के चीज उठाने का मौका देखकर उसके खून का दौरा तेज हो जाता, चारों तरफ के वातावरण तथा परिस्थितियों में सब कुछ भूलकर वह, उन क्षणों के लिए, सामने की चीज उठाने की क्रिया में खो जाता। जैसे उस समय उस चीज को सफलतापूर्वक उड़ा लेने में ही उसके लिए संसार की सबसे बड़ी उपलब्धि थी। स्कूल के दिनों से आज तक, संठे की कलम से यशोदाबल्लभ के कमरे की विलायती घड़ी तक, बढ़ई की उठाईगीर वाली हरकतें चलती रहीं। इन चीजों को वह छिपाकर अपने घर के कबाड़खाने में रख दिया करता। एक-एक चीज कील, लोहा,

लकड़ी, पत्थर, पुरानी से पुरानी, बेकार से बेकार चीजें उसके पास जमा थी। कुछ भी फेंकने में उसे बड़ा कष्ट होता, भले ही कूड़ा हो।

घर जमाने के बाद बढ़ई ने अपने कारखाने की तरफ ध्यान दिया। इतने दिनों तक उसका पुराना ठेकेदार दोस्त किसी तरह काम चला रहा था। अब बढ़ई ने बड़े-बड़े उद्योगपतियों, जमाखोरों से बढ़िया किस्म के फर्नीचर का आर्डर लेना शुरू किया। कालाधन रखने वालों को तो खर्च करने का जरिया चाहिए। हाँ जरिया भरोसे का होना चाहिए। सो तो था, बस बढ़ई का काम चल निकला।

पहले रामेश्वर दीक्षित, फिर गुरुपदस्वामी के जमाने में बढ़ई उन उद्योगपतियों, व्यापारियों वगैरह के नाम-पता, टेलीफोन नोट कर लिया करता जो इनसे मिलने या काम करवाने आया करते। ज्यादातर ऐसे लोग मिलने पर उससे सौजन्यतावश कुछ काम वगैरह बताने के लिए कह दिया करते। इस तरह के उनके अनुरोध, वादों को बढ़ई उसी दिन की डायरी के पन्ने पर पूरे विवरण के साथ नोट कर लिया करता। इधर काम बढ़ाने के लिए उसने पुराने जान-पहचान वाले लोगों के पास दौड़-धूप करनी शुरू कर दी थी। इसी सिलसिले में उसे गोरखपुर के नेवटिया जी का पूरा नाम याद नहीं आ रहा था। गुरुपदस्वामी के यहाँ मिलने पर इतना उसे याद था, उन्होंने कोई काम बताने के लिए कहा था। कामयाब सेठ भी, उन्हीं दिनों उसके पास आया करता। यह सोचकर कुछ नहीं तो फर्नीचर का लम्बा-चौड़ा आर्डर मिल जायेगा, वह इनका पता ढूँढ़ने लगा। कई दिनों तक इन लोगों का पूरा नाम, पता, टेलीफोन नम्बर जब नहीं मिला तो बढ़ई एक दिन अपने कबाड़खाने मे घुसा।

वैसे भी हफ्ते में एक बार वह अपने कबाड़खाने मे जरूर जाता। वहाँ उसकी अपनी एक दुनिया थी जहाँ पुरानी से पुरानी यादों के साये में कुछ अजीब-सा शकून मिलता, उसे काफी देर तक धूल-गर्दा झाड़कर, सामान ठीक-ठाक करता रहता। उसी दौरान एक-एक उपलब्धियाँ जब उसकी आँखों के सामने आतीं, तो उनसे जुड़े हुए किस्से जैसे खुद-ब-खुद बोलने लगते। खो जाता बढ़ई उनके साथ, कभी रोता, कभी हँसता। कभी-कभी उन चीजों को उठाकर वह चूमने लगता।

उसके कबाड़खाने मे काफी बड़ा-सा लकड़ी का एक संदूक था। इस संदूक में पुरानी डायरियों के साथ अन्य फालतू कागजात रखे हुए थे। उस

रंगीनराय ने अपने परिचित समाचार-पत्र के संपादकों को फोन करके पूछा, समाचार ऐजेन्सियों तथा विद्युतपरिषद् में अपने दोस्तों से भी पूछ-ताछ की तब भी इन लोगों के खिलाफ कोई मसाला नहीं मिला। सभी ने उनसे यही कहा, इस काण्ड में श्रीकांत पाठक और ज्ञानचन्द फँसे थे। रंगीनराय लोबीराम से जब मिलने गये, तो लोबीराम ने भी असली फाइल गायब हो जाने की बात कही थी। उनका कहना था, उत्सुकदास ने ही फाइल उड़वा दी।

फैसला तो श्रीकांत पाठक के नोट पर मंत्रिमंडल में लिया गया। मंत्रिमंडल की स्वीकृति के पश्चात् ही श्रीकांत पाठक के आदेश पर तांबा का सौदा हुआ था।

"अगर ससुरी फाइल मिल जाय तो आज······" रंगीनराय ऐसे कह रहे थे, जैसे वह कोई फाइल नहीं लेता हो ! लेकिन फाइल तो थी बढ़ई के पास। अब तक सारा मामला उसकी समझ मे आ गया। आज सबेरे ही, अपने कबाड़खाने में रखे हुए लकड़ी के सन्दूक से, दीमक, चूहों की कुतरन, कीड़ों-मकोड़ों से सड़ी हुई फाइल उसने कामयाब सेठ का पता हासिल करने के लिए निकाली थी। रंगीनराय की बातों को सुनकर उसकी आँखों के सामने कृष्णवल्लभ, उत्सुकदास, गुरुपदस्वामी, कामयाब सेठ की तस्वीरें एक-एक करके घूमने लगीं।

रंगीनराय के फ्लैट से निकलकर बढ़ई अपने घर आया। ड्राइंगरूम का दरवाजा बंद करके, बेडरूम की कपड़ों की अलमारी से उसने रम की बोतल निकाली। फ्रीज से ठण्डे पानी की बोतल निकालकर अपने गिलास में रम डालकर थोड़ा-सा पानी मिलाया। पूरा गिलास एक साँस में ही पीकर उसने मेज पर पटक दिया। फिर जेब में रखे पैकेट से सिगरेट निकालकर सुलगायी। उँगलियों के बीच मुट्ठी में सिगरेट लगाकर उसने दो-तीन गहरे कश खींचे। कभी मुँह से खींचकर थोड़ा धुआँ निगल जाता, बाकी नाक के नथुनों से धीरे-धीरे निकालता। और कभी धुएँ के गोल-गोल छल्ले बनाकर कमरे की छत की ओर उड़ाता। इस समय उसका दिमाग कम्प्यूटर की तरह काम कर रहा था। कभी कृष्णवल्लभ, उत्सुकदास को साथ रखता ! कभी उत्सुकदास को कामयाब सेठके साथ ! फिर गुरुपद-स्वामी, उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ को कामयाब सेठ के साथ ! कोण, द्विकोण, त्रिकोण बनाते-बनाते उसे चौथा कोण मिल गया। उसने काफी

देर सोचने-विचारने के बाद निश्चय किया, बात कृष्णवल्लभ से ही करनी होगी। उसके जीवन में ऐसा सुनहरा मौका अब शायद कभी नहीं आएगा। अभी, आज ही, पार्टी मीटिंग के पहले, मंत्रिमंडल बनने से पहले, उसे कृष्णबल्लभ को ब्लैकमेल करना होगा। लम्बी रकम ऐंठने के बाद कुछ समय के लिए आज ही शहर छोड़कर भागना होगा। अपने निश्चय की दृढ़ता, सफलता की शत-प्रतिशत आशा से बढ़ई धीरे-धीरे हंसने लगा। कृष्णबल्लभ की कातरता पर, अब देखना कौन जूतों से मारा जाएगा।

बढ़ई दीक्षित को जासूसी उपन्यास पढ़ने का शौक हमेशा से था। स्कूल-कालेज के दिनों में, क्लास में, पीछे वाली बेंच पर बैठकर, कापी-किताबों के बीच रखी हुई जासूसी किताबें पढ़ा करता। इन किताबों को पढ़ने से उसके पूरे जीवन में खलबली मच जाती। विचारों की तारतम्यता उसे कुछ कर गुजरने के लिए ढकेलती। सनसनीखेज किस्से तो किताब के साथ खत्म हो जाते, लेकिन उसके दिलो-दिमाग पर एक छाप छोड़ जाते। इन्ही मन:स्थितियों के संघर्ष में उसने उठाईगीरी की हरकतें शुरू की थी। इनके लिए कई बार उसको मारा-पीटा गया था। उस मार-पीट के दौरान, उसके अन्दर कभी एक प्रकार की दहशत हमेशा के लिए बस गयी। इसी दहशत के दायरों मे घिरा हुआ बढ़ई बेहद डरपोक किस्म का इंसान बन गया। यहाँ तक चमगादड़, छिलचित्तों, चूहों को देखकर चीखें मारने लगता! फिर भी उठाईगीरी की हरकत उसने कभी न छोड़ी। समय के साथ कई अन्य प्रकार की क्रिमिनल इंसटिंक्ट्स (भावनाएँ) उभरने का प्रयास करती रही। बड़ी चोरी, डकैती, खून आदि करने की न तो उसके अंदर हिम्मत थी, न ही इसके लिए उसके पास साधन थे। बचपन से बसी हुई दहशत ने उसे बचा लिया। फिर घोंघा की तरह हमेशा अपने अन्दर ही घुसा रहता। किसी के साथ मिल-जुलकर कुछ करने की बात उसने कभी नहीं सोची। बस एक बार ठेकेदार की बीबी के चक्कर मे आकर उसने जो फर्नीचर का कारखाना खोला, उसी में मारा गया।

उठाईगीरी की हरकतें, जिसमे वह मँज चुका था, आज तक चल रही थी। इसमे सब कुछ अकेले ही करना पड़ता। सामान वगैरह लाकर बस कबाड़खाने मे डाल देता। लेकिन तरक्कीपसंद बढ़ई को कुछ न कुछ तो और करना था। प्रदेशपार्टी के अध्यक्ष रामेश्वर दीक्षित और मुख्यमंत्री

गुरुपदस्वामी के यहाँ, अपने बाद के दिनों में, उसने कई एक बार छोटे स्तर की ब्लेकमेलिंग की थी। होता यूँ, काम कराने वाले या छोटे स्तर के नेता, मुख्यमंत्री के पास किसी-न-किसी मतलब के लिए आया करते। कभी-कभी जब काम कराने वाले के दूसरे पक्ष को या दूसरे पक्ष के छोटे नेताओं को, इस बात का पता लगता, तो वे ईर्ष्या या स्वार्थवश बढ़ई को पहले पक्ष की पूरी कुंडली बता देते। इन लोगों से कभी उसको कोई ऐसी बात पता लग जाती, जिसके बिना पर काम कराने के लिए आने वाले पक्ष का काम बिगड़ सकता था। उसी बात को सिर्फ मुख्यमंत्री के पास तक पहुँचाने से रोकने के लिए वह इन लोगों से काफी कुछ वसूल लेता। ऐसे मौकों पर उन दिनों भी, उसका मन, रोमांस, उत्साह से उत्तेजना में डूब जाता। ऊँची सीढ़ी पर बैठकर कुछ ले लेने में मजा ही कुछ और था। साथ में उठाईगीरी वाले काम जैसा खतरा भी नहीं था।

आज इतने दिनों बाद उसके जीवन में रोशनी की नदियाँ बहने लगीं। उन नदियों में, डूबता-उतराता बढ़ई अनन्त सुख की धार में बह चला, चिरन्तन सत्य की खोज में, जिसकी प्राप्ति पर उसकी सारी समस्याएँ मिटने वाली थीं! कृष्णबल्लभ ने आज ही उसे जूतों से मारने को कहा था···बढ़ई ने ठहाका लगाया···अब मेरे ही जूतों पर नाक रगड़ेगा···साथ में हाथ जोड़कर दक्षिणा भी देगा! नहीं तो गुरुपदस्वामी, उत्सुकदास सभी को एक ही बार में तबाह करने का मौका आ गया था। अपने पूरे जीवन में कीड़ों-मकोड़ों से डरने वाले बढ़ई ने अपने को इतना शक्तिशाली कभी नहीं पाया।

अँधेरा अब उजाले को निगलने लगा था। शाम के करीब सात बजने वाले थे। रम की बोतल उठाकर बढ़ई ने मेज पर रखे हुए खाली गिलास को आधे से ऊपर तक भर लिया। एक-एक घूँट में पीने लगा। कुछ देर कमरे के बीच खड़े हुए पीता रहा। बुक केस के ऊपर रखी हुई घड़ी टिक···टिक की आवाज में चल रही थी। तेज रफ्तार में भागते समय को देखकर, तभी उसने अपने को झटका दिया! उसके हाथ में अब खाली गिलास था। पता नहीं कब, नीट रम, विचारों में डूबा-डूबा वह पी गया। उसने भागती हुई रफ्तार को पकड़ने के लिए गिलास [illegible] ऊपर फेंक दिया। फिर झपटकर टेलीफोन की किताब [illegible] से ड्राइंगरूम के कोने से टेलीफोन, एक हाथ में टेलीफोन [illegible]

"क्या करें, यही नाम रख छोड़ा है लोगों ने ! भाभीजी बतायें तो, क्या यशोदाबल्लभ वहाँ है ?"

"नही हैं।"

"कहाँ मिलेंगे···बता सकेंगी।"

"नहीं, मैं तो अभी शाहजहाँपुर से आयी हूँ।"

"अच्छा तो, आप मेरा एक संदेश लेंगी ?"

"हाँ-हाँ, बोलिये !"

"यशोदाबल्लभ से कहियेगा फौरन, जैसे भी हो, मुझे फोन करें। ताँबाकाण्ड की खोयी हुई फाइल मेरे पास है। अगर दस मिनट के अन्दर यशोदाबल्लभ लौटकर नही आते, तो कृपा करके पता लगाइए, वह कहाँ हैं और जहाँ भी हों तुरन्त हमसे सम्पर्क करने को कह दें। अन्यथा कृष्ण-बल्लभ यादव का बड़ा नुकसान हो जायेगा। इसके बाद क्या पता वह मंत्री बनेंगे या नहीं ! अगर बन भी गये तो दो-तीन दिनों में निकाल दिये जाएँगे।" बढ़ई बर्रा रहा था।

"अरे तो क्या, बात इतनी सीरियस है तो आप मुझे ही बता दें !"

"आपको ? आपको भाभीजी ? आपको क्या ताँबाकाण्ड के बारे में कुछ पता है ?"

"नही तो !"

"तब छोड़िये, आप किसी भी तरह, बस मेरा संदेश पहुँचा दें उन तक या फिर कृष्णबल्लभ के पास !"

"ओ० के० !" शान्तिप्रणाली ने फोन काट दिया।

बढ़ई का अब नशा जैसे-जैसे चढ़ रहा था, उसकी बेचैनी बढ़ती जा रही थी। अब क्या होगा ! उसे लगा···कुबेर के खजाने की चाभी हाथ में होने पर भी, इतने कम समय में क्या कुछ न मिल पाएगा। शाम के सात बजकर दस मिनट हो चुके थे। उसने दुबारा कृष्णबल्लभ को फोन मिलाया। उधर घंटी बजती रही ! घंटी की आवाज बढ़ई की छाती पर हथौड़ों की तरह पड़ रही थी।

उसको लग रहा था···अगर कृष्णबल्लभ से फौरन बात नहीं होती, उत्सुकदास को मालूम नहीं होगा तो यह सुनहरा मौका हाथ से निकल जाएगा। बढ़ई जानता था, पैसा कृष्णबल्लभ नहीं, उत्सुकदास देंगे। लेकिन उत्सुकदास से सीधे बात करना, इस समय सम्भव नहीं था।

बोला। नशे के साथ उसका धीरज भी कम होता जा रहा था। तीखी, व्यंग्य-भरी आवाज निकालते हुए उसने दाँव फेंका, "ताँबाकाण्ड पढ़ा आपने?"

"हाँ देखा तो है, लेकिन उसमें बाबूसाहब के खिलाफ तो कुछ भी नहीं।"

झुँझलाते हुए बढ़ई ने कहा, "अभी आप बच्चे हैं! यह मामला आप सबके लिए कितना खतरनाक हो सकता है, शाम को आठ बजे तक आपकी समझदानी में न घुस सकेगा। अगर आप आज कृष्णवल्लभ को मंत्री पद की शपथ लेते हुए देखना चाहते हैं, तो किसी भी तरह, तुरन्त उनको पकड़कर हमसे बात करवा दें...नहीं तो न वह मंत्री हो पाएँगे और न उत्सुकदास...जी! मुख्यमंत्री! हाँ एक बात और बता दूँ! आठ बजे रात की पार्टी मीटिंग में रंगीनराय, लोबीराम मिलकर यही मामला उठाने जा रहे हैं। उसके बाद मुझसे मिलना बेकार होगा।"

"लेकिन आखिर बात क्या है?" कमलासिंह बढ़ई की बातों के लहजे से स्थिति की गम्भीरता का जायजा लेने की कोशिश करने लगा।

"बात क्या है...बात बड़ी सीधी-सी है! अभी तक ताँबाकाण्ड में सिर्फ श्रीनाथ पाठक और गुरुपदस्वामी फँसे हैं। लेकिन मेरे पास ताँबा-काण्ड की वह असली फाइल है, जिसको देखने पर फँसेंगे, आपके प्रिय कृष्णवल्लभ और उत्सुकदास। अगर आठ बजे तक हमारी बातें तय नहीं होतीं तो यह फाइल रंगीनराय के पास पहुँचा दी जायेगी।"

कमलासिंह के होश उड़ गये। उसने कभी सोचा भी नहीं था, बढ़ई जैसा आदमी इतना खतरनाक साबित होगा! कुछ और पकड़ने की गरज से उसने कहा, "यार बढ़ई! तुम बोलो ना, चाहते क्या हो? बाबूसाब तो अभी उत्सुकदास के यहाँ गये हैं। हो सकता है, वहीं से आठ बजे की मीटिंग में, उन्हीं के साथ चले जायें। इतनी जल्दी हो भी क्या सकता है। थोड़ा पहले बताना था।"

"मैं चाहता क्या हूँ, आपको क्या बतलाएँ! आप तो फकत चमचे हैं! मेरी चाहत तो सिर्फ, इस समय उत्सुकदास पूरी कर सकते हैं। हमें कृष्णवल्लभ के जरिये अपनी बात उन तक पहुँचानी थी। आप अगर इन लोगों का कल्याण चाहने वाले हैं तो दौड़िये, भागिये, कुछ भी करिये, उनको बताइए...नहीं तो..." बढ़ई की जुबान लड़खड़ाने लगी थी।

ो कौन-सी भूल की थी! वह तो देवी है! सौभाग्यवती लक्ष्मी, अन्न-
र्ी का साक्षात अवतार है! मैं ही पापी हूँ। मैंने घोर पाप किया है,
े मार डालो!! हे भगवान! उसने तो सदैव मेरा भला ही चाहा।
देखो उठकर चली जाने के बाद, मैंने एक तो उसे बुलाया नहीं फिर
र से उसकी एकमात्र निशानी इस चित्र को···दोनों हाथों से अलग-
ग करके सामने से घरवाली की फोटो उसने उठा ली···कबाड़खाने में
क दिया···फिर उस फोटो को चूम-चूमकर बढ़ई कहने लगा···मैं कमीना
सुअर हूँ, चमार हूँ। और उसको देखो, वहाँ भी उस कबाड़खाने के
क की बदबू-सड़ाँध में रहकर भी मेरे ही कल्याण की कामना करती
। यह सब उसी का कमाल है। संसद सदस्यों के दिमाग में उसी ने
ाकांड उठाने की बुद्धि जगायी, फिर अखबारों के जरिये रोजाना
ल करवाती रही। खुद वही संदूक में अपनी फोटो से निकलकर तांबा-
ड की फाइल के ऊपर जमकर बैठ गयी। मुझे वह बार-बार बुलाये···मैं
मूर्ख कुछ समझ नहीं पा रहा था। वो आज यह सुनहरा मौका चूक
ा, कबाड़खाने में लकड़ी की संदूक न खोलता···सोने की चिरय्या हाथ
ुर्र हो जाती···बढ़ई ने फुर्र की आवाज मुँह से निकाली।

उसने घरवाली का फोटो एक बार फिर कुर्ते से जरा प्यार से पोंछा
र उसे सीने से लगाकर दहाड़ मारकर रोने लगा। हमने कितना सताया
े। चूल्हे में जाये ठेकेदार की बीबी!! अब तो तुम ही हो हमरी सब।
तुमका दूर नहीं रहने देंगे। काम अभी आधा हुआ है, जल्दी स उसे
ा करवाव देव! मेरी प्यारी घरवाली, हे अन्नपूर्णा महरानी, कुछ अब
ा चक्कर चलाय दो, जिसमें कृष्णबल्लभ, उत्सुकदास फँसि जायें!!
म बन गया तो फिर आ रहा हूँ, तुम्हारे पास वहीं शिकोहाबाद में!
टर होगी, बंगला होगा, सोने-चाँदी, जवाहरातों से मढ़े हुए पलंग पर
कर राज करोगी जिन्दगी भर। अब देर नहीं है··· मैं आ रहा हूँ···
ढ़ई ने चिल्लाकर कहा।

तभी टेलीफोन की घंटी बजने लगी। बढ़ई के हाथों से घरवाली का
टो छूटकर फर्श पर गिर गया। उसने झपटकर टेलीफोन को ऐसे
कड़ा जैसे वही थी सोने की चिड़िया। फोन कमलासिंह का था। घर-
ली को भूलकर बढ़ई ने अपना सारा ध्यान टेलीफोन से आने वाली
वाजों पर लगा दिया। अनन्य प्रयासों का परिणाम आने वाला था।

फिर, उनकी जगह, थकान की भुर्रियाँ लटकने लगती। कोई चरणस्पर्श करता, कोई हाथ जोड़कर, सिर झुकाए हुए सादर प्रणाम। सभी मांगों और चाहत के घेरे में, अपने-अपने दांव लगा रहे थे। विधायकों के दल, अपने-अपने समर्थकों, चमचों के साथ, चुनाव के टिकटार्थी, पार्टी संगठन, विधानसभा, विधानपरिषद् की कमेटियों, सरकारी बोर्डों, कारपोरेशन की अध्यक्षता-सदस्यता के उम्मीदवार, रेशमी या फूलों की बड़ी-छोटी या आदमकद मालाएँ, अपनी-अपनी आकांक्षाओं के अनुसार लाये थे। उनकी मुस्कुराहटें, उनकी वेश-भूषा, उनके नाटक नमस्कार-प्रणाम, उसी के अनुरूप थे।

इसी दिन के लिए, पिछले पच्चीस वर्षों से उत्सुकदास, निरन्तर संघर्ष कर रहे थे। गांधीआश्रम की चप्पलो में, फँसी हुई उँगलियों-अँगूठे से लेकर, खद्दर की माड़ लगी टोपी में छिपे हुए सफेद बालों तक, बार-बार खुशियों की लहरें दौड रही थी। सभी लोग, उनकी महान योग्यता, विशाल देश-सेवा की, प्रशंसा के पुल बाँधे जा रहे थे। उस समय उनका जीवन, एक राष्ट्रीय यज्ञ बन गया। उनको अपनी खद्दर की टोपी, किसी चक्रवर्ती राजा के मुकुट की तरह वैभव, सम्मान के अनन्त विस्तार में उडाये लिये जा रही थी। भक्ति-सम्मान के नाटकीय प्रदर्शन में, कभी घुटे-घुटे, कभी मुक्त स्वरों मे, यह लोग रंगीनराय, लोबीराम के प्रति अपनी-अपनी घृणा व्यक्त करना न भूलते। जानवरों की तरह घिघियाते हुए, उनके करीब लपटकर हर आदमी, अपनी बात, अकेले में कहने का मौका माँग रहा था। सबकी समस्याएँ गम्भीर थीं, जो किन्ही नाजुक हालातों के मोड़ पर आकर रुकी हुई थी, मंत्रिमंडल के बनने तक। जिसने जो कुछ भी कहा, मान लिया। जाने-अनजाने में, उत्सुकदास ने अनगिनत वादे कर डाले।

इसी भीड़ को चीरते हुए, कृष्णबल्लभ अपने दुलारे भाई यशोदा-बल्लभ, श्रीकात पाठक के साथ आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन कमरे में तो, फसाद का माहौल बना हुआ था। एक-एक इंच आगे बढना मुश्किल हो रहा था। कब से आया हुआ, कामयाब सेठ, अभी तक दरवाजे के एक कोने से लगा हुआ उत्सुकदास की निगाहें पकड़ने का इंतजार कर रहा था।

जिस समय कमलासिंह का फोन आया, कालीशंकर बगल के कमरे

बाजी, बैठकबाजी, मुलाकातबाजी के हथियार कभी सीधे-सीध, कभी टेढ़े-टेढ़े तरीकों से, इस्तेमाल किये जाते। इसके साथ में अफवाहबाजी तो चुपचाप चलती ही रहती। पहले, कोई एक, छोटा-सा बयान जारी किया जाता, जिसके विरोध में दूसरा गुट बयान जारी करता। फिर गुटों के नेता, मिल-जुलकर, बयान जारी करते, जो अन्त तक चलते रहते। पहले एक बैठक होती तो दूसरा गुट उससे बडी बैठक करता, तब तीसरा गुट अपनी अलग बैठक बुलाता। पहला गुट, कभी तीसरे से, कभी दूसरे से मिलकर, जवाबी कीर्तन की तरह, धंआधार बैठकें करता। इन बैठकों से बयानबाजी मे गजब की तेजी आ जाती। आदर्श, सिद्धान्त, हरिजन, पिछड़े-कमजोर वर्ग, सामान्य जनता, राष्ट्रीय हितों से सम्बन्धित बयान इन बैठकों से गुजरते हुए, राजनैतिक संघर्ष का रूप ले लेते। फिर शुरू होता मुलाकातबाजी का दौर। एक-दो, दो-चार, पाँच-दस नेता हर रोज अपने-अपने मंत्रिमंडल, कार्यकारिणी के सदस्यों के घरों की परिक्रमा करते। इन सबके साथ मुख्यमंत्री पद के उम्मीदवारों के बचपन से बुढापे तक, बीवी-बच्चों से दूर के रिश्तदारों, नातेदारों, साथियो, चमचो, समर्थकों की एक-एक बातों को खोद-खोदकर निकालने में, न जाने कितनी अफवाहों का जन्म होता। फिर वह अफवाहें जवान होतीं और मंत्रिमंडल के लगने तक दम तोड़ देतीं। कभी-कभी, अफवाहों का रुख कहने वालों की ओर, नयी रंगीनियों के साथ मोड़ दिया जाता।

गुटों मे अदल-बदल भी खूब हुआ करती। वामपक्षी गुट, एक उम्मीदवारों को पेश करता तो दक्षिणपक्षी दो! जब तक, यह दोनों गुट अपने-अपने उम्मीदवारों के लिए दंगल करते, प्रधानमंत्री के नजदीक रहने वाला तीसरा गुट, जो जब तक उनके मन की बात पता लगा लेता, मुख्यमंत्री पद के लिए, कोई नया नाम उछाल देता। इस नये नाम के पीछे, प्रधानमंत्री के व्यक्तिगत समर्थन का अंदेशा होते ही, वामपक्षी, दक्षिणपक्षी गुट, जल्दी-जल्दी बैठकें करने लगते। रात-रात भर बैठकें चलतीं, बयान बनाये जाते, फाड़े जाते, लेकिन कोई बयान जारी नहीं होता। नयी पैंतरेबाजी शुरू होती। सभी गुट प्रधानमंत्री का रुख पता लगाने में जुट जाते। प्रधानमंत्री का रुख पता लगते ही, सारी बयानबाजी खत्म हो जाती। सभी गुट एक स्तर से प्रधानमंत्री को, या तो फैसला कर देने

उन को ईर्ष्या की दृष्टि से देखा करते। उस समय की [illegible] धीरे-धीरे नफरत में बदलकर आज तक उनके अन्दर पल रही थी। [illegible] अब तक वह खुद, बड़े नेता बन चुके थे, इसलिए, [illegible] भी अपनी दुर्दशा की उनको कभी इतनी चिन्ता नहीं थी। [illegible] नीतियों पर। उत्सुकदास के कार्यकलाप पार्टी के [illegible] के अनुसार न होकर विदेशी दूतावासों के इशारों पर हुआ करते। [illegible] के बड़े बड़े नेताओं को फँसाकर पार्टी के कार्यक्रम को [illegible] करते। पार्टी अध्यक्ष खुले आम उत्सुकदास को दक्षिणपंथी [illegible]वादियों का एजेन्ट कहा करते। उधर, उत्सुकदास उनको, [illegible] का एजेन्ट कहते। पार्टी अध्यक्ष की आवाज, [illegible] तूती की आवाज थी।

वह ज़माना उत्सुकदास का था। उनका प्रभाव [illegible] निरन्तर फैल रहा था। गुरुपदस्वामी, पार्टी के पुराने [illegible] में जो उनको अपने लड़के के समान मानते, उधर उत्सुकदास की [illegible] की कोई सीमा नहीं थी। भाग-दौड़, तिकड़म [illegible] गिरोह बनाने में संलग्न थे। उनको गुरुपदस्वामी [illegible] सीढ़ी [illegible] बिना चढ़कर सफलता की नयी मंजिलें [illegible] पर पहुँचने के पश्चात्, गुरुपदस्वामी को समाप्त करने के लिए, सिर्फ उस सीढ़ी को, अन्तिम सिरे से पकड़कर खींचना था।

पार्टी अध्यक्ष को उस समय का अपना [illegible] कभी नहीं भूला, जब उत्सुकदास ने उनके बारे में कहा था, "[illegible] की क्या हैसियत! [illegible] का दरवाजा खोलता था।" आज हवाई अड्डे पर [illegible] उन्होंने देखा, उत्सुकदास अपने गिरोह के साथ उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। बाहर [illegible] स्वागत किया। [illegible] पर स्वयं उत्सुकदास ने [illegible] अपने आदमियों के साथ, उनकी [illegible] नारे लगाये। [illegible] [illegible] [illegible] है, जब उत्सुकदास ने [illegible] तो वह एक [illegible] फिर [illegible] जाता था। [illegible]

उत्सुकदास इन सबसे दूर, किसी कुत्सित लिप्सा में लीन, निहित स्वार्थों की निष्ठा के लिए, मुख्यमंत्री बनना चाहता है। उधर पार्टी अध्यक्ष समाजवाद के आदर्शों की पूर्ति के लिए संघर्षरत अपने जीवन का भी बलिदान करने मे नही हिचकते। उनको पूर्ण विश्वास था, उत्सुकदास का मंत्रिमंडल, पूँजीपतियों, जमाखोरों, कालाधन्धा करने वालों को संरक्षण देगा। केन्द्र सरकार, केन्द्रीय-दल का संगठन, समाजवाद की नीतियाँ निर्धारित करता रहे, उनका प्रयोग होगा, इन्ही विरोधी तत्त्वों को, अधिक से अधिक, लूटमार करने मे सहायता देने के लिए।

आज अपने जीवन में, पहली बार, पार्टी अध्यक्ष की आत्मा काँप उठी। उत्सुकदास के मंत्रिमंडल की कल्पना करके, उनके रोंगटे खड़े हो गये! अपने को शक्तिहीन अनुभव करते हुए, क्षोभ, क्रोध के वातायन में, उनका मन भटकने लगा।

मुख्यमंत्री पद के लिए किसी आदर्श मूर्ति की बात उनके मन में नही थी। वह जानते थे, प्रजातंत्र की संसदीय प्रणाली में भ्रष्टाचार कभी नहीं रोका जा सकेगा। गड़बड़ियाँ तो बनी रहेंगी। तब भी कुछ लक्ष्मण रेखाएँ तो थीं, जिनके बाहर जाना, राजनैतिक अपराध ही नही, राष्ट्र के साथ गद्दारी थी। शासनतंत्र चलता रहेगा। निहित स्वार्थों के संघर्ष में, उसका संतुलन तो बना रहेगा लेकिन व्यवस्था तोड़ने के लिए उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनाया जाये, यह बात उनकी समझ मे नही आ रही थी। पार्टी अध्यक्ष ने, हाईकमाण्ड के निर्णय पर कुछ कहा-सुना तो नही, लेकिन अब स्वयं उनको भेजा गया, पार्टी के सदस्यो को, अनुशासन में बाँधकर, उत्सुकदास को नेता बनाने के लिए, तो उनका मन उचाट होकर उनका साथ नही दे रहा था।

उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनवाने में सक्रिय स्वार्थों के विषय में, उन्हें अब तक सब कुछ मालूम हो चुका था। भारत का सबसे बड़ा प्रदेश होने के कारण, दिल्ली मे स्थित पश्चिमी देशों के दूतावास, यहाँ के मामलों में, काफी दिलचस्पी रखा करते। समाजवाद का आन्दोलन जो यहाँ जोर पकड़ गया तो आग की तरह पूरे देश में फैल जायेगा। इनके लिए, समाजवाद का नाम लेना भी गुनाह था। उनको पूर्ण विश्वास था, एक सधे हुए खिलाडी की तरह, उत्सुकदास, उन तत्त्वों को कुचल देगा जो समाजवाद की नींव से उठकर खड़े होंगे। इधर पार्टी अध्यक्ष के मन में, समाजवाद की

आज उत्सुकदास का भाग्य उनकी मुट्ठी में बन्द था। चलते समय प्रधानमंत्री ने स्पष्ट रूप से कह दिया था, मीटिंग में फ़ैसला होने से पहले विधायकों का रुख देखकर उनसे टेलीफोन पर बात कर लें। अध्यक्ष जानते थे, पार्टी में उत्सुकदास का विरोध, केवल गुरुपदस्वामी के मेरुदण्ड से दबा हुआ था। लेकिन इधर ताँबाकाण्ड के कारण गुरुपदस्वामी का नैतिक बल गिर चुका था। तभी तो, प्रधानमंत्री के यहाँ, वह रोनी सूरत बनाकर बैठे थे। फिर भी वह उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनवाने के लिए जी-जान की कोशिश करेंगे। पार्टी अध्यक्ष ने दिल्ली में यह भी सुना था, कुछ महत्त्वपूर्ण आई० सी० एस० अफसर, ताँबाकाण्ड की वजह से उत्सुकदास के खिलाफ हो चुके थे। इनमें से, एक आई० सी० एस० प्रधानमंत्री का विशेष राजनैतिक सलाहकार भी था। उनको पता था ये उत्सुकदास को नष्ट कर देंगे। फिर भी इसमें समय लगेगा। आज, अभी, यह लोग, कुछ नहीं कर सकते।

हवाई अड्डे से आते वक्त, रास्ते भर, पार्टी अध्यक्ष की मोटर में, उत्सुकदास चापलूसी में लगे रहे। उनकी न जाने कितनी प्रशंसा की, पार्टी के कार्यक्रमों को सख्ती के साथ लागू करते हुए समाजवाद की ओर कदम आगे बढ़ाने के लिए अपने दृढ़ संकल्पों की चर्चा की। विरोधी दलों की बढ़ती हुई शक्ति को बाँधने की अपनी योजनाएँ उन्हें बतलाते रहे। उस समय पार्टी अध्यक्ष कुछ और ही सोचते रहे। उनकी तीव्र आकांक्षा, उत्सुकदास को गिराने की थी।

आदर्शों के हिमालय रोज नहीं उठा करते, वह जानते थे। उत्सुकदास, कभी उस हिमालय पर नहीं गया जो उनकी पार्टी ने उठाया था। वह तो विदेशी सूत्रों के सम्पर्क से, उस हिमालय की तलहटी में, बारूद की नहर खोद रहा था, समाजवाद के हिमालय उड़ाने के लिए। इस देश में, कितने ही उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ, ऐसी कितनी ही बारूद की नहरें बनाने में लगे थे। पार्टी अध्यक्ष अपने व्यक्तिगत विरोध को भूल सकते थे। समष्टिगत आदर्शों को, व्यक्तिगत स्वार्थों से ऊपर ही रखना उन्होंने सीखा था। राजनीति उनके लिए व्यापार नहीं थी, राष्ट्रसेवा को उन्होंने अपना मूल मंत्र बनाया था तभी अपमान, निराशा उनके विश्वास को कभी डिगा न सकी। उनकी सरलता, अपनी सीमाओं में बाँधकर, व्यक्तित्व में कुछ लकीरें खींच गयी थी जो उनके लिए लक्ष्मण रेखाएँ थीं।

उत्सुकदास इन सबसे दूर, किसी कुत्सित लिप्सा में लीन, निहित स्वार्थों की निष्ठा के लिए, मुख्यमंत्री बनना चाहता है। उधर पार्टी अध्यक्ष समाजवाद के आदर्शों की पूर्ति के लिए संघर्षरत अपने जीवन का भी बलिदान करने मे नहीं हिचकते। उनको पूर्ण विश्वास था, उत्सुकदास का मंत्रिमंडल, पूँजीपतियों, जमाखोरों, कालाधन्धा करने वालों को सरक्षण देगा। केन्द्र सरकार, केन्द्रीय-दल का संगठन, समाजवाद की नीतियाँ निर्धारित करता रहे, उनका प्रयोग होगा, इन्ही विरोधी तत्वों को, अधिक से अधिक, लूटमार करने मे सहायता देने के लिए।

आज अपने जीवन में, पहली बार, पार्टी अध्यक्ष की आत्मा काँप उठी। उत्सुकदास के मंत्रिमंडल की कल्पना करके, उनके रोंगटे खड़े हो गये! अपने को शक्तिहीन अनुभव करते हुए, क्षोभ, क्रोध के वातायन में, उनका मन भटकने लगा।

मुख्यमंत्री पद के लिए किसी आदर्श मूर्ति की बात उनके मन में नहीं थी। वह जानते थे, प्रजातंत्र की संसदीय प्रणाली में भ्रष्टाचार कभी नहीं रोका जा सकेगा। गड़बड़ियाँ तो बनी रहेंगी। तब भी कुछ लक्ष्मण रेखाएँ तो थीं, जिनके बाहर जाना, राजनैतिक अपराध ही नहीं, राष्ट्र के साथ गद्दारी थी। शासनतंत्र चलता रहेगा। निहित स्वार्थों के संघर्ष में, उसका संतुलन तो बना रहेगा लेकिन व्यवस्था तोड़ने के लिए उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनाया जाये, यह बात उनकी समझ मे नही आ रही थी। पार्टी अध्यक्ष ने, हाईकमाण्ड के निर्णय पर कुछ कहा-सुना तो नही, लेकिन अब स्वयं उनको भेजा गया, पार्टी के सदस्यों को, अनुशासन में बाँधकर, उत्सुकदास को नेता बनाने के लिए, तो उनका मन उचाट होकर उनका साथ नही दे रहा था।

उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनवाने में सक्रिय स्वार्थों के विषय मे, उन्हें अब तक सब कुछ मालूम हो चुका था। भारत का सबसे बड़ा प्रदेश होने के कारण, दिल्ली में स्थित पश्चिमी देशों के दूतावास, यहाँ के मामलो में, काफी दिलचस्पी रखा करते। समाजवाद का आन्दोलन जो यहाँ जोर पकड़ गया तो आग की तरह पूरे देश में फैल जायेगा। इनके लिए, समाजवाद का नाम लेना भी गुनाह था। उनको पूर्ण विश्वास था, एक सधे हुए खिलाडी की तरह, उत्सुकदास, उन तत्वों को कुचल देगा जो समाजवाद की नीव से उठकर खड़े होगे। इधर पार्टी अध्यक्ष के मन में, समाजवाद की

आस्था, गुलाब के फूल की तरह थी, जिसकी सुगन्ध उनकी आत्मा के रोम-रोम में बस चुकी थी। किन्तु आज उन्हें वह फूल मसलकर उस घूरे पर फेंकना होगा, जहाँ उत्सुकदास के साथ, समाज के शत्रुओं का डेरा होगा। यह सब खुद उनको, अपने हाथों से करना होगा।

दिल्ली में पश्चिमी दूतावासों ने वहाँ नौकरशाही के जरिये, बड़े उद्योगपतियों ने चुनाव में खरीदे हुए नेताओं के जरिये, गुरुपदस्वामी ने राजनैतिक प्रभाव और खुद उत्सुकदास ने अपनी तिकड़म से प्रधानमंत्री के चारों ओर ऐसा समाँ बाँधा था, पार्टी अध्यक्ष से पूछा तक नहीं गया। यहाँ आने से पहले उन्होंने दो पर्यवेक्षक भेजे थे जिनकी अभी-अभी मिली रिपोर्टों में, कुछ ऐसा भी नहीं था जिसके आधार पर उत्सुकदास को, आज मुख्यमंत्री बनने से रोका जा सके। पर्यवेक्षकों के दारुलशफ़ा पहुँचते ही उत्सुकदास के आदमियों ने उन्हें घेर लिया। दारू के नशे में उनके निर्देश बह गये। मुजरा, ताश, सैर-सपाटा बाजार-हाट में, पर्यवेक्षक ऐसा फँसे, उनको उत्सुकदास का विरोध कहीं दिखायी न दिया। चारों ओर अजब माहौल था। उत्सुकदास की पकड़ इतनी दूर तक जाती, भला उनके शिकंजे से, यह लोग कहाँ बचते। पर्यवेक्षक कितने विधायकों से मिले। उनको मिलाया ही गया उन लोगों से, जिनका उत्सुकदास को समर्थन प्राप्त था। रंगीनराय लोबीराम का नाम, उनकी रिपोर्ट में लिखा गया लाल स्याही से, खतरे की घंटी बजने वालों में।

प्रशंसकों, समर्थकों और चमचों से छुट्टी पाकर, उत्सुकदास अपने बेडरूम में चले आये। सात-सवा सात का समय हो चुका था। उनकी आकांक्षाओं का स्वर्ग बनने में कुल जमा तीन घंटे बाकी थे! उल्लास में डूबे हुए धीरे-धीरे, एक फिल्मी गीत 'न जाओ सैंयाँ, छुड़ाके बैयाँ कसम तुम्हारी···' गुनगुनाते हुए, उन्होंने दाढ़ी बनाने का सामान उठाकर ड्रेसिंग टेबल पर रखा। सबेरे तो नाई आकर बाल ठीक कर गया, दाढ़ी बना गया था लेकिन फिर भी शपथ-समारोह, और हाँ प्रतिभा के लिए, एक बार पुनः शेव कर लेना चाहिए···उन्होंने सोचा। ड्रेसिंग टेबल के तीन हिस्सों वाले शीशे के सामने बैठकर, उत्सुकदास ने अपने गालों पर ब्रश से पानी । । फिर ब्रश पर क्रीम रखकर रगड़ने लगा। क्रीम का फेनीला

साबुन जमकर उनके गालों पर बैठने लगा। सेफ्टीरेजर में बिलायती ब्लेड लगाते समय उनको प्रतिभा की याद आयी। सेफ्टीरेजर के साथ शेविंग सेट, प्रतिभा ने उनकी वर्षगाँठ पर उपहार में दिया था। उत्सुकदास को प्रतिभा के वह शब्द कभी न भूले, जो उसने सेविंग सेट देते समय की बात-चीत में कहे थे।

"बस हमें यही वर्षगाँठ का उपहार दोगी?" उत्सुकदास ने कहा था।

प्रतिभा ने भावुकतापूर्ण उत्तर दिया था, "आपको! बस यही!··· हाँ यही! अब है ही क्या और कुछ देने के लिए। चकिया के डाकबँगले में, उस अँधेरी शाम, आपने सब कुछ तो लूट लिया था।···अपने समर्पण को मैंने पतन नहीं समझा था, इसीलिए जीवित हूँ! आपकी देन राहुल को सीने से लगाये!"

सात वर्ष पूर्व, उत्सुकदास ने प्रतिभा को निर्वस्त्र किया था। काँच की गुलाब-भरी शीशी जो तोड़ी तो उसका एक टुकडा टूटकर कहीं चुभ गया। उसके बाद हर दिन शाम को, इसी समय उनको प्रतिभा की याद आती। कहीं भी हो, दूर से दूर तक, हर शाम वह उन्हें तड़पा जाती। जैसे काँच का वह टुकडा, रेत के असंख्य दानों की तरह, शिराओं में दौड़ते हुए खून में घुल-मिल गया। किसी अनजाने बोझ की पीडा उनकी साँसों के ऊपर बोझ बनकर बैठ जाती। असहाय, निरीह प्राण बंधनो के दायरे में सिमटने लगते।

उत्सुकदास, प्यार में प्रतिभा को रानी कहा करते। जिस दिन दिल्ली में उनके मुख्यमंत्री बनने की घोषणा हुई, उसी दिन उन्होंने अपनी रानी को फोन पर, सबसे पहले शुभ समाचार सुनाया। प्रतिभा उस समय भोपाल मे थी। उन्होंने उससे राहुल को लेकर लखनऊ पहुँचने के लिए जब कहा तो प्रतिभा ने तीखी टोन में उत्तर दिया, "इस जन्म में तुम उससे तो न मिल पाओगे!"

टेलीफोन पर उत्सुकदास गिड़गिड़ाने लगे, "रानी! प्लीज, मेरी बात तो सुनो! क्या तुम्हें मालूम है, आज सात वर्षों से, तरस-तरसकर जी रहा हूँ। तुम्हारी सौगन्ध उठायी थी, इसीलिए, कभी कुछ कहा नहीं। लेकिन अब, रानी! सहा नहीं जाता। कोई भी सजा दे दो, मुझे मंजूर

है। बस एक बार मुझे अपने वंश के उत्तराधिकारी से मिल लेने दो।"

"दूसरों के नाम से अपना वंश चलाओगे?" प्रतिमा ने व्यंग्य से कहा था।

"अब तुम्ही बोलो, क्या मेरा इकलौता लड़का मुझे मुख्यमंत्री को शपथ लेते हुए न देख पायेगा? जब लड़का बड़ा होगा, उसे क्या जवाब दोगी?" उनकी आँखों में आँसू भर आये, गला रुँध गया, आगे बोल न निकल सके। अब बोलने की जरूरत भी नही थी। उधर प्रतिभा, भोपाल मे, रिसीवर रख चुकी थी।

आज उत्सुकदास अपनी रानी का ही नहीं, अपने इकलौते बेटे राहुल का भी इन्तजार बड़ी बेचैनी से कर रहे थे। ड्रेसिंग टेबल के शीशे में, शेविंग क्रीम से पुते हुए चेहरे के ऊपर, उनको कहीं किसी लड़के के चेहरे में राहुल जैसी छाया दिखायी दी! हाथ में, सेफ्टीरेजर रुक गया"'कहीं, क्रीम काटने से बेटे की छाया, कट न जाय'''यह सोचकर उत्सुकदास डर गये। उनकी आँखें बंद हो गयीं।

राहुल की छाया, रानी की भेंट की हुई शेविंग क्रीम से ऊपर! मेरे गालों से चिपटकर, पड़ी हुई'''ममता के उफान में, उनका हृदय जागते हुए शोलों-सा धधकने लगा।'''यहाँ राजनीति की लड़ाई में, भूखे भेड़ियों के बीच, मैं भी किसी जानवर से कम नही।'''आस्था, विश्वास के संकल्प धीरे-धीरे पीछे छूटते जा रहे थे।'''कभी-कभी लगता, सब कुछ छोड़कर चला जाऊँ'''लेकिन कहाँ जाऊँगा?'''किधर है मेरा ठिकाना!'''किस कगार पर, मेरी नाव लगेगी? कोई भी तो नही है मेरा!'''रानी, काली-शंकर को छोड़ नहीं सकती, राहुल रानी से दूर नही जायेगा।'''मैं, इसी नरक मे सड़ता रहूँगा!'''मेरे पापों का शायद यही प्रायश्चित है।'''इस विशाल धरती में, मेरे लिए कोई जगह नहीं।'''किसके कन्धे पर सिर रखकर, मन की शान्ति तलाश करूँ!'''हे भगवान मैं कहाँ जाऊँ, क्या करूँ। मेरी लिप्सा, कुत्सित आकांक्षाओं के घेरों की जकड़न, भला छोड़ेगी।'''नहीं, अब भागना असम्भव है'''इन्ही घेरों के दायरों मे भटकना होगा। यही मेरा अन्त है।'''आज नही आया तो राहुल कभी नहीं आयेगा। हृदय में उठती टीस से आँखों में आँसू भर आये। उत्सुकदास ने सेफ्टीरेजर ड्रेसिंग टेबल के ऊपर रख दिया। दोनों हाथ जोड़कर आँखें बंद कर ईश्वर की प्रार्थना करने लगे।'''सारा सुख, सारा ऐश्वर्य

ले लो।...राहुल, सिर्फ राहुल मुझे दे दो।...उसका नाम मुझे मिल जाये।...हृदय की प्रत्येक धड़कन मे राहुल का नाम धड़कने लगा। आँसुओं की धारा बहने लगी। आँसुओं की धारा में, धीरे-धीरे, चेहरे पर, अब तक सूख गयी, शेविंग क्रीम पिघलकर उनकी गर्दन तक टपकने लगी।

राहुल के सपनों में उत्सुकदास खोये ही रहते, तभी टेलीफोन की घंटी बजने लगी। आँखें खोली तो ड्रेसिंग टेबल के शीशे में अपना चेहरा दिखायी दिया। आँखो से टपकते हुए आँसू शेविंग क्रीम में सने हुए गालों पर कीचड़ बनकर लिपट रहे थे। उत्सुकदास को उस समय शीशे में एक परछाईं दिखायी दी, जैसे उनकी रानी, राहुल के साथ वही बैठी हो। अपने भ्रम से जूझकर, अन्तर में उमड़ते पीड़ा के तूफान को रोकने की कोशिश करते हुए लगातार बजती हुई टेलीफोन की घंटो बेमन से टूटे हुए, पराजित उत्सुकदास सुनने के लिए पीछे घूमे तो - सामने -सोफा पर प्रतिभा राहुल के साथ बैठी हँस रही थी।

कालीशंकर ने टाइपराइटर से मंत्रिमंडल की सूची निकालकर सेट बनाये फिर स्ट्रैपलर की पट्टियों के बीच उन्हें लगाकर दबाता गया। स्ट्रैपलर करने के बाद गुलाबी रंग की प्लास्टिक की फाइल में, छोटे से कैंच को हटाकर उसने सूचियाँ लगा दीं। पार्टी मीटिंग का एजेण्डा, पहले ही टाइप करके रख दिया था। उत्सुकदास का बूढ़ा नौकर चाय लेकर आया तो उसने प्रतिभा के आने की बात पूछी। कालीशंकर को तब याद आया, अभी स्टेशन जाना होगा उसे लेने के लिए।

टाइपराइटर की बेजान टिक-टिक से उसके कान पक गये थे। कौन कहता, टाइप मशीन, निर्जीव होती। टाइप करते समय एक मेसेज, टाइपराइटर कीज को रफ्तार में दबाते समय पैदा होती। कालीशंकर को कई बार लगा...वह मेसेज थी...."दैट यू आर वेसटिंग टाइम, इट इज डिसेप्सन।" इसे सोचते समय वह अक्सर हँसने लगता। अपने साथ बैठे हुए लोगों को बताता "दैट यू आर वेसटिंग टाइम, इट इज डिसेप्सन, दिस इज चीटिंग।"

कालीशंकर के पास किसी चीज की कमी नहीं थी। उत्सुकदास उसक बहुत ख्याल रखते। उसका ख्याल उत्सुकदास कोई चाव से नहीं रख जब से उसने होश सँभाला, उन्हीं की कृपा पर जी रहा था। उनके पह भी अपने बाबा से सुना था, अपने ऊपर उनके खानदानी एहसान थे।

उसके बाबा कहा करते, हम उनका कर्ज सात जन्म न चुका सकेंगे अगर यह लोग न होते, हम सब तबाह हो जाते। नामो-निशान मि जाता।

कालीशंकर ने बाप को तो कभी देखा ही नहीं था। हाँ ! बाबा याद उसे आज भी आती। बाबा की बूढ़ी आँखों में कालीशंकर ने सदै कहीं एक आहत स्वाभिमान की झलक देखी थी। तब उसे उतनी सम ही कहाँ थी जो उन व्यथित नयनों की भाषा पढ़ सकता।

छुट्टियों में वह घर जाता तो बाबा कहते, "जब तू बड़ा हो जाये समझने-बूझने लगेगा, तुझे बतलाऊँगा, यह दुनिया क्या है ?"

कालीशंकर अपने बाबा से अनगिनत प्रश्न किया करता, बाप अपन माँ, अपने खानदान, बचपने के विषय में। बाबा सदैव चुप रह जाते कुछ बताते तो नहीं, हाँ, उनके नयनों में कहीं, वही आहत स्वाभिमा झलक उठता। कालीशंकर, उस दिन की प्रतीक्षा में जी रहा था, ज पढ़ाई-लिखाई समाप्त करने के पश्चात्, बाबा अपना वादा पूरा करेंगे जब उसके अनगिनत प्रश्नों का उत्तर मिलेगा।

काशी विश्वविद्यालय में पढ़ाई के अन्तिम वर्ष में कुछ ही महीनों बात रह गयी थी, जब एक दिन उत्सुकदास ने उसे बुलाकर प्रतिमा विवाह करने की बात कही। कालीशंकर के आश्चर्य की सीमा न रही प्रतिभा से परिचय यूनियन के कार्य-कलापों से सम्बन्धित था। स्वप्न भी कभी उसने सोचा नहीं था प्रतिभा से विवाह करने का। स्वप्न का आधार होता है। उसका न तो कोई स्वप्न था न ही आधार। उत्सुकदास टुकड़ों पर पलने वाला वह भला उन्हें इन्कार भी कैसे करता। आर्यसमा परम्परा से प्रतिभा से उसका विवाह हो गया। उसी दिन उसके बाबा पलकों में आहत स्वाभिमान की झलक छिपाये हुए आँखें मूँद ली कालीशंकर तड़पकर रह गया। उसे अपने अनगिनत प्रश्नों का उत्तर मिल सका। अब तो एक और प्रश्न उनमें जुड़ गया था। उत्सुकदास प्रतिभा से उसका विवाह करीब-करीब उसे मजबूर करके क्यों करवाया

उन रहस्यों की गुत्थियाँ उलझकर और उलझ जाती। उसके अन्दर संदेह की तीव्र आँधी उठती जिसे वह उत्सुकदास के प्रति अपने विश्वास, अपनी आस्था से दबा दिया करता।

जब संदेह की आँधी उसके जीवन के किनारो-किनारो पर धूल-गर्द बिखराकर चली जाती, प्रतिभा का उत्तेजक, मोहक रूप की मादकता, तरुणायी के ज्वार में कालीशंकर हिचकोले खाता रहता। विवाह के कुछ ही दिनो बाद प्रतिभा जे० जे० स्कूल आफ आर्ट्स मे चित्रकला का कोर्स करने चली गयी। कालीशंकर को उत्सुकदास ने सेकरेटियल प्रैक्टिस सीखने दिल्ली भिजवा दिया। कई महीनो तक यूँ ही भटकता रहा। तब उत्सुकदास ने उसे अपना सेकरेट्री बनाकर रख लिया। प्रतिभा के पत्रो से उसे पता लगता रहता, उत्सुकदास अक्सर बम्बई मे उससे मिलने जाया करते। जे० जे० स्कूल आफ आर्ट्स मे कोर्स पूरा न हो सका। बीच मे ही राहुल का जन्म हो चुका था। कालीशंकर उसे लेने जब बम्बई गया, तीन महीने वही उसके साथ रहा। राहुल के जन्म के समय के दिनों की मधुर कल्पना में, आज भी उसे रोमांच हो आता। उत्सुकदास ने कोलावा में रहने का प्रबन्ध कर दिया। घूमने-फिरने के लिए गाड़ी भी मिल गयी थी। जूहू बीच कोलाबा मे समुद्र का किनारा, मेरिन ड्राइव की सैर! क्या दिन थे! प्रतिभा में उन दिनों उसने स्वर्ग देखा था। जैसे आकाश के चाँद-सितारे, संसार का सारा वैभव सिमटकर उसमें बस गया था। बम्बई से प्रतिभा लौटकर बस कुछ ही दिनों के लिए आयी। उसके बाद भोपाल अपनी भाभी के पास चली गयी। वहाँ से लौटकर आयी तो राहुल उसके साथ नही था।

उत्सुकदास तब तक राष्ट्रीय पार्टी के महामंत्री बन चुके थे। अपना गिरोह बनाने, संगठन के ऊपर अधिकार करने में उस समय वह जुटे हुए थे। कालीशंकर वही उनका प्राइवेट सेकरेट्री बना रहा। उधर प्रतिभा को भी उत्सुकदास ने दफ्तर के टेलीफोन वगैरह देखने-सुनने के लिए लगा लिया। अब कालीशंकर के ऊपर जिम्मेदारियो का पहाड़ गिर पडा। उसको महीने मे पन्द्रह दिन पार्टी के काम से केरल, मद्रास, बम्बई, अहमदाबाद जाना पड़ता। प्रतिभा उन दिनो उत्सुकदास के घर मे रह जाती।

कालीशंकर के मन में छिपी हुई दरार उस समय से उभरने लगी

थी। रात के अँधेरों में लम्बी यात्राओं के पश्चात वह प्रतिमा के सुनहले बदन से लिपटकर अपने प्रश्नों का उत्तर ढूंढ़ने की कोशिश करता। लेकिन उत्तर कहाँ मिलता। स्वयं प्रश्नचिह्नों ने कभी उत्तर दिया है? अपनी आत्मा पर, इन्हीं गुरुतर प्रश्नों का बोझ उठाकर भी वह जीवन की गति में बहा चला जा रहा था। एक ओर, उत्सुकदास को सम्मान, श्रद्धा, परोपकार, उस ऊँचाई तक पहुँचने से रोकती, जहाँ नकाब ओढ़कर, कोई निरन्तर, उसके जीवन का सत्व लूट रहा था, दूसरी ओर प्रतिभा की मोहक मुस्कान, मादक यौवन की छाया उसके मन की दरार को रेत की तरह बिखेर जाती! फिर भी, बाबा की आँखों में झलकता आहत स्वाभिमान किसी अनचाहे स्वप्न की तरह पीछा करते-करते दूर कहीं रेगिस्तान की घाटियों में उसे ढकेल देता। प्रतिभा को देखते-देखते वह उन घाटियों में जलते हुए तूफानों से घिर जाता। मस्तिष्क के शिराओं की जकड़न, विचारों का टकराव, अनजाने भय की अँधेरी छाया, श्वास की तारतम्यता में घुल-मिल जाती। ऐसी तड़पन, व्यथा के बोझ में अनगिनत प्रश्नों के अम्बार उसे जोड़ते-तोड़ते। राहुल बीच की कड़ी था! प्रतिभा, उत्सुकदास, जागती-सोती तंद्रा के दो किनारे!

दिल्ली की एक अँधेरी शाम को, जब उत्सुकदास शहर से बाहर चले गये, प्रतिभा राहुल के पास भोपाल में थी, कालीशंकर अपने कमरे के बिस्तर पर बेचैन तड़प रहा था। तब उसके बूढ़े नौकर ने उससे कहा, "बेटा अपने को सँभालो, तुम्हारे खानदान पर पागलपन का शाप है।"

कालीशंकर स्तब्ध, निरीह नयनों से उसे देखता रहा। उसी दिन बूढ़े नौकर ने उसे बताया, बहुत साल पहले उसका बाप पागल होकर कहीं गायब हो गया, माँ जन्म देकर मर गयी थी। बूढ़ा नौकर पुराने दिनों में उत्सुकदास की हवेली में काम किया करता, वहीं उसी गाँव में कालीशंकर के बाबा रहा करते थे।

चाय का प्याला हाथ में लिये, कालीशंकर स्मृतियों के अँधेरे में थो[illegible] देर के लिए भटक गया था। चाय कुछ घूँट ही पी थी तभी ड्राइंगरूम [illegible] सुमन्त आकर मंत्रिमंडल की लिस्ट माँगने लगा। सुमन्त टाप मीर्न[illegible] खबरों को उड़ाने में माहिर था। कालीशंकर लिस्ट कैसे दे देता। सुम[illegible]

बिना लिस्ट लिये जाना नहीं चाहता था। उसने वादा किया…कसमें खायीं…पार्टी मीटिंग के पहले लिस्ट प्रेस में नहीं दी जायेगी। फिर भी डाक एडीशन में मंत्रिमंडल की खबर तो देनी होगी। लेकिन कालीशंकर बराबर इन्कार करता रहा। दोनों में बहस होने लगी।

कालीशंकर इस समय प्रतिभा को स्टेशन लेने जाने के लिए निकलना चाहता था। स्टेशन जाने से पहले कुछ सामान भी खरीदना था। चाय का प्याला टाइपराइटर वाली मेज पर रखकर उसने प्लास्टिक की फाइल उठायी जिसमें मंत्रिमंडल की लिस्ट टाइप करके रख दी थी। सुमन्त की आँखों के सामने घुमाते हुए फाइल को बगल में दबाकर वह उत्सुकदास को दिखाने के लिए चल दिया। सुमन्त वहीं रुक गया। उसे विश्वास था अन्दर से लौटकर वह लिस्ट उसे दे देगा।

कालीशंकर मंत्रियों की लिस्ट, पार्टी मीटिंग का एजेण्डा लेकर उत्सुकदास के बेडरूम के दरवाजे के पास पहुँचा तो अन्दर से उसे प्रतिभा की आवाज सुनायी दी। आश्चर्यमिश्रित उल्लास से, कमरे में घुसने वाला ही था तभी प्रतिमा के शब्द उसके कान में जलते हुए अंगारे जैसे आकर गिरे।

"सात वर्षों से इस रहस्य को मैंने अपने सीने में छिपाया था कालीशंकर के लिए! आप स्वयं देखिए, राहुल की सूरत आपसे कितनी मिलती है।"

कालीशंकर के पाँव रुक गये। उत्सुकदास कह रहे थे, "रानी! मेरी रानी! आज जीवन-भर की साध पूरी हो गयी।"

उत्सुकदास उसी समय राहुल को प्यार से लिपटाकर चूमने के लिए आगे बढ़े। राहुल तो छिटककर अलग हो गया और उसके पीछे खड़ी हुई प्रतिभा उनकी बाँहों में आ गयी। उत्सुकदास के जो होंठ, राहुल के लिए बढ़े थे, प्रतिभा के होंठों से जा मिले।

उधर बाहरी कमरे के पर्दों के पीछे खड़ा हुआ कालीशंकर जैसे बिजली के नंगे तार से छू गया। अविश्वास, आश्चर्य, भय की मिश्रित प्रक्रियाओं में भी उसे आज पिछले सात वर्षों से अपने अन्दर दहकते हुए प्रश्नों का उत्तर मिल गया था।

उत्सुकदास के यहाँ से लौटकर यशोदावल्लभ के साथ कृष्णवल्लभ सीधे अपने फ्लैट में आ गये। श्रीकांत पाठक, उत्सुकदास के यहाँ से कामयाब सेठ के साथ घर चले गये। उस समय कमलासिंह वहीं बाहर वाले कमरे में बैठा हुआ लोबीराम छाप सिगरेट फूंक रहा था। कृष्णवल्लभ के आते ही उसने बढ़ई की पूरी बातचीत उनको बतायी। यशोदावल्लभ सुनते ही गालियाँ बकने लगा, "इस हरामजादे की यह मजाल…" कृष्णवल्लभ ने उसे रोका।

"देखो यशोदा, मंत्रिमंडल बनने में फकत तीन घंटे बाकी हैं, तुम्हें क्या मालूम ताँबाकाण्ड कितना खतरनाक मामला है। अभी तक तो श्रीकांत पाठक, ज्ञानचन्द्र ही फँसे थे, लेकिन अगर असली फाइल की नकल भी, बढ़ई के पास होगी तो पूरा मंत्रिमंडल रसातल में घुस जायेगा। हम सब मारे जायेंगे। तब तो उत्सुकदास भी नहीं बच सकते। किसी तरह यह तीन घंटे निकल जायें, फिर हम निपट लेंगे एक-एक से। अभी तो इस मामले में कलैक्टर भी हमारी नहीं सुनेगा।"

"भाई जी आपने सुना! फूलदास की हत्या से, सारा पुलिस फोर्स बगावत पर उतर आयी है।" कमलासिंह बोला।

"भैय्या इस बढ़ई को मारकर फेंक दिया जाय, सारा बवेला खत्म हो जायेगा। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी! अब पछता रहा हूँ, दुर्लभकाछी को बेकार भेज दिया। कमीने बढ़ई के सौ टुकड़े करके गोमती में फाइल के साथ बहा देता।"

यशोदावल्लभ की आखिरी बात सुनकर बाहर की खिड़की के पास खड़ा बढ़ई काँप उठा। कृष्णवल्लभ को उसने दूर से ही आते देख लिया था। धीरे-धीरे कुछ फासला रखकर जब तक वह फ्लैट के दरवाजे पर पहुँचा इन लोगों की बातचीत शुरू हो चुकी थी। यशोदावल्लभ की तो आदत जोर-जोर से चिल्लाकर बोलने की थी। उसे ऐसा लगा उन लोगों में आपस में झगड़ा हो रहा था। भीतर जाने से पहले उसने स्थिति का जायका लेना ठीक समझा। तभी वह बाहर बैठकवाली खिड़की के पास खड़ा होकर अन्दर की बातचीत सुन रहा था। जब उसने यशोदावल्लभ को क्रोध में चीखते हुए सुना, ताँबाकाण्ड की फाइल उसके पेंट में बनयाइन के नीचे दबी हुई थी। वह सोच रहा था अन्दर जायें या लौट चले। तभी कृष्णवल्लभ की आवाज सुनायी दी, "तुम लोग बात-बात

मे खून-खराबा करने पर आमादा रहते हो। अभी फूलदास का खून करके आये हो, अब एक और ! क्या तुम्हे मालूम है आठ बजे वाली पार्टी मीटिंग, पार्टी अध्यक्ष की देखरेख मे होगी। उधर बाबूसाब को उलटने के लिए लोबीराम, रंगीनराय साजिश करने मे लगे हैं। किसी तरह भी तांबाकाण्ड की फाइल इन लोगों के हाथो अगर पड़ गयी, सब बंटाधार हो जायेगा। कैसे भी उस ससुरे को दो-तीन घण्टे के लिए रोको।"

"तो भैया हम ऐसा करते है, उसको यहाँ आने दो, हाथ-पैर बांधकर पीछे वाले कमरे में डाल देंगे, मुँह मे कपड़ा और ठूंस दिया जाय। उसके बाद उसके घर जाकर उस फाइल को उड़ा दिया जाय। क्यों, कमला-सिंह !"

बाहर खड़ा बढ़ई एकदम से भागा। भागने की आवाज सुनकर तेजी से कमलासिंह बाहर आया। उसने देखा, गैलरी मे पूरी ताकत से बढ़ई भागा जा रहा था। वहीं से उसने चिल्लाकर यशोदाबल्लभ से कहा :

"अरे जल्दी आवो, पकड़ो, साले ने लगता है, हमारी बातें सुन ली।"

आगे-आगे बढ़ई, उसके पीछे कमलासिंह, कमलासिंह के पीछे यशोदा-बल्लभ, दारुलशफ़ा की गैलरी में दौड़ते चले जा रहे थे। यशोदाबल्लभ के पीछे कुछ दूर कृष्णवल्लभ भी अनायास दौड़ चले। फिर उन्हें खयाल आया, वह तो मंत्री होने वाले थे। वापस रुककर वहाँ से देखने लगे। बढ़ई उन लोगों से काफी आगे, यशोदाबल्लभ, कमलासिंह के काफी पीछे था। कमलासिंह के ऊपर लोबीराम की चरसवाली सिगरेट असर करने लगी थी। कुछ ही दूर दौड़ने के बाद, उसका सिर चकराने लगा। ठोकर खाकर वह तो गिर पड़ा। गिरने पर उठना बेकार था, बढ़ई काफी दूर निकल चुका था। यशोदावल्लभ अब तक कमलासिंह के पास आ गया, वहीं से वह चीखने लगा, पकड़ो-पकड़ो, पकड़ लो साले को, भागने न दो, मंत्रीजी की फाइल चुराकर भागा है। गैलरी मे धड़ाधड़ दरवाजे खुल गये, लोग-बाग बाहर निकलकर तमाशा देखने लगे। तभी कुछ लोग बढ़ई को पकड़ने के लिए दौड़ पड़े। उनके साथ यशोदाबल्लभ भी भागने लगा। कमलासिंह उठकर खड़ा तो हो गया लेकिन दौड़ने के काबिल नहीं था, चरस चढ़ चुकी थी। बढ़ई फूलती साँस को दम देने के लिए एक

क्षण को रुका ही था, उसने यशोदावल्लभ के चीखने के साथ कई लोगों को पूरी ताकत से अपनी ओर भागते देखा। फाइल बनयाइन के नीचे दबाये हुए इस बार और तेजी से वह भागा। उसके कानों में यशोदावल्लभ के शब्द अभी तक गूँज रहे थे, पकड़े जाने पर क्या अंजाम होगा, इसकी कल्पना से उसके रोंगटे खड़े हो गये। लेकिन भागकर जाय कहाँ, कब तक दौड़ पायेगा, यह लोग उसे पकड़ ही लेंगे, उसके बाद यशोदावल्लभ काटकर गोमती मे फेंक देगा। फूलदास का खून इसी ने करवाया है, बाप रे बाप! भागो! बढ़ई ने तेजी से छलांगें लगाकर बीच की सड़क पार की। एक बार मुड़कर उसने फिर देखा, किसी क्षण भी ये लोग उसे धर पकड़ेंगे। नियति चक्र से प्रकाश की किरणें उठीं, एकाएक भागते-भागते उसे कृष्णबल्लभ के शब्द याद आये, "रंगीनराय, लोबीराम, साजिश" पहली मंजिल की सीढ़ियाँ सामने थीं, बढ़ई कूदकर चढ़ने लगा, दो-दो सीढ़ियों को लम्बे पैरों से पार कर रंगीनराय के घर के सामने वाली गैलरी की ओर दौडा ही था, किसी ने उसके कुरते के नीचे वाला हिस्सा पकड़ लिया। कई और लोगों के सीढ़ियाँ चढ़ने की आवाज तेजी से पास आ रही थी। बढ़ई पीछे मुड़कर पूरे जोर से उस आदमी को ढकेलकर रंगीनराय की बैठक में घुस गया।

रंगीनराम के यहाँ उस समय तरसुकदास को गिराने के लिए लोबीराम गुट के मुख्य अभिनायकों की मीटिंग चल रही थी। अन्दर आते ही, हाँफते हुए, बदहवास हालत मे बढ़ई गिरकर बेहोश हो गया। गिरने से पहले उसने बस इतना ही कहा, "रायसाब मुझे बचाइये, नहीं तो ये लोग मार डालेंगे।"

सात

दारुलशफ़ा में इधर चोरियाँ बढ़ चली थीं। चोरियों की तादात अब इतनी ज्यादा हो चुकी थी कि हर वक्त लोगों को डर बना रहता, न जाने कब क्या हो जाए! अब तो, गजब का हाल था, दिन-दहाड़े बिना सेंध लगाये, बिना ताला तोड़े, चोर सामने के दरवाजे से घुसकर हल्के-फुल्के सारे

[illegible] में कहीं कोई निशान, कुछ कुछ भी रहा हो, इस [illegible] था। [illegible] के कोने की तरह [illegible], [illegible] [illegible] की [illegible] में [illegible] की तरह [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] पर होंगे, [illegible] [illegible] मालूम हो जाता, [illegible] [illegible] था, कहाँ [illegible] थी!

उन दिनों, दारुलशफ़ा में चोरी का बाज़ार गरम था। लेकिन यह [illegible] [illegible], कभी [illegible], कभी [illegible] जाती। [illegible] कोई [illegible] हुए [illegible], न [illegible] [illegible]। इन [illegible] में, [illegible]-टेबल, [illegible]-कुर्सियाँ, [illegible] के [illegible], [illegible], [illegible] मिलावटी चीज़ें, [illegible] के [illegible], कमरों के [illegible], सिल्क की चादरें, अलमारी-[illegible] के [illegible], [illegible] के [illegible], अलग-अलग हैसियत वालों के लिए, अलग-अलग दफ़्तरों में भाया करते। जैसा काम, वैसा दाम!

और अक्सर इन चीज़ों की चोरी होने लगी थी। दारुलशफ़ा का चोर कौन था, यह पता चलना कठिन हो गया था। पर इतना ज़रूर था कि चोर जो भी था, उसे दारुलशफ़ा के भीतरी हिस्सों की पूरी जानकारी थी।

दारुलशफ़ा!

कितना विचित्र इतिहास है इस दारुलशफ़ा का भी।

दारुलशफ़ा के पचास डिग्री दक्षिण, पचास डिग्री पश्चिम, बेलदारी लाइन पर मेडूसों की सरायें हुआ करती थीं। अब तो दारुलशफ़ा के पीछे बेलदारी लेन पर मेडूसों की सराय का पुराने ज़माने की लाहौरी ईंट-मसाले से बना, गुंबद-द्वार फाटक ही बचा, पर उन दिनों, इसी फाटक के अन्दर टूटी-फूटी लम्बी कोठरियाँ, कहीं खाली, कहीं बिना छत के मकानों, सामने से घूमकर पीछे तक गयीं कतारबार दालानें थीं। 'ए' ब्लाक के पश्चिमी सिरे पर जहाँ अब नौकरों के क्वार्टर्स बने हैं वहाँ पहले जंगल था जिसके अन्दर से लोग दारुलशफ़ा, रेल के फाटक और पुराने जी० पी० ओ० से खास हजरतगंज तक जा सकते थे। पश्चिमी सिरे से दक्षिणपूर्व तक की दीवाल और मेडूसों की सराय के खँडहरों के बीच की सड़क के बाद जरा दाहिने हटकर छोटा-सा मन्दिर, जिसके पास बहुत [illegible] इमली का पेड़ था।

१९४५ में जब दारुलशफ़ा बनाने की बात सोची गयी,

के रहने के लिए दस-बारह पुराने बँगले, गोलाई के दायरे में बने हुए थे। इन्हीं बँगलों के बीच से एक सड़क निकलकर विधान भवन के सामने आती थी। पूर्वी छोर पर टेनिसग्राउन्ड और दक्षिण छोर पर घोड़ों के अस्तबल हुआ करते थे। अब जहाँ दारुलशफा का 'ए' ब्लाक है, वहाँ तक पहले गोमती नदी, बाढ़ के दिनों में फैलकर आ जाया करती। पाँच एकड़ के इस इलाके में पुराने बँगलों को गिराकर, गोमती नदी के फैलाव को बंद करके, सन् ४४ तक 'ए' ब्लाक के 14 कमरे बनाए गये थे। सन् ५२-५२ तक 'ए' ब्लाक के १६६ कमरे, 'बी' ब्लाक के ८६ कमरे बन चुके थे। कहते हैं, पुराने जमाने में जब दारुलशफ़ा की इमारत बन रही थी, वहाँ भी एक इमली का पेड़ था जिसे गिराने की वजह से एक के बाद एक करके तीन ठेकेदारों की जान चली गयी। कोई कहता उस इमली के पेड़ पर प्रेतात्माएँ रहती थीं, कोई कहता कब्र का भूत! आखिर में इमली का पेड़ गिरा तो दिया गया लेकिन जिस ठेकेदार ने उसे गिराया, उसने उस पेड़ की लकड़ी वहीं पर जला दी। लोगों के कहने के अनुसार उधर की कब्र से उठकर आत्माएँ मेंडूखाँ की सराय की तरफ वाले इमली के पेड़ पर बस गयीं।

इमली के पेड़ के नीचे से मेंडूखाँ की सराय की टूटी-फूटी दालानों तक, मुहल्ले-भर के शोहदे उन दिनों इकट्ठा हुआ करते। गाँजा, चरस, भाँग, ठर्रा की क्या महफिल वहाँ जमा करती। सामने सड़क से लगी हुई, देशी ठर्रे की दुकान में कभी-कभी जब तिल-भर जगह बाकी न बचती, पीने-छानने वाले पकौड़ी-कलेजी-कलिया के साथ मिट्टी की कुज्जियाँ और बोतलें ले-लेकर इमली के पेड़ के नीचे बैठ जाते। सुलफी की चिलम, ठर्रे की कुज्जियाँ सिलबट्टे से निकलते हुए भाँग के गोलों की अलग-अलग मंडली बैठती। जैसी महफिल होती वैसा ही रंग! सारा माहौल खुले आसमान, दबी हुई धूप-छाँव में, किसी क्लब से कम न होता। महफिल के बाद चिलम-कुज्जियाँ, वहीं इमली के पेड़ के खोहों में रख दी जातीं। पास के दालान में, नशे में धुत होने के बाद लोगबाग, कट पत्ता, तीन पत्ता, कौड़ी, लूडो, सनकुत्तल खेला करते। धीरे-धीरे जानकार लोगों के हाथ, वहाँ भी लोबोराम छाप सिगरेटें पहुँचने लगीं। फिर तो माहौल बदलने लगा, महफिलों में इन्कलाब आ गया। लोगों ने सुलफी की चिलम, की कुज्जियाँ फोड़ डालीं। आदतन मजबूरी में जो लोग फिर भी अगर

[illegible] में एक हुनर में [illegible] एक हुनर में [illegible]
[illegible]!

बिरजू ने बड़े [illegible] के। [illegible] बिरजू को [illegible] थे। उसके बाद बिरजू [illegible] बड़ा हुआ। करीमभाई के बाद रहीमभाई ने [illegible] कम्पनी बना ली थी। हुनर, कारीगरी, ईमान- दारी [illegible] की वजह से उनका नाम दूर-दूर तक बड़े [illegible] और प्यार से लिया जाता। उनकी कम्पनी के तालों की बड़ी साख थी। उनके यहाँ एक से [illegible] हुनरमंद कारीगर थे जिनके हाथों में जादू था। बिरजू ने [illegible] उन्हीं के कंधों पर बैठकर, उनके साथ खेल-कूद कर उम्र काटी। बच- पन से तालों का हुनर उसकी रगों में घुसकर बैठ गया। कहाँ का ईमान, कहाँ का धरम, बस ताला ही उसका ईमान था, ताला ही उसका धरम। तालों के कल-पुर्जों से खेलता हुआ बिरजू धीरे-धीरे रहीमभाई-करीमभाई तालेवालों के यहाँ बड़ा हुआ। तब तक वह एक अच्छा-खासा कारीगर बन चुका था। करीमभाई ने बिरजू के हुनर को ताड़ लिया। बहुत दिनों से उनके अन्दर खास किस्म की, नम्बरों वाली तिजोरियाँ बनाने की तमन्ना थी। उन्होंने अपनी जान-पहचान वालों से कहकर, बम्बई की एक तिजोरियाँ-ताले बनाने वाली मशहूर कम्पनी में बिरजू को लगवा दिया। उनका इरादा था, जब दो-तीन साल में बिरजू वहाँ काम-काज सीख जायेगा, उसे वापस अलीगढ़ बुला लेंगे। तब रहीमभाई-करीमभाई तालेवाले, नम्बर वाली तिजोरियाँ भी बनाया करेंगे। करीमभाई को बिरजू से बड़ा प्यार था। अब बिरजू के साथ एक सपना, नम्बरवाली तिजोरियाँ बनाने का सपना और जुड़ चुका था। इसीलिए अलीगढ़ स्टेशन पर उसको बिदा करते समय, उनकी आँखें भर आयी थीं।

बम्बई पहुँचकर बिरजू बड़ी लगन से काम सीखने लगा। करीमभाई के दोस्त, भिण्डीबाजार के करीब रहा करते। वहीं बिरजू को भी ठिकाना मिल गया। करीमभाई का सपना अब उसका सपना बन गया। दिन-भर काम करने के बाद, जब वह थककर रात में सोता, नींद-भरी आँखों के सामने नम्बर वाली तिजोरियाँ नाचने लगतीं। लिवर और लटकों [illegible] तो बचपन से ही उसने सीख रखा था। उसकी आदर्श जैनतिजो

को पकड़ लिया। जितने नम्बर होते, उतने खटके और लिवर का कम्बिनेशन खाँचों के जरिये बनाकर फँसा दिया जाता। इल्म की मशीनों के साथ जोड़-तोड़ में बिरजू अपने फन का उस्ताद बन गया।

लेकिन बिरजू जैसे वहाँ कितने ही उस्ताद थे, जिनकी दोस्ती-संगत में उसे मजा आने लगा। नयी उमर में उठती हुई जवानी की तरंगें करवटें बदलने लगीं। बम्बई की रंगीनियों में अलीगढ़ की मुहब्बत, करीमभाई के नम्बरवाली तिजोरियों के सपने धीरे-धीरे उसकी पकड़ से पीछे छूटने लगे। जुम्मनबाई के कोठे, ताश-जुआ के अड्डे, कच्ची-पक्की शराब की बोतलों में बिरजू डूबता जा रहा था। पहले तो करीब-करीब रोजाना करीमभाई के पास उसकी चिट्ठियाँ आतीं, हर चार-छह महीने बाद वह अलीगढ़ जाया करता, फिर जुम्मनबाई के कोठे, ताश के अड्डों की वजह से चिट्ठियों की तादाद कम होते हुए बन्द-सी हो गयी। रात-बिरात देर से आने की वजह से करीमभाई के भिण्डीबाजार वाले दोस्त का मकान भी छूट गया। कुछ दिन तो वह अपने उस्ताद दोस्तों के साथ रहा फिर वहीं जुम्मनबाई के कोठे पर रहने लगा। वहाँ रोज नयी लौंडिया आतीं जिनकी जवानी के नशे, तबले-घुंघरू की झनकार ने उसे जकड़ लिया था। यह तो किस्मत की बात थी, जो बिरजू जुम्मनबाई के कोठे में बंद हो गया। वर्ना, दूर-दूर तक, विशाल बम्बई शहर में, समुद्र का किनारा ऊँची-ऊँची इमारतें वह पहले नम्बरदार तिजोरियों में, अपने करीमभाई के साथ बंद करने का ख्वाब देखा करता।

इसी तरह दो-तीन की जगह पाँच-छह साल गुजर गये। पिछले दो-तीन साल से उसने अलीगढ़ जाना ही छोड़ दिया था। अलीगढ़ उसे अब गाँव लगता जहाँ बम्बई से दूर जाकर एक दिन भी गुजरना मुश्किल हो जाता। इसी बीच करीमभाई बीमार पड़ गये। उनके दिलो-दिमाग पर बिरजू छाया हुआ था। हर वक्त बस, उसे ही याद करते। उनके खुद के दो आवारा किस्म के लड़के थे जिनसे उन्हें कभी खुशी हासिल नहीं हुई। इसीलिए वह मरने से पहले लड़कों के गुजारे का इंतजाम करके अपनी तालेवाली कम्पनी बिरजू के हाथों सौंपना चाहते थे। लेकिन बिरजू का कहाँ पता हो तब!

उधर बिरजू के ऊपर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। तिजोरी-वाले की जिस कम्पनी में वह काम करता था, वहाँ लम्बी हड़ताल,

दंगा-फसाद के बाद ताला पड़ गया। बिरजू बेकार हो गया। उधर बुरी आदतों की वजह से उसके ऊपर बेहद कर्ज चढ़ गया। जुम्मनबाई के कोठे पर उधारी की रोटी तोड़ते-तोड़ते काफी समय गुजर चुका था। अब तो नौबत यहाँ तक आ पहुँची, किसी दिन भी, उसे, वहाँ से धक्के मारकर निकाल दिया जाता।

तभी जुम्मनबाई के कोठे पर चमकी नाम की एक लड़की आयी। चमकी को देखकर बिरजू उसके ऊपर फिदा हो गया। उसका दिल हाय-हाय करने लगा, कहीं जुम्मनबाई औरों की तरह, चमकी को भी चढ़ा न दे! चमकी से मिलने का उसे एक ही मौका मिला। पहली मुलाकात में चमकी भी उसे दिल दे बैठी। उसकी छाती पर बड़ी-बड़ी आँखों से सुबक-सुबककर, रोते हुए चमकी ने उससे पनाह माँगी। फिर क्या था, बिरजू आसमान में कुलाँचें भरने लगा। पैरों में पंख लग गये, दिल की गहराइयों में डूबने लगा। चमकी, उसकी बेकार-बेजार जिंदगी में बहार बनकर आयी, हर वक्त उसी का ख्याल, उसी की इबादत!

नम्बरवाली तिजोरी बनाने का सपना तो करीमभाई का सपना था, जिसे मन में सँजोकर वह बम्बई गया था। लेकिन इतने साल बाद, जब बम्बई की सड़कों से कच्ची-पक्की शराब की बोतलों, जुम्मनबाई के कोठे तक, न जाने कहाँ वह सपना बिखर चुका था, बहुत पीछे, गर्द और गुब्बार में छूट चुका था। बिरजू को चमकी खालिस अपना, एक नाजुक-सा, प्यारा-सा सपना लगी। उसे हासिल करने के लिए, वह सब कुछ करने को तैयार था। फिर भी, बात इतनी आसान नहीं थी। चमकी कोठे पर आयी थी। जुम्मनबाई के कोठे पर! वहाँ भला कैसा इश्क! कैसी मोहब्बत!

कुछ ही दिनों में चमकी की नथ उतरवायी की तैयारियाँ होने लगीं। बड़े सेठ, पेशेवर रंडीबाज, उसे देखकर दाम लगाने लगे। फिर एक दिन वह भी आया, जब चमकी की नथ उतरवायी का सौदा तीन हजार में तय हो गया। बिरजू ने सुना तो उसके होश उड़ गये। उसने चमकी को वचन दिया था, इज्जत बचाने का। बिरजू की, जवानी के दिनों में यह पहली मोहब्बत थी। उसने अपनी जान बाजी पर लगा दी। बाजी लगी थी, चमकी की नथ कौन उतारेगा। बिरजू ने बात आगे बढ़ायी तो जुम्मनबाई ने झटक दिया, कहने लगी, चमकी का सौदा हो गया, उसे भूल

काफी दिनों तक, बेरोजगारी की मुसीबतों से यह लोग तंग आ चुके थे, उधर बिरजू को चमकी की नथ उतरवायी का अल्टीमेटम मिल चुका था। आखिर में एक दिन बिरजू के साथ दो लोगों ने मिलकर अपने-अपने हुनर का इस्तेमाल, रात के अंधेरे में करने का फैसला ले लिया। अनाड़ी तो थे ही, इनकी यह पहली चोरी थी। सबके सब पकड़े गये। बिरजू को भी छह महीने की कैद हो गयी।

जेल की सख्त मेहनत के बाद बिरजू को होश आया। उसका मन उचाट हो गया था। बम्बई में अब उसके लिए बचा ही क्या था? न नौकरी थी, न जुम्मनबाई का कोठा, चमकी का क्या पता भला, अब कहाँ होगी ···यह सोचकर बाहर निकलने पर वह सीधा अलीगढ़ गया।

अलीगढ़ में भी अब बिरजू के लिए कुछ भी न था। करीमभाई को उसकी हरकतों के बारे में सब पता लग चुका था। अपने जिन बेटों को वह नालायक समझते थे, अब तक वह बिरजू के सामने उन्हें फरिश्ते दिखने लगे। उनके बेटे बदचलन तो थे, लेकिन चोर नहीं। बिरजू वहाँ दो-तीन दिन से ज्यादा न रुक सका। हर वक्त वहाँ उसे चोर की नजरों से देखा जाता। करीमभाई के साथ, उसके ऊपर से, सबका यकीन उठ चुका था। जिस घर में हमेशा वह करीमभाई के खुद के बेटों से ऊपर, बेताज बादशाह की तरह रहा अब वहाँ उससे सबकी निगाहों से गिरकर रुका न गया।

अलीगढ़ से भागने के बाद, बिरजू कई एक शहरों में भटकता रहा। कुछ दिन मथुरा, कुछ दिन आगरा फिर कानपुर आना पड़ा। कानपुर में उसने फिर चोरियाँ शुरू कर दी। अब तक उसे काफी तजुर्बा हो चुका था। अपने हर शिकार को काफी दिनों तक देखता-समझता, जाने-भागने के रास्तों के नक्शे बनाकर, तब कहीं हाथ डालता। सधे हुए खिलाड़ी की तरह एक शहर में, दो-तीन चोरियाँ करने के बाद भाग खड़ा होता।

इधर काफी दिनों से, बिरजू लखनऊ आया हुआ था। रहने के लिए उसने भेड़ीमंडी मे एक खोली ले रखी थी। पहले तो वहीं खोली में ताले की मरम्मत किया करता। फिर वह फेरी लगाने लगा। फेरी लगाने के पीछे एक मकसद था, एक वजह थी। असल में वह अगली चोरियों की तैयारियों में जुटा हुआ था। बिरजू के पास हुनर था और दिमाग भी। वह अपना शिकार तय करते समय तीन बातों का खास ध्यान रखता। पहले तो

चोर नहीं था, और कुछ भी हो। एक बार तो उसने सोचा, अगर चमकी साथ होती तो यहीं बस जाता। चोरी-चकारी छोड़कर, मस्तीभरी जिंदगी कितनी सुनहरी होती, कितनी प्यारी!

चमकी से बिछड़े हुए बिरजू को करीब एक साल हो चुका था। भेड़ीमंडी की अपनी खोली में हर दिन दीवाल पर कोयले से एक लकीर खींच देता। किसी के देखने पर, सफेद दीवाल पर कोयले से खींची हुई ये लकीरें शायद ही कोई मतलब रखतीं। लेकिन बिरजू के लिए, हर काली लकीर चमकी की, उसके बिना गुजारी गयी एक रात थी। इन रातों के हिसाब में, बिरजू घुट-घुटकर जी रहा था। चमकी उसके लिए कोई अजूबी लड़की नहीं थी। वह उसके लिए विश्वास, संकल्प की एक नम्बरदार तिजोरी थी, जिसके कम्बिनेशन लाक का नम्बर, वह पिछले सोलह महीनों से ढूँढ रहा था। चमकी के लिए उसने भिण्डीबाजार का ठिकाना छोड़ा, तालेवाली कारखाने की शानदार नौकरी खोयी, चोरी के इल्जाम में जेल गया, आखिर में पचास हजार की हैसियत वाले करीमभाई ताले वाले की विरासत भी उसने चमकी के ऊपर लुटा दी। इतनी दूर आकर वापस लौटना, उसे भूलना नामुमकिन था। लेकिन उसे मालूम था, चमकी उसे नहीं मिल सकती। चमकी को पाने के लिए, अब उसे दस हजार की नहीं, साठ हजार की दौलत चाहिए थी।

बिरजू कभी-कभी हिसाब लगाता, दीवाल पर काली लकीरें कितनी हो गयी होंगी। काली लकीरें सिर्फ काली रातों का हिसाब नहीं थीं, उनके साथ चमकी के जिस्म को लूटने वाला हिसाब भी जुड़ा था। महीने के तीस दिन में से, चार-पाँच दिन हर औरत के अपने होते हैं, बाकी दिनों को जरा कंजूसी से जोड़ता हुआ, वह उन ग्राहकों का हिसाब लगाता जिन्होंने चमकी के साथ, एक बिस्तर पर रात गुजारी होगी। बचे हुए २७ दिनों में से वह तीन दिन सन्नाटे के, तीन दिन चमकी के तबीयत के निकाल देता। इसके बाद तीन दिन वह ऐसे ग्राहकों के निकाल देता जो बूढ़े या बेजान होते, जो आते तो जरूर, लेकिन कुछ कर नहीं पाते। '३१ दिन वाले महीनों का वह एक दिन वैसे ही छोड़ देता। बाकी बचे १७ दिनों को ठीक हिसाब के लिए, १५ दिन करके जोड़ लेता। फरवरी महीने में उसने २८ की जगह २५ ही जोड़े। इस तरह, उसने हिसाब लगाकर १७५ लकीरें, उन १७५ अनजाने ग्राहकों के नाम से, अपनी भेड़ीमंडी की

खोली की सफ़ेद दीवार पर खींची थीं, जिन्होंने इन १७५ काली रातों में चमकी के जिस्म को लूटा होगा। अब, यह सब बिरजू के बर्दाश्त के बाहर था। कोयले की लकीरें हजार-हजार नश्तर बनकर उसके मन में चुभ रही थीं। लेकिन साठ हजार रुपये चाहिए थे, चमकी को पाने के लिए। उसे मालूम था, जुम्मनबाई के कोठे से चमकी को पैसे के जोर से ही निकाला जा सकता है। असल में, वह पूरी तैयारी के साथ बम्बई जाना चाहता था। फकत छह हजार रुपयों के लिए, चमकी उससे छीन ली गयी थी। अब किसी भी तरह पैसे से वह कमजोर नहीं पड़ना चाहता।

लछमनिया गोरी नहीं थी, फिर भी बदामी रंग के उसके चेहरे पर, हमेशा नूर चमकता रहता। चौड़े माथे पहर घुंघराली लटें अठखेलियाँ करतीं, जिनकी छाया में बड़ी-बड़ी प्यारी-सी आँखों से वह जिसको देख लेती, वह उसका दीवाना हो जाता। बुड्ढा हो या जवान, सभी उसको चाहने वाले थे। दारुलशफ़ा में उसकी चढ़ती हुई जवानी की चर्चा हर जगह हुआ करती। जिधर से वह निकल जाती, लोग कलेजे पर हाथ रखकर आहें भरने लगते।

दारुलशफ़ा में आने के पहले लछमनिया अपने बाप के साथ पान-बीड़ी की दुकान पर बैठा करती। वहाँ कभी-कभी उसे अकेले भी बैठना पड़ता। हरे या लाल रंग की किनारेदार एकलाई, गाढ़ा, मर्दानी धोती माथे तक ओढ़कर ग्राहकों को पान के जोड़े, बीड़ी के बंडल बेचा करती। उस समय लछमनिया पन्द्रह-सोलह के बीच की रही होगी। तब तक उसे ना तो मर्द-औरत का भेद पता थे; ना ही किसी ने उसे प्यार किया था। इसलिए सबकी आँखों में आँखें डालकर बेधड़क बात करती। हँसी-मजाक में अक्सर लोग उसे छेड़ दिया करते, छीटा-कसी करते, तब भी वह हँसती रहती। लोगों की निगाहों में खोट के बारे में लालबाग बीड़ीवाला उसे समझाया करता। लेकिन लछमनिया को भला समझ कहाँ थी। वह तो और लोगों की निगाहों में ताक-झाँककर खोट ढूँढने की कोशिश करती।

ए, बी ब्लाक के बीच वाली सड़क, सी ब्लाक के १२ कमरों के बाहरी मैदान को छूती हुई लालबाग बीड़ी वाले की गुमटी थी। गुमटी के ही नीचे पाँच फुट लम्बी, छह-सात फीट चौड़ी थोडी-सी जगह थी जिसमें लकड़ी के पटरो से, ईंट-पत्थर की थोडो-सी दीवाल उठाकर, कोठरी बना ली गई। इसी कोठरी में; पान की ढोलियाँ, बीडी के बंडल, बाल्टी, पानी वगैरह रखा जाता। इसी कोठरीनुमा जगह में, मौका पाकर लछमनिया घुसकर पान की ढेलियाँ खोलकर ठीक-ठाक किया करती। कोई-कोई दिन, जब उसे देखकर गुमटी के पास लफंगे, शोहदे कुछ ज्यादा तादाद में जमा होने लगते, उसका बाप डाँटकर उसे नीचे कोठरी में चले जाने के लिए कहता।

यूँ तो लछमनिया हर वक्त शोहदों, लफंगों से घिरी रहती, पर दारुलशफ़ा में उसके आशिक बड़ी तादाद में पैदा होने लगे थे। मौका

ढूंढ-ढूंढ़कर विधायक, नेतागण, चमचे उसकी दुकान पर आते रहते। जो लोग खुद नहीं आ पाते, अपने आदमियों को भेजकर पान मँगवाया करते, साथ में, पान उन्होंने मँगवाये हैं, यह बात लछमनिया को बता देने के लिए, इस बहाने से कहला दिया करते जिससे किसी के पान में चूना कम हो, किसी के में कत्था ज्यादा। अब धीरे-धीरे लछमनिया भी लोगों से खुलने लगी थी। बातचीत का उसका तरीका भी जरा पेशेवर होता जा रहा था। अब वह ज्यादातर मूड में रहती। कैसा पान चाहिए, यह पता करने का उसका अन्दाज निराला था। लछमनिया ने पान की दो किस्में कर रखी थी, मर्दाना और जनाना! लेकिन दारुलशफ़ा के कुछ शोहदों ने, जब से एक किस्म आशिकाना पान और जोड़ दी—उसके यहाँ तीन प्रकार के पान मिलने लगे। मर्दाना पान में चूना ज्यादा, कत्था कम, किमाम की गोलियाँ, चिकनी सुपाड़ी, जाफरानी पत्ती के साथ में थोड़ी-सी बनारसी सादी पत्ती रहती। जनाने पान में चूना, कत्था बराबर के साथ में सिर्फ इलायची, सुपाड़ी डाली जाती। नये किस्म का आशिकाना पान, असल में मीठा पान कहलाता। लछमनिया ने इस किस्म को भी मान लिया था। इसमें कत्था, चूना बराबर का, फिर गरी, लाल रंग की मीठी सुपाड़ी, गुड़-राब जैसे शक्ल की सुपारीनुमा कुछ और मिठाइयाँ मिलायी जातीं।

आने वाले ग्राहकों से बड़े तपाक से लछमनिया पूछा करती—मर्दाना, जनाना या आशिकाना! आशिकाना लब्ज, वह जरा अटपटे ढंग से, कुछ जल्दी में ऐसे ढंग से कहती, नये सुनने वाले समझ नहीं पाते, लेकिन पुराने लोगों को लगता, वह शरमाकर कह रही थी। और उसे खुश करने के लिए सादा पान खाने वाले ज्यादातर आशिकाना पान माँगते क्योंकि जनाना लब्ज कहने में झेंप लगती। लेकिन मही में लछमनिया आशिकाना पान का नाम भी सुनकर मुँह बिचकाती। उसे तो मर्दाना पान बनाने में मजा आता। उसका यह राज पुराने लोग जान गये थे। यह लोग आकर खुद ही मर्दाने पान की फर्माइश कर देते।

इधर लोगों की छेड़छाड़ काफी बढने लगी थी। ताकझाँक करने वाले शोहदों में से एक दिन एक शाम के धुँधलके में नीचे वाली 'कोठरी में, जहाँ लछमनिया काम कर रही थी, घुस गया। फुसलाकर-बहलाकर, प्यार-भरी बातों में फँसाकर उसने वहीं, दिन दहाड़े, लछमनिया के

ब्लाउज के बटन खोल दिये । ऊपर गुमटी में उसका बाप बैठा था इस डर से वह कुछ बोल न पायी । जल्दी-जल्दी, जब तक उस शोहदे को उसने बाहर भगाया, उसके बदन में तो आग जग चुकी थी । मर्द का पहला हाथ जवान होते हुए उसके अंगों के कटाव उभार में जब लगा तो मर्दाना शान की तरह, माथे पर चढ़कर बोलने लगा था । अब लछमनिया बदलने लगी । उसका यह परिवर्तन लालबाग बीड़ी वाले की खुर्राट निगाहों से छुप न सका । उसने लछमनिया को दुकान से अब हटा लेना ही ठीक समझा । उन दिनों दारुलशफ़ा में लोबीराम के यहाँ कोई नौकर नहीं था । लोबीराम पचास के करीब होंगे, उनसे भला लछमनिया को क्या खतरा होगा, यह सोचकर लालबाग बीड़ी वाले ने उसे वहाँ लगा दिया ।

शोहदो, लफंगों की हरकतों से तंग आकर लालबाग बीड़ीवाला जब लछमनिया को छोड़ने आया था, लोबीराम बैठक की तख्त पर, गाव-तकिया का टेक लगाये बैठे थे । दिन-रात वहीं रहने की, ठीक से लोबी-राम की सेवा करने की हिदायत देकर उसने लछमनिया को अंदर जाने के लिए कहा । उस समय ठुमककर जिस प्रकार लछमनिया घर के अन्दर गयी थी, उसे देखकर तख्त पर बैठे हुए लोबीराम की भी भृकुटी होने लगी थी । उसके बाद लछमनिया वहीं रहने लगी, लोबीराम ने उसे अपना लिया ।

उन दिनों शोहदों, लफंगों की क्रूर भाव-भंगिमाएँ देखकर लछमनिया को बड़ा डर लगता था, लेकिन लोबीराम से उसका बड़ा पुराना [illegible] वाला रिश्ता था । यह रिश्ता उस वक्त बना था, जब लछमनिया लोबी-राम के लिए पान ले जाया करती थी । लछमनिया जब भी पान लेकर जाती, लोबीराम, अगर उस समय अकेले होते तो उसे अपने पास बिठा लेते और उसकी पीठ पर, माथे पर हाथ फेरते । लालबाग बीड़ीवाला पान के जोड़ों का पैसा उनसे कभी नहीं लेता, यह जानकर भी, जब लछमनिया पान लेकर आती, लोबीराम पैसा अवश्य ही, [illegible] उसके हाथों पर रख ही देते । कभी-कभी तो प्यार से [illegible] [illegible]निया के ब्लाउज के अंदर हाथ डालकर [illegible] दिया करते । [illegible] लिए लछमनिया को उनकी छेड़छाड़ बुरी नहीं लगती । दोनों [illegible] एक रिश्ता बन गया था । लोबीराम ने भी [illegible] लिया । फिर भी उनके हाथ, धीरे-धीरे ब्लाउज के अन्दर [illegible]

रहने लगे। अब वही अठन्नी की जगह रुपये जाने लगे, जिसकी वजह से लछमनिया का स्नेह भी बढ़ता गया। फिर कभी जब भाँग का गोला चढ़ जाता तो बिस्तर पर तड़पते हुए लोबीराम, लछमनिया से पैर दबाने के लिए कहते। लछमनिया से पैर दबाते हुए हाथों को, लोबीराम दिन पर दिन जरा ऊपर की तरफ खिसकाने के लिए कहते। इस तरह लछमनिया की भी हालत खराब होती। फिर एक दिन उसका भी सब्र टूट गया तब लोबीराम ने पैरों से उठाकर उसे सीने से लगा लिया। पहले दिन ही, जिस तरह ठुमककर लछमनिया घर के अन्दर आयी, उसकी वही अदा लोबीराम को भा गयी थी, उसी ठुमक से वह हमेशा-हमेशा के लिए चिपककर रह गए।

उधर लछमनिया को जवानी का तूफान उड़ाये लिये जा रहा था। अब अच्छे-बुरे की सुध न रही। लोबीराम को भी लगता, वह उनके हाथों से फिसल-फिसल जाती है। उसे रोकने की उन्होंने बड़ी कोशिशें की। अपना दिल उसके सामने खोलकर रख दिया। उसे खुश करने के लिए बिलायती बाडिश, पापलीन का साया, अच्छी-अच्छी धोतियाँ, बढ़िया किस्म के साबुन, इत्र, खुशबूदार बालों मे लगाने, सजने-सँवरने के प्रसाधन, बिन्दी, चूड़ियाँ दी, पैरो की पाजेब बनवा दिये। लछमनिया लोबीराम के यहाँ रानी बनकर रहने लगी। अब उसे घर का काम-काज भी नही करना पड़ता। लोबीराम ने घर के काम करने के लिए अलग से नौकर रख लिया। लछमनिया दिन-रात उनसे सिर्फ ऐश करती, हुक्म चलाया करती। दारुलशफ़ा के बरामदों, गैलरी के कोने-किनारों से, सर पर अच्छे किस्म की धोती का पल्ला खीचें हुए, माथे पर लाल रंग की गोल बिंदियाँ लगाकर, बिलायती बाडिश, पापलीन का साया पहनकर, इत्र खुशबू मे नहायी हुई लछमनिया निकला करती तो वहाँ रहने वालों के कलेजे पर साँप लोट जाता। असल में लछमनिया पटाका थी जिसे देखकर बड़ो-बड़ों का धीरज टूट जाता। अब उसे भी अपनी हैसियत का अहसास होने लगा जिसकी वजह से वह कुछ नखरे भी दिखाती। पहले तो लोग छेड़छाड़, बातचीत, फिकरेबाजी ही किया करते फिर उसके नखरे, खुशबू, फैशन और छातियों के उठाव ज्यादा तरसाने लगे तो सन्नाटे मे जब लछमनिया उधर से निकलती, मौका देखकर, कमरो में ।वाले, उसका हाथ पकड़कर अंदर खींच लेते।

इन सबने औरों को क्या मिलता, यह तो लछमनिया को नहीं मालूम था, लेकिन उसके अंदर जैसे आग की लपटें उठने लगतीं। इससे तो नमी लालबाग की गुमटी के नीचे वाली कोठरी थी जहाँ लफंगे, शोहदे, कभी-कभी छेड़-छाड़ करते। यहाँ दारुलशफ़ा में हर कमरे में उसे लफंगों, शोहदों को भुगतना पड़ता। वह दारुलशफ़ा के लम्बे-लम्बे बरामदों से ठुमकती हुई, पाजेबों की झनकार के बीच निकलती तो हर दरवाजे, हर खिड़की से उसे एक हाथ अंदर खींच लेने के लिए निकलता हुआ दिखायी देता। हजार-हजार बूढ़ी-अधेड़ निगाहें जैसे खाने के लिए, निगल जाने के लिए, उसके पीछे दौड़ने लगतीं।

अब लछमनिया को बाहर निकलने में डर लगता। उसको डर छेड़-छाड़, धींगामस्ती से नहीं लगता, इसकी तो वह आदी हो चुकी थी। डर तो उसे लगता आग की उन लपटों से जो उसके अन्दर, इस सबके बाद उठतीं। बूढ़े, अधेड़ शोहदे अपनी तो भूख मिटा लेते लेकिन उसे तड़पता हुआ छोड़ देते। लोबीराम से भी उसे बस, तड़पने के लिए, ऐसी ही आग की लपटें मिलतीं। फिर भी जहालत से बचने के लिए लछमनिया सज-धजकर बाहर न जाती। वहीं लोबीराम के पलंग पर पड़ रहती। दिन-रात, उन दिनों, वह किसी ऐसे मर्द का ख्वाब देखा करती जो अपनी मजबूत बाँहों में दबोचकर, उसके अन्दर से सारी आग की लपटों को निकाल दे, जो दारुलशफ़ा के बूढ़े-अधेड़ शोहदों ने उसके अंदर लगा रखी थी।

जून के महीने की तेरह तारीख थी, जिस दिन ऐसी हालत में लछमनिया लोबीराम के पलंग पर लेटी हुई थी। शाम के आठ-नौ बजे का वक्त होगा। लोबीराम किसी दावत से अभी तक लौटे नहीं थे। दावत में जाने से पहले अपने भाँग के गोले से थोड़ी-सी लछमनिया को भी खिलाकर, वह गये थे, जिसका पुर-जोर असर उसके ऊपर हो चुका था। एक तो बेहद गर्मी, पसीने से तर-बतर उसका बदन, दूसरे अन्दर से उठती हुई आग की लपटों से जल रहा था। घर में और कोई था नहीं। उधर तपन बढ़ती जा रही थी। ठंडाई-भाँग के नशे में उसका सर चक्कर खा रहा था। लाल-लाल आँखों में कुछ नशे, कुछ जवानी के गुलाबी डोरे जैसे हृदय से उठती हुई चीख को अपने अन्दर लपेट रहे थे। पाँव के तलवों से लेकर माथे की बिंदिया तक लछमनिया के अन्दर एक लम्बी

छोटी-छोटी चीटियाँ जैसी रेंग रही थीं। परेशान होकर लछमनिया
शनील का काला ब्लाउज, लाल रंग की धोती उतारकर पलंग के नी
डाल दी। फिर भी चैन नहीं आया तो लोबीराम की दी हुई विलाय
बाडिश निकालकर कमरे की छत की ओर उछाल दी, जो सामने के दरवा
के बीचोबीच जाकर गिरी। उसके बाद अन्दर का साया भी जब गड़त
रहा तो उसने खींचकर उसे भी फेंक दिया। अब लछमनिया के बदन प
कोई कपड़ा नहीं था। वह लोबीराम के पलंग पर पड़ी हुई तड़प रही थी
कभी डनलप का तकिया सीने में दबोचकर दबाती, कभी गावतकिया के
ऊपर पेट के बल लेटकर, आँखें बन्द किये पड़ी रहती।

बिरजू को दारुलशफ़ा आये हुए दस दिन के करीब हो चुके थे। पहले दिन, पहली बार से ही उसे, दारुलशफ़ा से मोहब्बत हो गयी। त्रिलोकनाथ रोड से घुसते ही बायीं तरफ के फाटक के अन्दर वह बी ब्लाक के, सड़क के किनारे वाले सिरे से सीधे जाकर बरामदे-बरामदे होता हुआ दाहिनी तरफ के फाटक के करीब बनी सीढ़ियों तक गया। फिर वापस कैन्टीन से लगी ऊपर जाने वाली सीढ़ियों से होता हुआ दूसरी, तीसरी मंजिलों को देखता रहा। बी ब्लाक तो नाम था लेकिन सचमुच अंग्रेजी के पहले एलफाबेट 'ए' की शक्ल जैसा बना था। एलफाबेट 'ए' की और दारुलशफ़ा के बी ब्लाक की शक्ल में फर्क पेट का था। एलफाबेट का पेट छोटा, हाथ बड़े होते, जबकि बी ब्लाक का पेट बड़ा था, हाथ छोटे थे। तीसरी मंजिल के बीच से सीधे, सीढ़ियों से उतरता हुआ, बिरजू 'ए' ब्लाक के पिछवाड़े, बी ब्लाक के सामने वाली सड़क पर आ गया। शाम के वक्त चारों ओर चहल-पहल थी। सामने से सड़क के किनारे-किनारे ठेलेवाले, खोमचेवाले खड़े थे। उनके ऊपर मक्खियों की तरह भिनभिनाते हुए नेतागण फल की चाट, फुलके, टिकिया, छोले-भटूरे पर हाथ साफ कर रहे थे। बिरजू ने देखा, इस सड़क का एक सिरा तो विधानभवन के सामने जाकर निकलता लेकिन दूसरा सिरा सी ब्लाक की चारदीवारी को छूता हुआ लालबाग चौराहे की तरफ जाता था।

काफी देर तक बिरजू यहीं बी ब्लाक की सीढ़ियों पर बैठा हुआ माहौल

को समझने की कोशिश करता रहा। असल में तीन मंजिल चढने-उतरने, बी ब्लाक के पेट और दोनों हाथो को अपने पैरो से नापने मे उसका दम निकलने लगा। फिर अभी तो इससे भी बड़ी १९८ कमरों वाली, ए ब्लाक नाम की, लेकिन अंग्रेजी एलफाबेट 'डी' की शक्ल की तरह की इमारत सामने थी। उसने ए-सी ब्लाक के बीच की जगह से एक पतली-सी गली, इमारत की गोलाई को छूकर जाती हुई देखी। उसी गली के कोने पर, छप्पर के घेरे में गुमटीदार ठेला खड़ा था। बिरजू की चढ़ाई के बाद हँफनी अब तक कम हो गयी। उसे काफी जोर से सिगरेट की तलब महसूस हुई। बी ब्लाक की सीढियों से उठकर वह लालबाग की तरफ सिगरेट लेने के लिए जाने लगा, तभी उसने देखा, गली के कोने पर गुमटीदार ठेले से लोगबाग सिगरेट लेकर पी रहे थे।

वहाँ पहुँचते ही सिगरेट के धुएँ से गांजा-चरस की बदबू निकलकर उसके दिमाग मे बड़ी तेजी से घुसी। बिरजू ने चैन की साँस ली। एक तो सिगरेट लेने आगे नही जाना होगा, दूसरे सिगरेट अपनी पसन्द की मिलेगी। और फिर साफ-सुथरे माहौल में जब तक कुछ गंदगी न हो, काम करने का उसका मूड नही बनता। बी ब्लाक के तीन मंजिलो तक फैले हुए साफ-सुथरे लम्बे पेट, छोटे हाथो वाले बरामदे कुछ उसकी पकड़ में आये नही। लोबीराम छाप सिगरेटों से अपनी पहली भेंट में बिरजू समझ गया था, यही उसका ठिकाना होगा। चार आने की एक सिगरेट ली फिर वह सामने इमली के पेड़ के नीचे बैठ गया। सिगरेट का धुआँ धीरे-धीरे उसकी तीन मंजिल वाली हँफनी को मारकर नाक, कान, आँख के कनपटी तक दौड़ रहा था। वही नीम के पेड़ के नीचे से, बिरजू ने देखा गुमटी वाले ठेले, छप्पर के घेरे के ऊपर ए ब्लाक के दाहिनी गोलाईदार कोने पर किसी कमरे की खिड़की खुली हुई थी। उस खिड़की पर खड़ी हुई लछमनिया झाँक रही थी। बस एक पल को उससे आँखें मिली, बिरजू की रग-रग झनझना उठी। बम्बई से आने के बाद पहली बार किसी लड़की को देखकर उसके अन्दर कुछ हुआ।

लोबीराम छाप सिगरेट खत्म हो चुकी थी, साथ में सामने वाली खिड़की से लछमनिया भी जा चुकी थी। बिरजू वहाँ से उठकर पतले गलिहारे के कोने-कोने होता हुआ पीछे की ओर थोड़ी दूर जाकर वापस लौट आया। फिर सामने की सड़क से ए ब्लाक के अन्दर दाखिल हुआ। दाहिनी तरफ ऊपर को जाने की सीढ़ियाँ थी, बायी तरफ दारुलशफ़ा का

दारुलशफ़ा के मोड़, किनारों, कमरों में रहने वाले ज्यादा से ज्यादा लोगों के बारे में जानकारी हासिल करने की कोशिश की। धीरे-धीरे, अब तक वह यहाँ के रसूक, तौर-तरीके सभी कुछ जान-सीख गया था। जान-पहचान यहाँ करने के लिए सिर्फ लोगों के नाम मालूम होने चाहिए। कमरों में बैठने के लिए सिर्फ कोई काम चाहिए। नाम तो नीचे टँगे हुए बोर्ड से देख लेता या फिर किसी से पहचान करने के लिए पूछ लेता, और काम वह अपने दिमाग से पैदा कर लेता। लेकिन समझदारी से ज्यादा किसी के पूछने-ताछने पर ही, वह काम बताता, वर्ना चुपचाप दारुलशफ़ा में घूमता रहता, नेताओं के पीछे लगी हुई भीड़ में टँगा रहता। बड़ी तादाद में, हर जगह पाये जाने वाले चमचे, चिलगोजे, चकरवन्ध को तो वह ऐसे पहचानता जैसे पुरानी मुलाकात हो। अब तो वह विल्सफिल्टर, कैप्सटन वगैरा की खाली डिब्बियों में लोबीराम छाप सिगरेट भी रखने लगा था। हर किसी को चाय, हल्का-फुल्का नाश्ता, पान वगैरह पिलाने-खिलाने को तैयार रहता। जरा भी मौका मिलने पर जेब से डिबिया निकालकर सिगरेट पेश कर देता।

इन तमाम चक्करबाजियों के बाद, बिरजू को अपने ऊपर बड़ा इत-मिनान होता जा रहा था। अभ्यास के लिए उसने देखा दारुलशफ़ा के एक सिरे से दूसरे सिरे तक आँख बंद कर वह जा सकता है। इसकी खास वजह थी, सबेरे से शाम के अँधेरे तक तो वह दारुलशफ़ा मे घूमता रहता, फिर रात को दिन भर की बातें, नक्शे विठाकर बनाता-मिटाता रहता। असल में बिरजू ने तय कर लिया था, चोरियाँ अब वह दारुलशफा मे ही करेगा। लखनऊ पश्चिम के राजाबाजार, आगामीर ड्योढी, चौक सर्राफ की गलियाँ उसने बस एक छोटी-सी चोरी के बाद छोड़ दी थी क्योंकि गलियों, मकानो का भूगोल समझने के लिए वक्त चाहिए था। फिर एक-दो साथी होते तो अच्छी तरह काम चलता। अपनी पेशेवर बुद्धि से उसने हिसाब लगाया था, इस इलाके की बेशुमार दौलत बटोरने मे अकेले सब कुछ करने के लिए, कम से कम छः-सात महीने चाहिए। इतना वक्त उसके पास कहाँ था। ना ही इतनी दौलत अभी उसे चाहिए थी। उधर बम्बई में चमकी आज भी उसका इंतजार कर रही होगी। बिरजू ने तय किया था चमकी को पाने के बाद, अपने बम्बई जेल में साथ रहे हुए साथियों को लेकर फिर कभी आयेगा, तब निपटेगा, बख्तियार खिलजी

के जमाने से बस हुए, इन हिन्दुस्तानी यहूदियों से जो पिछली कई शताब्दियो से दूर-दूर तक गाँव-गाँव में भोले-भाले किसानों, मजदूरों को लूटते आ रहे थे।

बिरजू को लखनऊ की सड़कों, गलियों, मुहल्लों की दौलत की पकड़ पाने मे तीन महीने से ऊपर लग गया था। भेड़ीमंडी में उसकी खोली की सफ़ेद दीवार पर कोयले से खींची हुई लकीरें, दिन पर दिन बढ़ती जा रही थी। इसके सब्र का घड़ा भर चुका था, उसे जल्दी थी। लेकिन जल्दी में अब वह कोई काम नही करना चाहता था क्योंकि पकड़े जाने से जेल जाना होगा, चमकी से और दूर होकर तब तक शायद दीवार पर काली लकीरें इतनी हो जायें, वापस बम्बई जाना बेकार हो। इसीलिए अपनी दारुलशफ़ा की खोज के बाद उसने इधर-उधर धक्के खाना छोड़-सा दिया था। बस कभी-कभी हजरतगंज तक चक्कर लगा लेता। बाकी सारा वक्त, अपनी जिन्दगी का हर लमहा वह दारुलशफ़ा में, या फिर भेड़ीमंडी की खोली मे दारुलशफ़ा के साथ गुजारता।

लखनऊ आते ही जिस बात से पहले बिरजू घबड़ाता था, वह थी यहाँ के माहौल, यहाँ की हवा में चोरी की बू का ना होना। लेकिन दारुलशफा की खोज के बाद, उसकी यह मुसीबत भी दूर हो गयी थी। दारुलशफ़ा मे उसने देख लिया था, बड़ी-बड़ी चोरियाँ होती हैं। यहाँ हर प्रकार के सफ़ेदपोश चोर सधे-सधाये खिलाड़ियों की तरह, चमचों, चिलगोजों और चकरबन्धो, दल्लालों, बिचकुलियों के जरिये, बेफ़िक्री से दौलत बटोरने मे लगे थे। बस कमी अगर कही थी तो उसके जैसे एक चोर की, जो इनकी लूट से, अपना हिस्सा ले सके।

अपने अभियान के आखिरी दौर में, बिरजू ने बी ब्लाक को छोड दिया। उस काम के लिए ए ब्लाक बी ब्लाक से ज्यादा उपयुक्त था। बी ब्लाक उधर बाहर की तरफ था, जहाँ से भागने के लिए उसे बीच की सड़क पार करनी पड़ती। फिर बाहर-बाहर ए ब्लाक की गोलाई मे भागने पर एक तो भीड़-भाड़ मे दौड़ाए जाने का खतरा था, दूसरे दाहिनी ओर की पतली गली, आगे जाकर इतनी सँकरी हो जाती, जहाँ अगर उस तरफ से एक आदमी भी आ जाये तो भागना मुश्किल होता। उधर बायी ओर पीछे से भागकर ताड़ीखाने वाली सड़क पर पहुँचने के लिए, रास्ते मे दारुलशफ़ा के कर्मचारियो, चौकीदार, माली, ड्राइवर इत्यादि के क्वार्टर्स पड़ते जिसके,

वजह से कहीं भी घिर जाने का खतरा था। जबकि ए ब्लाक बड़े कायदे में, उसके मकसद के लिए, पूरी तरह ठीक था। अंदर ही अंदर भागने के कई रास्ते थे। मुसीबत आने पर वहाँ अंदर ही छुपने की कई जगहें उसने ढूँढ निकाली थीं। ए ब्लाक से भागने के लिए उसे बाहर सड़क पर आने की जरूरत नहीं थी। पीछे के फाटक या फिर बायीं तरफ चार कदम पर ताड़ीखाने वाली सड़क थी। उसके बाद तो बस लखनऊ की गहराइयों में बीच की गलियों से वह भेड़ीमंडी पहुँच सकता।

अब मौके की फिराक में बिरजू ने लोगों का पीछा करना शुरू किया। साथ में गतिविधियों के सिर्फ ए ब्लाक तक सीमित हो जाने से, उसका काम आसान हो गया। ए ब्लाक के भूगोल को खूब बारीकी से समझने के बाद, उसने हर कमरे में बंद होने वाले तालों को देखना-समझना शुरू कर दिया। ताले तो उसके लिए खिलौना थे, जिन्हें बचपन से ही उसने पकड़ना, खोलना सीख लिया था। लेकिन बिना किसी आवाज के, स्वाभाविक तरीके से, ताली डालकर ताला खोलने के लिए उसे दो-तीन मास्टर कीज बनानी थीं। इसके लिए उसे कोई बड़ी तैयारी नहीं करनी थी। उसे तो यह देखना था, कमरों में ताला किस प्रकार का बंद किया जाता है। दूसरी बात उसे यह देखनी थी, कमरों में क्या रोजाना ताला एक ही प्रकार का बंद किया जाता या दिन के साथ ताले भी बदल दिये जाते। कई दिनों की मेहनत के बाद बिरजू ने करीब-करीब सभी कमरों में बंद किये जाने वाले तालों की पूरी जानकारी ले ली थी। उसने यह भी देख लिया ६५ फीसदी कमरों में रोजाना एक ही तरह का ताला बंद किया जाता। लीवर और खटको के काम्बीनेशन बनाकर उसने अपनी भेड़ीमंडी की खोली में मास्टर तालियाँ तैयार कीं। एक बड़े काँटेदार, एक छोटे काँटेदार, एक छोटी चिपटी सिरे पर खटका लगी, एक बड़ी चिपटी सिरे पर खटका लगी हुई। इन तालियो से उसने पहले तो अपनी खोली में सोलह प्रकार के तालों को आसानी से खोलने-बंद करने का अभ्यास किया। फिर उसके बाद, नमूने के तौर पर सन्नाटा देखकर, ए ब्लाक के करीब तीस-चालीस कमरों में लगे हुए तालों को खोलकर बंद करने का प्रयोग किया। उसकी बनायी हुई तालियाँ लाजवाब थीं। उनसे सभी ताले ऐसे खुलते जैसे उन तालों की ही चाबियाँ हों।

बिरजू ने शुरूआत तीसरी मंजिल से की। पहले दिन उसने चार

कमरो के ताले खोले, एक कमरा तो बिलकुल खाली था। सिवा चारपाई बर्तन, गंदे-बदबूदार बिस्तर के अलावा वहाँ चार पैसे भी उसे न मिले दूसरे कमरे से भी पैसे तो कुछ न मिले, लेकिन दो घड़ियाँ, एक छोटा ट्रांजिस्टर उसके हाथ लगा। तीसरे कमरे से करीब चार सौ रुपये, दो से की अँगूठियाँ, एक जड़ाऊँ हार उसे मिला। चौथा कमरा, उसने दूस मंजिल पर चुना था, वहाँ का माहौल देखकर बिरजू डर गया। वह कम करीब-करीब खाली था। घर बनाकर रहने जैसा वहाँ कुछ भी नहीं थ तीन-चार बेंत की कुर्सियाँ, एक तख्त बाहर के कमरे मे, फिर अंदर के क मे एक तख्त और एक कुर्सी थी। अदर के कमरे मे तख्त के नीचे, उसने झाँककर देखा तो कतार मे रखे हुए दर्जनों सूटकेस दिखाई दिये। प तो उसने सोचा, उसके हाथों कोई खजाना लग गया। लेकिन अब उसने स् केस निकालकर खोलना शुरू किया तो उनमे एक मे बंदूक की गोलियाँ निक और बाकी मे पालीथीन के थैलों मे भरी हुई अफीम रखी थी। बि फौरन बाहर निकल आया। कुछ डरा हुआ, जल्दी-जल्दी उसने अंदर कमरे का फिर बाहर के खास दरवाजे में ताला लगाया और क दौड़कर पीछे की सीढ़ियों से नीचे की ओर उतर गया। दूसरे और ती दिन फिर बिरजू ने तीसरी मंजिल के दाहिनी तरफ के कोने पर कमरा, दूसरी मंजिल पर पीछे की तरफ का एक कमरा खोला। दोनों कमरो से सोने के बिस्कुट, बिलायती सेंट, फैशन-शृंगार की चो महँगे कपड़ो के थान, घड़ियाँ, टेपरिकार्डर, सिगरेटकेस, लाइटर मि जिन्हे वह अपने साथ लाये एअर बैग मे भरकर, चुपचाप पीछे के रास्ते मेडूखाँ की सराय के भीतर से निकल गया। उस रात भेडीमंडी खोली मे बिरजू ने हिसाब लगाया तो तीन दिन की खतरनाक किस्म लूट कुल मिलाकर सात-आठ हजार रुपये तक की हो पायी थी। अब वह लखनऊ मे कुल मिलाकर सात चोरियाँ कर चुका था। अपने नि के अनुसार अब उसे शहर छोड़कर चला जाना चाहिए था। एक शहर उसका चार चोरियों का हिसाब-अभी तक था। लेकिन इस बार, बि का इरादा कुछ और था। वह अपनी जरूरत के साठ हजार रुपये ज करके बम्बई जाना चाहता था। समय तेजी से भाग रहा था, बिरजू जल्दी थी अपनी महबूबा के पास पहुँचने की। नये शहर मे, फिर शुरु सारा काम जमाना पड़ता। फिर हर जगह इतनी आसानी से, दौ

बटोरना आसान नहीं था। वह बात बिरजू अच्छी तरह जानता था। अपने अन्दर से निकलती आवाज से उसे अहसास हो रहा था, अब यहीं लखनऊ में, इसी दारुलशफा में, उसकी तमन्ना पूरी होगी।

तीन दिन तक लगातार दस कमरों में चोरियाँ करने के बाद बिरजू ने सात-आठ हजार रुपये की कीमत की जो दौलत जमा की थी, उसके लिए बहुत कम थी। यह तो महज इत्तफाक था, जो तीसरे दिन कहीं जाकर सोने के बिस्कुट मिल गये, वर्ना कुल दौलत ढाई-तीन हजार की होती। बिरजू को पता था, इस तरह कुछ नहीं होगा। लोग अब सतर्क रहने लगे थे। कभी-कभी पूछताछ हो जाती। इतने खतरे के बाद, इस तरह उसे कम से कम अभी तीस-चालीस कमरे खोलकर घुसना होगा, तब कहीं जाकर उसका काम बनेगा। वह यह भी जानता था, अब कुछ दिनों तक, कम से कम एक महीने तक रुकना होगा। लेकिन अगली चोरी के लिए एक महीना रुकना उसके लिए संभव नहीं था।

सोने के बिस्कुट वाली चोरी के बाद फिर तीन दिन तक, बिरजू दारुलशफा नहीं गया। उसके बाद, उसने अपना तरीका और समय दोनों बदल दिया। अब वह एकाएक कमरों के ताले खोलकर नहीं दाखिल होता। बस चुपचाप दूसरी-तीसरी मंजिलों पर घूमता रहता। कभी-कभी कुछ पुराने दोस्तों के साथ, वहाँ कमरों के अन्दर बैठा रहता या फिर तीसरी मंजिल की मुँडेर से, दूसरी मंजिल के कमरों की ताक-झाँक करता। उसकी निगाह हमेशा ऐसे कमरों की तलाश में रहती, जहाँ से ताला बंद करके निकलते हुए आदमी को वह पहचान सके। मकसद उसका सिर्फ यह जानने का होता कि कमरे में ताला बंद करके जाने वाला अगर उस कमरे मे रहने वाला खुद ही है तो वह कुछ देर बाद लौटेगा। लेकिन अगर ताला बंद करने वाला कोई दूसरा आदमी है, और अगर वह ए ब्लाक में बने हुए दफ्तर मे कमरे की चाभी नहीं जमा करता तो इसका मतलब यह भी हो सकता है, उस कमरे में बंद ताले की अतिरिक्त चाभी है। ऐसे कमरे में जाने में खतरा था। जो कहीं अतिरिक्त चाभी वाला आदमी आ जाये, तो वह दरवाजा खोलकर भाग भी नहीं सकता। इसलिए कमरों में ताला बंद करके निकलते हुए लोगों का वह पीछा करता। जहाँ तक भी यह लोग पैदल जाते, थोड़े फासले पर, बीच-बीच भाड़ में छुपता हुआ, बिरजू उनके पीछे-पीछे चलता रहता। दफ्तर में जब इन लोगों को चाभी देनी होती तो उनके पीछे, बिलकुल साये

की तरह वह लगा रहता। लिफ्ट के पास या फिर नामवाले बोर्डों के पास खड़ा होकर जब तक वह अपनी आँखों से चाभी दफ्तर वाले बाबू को लेते हुए और फिर, चाभी देने वाले से कमरे का नम्बर कागज में लिखकर, लिखे हुए कागज में चाभी लपेटकर, बाबू को ड्राअर में रखते हुए खुद न देख लेता, बिरजू वहाँ से नहीं टलता। दफ्तर में कागज के पर्चे में कमरे का नम्बर लिखवाकर चाभी जमा करवाने वाले के साथ किसी दूसरे आदमी के आकर चाभी लेने का अंदेशा भी होता। वह दफ्तर से उस कमरे तक के फासले को, चाभी लेने मे, कमरे के मोड़ मे दिखने वाली गैलरी तक पहुँचने के समय के बीच के अंतर का अंदाज लगा लेता। ऐसे मामलों में यह अंदाज दस-पंद्रह मिनट के बीच का होता जिसके अन्दर ही उसे सारा काम खत्म करना होता। जबकि खुद ताला बंद करके चाभी दफ्तर में न देने वालो के लिए वह कम से कम चालीस मिनट का समय रखता। वह भी तब जब उनके पीछे जाकर वह उन्हें दारुलशफ़ा के बाहर तक पैदल या रिक्शे, मोटरों से चले जाते हुए देख लेता। इतनी सावधानी के बाद बिरजू ने तीन-तीन दिन के अंतर मे एक-एक कमरे पहली-दूसरी और तीसरी मंजिल पर खोले जिससे उसे दस हजार रुपये नगदी और सामान मिलाकर मिले।

इसी तरह से करीब पंद्रह दिन की मेहनत से उसने अठारह हजार रुपये नगदी, सामान मिलाकर बटोर लिये। तभी एक दिन उसे एक और ब्रेक मिला। आखिरी चोरी के बाद दो दिन तक अब उसे दारुलशफ़ा नहीं जाना था इसलिए वह हजरतगंज की सड़कों पर बिना किसी मकसद के घूम रहा था। ऐसे दिनो में वह अक्सर कॉफी-हाउस में घंटों बैठा रहता। बीच-बीच मे कॉफ़ी, दोसा वगैरह मँगवा लिया करता। अब तक उसे दारुलशफा और कॉफी-हाउस के बीच के रिश्ते मालूम हो चुके थे। कॉफी-हाउस की इन नेताओ की भीड में, बिना जान-पहचान के, वह कभी घुसकर बैठ जाता और उन लोगों की गर्मागर्म बातचीत सुनता रहता। वहाँ तो मुफ्तखोरों की वैसे भी भीड़ लगी रहती, उससे भला कौन पूछता ? तीसरे दिन कॉफी-हाउस में वह एक दिन ऐसी टेबल पर फँस गया जहाँ कुछ देर बैठने के बाद, दारुलशफा के उसी कमरे का मालिक भी आ गया, जिसके यहाँ उसने चोरी की थी। वही उसके सामने, दारुलशफ़ा में हुई चोरी की चर्चा हो रही थी। वह नेता गरिया रहा था, दारुलशफ़ा के दफ्तर वालों को। उसकी राय में वह भरोसे की चोरी थी जो दफ्तर

था। आठ-नौ के बीच उसे गुमटीवाले ठेले के ऊपर वाली फ्लैट में जहाँ खिड़की से उसने पहले दिन लछमनिया को झाँकते हुए देखा था, घुसना था। पिछले पन्द्रह दिनों के दौरान और उससे पहले भी बिरजू बराबर लोबीराम के फ्लैट के ऊपर नजर रखे हुए था। वह अक्सर गुमटी से चरस की सिगरेट लेकर, वहीं नीम के पेड़ के नीचे बैठकर सिगरेट पीता हुआ, सामने वाली खिड़की के अन्दर का हाल लेने की कोशिश किया करता। उसने दफ्तर के सामने लगे हुए बोर्डों में से उस कमरे के मालिक का नाम पता लगा लिया। फिर उसे यह भी मालूम हो गया था, गुमटी में बिकने वाली सिगरेट को क्यों लोबीराम छाप सिगरेट कहते हैं। बी ब्लाक की कैन्टीन, ठेलेवाली गुमटी, मेडूखाँ की सराय वाले अड्डे, दारुल-शफ़ा, कॉफी-हाऊस के अपने दोस्तों से उसने गुमटी के ऊपर खिड़की से लगे हुए कमरे के मालिक लोबीराम और उनके तिजोरी प्रेम की बाबत जान लिया था। कुछ लोगों ने लछमनिया के भी किस्से उसे बताने चाहे थे लेकिन चमकी के प्रति वफादार रहने के अपने संकल्प के कारण, उस तरफ उसने ध्यान ही नहीं दिया। उसका ध्यान तो उस कमरे की दीवाल मे लगी तिजोरी पर था, जिसमें उसने सुन रखा था, अपार दौलत का भंडार रहता। पूरे दारुलशफा मे, बी ब्लाक के ६६ और ए.ब्लाक के १६६ कमरों में से सिर्फ लोबीराम का ही एक कमरा ऐसा था, जहाँ तिजोरी थी। जाहिर था, जहाँ तिजोरी होगी, वहाँ माल भी होगा। लेकिन कुछ दिक्कतें थीं। एक तो भंगी चौधरी, लोबीराम का नौकर रंगी और कभी-कभी लालबाग बीड़ीवाला, उस कमरे से लगी हुई खिड़की के नीचे से, गुमटीवाले ठेले या फिर उससे लगे हुए छप्पर के घेरे मे जमे रहते। दूसरे उस कमरे में बाहर से ताला बंद नहीं होता बल्कि गुमटी पर रहने वाले लोग दिन-भर वहाँ आते-जाते रहते। तीसरे करीब-करीब हमेशा ही, वहाँ सामने की खिड़की से झाँकने वाली लडकी रहती। इन्ही कारणों से बिरजू अभी तक उस कमरे की तिजोरी पर हाथ नहीं साफ कर पाया।

इधर कई दिनों पहले, उसे पता लग गया, भंगी चौधरी बीमार होकर अस्पताल में भर्ती था। [illegible]

बढ़ाकर, छप्पर के घेरे में रखकर अपनी लालबाग वाली दुकान पर चला जाता। खिड़की से झांकने वाली लड़की तो अंदर ही रहती, लेकिन अब बाहर ताला लगा हुआ दिखता। कभी-कभी उसने देखा था, ताला लगा रहने पर भी, बगल का दरवाजा खोलकर लछमनिया थोड़ी देर के लिए या तो खिड़की के नीचे, गुमटी पर या फिर लालबाग की दुकान पर अपने बाप से मिलने जाया करती। बिरजू को उस कमरे मे तभी घुसना था जब बाहर ताला लगा हुआ हो, लेकिन अगर लछमनिया अन्दर होगी तब क्या करेगा, यह उसने अभी तक नही सोचा था।

बिरजू ने, बगल की बैंक से सौ रुपये का छुट्टा लेकर बैरा को कॉफ़ी-हाउस के अन्दर जाते हुए देखा। इसी के साथ, बाकी बची सिगरेट, वहीं फेंककर वह बरामदे के आखिरी कोने पर जाकर खड़ा हो गया। वहाँ से वापस कॉफ़ी-हाउस के बाहर निकलते हुए लोगों को देखते रहने से पहले उसने हजरतगंज के चौराहे के चारों तरफ निगाह दौड़ायी। वह कॉफ़ी-हाउस की तरफ मुंह करके खड़ा होने के लिए, घूमकर खड़ा ही होने वाला था, तभी चौराहे पर सामने जाने के लिए, लालबत्ती होने के कारण, एक जीप एकदम से ब्रेक लगाकर रुक गयी। ब्रेक लगाने की आवाज से जो बिरजू का ध्यान ऊपर गया तो सीधे उसकी नजर, जीप की अगली सीट पर बैठे हुए लोबीराम पर जा पड़ी। उस जीप मे कई लोग लदे हुए थे। लोबीराम को देखकर, बिरजू, जो मुड़ने के लिए आधा घूम चुका था, इधर ही देखते हुए रुक गया। लोबीराम को अब तक वह पहचान चुका था। इस समय वह सिर्फ यह देखना चाहता था, जीप किधर जा रही थी। अगर जीप चौराहे से दाहिनी तरफ मुड़कर दारुलशफा की ओर जाती तो, पचास फीसदी सम्भावना इस बात की थी, उसे आज आठ-नौ बजे के बीच, लोबीराम के कमरे में घुसने का इरादा छोड़ना पड़ता। तभी हरी बत्ती हो गयी और उसने देखा, जीप सीधे होकर कालिदास मार्ग की ओर चली गयी। इसी बीच, काला ब्रीफकेस लिये हुए, मोटा आदमी, कॉफ़ी-हाउस से निकलकर, सामने से उसके करीब आ गया था। बिरजू ने सोचा, इस जीप के चक्कर मे अगर कहीं मोटा आदमी, कॉफ़ी-हाउस से निकलकर, उधर बायीं तरफ से निकल जाता, तो इस बार वह चूक गया था। पलक झपकते ही, बिरजू नीचे फुटपाथ पर उतरकर, हनुमान मंदिर की ओर चल दिया। मंदिर के सामने पहुँचकर वह फिर रुक गया। वहाँ-

से पीछे मुड़कर उसने देखा वह मोटा आदमी, दो अन्य लोगों के साथ हजरतगंज की सड़क पार कर रहा था।

मोटा आदमी, हाथों में ब्रीफकेस मजबूती से पकड़े हुए, अपने साथियों से धीरे-धीरे बात करता हुआ, सड़क पार करने के बाद, हजरतगंज के सामने वाले फुटपाथ पर पहुँच गया। वहाँ से फिर वह दाहिनी ओर मुड़ा। थोड़ी दूर जाकर वह एक मिठाई की दुकान में घुस गया। उसके दो साथी, वहीं, मिठाई की दुकान के बाहर, फुटपाथ के ऊपर खड़े होकर बातचीत करने लगे।

"अमा यार ! सुनते हैं दो-चार दिन बाद राष्ट्रपति शासन खत्म होने वाला है।"

"हाँ ! हाँ ! यह मोटा भी, उसी चक्कर में आया है।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब तो साफ है, यह मोटा बड़ा दूरदर्शी है। मिठाई की दुकान से यह चार डिब्बे बँधवायेगा। फिर दारुलशफा जाकर एक डिब्बा तो देगा कृष्णबल्लभ यादव को, एक डिब्बा लोखीराम को, एक कालीशंकर को और एक दरोगा द्विवेदी को।"

"साला यह खुद भी तो डिब्बा है।"

"सो तो है, लेकिन घुटा हुआ है।"

"अमा, अभी किसका नाम लिया था तुमने, दरोगा...!"

"हाँ हाँ, दरोगा द्विवेदी।"

"यह कौन हैं ?"

"वही रामप्रताप द्विवेदी ! रंगीनराय के खासुलखास !"

"तो उनको दरोगा द्विवेदी कहते हैं, कोई खास वजह।"

"तुम भी साले, बिलकुल कुल्हड़ हो। बैठते हो कॉफी-हाउस में, और दरोगा द्विवेदी को नहीं जानते ?"

"कुल्हड़ होगे तुम, बके जा रहे हो, पूछने पर बताते भी नहीं।"

अब पहले आदमी को ज्ञान बघारने का जो मौका मिला, तो मुँह में दबाई हुई, मैनपुरी का पीक, फुटपाथ पर थूकते हुए वह बोला, "बड़ी पुरानी बात है, रामप्रताप द्विवेदी अपने बड़े कांस्टेबल भाई भरतप्रताप द्विवेदी की जब तरक्की दरोगा की पोस्ट पर, भरपूर कोशिशों के बाद भी न करवा पाये तो वह पार्टी छोड़कर किसानदल में शामिल हो गये। कुछ

इन्हीं दिनों बाद, किसानदल की साझे की सरकार बनी तो रामप्रताप द्विवेदी के भाई भरतप्रताप द्विवेदी दरोगा बना दिये गये। भाई के दरोगा बनते ही, अपने रामप्रताप द्विवेदी अपनी पुरानी पार्टी में लौटकर आ गये।"

दोनों इस बात पर तालियाँ पीटकर ही-ही करके हँसने लगे। तभी मिठाई की दुकान से मोटा आदमी एक हाथ में ब्रीफकेस पकड़े हुए, दूसरे हाथ से मिठाई के दो डिब्बे सीने से सटाये हुए बाहर आ गया। कुछ दूर और मोटे आदमी के साथ, कॉफी-हाउस के दोनों मुफ्तखोर चले। फिर फुटपाथ के कोने पर पहुँचकर दोनों वेनबोज में घुस गये और मोटा आदमी पैदल ही दारुलशफ़ा की ओर चल दिया।

मोटा आदमी त्रिलोकनाथ रोड की तरफ से दारुलशफ़ा में घुसा। सड़क पार करके बी ब्लाक के बीच से वह ए ब्लाक के सामने पहुँच गया। ए ब्लाक के दफ्तर में जाकर उसने वहाँ बैठे आदमियों से कुछ बातचीत की। फिर वहाँ से किसी कमरे की चाभी लेकर वह सीढ़ियों से दूसरी मंजिल पर गया। दूसरी मंजिल के कमरे को, नीचे दफ्तर से ली हुई चाभी से खोलकर वह अन्दर गया। अन्दर जाकर उसने दरवाजा बन्द कर लिया। करीब दस मिनट बाद जब मोटा आदमी कमरे से निकला तो, उसके हाथ खाली थे। उसने कमरे का दरवाजा बंद करके कुण्डी लगायी, फिर कुण्डी में ताला बंद किया और सीटी बजाता हुआ, खेल में ताली को बार-बार उछालकर हाथों में गोचता हुआ, वह नीचे की ओर चल दिया। नीचे पहुँचकर, उसने चाभी वापस दफ्तर में बैठे हुए बाबू को देकर, कुछ कहा। दफ्तर के बाबू ने कागज की पर्ची में, दुबारा कमरे का नम्बर लिखकर उसमें चाभी लपेट दी। उसके बाद मोटा आदमी ए ब्लाक की प्रवेश गैलरी से बाहर निकल आया। वहाँ खड़े हुए रिक्शेवालों में से एक रिक्शेवाला तब तक उसके पास आ गया था। मोटा आदमी रिक्शे में बैठकर लालबाग की तरफ चल दिया।

बिरजू मोटे आदमी से कुछ फासले पर धीरे-धीरे चल रहा था। मंदिर से जब उसने मोटे आदमी को पान की दुकान पर पान खाने के बाद, फुटपाथ के दाहिनी ओर मुड़कर चलते हुए देखा था तो कुछ देर के लिए वह निराश हो गया। कॉफी-हाउस में पहली बार उसे देखकर उसने अंदाज लगाया, शायद मोटा आदमी दारुलशफ़ा जाये। यही सोचकर वह पीछे लग गया था। उसके दिमाग में, तब तक कोई योजना नहीं थी।

मास्टर कीज पड़ी थी। लेकिन यह इत्तफाक जरूर था, इन चाभियों के इस्तेमाल की जरूरत, इस समय पड़ी थी। वैसे तो ग्यारह बजे के करीब भेडीमंडी से निकलते समय, उसने चाभियाँ वगैरह जेब में रख ली थीं क्योंकि शाम को आठ-नौ बजे के बीच उसे लोबीराम के कमरे में घुसना था। कॉफ़ी-हाउस से उठकर वह, मोटे आदमी के पीछे, बिना किसी योजना के पड़ गया था। यह भी महज इत्तफाक था, मोटा आदमी कॉफी-हाउस से उठकर दारुलशफ़ा आया था। अगर वह मोटा आदमी कॉफी-हाउस से उठकर, उस समय दारुलशफा न जाकर कहीं और चला जाता, या अगर दारुलशफा जाकर भी वह इतने कम समय के लिए कमरे में नहीं जाता और फिर कमरे से निकलकर अगर वह चाभी वापस ए ब्लाक के दफ्तर में जमा नहीं करता तो कमरे में लगे ताले की दो तालियाँ होंगी, यह समझकर बिरजू शायद अगला कदम नहीं उठाता। लेकिन इतने सारे इत्तफाकी हालातों का बराबर होना, पेशेवर बिरजू के लिए, अगला कदम उठाने का फैसला करने में काफी मदद कर रहा था।

अब तक के इत्तफाकी हालातों के विवेचन से बिरजू ने फैसला किया, यह मौका उसी के लिए कॉफ़ी-हाउस में तभी पैदा हो गया था, जब उसने मोटे आदमी को ब्रीफकेस से नोटों की गड्डी से सौ का नोट निकालकर देते हुए देखा था। अब उसके पास पूरी सुरक्षा वाले, सिर्फ पाँच मिनट बचे थे। सामने की मुँडेर से अलग होकर, स्वाभाविक रूप में धीरे-धीरे चलते हुए वह उस कमरे के सामने पहुँच गया। ताला देखकर ही वह समझ गया कौन-सी चाभी लगेगी। उसने जेब से चिपटी वाली चाभी निकालकर ताले में लगायी, फिर जरा-सा जोर लगाकर चाभी को दाहिनी तरफ घुमाया तो खट की आवाज करके ताला खुल गया। ताला निकालकर उसने कुण्डी खींची और दरवाजे को धक्का देकर अन्दर चला गया। अंदर से उसने दरवाजा बन्द कर लिया। अंदर बिरजू को सिर्फ तीन मिनट लगे। बाहर जब वह निकला तो उसके हाथ में वही काला ब्रीफकेस था।

तेरह तारीख थी, जून का महीना, शाम के आठ बजे थे। बिरजू उस समय भेडीमंडी की खोली से निकल चुका था। काला ब्रीफकेस, उसने अपनी खोली में रख दिया था। मिठाई के चार डिब्बों में से दो डिब्बे तो ब्रीफकेस के अंदर बन्द थे। बाहर दो डिब्बे जो उस कमरे से, ब्रीफकेस उठाते समय उसे दिखे थे, उन्हें भी खोलकर देख लेना उसने ठीक समझा

मुड़ा हुआ तार, एक पेनटार्च, एक हथेलियों इतना लम्बा पेचकस ले लिया। यह सामान लोबीराम की तिजोरी खोलने के लिए, जरूरी समझकर उसने रख लिया था। गुमटीवाला ठेला दारुलशफ़ा में अब नहीं होगा, यह सोचकर उसने एक चीज और ली, वह थी लोबीराम छाप सिगरेट की डिब्बी।

विरजू का जोड़-जोड़, इस समय टूट रहा था। असल में वह चोरी, चोरों की तरह नहीं, एक सधे हुए तकनीकी जानकार की तरह, मन, शरीर, आत्मा की गहराइयों में डूबकर किया करता। जिस दिन उसे चोरी करनी होती, वह अपनी योजना में पूरे दिन, कभी-कभी तो पिछली रात से ही, खोया रहता। एक-एक बारीकी को, अपने तजुर्बे और दिमाग की वेवलेन्गत्य से तौल-तौलकर देखता। फिर नतीजों को हालातों के साथ बिठाकर, घटाकर, काट-छाँटकर, बचने-निकलने के रास्तों के चक्कर अपने जहन में रख लेता। उसका चोरी करने का तरीका अब तक एक विज्ञान बन चुका था, जिसके तमाम फार्मूले पलक झपते ही उसके सामने आ जाते। लेकिन उसकी हरकतों के पीछे एक मकसद था। वह मकसद था, चमकी को पाना। इस मकसद के पीछे एक गुरुत्व आकर्षण (मोटिव फोर्स) था, जो उसे इन दिनों आगे की ओर ढकेल रहा था। आकर्षण की वह शक्ति छिपी हुई थी, कोयले से खींची हुई उन काली लकीरों में, जो आज भी भेड़ीमंडी की उसकी खोली की दीवार पर रोजाना की तरह बढ़ रही थी। इसीलिए उसके विज्ञान, मकसद, मोटिव फोर्स की मिली-जुली प्रतिक्रियाएँ मन, शरीर, आत्मा से, कभी-कभी उसे थका देतीं। ऐसी ही थकान आज उसे महसूस हो रही थी।

सदमनिया का आज जी बहुत खराब हो रहा था। वह लोबीराम के बिस्तर पर लेटी काफी देर से, अंदर से उठती हुई लपटों की ज्वाला में जल रही थी। बेचैनी, तपन में सारे बदन के उतार-चढ़ाव, अंगों का कोना-कोना छटपटा रहा था। शनील का काला ब्लाउज, लाल रंग की सूती धोती वहीं पलंग के पास जमीन पर पड़ी हुई थी। करवटें बदलकर पीठ के बल, पेट के नीचे तकिया रखकर, हर तरह से लेटने के बाद भी उसे जरा भी चैन नहीं आया। उस समय उसका मन हो रहा था, इसी तरह नंगे बदन वह कमरे के बाहर निकल जाये, दारुलशफ़ा के बरामदों में

दौड़ती हुई, जहाँ खिड़कियों, दरवाजों से हाथ निकाले हुए लोग उसे अंदर खींच लेने को बेकरार थे। उस समय तक, लछमनिया अपने शरीर की रग-रग में दौड़ती हुई असंख्य चींटियों की चुभन से लड़ते-लड़ते थक चुकी थी। उसकी साँस बड़े जोर से फूलकर फेफड़ों के दबाव में निकलती रही जिसकी वजह से सीने पर की गोलाइयाँ उठतीं, गिरतीं। पैरों से कमर तक बार-बार कँपकँपी छूट रही थी। उसके खुले हुए बाल, सिर के नीचे रखे हुए तकिए पर बिखरे पड़े थे। बिखरी हुई लटों के घेरे में, चमकता हुआ उसका नूरानी चेहरा, कमरे के किनारे लैम्प के शेड से दबी रोशनी में आसमान में चमकते हुए चाँद की तरह लग रहा था। लछमनिया तरस-तरसकर किसी मर्द का इन्तजार कर रही थी, जो यहाँ पास आकर उसके अंगों की जलन बुझा दे, उसे अपनी बाँहों में जकड़ ले हमेशा-हमेशा के लिए। उसे डर था, अगर कुछ देर में कोई नहीं आया तो उसकी जान निकल जायेगी।

लोबीराम का कमरा ए ब्लाक के पश्चिमी किनारे पर था। कमरे में घुसने के खास दरवाजे पर ताला लटक रहा था। लेकिन उस दरवाजे से, जरा हटकर अंदर जाने का एक और दरवाजा था। बिरजू ने वहाँ पहुँचकर पेशेवर तरीके से ताला खोला फिर अंदर जाकर खास दरवाजे से अलग दूसरा दरवाजा खोलकर वह बाहर आ गया। बाहर निकलकर उसने पहले तो खास दरवाजे में, वही ताला जो उसने अभी खोला था, लगा दिया, फिर दूसरे दरवाजे से, जिससे निकलकर वह बाहर आया था, वापस अंदर चला गया। अंदर जाकर, उसने दरवाजे की सिटकनी लगायी। अब बिरजू बैठक में था, जहाँ तो अँधेरा था, लेकिन उसके बाद के कमरे से हल्की-हल्की रोशनी इधर तक आ रही थी।

बिरजू का दिमाग तो इस समय बिलकुल साफ था लेकिन बेतादारी लाइन के ताडीखाने में अद्धा पीने के साथ उसने लोबीराम छाप सिगरेट भी ली थी जिसकी वजह से उसका दिल कभी-कभी गहराइयों तक डूब जाता। तब भी उसका जमीर उससे कह रहा था, आज उसके जीवन का सुनहरा दिन था। पहले शाम को महज इत्तफाक की वजह से, मोटे आदमी का काला ब्रीफकेस बिना किसी मुसीबत के वह उड़ा चुका था और अब लोबीराम की तिजोरी साफ करने आया हुआ था। उसे लग रहा था, उसका काम अब पूरा हो जायेगा। फिर कल सुबह ही झाँसी-

मेल से वह सीधा बम्बई, अपनी चमकी के पास पहुँचने के लिए चल देगा। लेकिन उसके सामने एक समस्या थी, जिससे निपटने के लिए, लोबीराम के फ्लैट की बैठक में घुस आने तक, कोई तरीका उसने नहीं सोचा था। वह समस्या थी लछमनिया! बिरजू चोर जरूर था, लेकिन उसने खून-खराबा कभी नहीं किया। बम्बई से आने के बाद उसने जितनी चोरियाँ की थी, उनमें कहीं भी उसने किसी के ऊपर हाथ भी नहीं उठाया। वह हमेशा चोरी, काफी खोजबीन के बाद, अपने लिहाज से सही मौका ढूंढकर करता। कभी-कभी सही मौके की तलाश में वह काफी दिनों तक रुका रहता और कभी-कभी सही मौका मिलते हुए न देखकर, जब उसे विश्वास हो जाता, बिना खून-खराबे के सफलता नहीं हासिल कर सकेगा, उस शिकार को छोड़कर, किसी दूसरे की तलाश, खोज-बीन में जुट जाता। आज तक बिरजू ने अपनी योजनाओं में कभी ऐसी कड़ी नहीं छोड़ी थी, जिससे निपटने का हल उसने पहले न सोचा हो। लेकिन आज ऐसा था। आज लोबीराम की बैठक में पहुँचने के बाद भी उसे नहीं मालूम था, अगर वहाँ खिडकी से झाँकने वाली लछमनिया होगी तो वह उससे कैसे निपटेगा। बस वह मन ही मन प्रार्थना कर रहा था, काश, आज यहाँ वह लड़की ना हो। फिर भी न जाने क्यों अच्छे सगुन उसे विश्वास दिला रहे थे, उसके काम में आज कोई बाधा नहीं आने की।

दबे पाँव, धीरे-धीरे बिरजू उसी कमरे की ओर बढ चला, जहाँ से कमरे के किनारे रखे हुए टेबल लैम्प से दबी-दबी रोशनी बैठक तक आ रही थी। उसका इरादा पहले कमरे में झाँककर अन्दर देखने का था। दरवाजे के ऊपर एक नीले रंग का पर्दा लटक रहा था, जिसे थोड़ा-बहुत हटाये बिना अन्दर का माहौल देख पाना असम्भव था। बिरजू ने दीवार के सहारे सटकर पर्दा जरा-सा हटाया, तो सामने की दीवार पर लगी हुई उसे लोहे की वह तिजोरी दिखी, जिसके चक्कर में वह यहाँ आया था। बैठक और कमरे के दरवाजे के बीच में चार फुट चौड़ी गैलरी-नुमा जगह छूटी हुई थी। गैलरी की चौड़ान के खत्म होते ही बैठक की दीवार के अन्तिम सिरे के सामने, उस कमरे का दरवाजा था। दरवाजे के दाहिनी तरफ तो मुश्किल से तीन-चार फिट कमरे की चौड़ाई थी जिसकी वजह से कमरे की उतनी ही गहराई वहाँ से दिख रही की बाकी गहराई उसी तरफ थी, जिधर बिरजू खड़ा हुआ

तरफ घूमकर जाने मे एक खतरा तो यह था, चलने से होने वाली परछाई या फिर पर्दे के हिलने से बाहर आती हुई रोशनी में रुकावट होने से, अन्दर कुछ प्रतिक्रिया हो सकती। दूसरा खतरा, पर्दा उठाकर देखने पर, सीधे अन्दर होने वाले से नजर मिल जाने का था।

एक-दो मिनट बिरजू वहाँ ऐसे ही खड़ा हुआ अपने अगले कदम के बारे में सोचता रहा। तभी अंदर से तेज रफ्तार से आती-जाती हुई साँसों की हल्की-हल्की सिहरन महसूस हुई। फिर धीरे-धीरे अस्पष्ट शब्दों में कराहने की आवाज आयी। साथ में एक जनानी खुशबू उसके अंदर आने लगी। वह इस खुशबू को खूब अच्छी तरह पहचानता था। यह खुशबू उसने उस समय महसूस की थी, जब बम्बई में उसके सीने से लिपटकर चमकी ने उससे जीवनदान माँगा भी। तब से बम्बई की सड़कों, जेल की दीवारों से लेकर, अलीगढ़ से यहाँ आने तक उस खुशबू की पकड़ उसने नही छोड़ी थी। आज इतने दिनो बाद फिर उसने वही खुशबू अपने अंदर आते हुए पायी। भीनी-भीनी इस खुशबू ने बिरजू को पागल-सा बना दिया। बेलदारी लाइन का ठर्रा, फिर उसके ऊपर की लोबीराम छाप सिगरेट का असर उसके अंदर नशे की लहर बनकर दौड़ रहा था। उसमें डूबकर यह खुशबू अब उसके सर पर चढ़कर बोलने लगी।

बिरजू से अब रुका न गया। उसके सर पर भूत सवार था। वह अपने पेशे के सारे वसूल भूलकर पर्दे के आगे लेकिन कमरे के दरवाजे के पीछे तक आ गया। इसके पहले वह थोड़ा और आगे बढ़कर उस खुशबू के पास बढ़ता उसके पैरों में किरमिच के जूतों से कोई चीज छू गयी। एक सेकेण्ड के सौवें हिस्से मे बिरजू ने फौरन नीचे की ओर देखा तो उसके किरमिची जूतों से सटी हुई, लछमनिया की बिलायती बाडिस पड़ी हुई थी, बाडिस के स्ट्रैप छिपे हुए थे। उसका खाली हिस्सा नीचे की तरफ था। उसे तो सिर्फ बाडिस की दो ऊँची-नुकीली बूटेदार गोलाइयाँ दिखीं। अब बिरजू का संतुलन बिगडने लगा। सामने की दीवार में लगी हुई तिजोरी उसकी आँखो के सामने से ओझल हो चुकी थी। उसकी जगह बाडिस की बूटेदार गोलाइयो की नीचे रहने वाले जिस्म की कल्पना ने ले ली थी। खुशबू अब भी वैसे ही उसके करीब आकर, हल्की-हल्की साँसों की सिहरन के साथ, उसके बदन से लिपटती जा रही थी।

दूसरे क्षण ही बिरजू कमरे के अंदर था। बायी दीवार से सटे हुए

पलंग पर, आँखें बंद किये हुए, लम्बी-लम्बी साँसें भरती हुई, बेदाग संगमरमर में जैसे तराशी हुई, लछमनिया तड़प रही थी। फटी-फटी आँखों से बिरजू, कुछ पल, बस उसे देखता ही रहा। खुली-खुली, उलझने के अंदाज में बिखरी हुई काली लटों के बीच लछमनिया के चेहरे की चमक, कमरे की रोशनी को फीका बना रही थी। बिरजू की निगाहें चेहरे से फिसलकर जरा नीचे आयी, तो गर्दन के नीचे के गोल-गोल उभार देखकर उसकी रगों ने विद्रोह करना शुरू कर दिया। उसी समय, घुटनो तक टाँगें मोड़े हुए लेटी लछमनिया के पूरे प्रोफाइल पर उसकी नजर पड़ी। साथ ही उसे लाल रंग की सूती धोती और पापलीन का पेटीकोट पलंग के नीचे दिखा।

यह माहौल, यह नजारा हकीकत थी या सपना, एक क्षण तो बिरजू कुछ समझ ही नही पाया। अपनी अभी तक की जिन्दगी मे, उसे लगा, यहाँ आकर समय ठहर गया। उसके अंदर बेचैनी बढ़ती जा रही थी। एक अजीब तरह के पागलपन का जनून उसके ऊपर सवार हो गया। उस समय अगर दस तोपें भी पीछे से दाग दी जाती, तब भी उसे कुछ भी सुनायी नही देता। कुछ नशे के प्रभाव में, कुछ खुशबू के असर मे, उसके माथे से पैरों तक, मादकता और तरुणाई की तमाम-तमाम तरंगें उठने लगीं।

वहीं पर खड़े हुए बिरजू का हाथ अपने आप जीन के पैण्ट के बटन खोलने लगा। बटन खुल जाने के बाद, पैण्ट खिसककर किरमिच के जूतों पर गिर पड़ी। बिरजू ने पहले एक फिर दूसरा पैर पैण्ट की मोहरी से निकाला फिर पैर मोड़कर जूते उतार दिये। उसके बाद लछमनिया को भूखी आँखों से देखते हुए उसने बुश्शर्ट हाथो से खींचकर अलग कर दी। तभी वह तिजोरी के करीब, कमरे के दरवाजे के दाहिनी ओर रखे टेबल लैम्प की ओर बढा। एक क्षण मे, टेबल लैम्प का स्विच ऑफ करते ही, बिरजू सामने की तरफ से पलंग के ऊपर चढ़कर लछमनिया के पास पहुँच गया। तब तो अँधेरे कमरे मे सिर्फ दोनों की घुटी-घुटी आवाजें थी और उनके साथ लम्बी-लम्बी साँसो की सिहरन। बड़ी देर बाद लछमनिया बोली, "ई तो बता दो, तुम हो कौन ?"

वहाँ उस समय बिरजू नही था, लछमनिया नही थी। हजारों साल पहले के आदम और हव्वा थे, जिन्होने मिलकर पहला प्यार का सेब खाया था, अंदर की गहराइयों से उठते हुए प्यार के बोल महसूस

को साथ में खींचकर बिरजू लोबीराम के पलंग के नीचे घुस गया। पलंग के नीचे पहुँचते ही, नीचे पड़ी हुई लछमनिया का पेटीकोट, लाल रंग की सूती धोती भी, उसने उठाकर अंदर ले ली।

इतनी देर में लोबीराम कमरे के अंदर आ गये। रात के करीब ग्यारह बजने वाले थे, उनको अब नींद आ रही थी। कमरे के अंदर आकर उन्होंने बैठक में जाने वाला दरवाजा भेड दिया। बैठक से आती हुई रोशनी में वह तिजोरी के पास रखे हुए लैम्प के पास गये। लैम्प का स्विच दबाते ही पूरे कमरे में दबी-दबी रोशनी फैल गयी। तिजोरी और लैम्प से जरा हटकर छोटी-सी तिपायी रखी हुई थी। उस तिपायी के ऊपर दीवार पर कपड़े टाँगने की खूँटियाँ लगी थीं। वहीं, खिड़की के पास खड़े होकर अँगड़ाई लेने के बाद, लोबीराम धोती उतारने लगे।

दम साधे, पलंग के नीचे बिरजू, लछमनिया, गर्दन टेढ़ी किये लोबीराम की हरकतें देख रहे थे। लोबीराम को धोती उतारते हुए देखकर दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा। बिरजू की तरफ देखते ही सब कुछ मिल जाने की शान्ति में, अपनेपन का राजदार बन जाने जैसी मुस्कुराहट लछमनिया के चेहरे पर खिल उठी। बिरजू भी बड़े प्यार में उसे देखने लगा। अभी कुछ देर पहले दोनों के जिस्म एक हुए थे, अब मन एक हो गये। फिर बिरजू को अपनी और लछमनिया की हालत याद आयी। वह एकाएक उसकी ओर देखकर हँस पडा। उसकी हँसी का मतलब समझकर लछमनिया शर्मा गयी। उसने बिरजू की ओर पीठ करके धीरे-धीरे बाडिस पहनना शुरू किया तो कलाइयों में पड़ी चूड़ियाँ खनक उठीं, जिसकी वजह से उसकी पीठ पर हाथ रखकर बिरजू ने उसे कपडे पहिनने को मना कर दिया। इसी बीच वह खुद पैरों को सीधा करके पैण्ट को ऊपर कर चुका था। पैण्ट के बटन बंद करने के बाद उसने बुश्शर्ट पहन ली। फिर पैरों में जूते डाल लिये।

धोती उतारने के बाद लोबीराम ने खद्दर का कुर्ता, गर्दन के ऊपर से बाहर को खींच लिया। कुर्ता हाथ में लिये हुए दीवार की खूँटी पर टाँग दिया। फिर जमीन से धोती उठाकर तिपायी के पास रखी हुई कुर्सी पर डाल दी। सिर की गाँधी टोपी तो कमरे में घुसते ही लैम्प चालू करने के बाद खूँटी पर हिफाजत से फँसा चुके थे। अब लोबीराम तिपायी के ऊपर दीवार पर लगे हुए पेट तक दिखने वाले शीशे के सामने खड़े थे।

बनियाइन तो कुर्ते के साथ ही निकल आयी थी। अब उनके बदन पर लट्ठे की धारियों वाली सिर्फ जाँघिया थी। आबनूस का काला रंग, मोटा स्थूल शरीर, कमर पर बँधी पतली-सी जाँघिया उनकी भयानक तोंद के भार को सँभालने में मुड़कर तोंद की तलहटी में पहुँचकर चिपकी हुए थी। जाँघिया के बाद घुटनों से टेढ़ी-मेढ़ी टाँगें जैसे उनके बदन के भार को सँभालने में टूटी जा रही थीं। काले रंग की तिरछी मुड़ी हुई, खुरपे जैसे पैरों की उँगलियाँ ही जैसे उस बोझ को सँभाले हुए थीं, जो टेढ़ी टाँगों के बस का नहीं था। दीवार पर लगे शीशे के सामने अपने मुखौटे को तौलने के बाद लोबीराम जाँघिया के नारे से बँधी हुई चाभी से तिजोरी खोलकर वहाँ सामने की जमीन पर तिजोरी के सामने बैठ गये।

तिजोरी का पल्ला पलंग की तरफ था, इसलिए वहाँ से तिजोरी के अंदर का हाल कुछ भी नहीं दिख रहा था। तिजोरी के पल्ले में लगे हुए लोबीराम देर तक बैठे-बैठे उसमें रखी हुई सम्पदा को निहारते रहे। एकाएक उनके चेहरे पर संतोष की छाया सिमटने लगी। यह संतोष की छाया, तिजोरी में रखी हुई सम्पदा के कारण नहीं थी। यह संतोष की छाया तो उस सम्पदा के बारे में थी जो अगले तीन दिनों में तिजोरी के अंदर आने वाली थी। लोबीराम को पता था, तीन दिन बाद, सोलह तारीख को, प्रदेश में सरकार बनने वाली थी, जिसके लिए पार्टी विधायक मुख्यमंत्री के पद के लिए, पार्टी का नेता चुनेंगे। यह ही तो सुनहरा मौका होगा, जब उनकी तिजोरी में सम्पदा आयेगी। जिसको भी नेता बनना होगा, उनका सहयोग लेगा। उनकी सेवाओं की जो भी कीमत उन्हें मिला करती, इसी तिजोरी में बंद कर देते। यह तिजोरी उन्हें जान से भी ज्यादा प्यारी थी।

मोटे पंजों के बल लोबीराम तिजोरी का पल्ला भेड़ते हुए उठे। फिर पीछे हटकर तिजोरी बंद कर दी। नींद से बोझिल काली-काली मांस की फुन्दियों-सी उभड़ी हुई पलकों के नीचे, कमानीदार चश्मे के अंदर छोटी, गोल-गोल आँखें मिचमिचा रही थीं। अलसाए बदन की जमहाइयाँ बराबर उनको मुँह फाड़ने को मजबूर कर देतीं। लोबीराम वापस दीवार पर लगे शीशे के सामने पहुँच गये। अपनी गुद्दी और कनपटी से नोचकर नकली बालों का विग उतारकर, सोने के पलंग के ठीक सामने, कमरे के दरवाजे की दाहिनी ओर की दीवाल से सटाकर रखी हुई आरामकुर्सी पर

हाथ लिया। वह कुछ देर सिर की झुर्रियों-भरी तश्तरी को हथेली से पकड़े रहे। फिर कनपटी पर कान के सहारे टिकी हुई कमानियाँ जरा आगे की ओर झुकाकर उन्होंने मोटे शीशे वाला चश्मा उतारकर आराम-कुर्सी पर पड़े हुए तकिए के बगल में रख दिया। कनपटी से चश्मे की कमानियाँ हटाते समय, उनको बायीं तरफ कुछ गड़बड़ी महसूस हुई। खद्दर का कुरता उतारते समय झटके से या पहले कहीं और 'हियरिंग ऐड' का सम्बन्ध कुरते की ऊपरी जेब में रखी हुई मशीन से टूट चुका था। तभी शायद लछमनिया की चूड़ियों की खनक और बिरजू की साँसों में उलझी निकलती हुई साँसों की सुरसुराहट उनको सुनायी नहीं दी। उनके बायें कान के छेद के अंदर 'हियरिंग ऐड' का हिस्सा लगा हुआ था। लोबीराम उसे हाथ में निकालकर देखने लगे।

हियरिंग ऐड का बाकी हिस्सा खादी के कुरते के ऊपर वाली जेब में था। कुर्ता दीवार पर खूँटी में लटक रहा था। लोबीराम आरामकुर्सी से दीवार की तरफ हाथ फैलाकर बढ़े। उस समय आँखों से देखने वाला मोटा चश्मा वह उतार चुके थे। फिर चूने से पुती दीवार पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कुर्ता पा ही लिया। कुर्ते को टटोलते हुए ऊपर की जेब में रखी हुई हियरिंगऐड का बाकी हिस्सा वहाँ रखा हुआ जान, उन्होने संतोष कर लिया।

लोबीराम को ऊब आ रही थी। उधर आँखों से देखने वाला चश्मा हटते ही नींद का बड़ी जोरो से हमला हुआ था। आरामकुर्सी से जरा हटकर वह पलंग की ओर चले, फिर उन्हें कुछ याद आया तो रुक गये। बिना किसी भूमिका के उन्होंने जरा तिरछा करते हुए अपना मुँह पूरा फाड़ लिया। फिर मुँह के अंदर उँगलियाँ तीन बार डालकर दाँतों की तीन टुकड़ों वाली बत्तीसी निकाल ली। हाथों में बत्तीसी पकड़े-पकड़े लोबीराम, महज अन्दाज से, पलंग की ओर लुढ़क चले। पलंग पर बैठकर उन्होने चैन की साँस ली। फिर तीन टुकड़ों वाली बत्तीसी सिरहाने पर तकिया के नीचे रखकर वह लेट गये। अब पूरे यहाँ से पूरी तरह उनका सम्बन्ध कट चुका था। दो-चार मिनट के बाद उनके, बिना बत्तीसी के आधा खुले हुए पोपले मुँह से, जोर-जोर से खर्राटे निकलने लगे।

लोबीराम का यह रूप लछमनिया ने भी आज पहली बार देखा था। अपने पुराने दिनों की उनके साथ गुजारी हुई रातों की याद करके उसे बड़े जोर की मितली आ रही थी। फिर भी अपने को सँभालती हुई वह पलंग

छोड़ दिया। फिर भी उसे लग रहा था, अब उससे लछमनिया छूटेगी नही।

बिरजू ने इतनी दुनिया देख ली थी, उसे इस बात का पक्का यकीन था, पैसे के बिना इश्क नही चलने का। चाहे चमकी हो या लछमनिया, पैसा तो चाहिए ही। जो दौलत उसने दारुलशफ़ा के कमरों से इकट्ठा की थी, वह उसकी निगाहों में कम थी। अपना ध्येय पूरा करने के लिए उसे एक-दो लम्बे हाथ मारने होगे। फिर उसके बाद, उसने सोच रखा था, कभी, कभी नही चोरी करेगा।

पिछले दिनों की लगातार मोहब्बत से बिरजू का लछमनिया के ऊपर पूरी तरह जादू चढ़ चुका था। लेकिन बिरजू की नजर तो अब भी लोबीराम की तिजोरी पर थी। उस दिन वह लछमनिया की वजह से जो तिजोरी पर हाथ न साफ कर सका तो फिर उसने लछमनिया के जरिये ही अपनी योजना बनानी शुरू की। उसने लछमनिया को अपना पिछला लेखा-जोखा तो बताया नही लेकिन उसको नर्म बाँहों और सीने की गोलाइयों में बाँधकर एक बार इतना जरूर बताया, शहर छोड़कर, बस बहुत जल्दी उसे बम्बई जाना होगा। साथ चलने के लिए लछमनिया तड़प उठी। जिस बेकरारी से, जिन भोली अदाओ से, किन्ही मोहक इशारों में उसने जब अकेला छोड़कर न जाने की विनती की, बिरजू से मना न किया गया।

फिर बिरजू के कहने से लछमनिया तैयार हो गयी। लोबीराम की तिजोरी को अब अकेले बिरजू की ही नही लछमनिया की निगाहें भी छुप-छुपकर ताड़ने लगी। कई दिनों की मेहनत के बाद बिरजू और लछमनिया में सौदा हो गया। आठ बजे पार्टी मीटिंग के लिए लोबीराम जायें, तभी तिजोरी पर हमला हो। तिजोरी का सारा माल लेकर दोनो को शहर छोड़कर भागना था। तय हुआ था जब आठ-नौ बजे के बीच मे बिरजू काम करेगा, लछमनिया वही होगी। लोबीराम तो होंगे नही और किसी के आने पर दरवाजा वह खोलेगी नही। फिर रात मे बिरजू के साथ वह भेड़ीमंडी की खोली मे सो रहेगी। और सवेरे सात बजकर पच्चीस मिनट पर झाँसीमेल से दोनो बम्बई की ओर चल देंगे।

इस समय मेड़खाँ की सराय की एक पुरानी दीवार के कोने मे बैठा बिरजू लछमनिया का इन्तजार कर रहा था। लोबीराम सिगरेटों के दो दौर हो चुके थे। शाम का वक्त था, कुञ्जी और चिलमची लेकर ताश पत्ते

के बाहर निकलकर पायलों की झनकार, चूड़ियों की खनक के साथ खड़ी हो गयी। जल्दी-जल्दी उसने बाडिस, पेटीकोट, ब्लाउज, पहनकर धोती लपेट ली। तब तक पलंग के नीचे से निकलकर बिरजू बाहर आ गया। बिरजू उस समय पलंग पर बिना विग के बड़ी-बड़ी पपड़ियों वाले सिर की खल्वाटी, बिना बत्तीसी के पोपले मुँह, देखने वाले चश्मे के बिना बावली आँखों, बिना हियरिंग एड वाले कान और सिकुड़कर नीचे लटकी हुई जाँघिया के ऊपर, साँसों के उतार-चढ़ाव में, उठती-गिरती तोंद वाले इस इन्सान कहलाने वाले जानवर को देख रहा था जो पिछले पच्चीस वर्षों से प्रदेश सरकार का बड़ा मिनिस्टर रह चुका था।

औरों की तरह बिरजू को भी मालूम था, आज आठ बजे शाम को पार्टी मीटिंग होगी। पार्टी मीटिंग के बाद राजभवन में मंत्रिमंडल का शपथ समारोह भी होना था। यह दो मौके ऐसे थे जब दारुलशफ़ा के कमरों में लोग नहीं होंगे। उस दिन लोधीराम के कमरे में बिरजू तिजोरी खोलने के इरादे से घुसा था लेकिन वहाँ जिस हालत में पहले लछमनिया उसे मिली, उसके बाद लोधीराम आ गये जिसकी वजह से वह अपने मक़सद में कामयाब न हो सका। फिर बाद में कपड़े पहनकर निकलते समय लछमनिया ने जिन प्यार-भरी नजरों से उसे देखा था, एक तरह से उसे उन नजरों से तिजोरी के अन्दर बंद दौलत से भी ज्यादा कीमती चीज मिल चुकी।

अब बिरजू अकेला नहीं था, लछमनिया भी उसके साथ थी। दोनों चेलदारी लाइन पर मेहदी की सराय के पुराने खंडहरों में मिलने लगे। वहीं इमली के पेड़ के नीचे बैठकर अगले दिनों में बिरजू और लछमनिया आने वाला स्वर्ग बटोरकर अपनी पलकों में अपने ख्यालों के दरीचों में सजाने लगे।

हालाँकि लछमनिया पूरी तरह मन, शरीर और आत्मा से बिरजू की हो चुकी थी। बिरजू ने अभी पूरी तरह चमकी को नहीं छोड़ा था। भेंडी-मंडी की उसकी खोली की दीवार पर कोयले से खींची तीन लकीरें और बढ़ चुकी थीं, लेकिन उसके नीचे लाल खड़िया से इधर पाँच नयी लकीरें पैदा हो गयी। यह लाल रंग की पाँच लकीरें उसके और लछमनिया के बीच के खुफिया रिश्ते की खामोश गवाह थी। उसको फैसला तो करना था लेकिन उसने फिलहाल अपना आखिरी फैसला आने वाले हालातों पर

छोड़ दिया। फिर भी उसे लग रहा था, अब उससे लछमनिया छूटेगी नहीं।

बिरजू ने इतनी दुनिया देख ली थी, उसे इस बात का पक्का यकीन था, पैसे के बिना इश्क नही चलने का। चाहे चमकी हो या लछमनिया, पैसा तो चाहिए ही। जो दौलत उसने दारुलशफ़ा के कमरो से इकट्ठा की थी, वह उसकी निगाहों में कम थी। अपना ध्येय पूरा करने के लिए उसे एक-दो लम्बे हाथ मारने होगे। फिर उसके बाद, उसने सोच रखा था, कभी, कभी नही चोरी करेगा।

पिछले दिनों की लगातार मोहब्बत से बिरजू का लछमनिया के ऊपर पूरी तरह जादू चढ़ चुका था। लेकिन बिरजू की नजर तो अब भी लोबीराम की तिजोरी पर थी। उस दिन वह लछमनिया की वजह से जो तिजोरी पर हाथ न साफ कर सका तो फिर उसने लछमनिया के जरिये ही अपनी योजना बनानी शुरू की। उसने लछमनिया को अपना पिछला लेखा-जोखा तो बताया नही लेकिन उसको नर्म बाँहो और सीने की गोलाइयों मे बाँधकर एक बार इतना जरूर बताया, शहर छोड़कर, बस बहुत जल्दी उसे बम्बई जाना होगा। साथ चलने के लिए लछमनिया तड़प उठी। जिस बेकरारी से, जिन भोली अदाओ से, किन्ही मोहक इशारों मे उसने जब अकेला छोड़कर न जाने की विनती की, बिरजू से मना न किया गया।

फिर बिरजू के कहने से लछमनिया तैयार हो गयी। लोबीराम की तिजोरी को अब अकेले बिरजू की ही नही लछमनिया की निगाहे भी छुप-छुपकर ताड़ने लगी। कई दिनों की मेहनत के बाद बिरजू और लछमनिया मे सौदा हो गया। आठ बजे पार्टी मीटिंग के लिए लोबीराम जायें, तभी तिजोरी पर हमला हो। तिजोरी का सारा माल लेकर दोनों को शहर छोड़कर भागना था। तय हुआ था जब आठ-नौ बजे के बीच में बिरजू काम करेगा, लछमनिया वहीं होगी। लोबीराम तो होगे नही और किसी के आने पर दरवाजा वह खोलेगी नही। फिर रात मे बिरजू के साथ वह भेड़ीमंडी की खोली मे सो रहेगी। और सवेरे सात बजकर पच्चीस मिनट पर झाँसीमेल से दोनो बम्बई की ओर चल देंगे।

इस समय मेडूखाँ की सराय की एक पुरानी दीवार के कोने में बैठा बिरजू लछमनिया का इन्तजार कर रहा था। लोबीराम सिगरेटों के दो दौर हो चुके थे। शाम का वक्त था, कुन्जी और चिलमची लेकर ताश पत्ते

था, इस समय लोबीराम छाप सिगरेट के धुएँ में बड़ी तेजी से चल रहा था। उसको अपना भविष्य अब साफ-साफ लोबीराम की लछमनिया और लोबीराम की तिजोरी से जुड़ा हुआ नजर आ रहा था। उसने फैसला कर लिया था, वह अगली सुबह लछमनिया को साथ ही लेकर बंबई जायेगा। बम्बई में पुराने दोस्तों की मौजूदगी में उससे शादी करेगा। फिर वह चमकी से मिलेगा। अगर चमकी ठीक-ठाक होगी तो उसे भी अपनी रखैल बनाकर रख लेगा। काली लकीरों की सियाही से लिपटी हुई चमकी को पत्नी के रूप मे पा लेना, अपनी आगे आने वाली नस्ल को हमेशा के लिए बरबाद करना होगा क्योंकि वह नस्ल असल में चमकी की उस कोख से निकलेगी जहाँ से अब तक न जाने कितने हमल गिर चुके होगे।

अपनी ही साफगोई से निकले हुए इस महान फैसले की उपलब्धि में विरजू खुशी में दुहरा-तिहरा हुआ जा रहा था तभी उसने देखा सराय के गिराऊ फाटक से ठुमकती हुई लछमनिया चली आ रही थी। इस वक्त अपने फैसले के तुरन्त बाद उसके आने पर बिरजू को लगा, फैसला सही था। वह दूर से आती हुई लछमनिया को एक नये रूप में बस एकटक देखता रहा। यह नया रूप उसकी होने वाली दुल्हन का था। तो आखिर मे उसे भी ठिकाना मिल ही गया।

लछमनिया के आने पर बिरजू मे रहा नही गया। उसने उठकर वहीं पेड़ की ओट में उसे खीच लिया। फिर बड़े जोर से अपनी बाँहों में दबोचकर उसे प्यार से चूमने लगा। अब उसे रोकने वाला कौन था? लछमनिया उसकी होने वाली बीबी थी!

लेकिन लछमनिया ने उसे रोक दिया। उसे जल्दी थी। इन सबके लिए तो भेड़ीमंडी की खोली में पूरी रात पडी थी। वह तो सिर्फ इसलिए आयी थी, उसका बिरजू इन्तजार की बेकरारी में उसे कही झूठा न समझ बैठे। वह यह बताने आयी थी, लोबीराम मीटिंग में आठ बजे नहीं, सात बजे ही जाने वाले थे!

तो कुछ खुराकियों को रंगीनराय के दारुलशफा के एक-एक कमरे में जाकर विधायकों को अपनी बैठक मे समझा-बुझाकर लाने के लिए भेज दिया था। उधर रामप्रताप द्विवेदी, जिन्हे अपने यहाँ लौटाते समय ही वह विधायकों को जमा करने को कह आये थे, अपने गुट के विधायको का शिष्टमंडल बनाकर एक नये सिरे से दारुलशफा का चक्कर लगा रहे थे।

नहा-धोकर खद्दर के पाजामे के ऊपर खद्दर का कुरता पहिने हुए इस वक्त रंगीनराय अपने फ्लैट की बालकनी में आरामकुर्सी के सामने रखी हुई तिपायी पर पैर फैलाये बैठे थे। समय का अभाव रंगीनराय को भी खटक रहा था। शुरू से उनके मन में यह बात साफ थी, उत्सुकदास प्रदेश के मुख्यमंत्री नही बन सकेंगे। इसीलिए दिन-पर-दिन उत्सुकदास के मुख्यमंत्री पद के लिए चुने जाने की गर्माती हुई खबरों को उन्होने तीन दिन पहले तक कोई महत्त्व नही दिया। वैसे भी रंगीनराय असन्तुष्ट गुट के नेता के रूप में ही अधिक प्रभावशाली रहते।

रंगीनराय जन्म से असन्तुष्ट गुट के नेता थे। धीमी रफ्तार मे सधी-सधायी लड़ाई आदर्शों के धरातल पर वह खडी करते। पार्टी संगठन की नस-नस मे वह वाकिफ थे। केन्द्रीय नेताओं, शक्ति के केन्द्रबिन्दुओ के चारों ओर घूमती हुई उनकी राजनीति की चालें दारुलशफा मे मशहूर थीं। उनके दाँव, उनका हर कदम, एक कहानी बनकर रह जाता। सत्ता-धारी गुट से उनकी कभी नही बनी। उस वातावरण मे दो दिन मे ही उनका दम घुटने लगता।

कोई आज से नही, हमेशा से वह ऐसे ही थे। स्कूल-कॉलेज के दिनों में रंगीनराय क्लास के मानीटर के साथ रहनेवाले लड़कों को उसी प्रकार मारा-पीटा करते जैसे टीचरो के पिछलगू लडको को। घर में भी बीच का होने की वजह से उनकी कभी नही बनी। अक्सर माँ-बाप की चमचा-गिरी करने वाले अपने भाई-बहन से उनकी झड़प हो जाती। रंगीनराय असल मे स्वभाव से इस टैबलिशमेन्ट के विरोधी थे। उनकी आदतें, हाव-भाव, व्योवहार, बातचीत, सोचने के तरीके सभी कुछ असंतोष के इसी ढाँचे मे बँध चुके थे। खाने के लिए जरा मोटी बन जाने वाली रोटी से लेकर घर के लोगो के बोलने के तरीकों, बाहर के वातावरण, समाज की कुंठाओं, सत्ता की लोलुपता तक रंगीनराय असंतोष के दायरो मे फँसे थे।

लेकिन इस बार रंगीनराय चूक गए। उनका हिसाब, दाँव, पेंच, जोड़-तोड़ के उनके दाँव धरे ही रह गये और उनका सबसे बड़ा दुश्मन उत्सुकदास, उनकी छाती पर मूँग दलने जा रहा था। असंतोष भरे उनके जीवन को इतिहास में ऐसा नाजुक समय कभी नहीं आया। अभी तक के उनके असंतोष छोटी-बड़ी ऐसी तमाम बातों को लेकर उत्पन्न हुआ करते, जिनका प्रत्यक्ष स्वयं उनके जीवन मे कोई सम्बन्ध नहीं होता। लेकिन आज उत्सुकदास ने उनके जीवन में एक महान संकट लाकर खड़ा कर दिया। आज शायद पहली बार उन्हें अपने असंतोष के पीछे एक बहुत बडा मकसद दिखायी दे रहा था। आज पहली बार उनका असंतोष सनक की परिधि से बाहर दिखायी दे रहा था। आज पहली बार वह कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों, आदर्शों के धरातल पर खडा था।

अपने फ्लैट की बालकनी से लगी हुई आरामकुर्सी पर बैठे हुए रंगीनराय उस समय ऊँचाइयों की ओर उडे जा रहे थे। हमेशा की तरह आज भी उनकी आँखों में किसी आने वाले संघर्ष की आशाएँ जागने लगी थीं जो खास उद्देश्य से प्रेरित होकर आंदोलन-विद्रोह की भूमिकाएँ तैयार कर रही थी। आज उनको अपना, अपनी राजनीति, अपने आदर्शों का अस्तित्व खतरे मे दिखायी दे रहा था। पिछले सात वर्षों से लगातार वह जिन मूल्यों के लिए संघर्ष कर रहे थे, आज उत्सुकदास के मुख्यमंत्री हो जाने के बाद उनका कोई भी तो महत्त्व नहीं रहेगा। लोगबाग उनकी खिल्ली उड़ाएँगे। वे मानसिक गुत्थियों में उलझे जैसे किसी सुरंग की तलाश में थे। एक ऐसी सुरंग जो खामोशी मे उनके फ्लैट से दारुलशफ़ा के कामनहाल तक, जहाँ नेता के चुनाव के लिए पार्टी की मीटिंग होनी थी, बन रही थी। रंगीनराय को इस सुरंग के तिरछे-टेढे-मेढे रास्तों को जोड़कर उसमे बारूद भरनी थी। इसीलिए वह उसी बारूद का मसाला जमाने-जुटाने मे लगे थे। यह सुरंग दारुलशफ़ा के ए और बी ब्लाक के बरामदों, गलियारों से लगे हुए कमरों मे, पार्टी के विधायकों के मन और दिमाग के अन्दर विस्फोट पैदा करने के लिए थी। उनको इस बात का पता था, उत्सुकदास के साथ मर मिटने वाले बीस-पच्चीस विधायक होंगे। उनको यह भी मालूम था यद्यपि गुरुपदस्वामी गुट का पूरा समर्थन उत्सुकदास को मिलेगा, फिर भी उसमे फूट की दरारें उभरने लगी थीं। इन दरारों को अपनी सुरंग से जोड़ना था जिससे गुरुपदस्वामी गुट की

फूट बनी रहे।

रामप्रताप द्विवेदी उर्फ दरोगा द्विवेदी उस समय बहुत दुखी थे, जब रंगीनराय ने उनसे लोबीराम गुट के साथ अपने यहाँ होने वाली विधायकों की बैठक की बात कही थी। मंझनपुर विधानसभा चुनाव क्षेत्र से वह तीसरी बार चुने गये थे। पार्टी स्तर पर पिछले कई वर्षों से वह गुरुपदस्वामी गुट की खिलाफत करते आ रहे थे।

पहले तो दरोगा द्विवेदी, गुरुपदस्वामी की जात का होने के कारण उनके बहुत करीब थे, चरण स्पर्श करते, जरा भी बुराई सुनने पर खून-खराबा पर उतर आते। उनका नाम भी याद आने पर मन मे उत्साह की लहरें उठने लगती। गुरुपदस्वामी का सम्मान-पूजा उनके जीवन का मूल मंत्र था। उन दिनो संसार का सारा वैभव, जीवन की सारी खुशियाँ देकर भी कोई अगर चाहता कि वे गुरुपदस्वामी के विरुद्ध एक शब्द बोल दें तो यह असंभव था। गुरुपदस्वामी के लिए उनके मन मे अंधी श्रद्धा भक्ति थी और इसमे कोई लोभ या स्वार्थ नही था। गुरुपदस्वामी उनके लिए महात्मा थे, एक महान् आत्मा थे जिनकी पूजा मे दरोगा द्विवेदी को गर्व का अहसास होता।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय यूनियन का अध्यक्ष होने की हैसियत से दरोगा द्विवेदी स्वाभाविक रूप से प्रदेश पार्टी की राजनीति मे हिस्सा लेने लगे थे। गुरुपदस्वामी का भक्त होने के कारण विधानसभा चुनाव मे पार्टी का टिकट उनको हमेशा मिलता रहा। विद्यार्थी जीवन से राजनीति के दाँव-पेंच की पकड उनको थी, जिसकी वजह से और पार्टी के परम्परागत समर्थक वोट मिल जाने की वजह से चुनाव जीतने मे भी उनको कभी परेशानी नही हुई। गुरुपदस्वामी गुट मे दरोगा द्विवेदी तब अन्दर तक घुसे थे। इस गुट की कमजोरियों की बाबत उनको सब कुछ पता था। पुराने आदमी थे। गुट की समय के साथ बढती हुई ताकत को उन्होंने खुद देखा था। विधायकों की अधकचरी राजनीति में एक-एक की कमजोर नसों को वह खूब पहचानते। विश्वास और सत्ता के खेल उन्होंने खुद भी खेले थे। उत्सुकदास के गुरुपदस्वामी के ऊपर हावी होने से पहले, दरोगा द्विवेदी ही उनके गुट की सबसे महत्त्वपूर्ण कडी हुआ करते।

दरोगा द्विवेदी और उनके बड़े भाई भरतप्रताप द्विवेदी में गहरा प्रेम था। उम्र मे फर्क होने के कारण दरोगा द्विवेदी अपने

बड़ा लिहाज करते थे। वैसे भी भरतप्रताप द्विवेदी ने बचपन से ही दरोगा द्विवेदी को पाल-पोसकर बड़ा किया था। बाप-माँ दोनों का प्यार दिया था। नन्हे बच्चे की कच्ची उम्र भाई के सीने की प्यारभरी गर्माहट से पककर जब तक जवान हुई, दरोगा द्विवेदी भाई की मोहब्बत में कैद हो चुके थे। भाई के सीने की गर्माहट, भाई के कन्धे की ऊँचाई, भाई के दिलो-दिमाग का साया हमेशा किसी भुतहे किस्से की तरह उनका पीछा करता रहा। दरोगा द्विवेदी के लिए असल में उनके भाई भरतप्रताप द्विवेदी किसी भगवान से कम नहीं थे। उनके हृदय की गहराइयों में, उनकी धड़कनों में, उनके अहसास के हर क्षण में बस एक ही नाम था, उनके भाई का नाम, जिससे अलग होने की कभी कल्पना भी वे नहीं कर सकते थे। भाई के प्रति अंधे प्रेम की उनकी भावनाएँ, माँ-बाप, परिवार के सामान्य सम्बन्धों से मिली-जुली, एक सीधी प्रतिक्रिया थी जो अलग-अलग न बँटकर सिर्फ भाई के लिए बिन्दु-धरातल पर अनेक-अनेक परतों में जमती रही। अगर साक्षात ईश्वर भी धरती पर उनके सामने आकर खड़ा हो जाता, दरोगा द्विवेदी उसको भी ठुकराकर अपने भाई भरतप्रताप द्विवेदी के ही चरणों पर गिरते।

तभी एक दिन दरोगा द्विवेदी के जीवन में एक बहुत बड़ा तूफान आया। यह तूफान एक महान आत्मा, गुरु से भी बढ़कर पूजनीय प्रदेश के मुख्यमंत्री गुरुपदस्वामी और ईश्वर से भी बढ़कर श्रद्धेय प्रदेश पुलिस के कांस्टेबल भरतप्रताप द्विवेदी के बीच टकराव से उनके अन्दर पैदा हुआ था। इस तूफान ने उनके जीवन की सारी मान्यताएँ तोड डाली। उनके विश्वास को छिन्न-भिन्न कर दिया। हुआ यूँ, दरोगा द्विवेदी ने पिछले दस वर्षों से गुरुपदस्वामी के सेवा के बदले अपने घूसखोर भाई की कास्टेबल से दरोगा के पद पर तरक्की की प्रार्थना की। गुरुपदस्वामी बड़े नेता थे, उन्होंने दरोगा द्विवेदी की साधारण-सी बात को विशेष महत्त्व नहीं दिया। इधर दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी से सिर्फ एक बार कहने पर अपना काम हो जाने की आशा रखते थे। वह दुबारा गये नहीं, उनके भाई दरोगा न हो पाये।

बस यही उनके मन में [illegible] चुभ गया। [illegible] तरह कोई छोटी-सी बात खरोंच [illegible] मन, [illegible] [illegible] नहीं की [illegible] घनी [illegible] काट

न पाने की वजह से मुड जाती, जिस तरह बरगद के पेड़ की जड़ें जमीन से निकलकर अपने ही पेड की ऊँचाई से फिर वापस जमीन की तरफ आती, उसी तरह दरोगा द्विवेदी इस छोटी-सी खरोंच से गुरुपदस्वामी से अलग हो गये। उनको बहुत गहरी चोट लगी थी। जिस आदमी की दस साल, एक पैर पर खड़े होकर सेवा की, जिसे एक महान आत्मा की तरह पूजा, उनकी एक जरा-सी मामूली बात को उसने ठुकरा दिया। उनका सर चकरा गया। उस समय उनको अपने जीवन के दस वर्ष किसी कूड़े के ढेर पर पड़े हुए दिखायी देने लगे।

दरोगा द्विवेदी के सर पर तो जनून सवार था। भीतर नफरत का तूफान उमड़ा था और अपनी जिंदगी अँधेरे मे ठोकर खाती-सी लगती थी उन्हे। फिर भी अपने विश्वास को उसने नही छोड़ा और उसी के सहारे वह आज भी जिंदा था। समय की प्रतीक्षा कर रहा था। दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी के गुट के साथ पार्टी को छोड़कर किसान दल की साझे की सरकार मे कुछ समय के लिए शामिल हो गए। तब जाकर उनके जीवन का पहला मकसद पूरा हुआ, कान्स्टेबल भरतप्रताप द्विवेदी दरोगा बन गये। साझे की सरकार से अपने कीमती एक वोट के बदले में उन्होंने सिर्फ यही माँगा था। जिस दिन भरतप्रताप दरोगा बने, दोनों भाई उसी तरह गले मिले जैसे चौदह वर्ष के वनवास के बाद अयोध्या लौटने पर भरत से राम गले मिले थे। फर्क सिर्फ इतना था दरोगा द्विवेदी छोटे भाई, भरतप्रताप बड़े भाई थे। पिछले कुछ दिन दरोगा द्विवेदी के लिए किसी बनवास से कम न थे। गुरुपदस्वामी से अलग होकर वह इन दिनों, अपने भाई को भी, मुँह दिखाने के काबिल न होने से अलग हो गये थे। अब भाई के दरोगा बन जाने पर वह घर लौटे, भाई के पैर छुए, गले मिले। फिर रोशनी, बैण्डबाजे के साथ उन्होंने एक बहुत बड़ी दावत कर डाली। इस दावत में पुलिस महकमे के आला अफसर, साझेदारी सरकार के मंत्रिमंडल के सदस्यों के साथ उन्होने गुरुपदस्वामी को बुलाया। और लोग तो आये लेकिन गुरुपदस्वामी किसी वजह से इस बार भी चूक गये। अब दरोगा द्विवेदी को पूरा इतमिनान हो गया, गुरुपदस्वामी कूड़ा थे, गोबर के स्रोत थे। पार्टी से अलग होकर साझे की सरकार में शामिल होते समय उनको पिछले दस वर्षों की अपनी तपस्या इस कूडे के ढेर पर पड़ी दिखी थी।

फिर से कान्स्टेबल बना दिया जायेगा।

जब रंगीनराय लोबीराम के गुट की बैठक के लिए विधायकों को जुटाने के मकसद से दरोगा द्विवेदी के यहाँ पहुँचे थे, वह उस समय इसी दुख में डूबे थे। वक्त ने उन्हें दोबारा फिर उसी मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया था, जिसे वह तीन वर्ष पहले पीछे छोड़ आये थे। उनके लिए यह मौत से बदतर परिस्थिति थी जब ईश्वर-सरीखा पूजनीय उनका भाई मुग्रत्तल हो जाये, फिर से कान्स्टेबल बना दिया जाये और वह कुछ न कर पायें! इस विडम्बना से निकलने के लिए वह छटपटा रहे थे। वह अपनी निष्क्रियता से और भी ज्यादा दुखी थे। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से उनका मन बेचैनी की करवटें बदल रहा था। रंगीनराय की बात उन्हें उस समय की हालत में किसी वरदान से कम न लगी। दुखी मन को दूर कहीं आशा की किरण दिखायी दी जिसे पकड़ने के लिए वह फौरन उचककर बैठ गये। उनको विश्वास था, रंगीनराय उनकी मजबूरियों का ख्याल करेंगे और कहीं अगर उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनने से पहले ही गिरा दिया जाये, फिर तो उनके भाई की नौकरी बहाल ही न होगी, आगे की तरक्की भी हो सकेगी।

दरोगा द्विवेदी पुराने आदमी थे। गु पदस्वामी गुट के विधायकों से उनके ताल्लुकात आज भी बने हुए थे। दारुलशफ़ा के चक्कर में कई एक विधायकों को रंगीनराय की बैठक में आने के लिए उन्होंने राजी कर लिया। अन्य विधायकों से बातचीत के दौरान उनके दिमाग में एक फ्लैश आया। तभी उनको लगा हालात अब पकड़ में आने लगेंगे अगर आगे की योजना पर रंगीनराय मान जायें। इसी मकसद से वह वापस रंगीनराय के कमरे की ओर चल दिये।

प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष बलदेव चौधरी तौलकर राजनीति किया करते। उनके तराजू के पलड़े में एक तरफ पद, प्रतिष्ठा, आगे बढ़ने के मौके होते और दूसरी तरफ उनकी पुण्य वर्षों की तपस्या! वैसे तो पुण्य, तपस्या माले, पार्टी के सैकड़ों नेता थे लेकिन उनकी बात ही और थी। लम्बा कद, गेहुँआ रंग, तिकोने भरे हुए चेहरे पर हिटलरी मूँछों की आभा झलकती। महीन लकीरों से भरा, आगे की तरफ चिपका हुआ उनका

भाई के दरोगा बन जाने के बाद दरोगा द्विवेदी के जीवन का पहला मकसद पूरा हो चुका था। अब तो जान हथेली पर रखकर वह निकल चुके थे। उनके जीवन का दूसरा मकसद था, गुरुपदस्वामी को नष्ट करना। यह काम साझे की सरकार में रहकर कहाँ पूरा होना। इसलिए दरोगा द्विवेदी साझे की सरकार के ऐशोआराम छोड़कर अपनी पुरानी पार्टी में, महज गुरुपदस्वामी से बदला लेने के लिए वापस आ गये। तभी से गुरुपदस्वामी के भूतपूर्व भक्त रामप्रताप द्विवेदी का नाम लोगों ने दरोगा द्विवेदी रख दिया।

उसके बाद दिन-रात दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी को नष्ट करने में लग गये। पहले तो इस महान यज्ञ में उनको असफलताएँ ही हाथ लगीं। साझे की सरकार टूटी तो गुरुपदस्वामी मुख्यमंत्री बन गये। वह उनके लिए बड़ा कठिन समय था। चारों ओर अराजकता, महँगाई, विद्रोह की आग भड़कने लगी थी। दरोगा द्विवेदी ने अपनी हरकतों से उस आग को भड़काने की हर कोशिश की। अन्दर से उत्सुकदास और बाहर से दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी की जड़ें खोद रहे थे। उन दिनों सरकारी कर्मचारियों के कई खतरनाक विद्रोह हुए जिनसे गुरुपदस्वामी का सिंहासन हिल उठा। लोग कहते हैं इन विद्रोहों के पीछे दरोगा द्विवेदी का हाथ था।

दरोगा द्विवेदी अब तक एक खतरनाक आदमी बन चुके थे। गुरुपदस्वामी के प्रदेश पार्टी की सरकार के पतन के बाद भी दरोगा द्विवेदी ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। इधर उत्सुकदास ने दरोगा द्विवेदी की हरकतों से तंग आकर उनके भाई भरतप्रताप द्विवेदी को मुअत्तल करवा दिया। असल में दरोगा बनने के बाद भी भरतप्रताप ने अपनी घूसखोरी की हरकतें जारी रखीं। कान्स्टेबल से एकाएक दरोगा बन जाने पर भी भरतप्रताप घूसखोरी कान्स्टेबल की तरह ही से करते। यह उनको कौन समझाता, दरोगा और कान्स्टेबल के घूस लेने के तरीकों में कैसे फर्क होता। इसी नासमझी में उन्होंने गल्तियाँ की जिसकी बदौलत वह मारे गये। अब तो यहाँ तक नौबत आ गयी, दरोगा भरतप्रताप को फिर से कान्स्टेबल बनाया जा रहा था। उधर हालातों ने ऐसे मोड़ पर दरोगा द्विवेदी को लाकर खड़ा कर दिया, जहाँ एक बार फिर उनके लिए जीवन-मरण का प्रश्न सामने आ गया था। उनको पूरा विश्वास था, अगर उत्सुकदास प्रदेश सरकार के मुख्यमंत्री बने तो उनके भाई भरतप्रताप को

फिर से कान्स्टेबल बना दिया जायेगा।

जब रंगीनराय लोबीराम के गुट की बैठक के लिए विधायकों को जुटाने के मकसद से दरोगा द्विवेदी के यहाँ पहुँचे थे, वह उस समय इसी दुख मे डूबे थे। वक्त ने उन्हें दोबारा फिर उसी मोड पर लाकर खडा कर दिया था, जिसे वह तीन वर्ष पहले पीछे छोड़ आये थे। उनके लिए यह मौत से बदतर परिस्थिति थी जब ईश्वर-सरीखा पूजनीय उनका भाई मुअत्तल हो जाये, फिर से कान्स्टेबल बना दिया जाये और वह कुछ न कर पायें! इस विडम्बना से निकलने के लिए वह छटपटा रहे थे। वह अपनी निष्क्रियता से और भी ज्यादा दुखी थे। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से उनका मन बेचैनी की करवटे बदल रहा था। रंगीनराय की बात उन्हें उस समय की हालत में किसी वरदान से कम न लगी। दुखी मन को दूर कहीं आशा की किरण दिखायी दी जिसे पकड़ने के लिए वह फौरन उचककर बैठ गये। उनको विश्वास था, रंगीनराय उनकी मजबूरियों का ख्याल करेंगे और कहीं अगर उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनने से पहले ही गिरा दिया जाये, फिर तो उनके भाई की नौकरी बहाल ही न होगी, आगे की तरक्की भी हो सकेगी।

दरोगा द्विवेदी पुराने आदमी थे। गु पदस्वामी गुट के विधायकों से उनके ताल्लुकात आज भी बने हुए थे। दारुलशफ़ा के चक्कर में कई एक विधायकों को रंगीनराय की बैठक में आने के लिए उन्होंने राजी कर लिया। अन्य विधायकों से बातचीत के दौरान उनके दिमाग में एक फ्लैश आया। तभी उनको लगा हालात अब पकड़ में आने लगेंगे अगर आगे की योजना पर रंगीनराय मान जायें। इसी मकसद से वह वापस रंगीनराय के कमरे की ओर चल दिये।

प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष बलदेव चौधरी तौलकर राजनीति किया करते। उनके तराजू के पलड़े में एक तरफ पद, प्रतिष्ठा, आगे बढ़ने के मौके होते और दूसरी तरफ उनकी पुण्य वर्षों की तपस्या! वैसे तो पुण्य, तपस्या वाले, पार्टी के सैकड़ों नेता थे लेकिन उनकी बात ही और थी। लम्बा कद, गेहुँआ रंग, तिकोने भरे हुए चेहरे पर हिटलरी मूँछों की आभा झलकती। महीन लकीरों से भरा, आगे की तरफ चिपका हुआ उनका

भाई के दरोगा बन जाने के बाद दरोगा द्विवेदी के जीवन का पहला मकसद पूरा हो चुका था। अब तो जान हथेली पर रखकर वह निकल चुके थे। उनके जीवन का दूसरा मकसद था, गुरुपदस्वामी को नष्ट करना। यह काम साझे की सरकार में रहकर कहां पूरा होता। इसलिए दरोगा द्विवेदी साझे की सरकार के ऐशोआराम छोड़कर अपनी पुरानी पार्टी में, महज गुरुपदस्वामी से बदला लेने के लिए वापस आ गये। तभी से गुरुपदस्वामी के भूतपूर्व भक्त रामप्रताप द्विवेदी का नाम लोगों ने दरोगा द्विवेदी रख दिया।

उसके बाद दिन-रात दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी को नष्ट करने में लग गये। पहले तो इस महान यज्ञ में उनको असफलताएँ ही हाथ लगीं। साझे की सरकार टूटी तो गुरुपदस्वामी मुख्यमंत्री बन गये। यह उनके लिए बड़ा कठिन समय था। चारों ओर अराजकता, महँगाई, विद्रोह की आग भड़कने लगी थी। दरोगा द्विवेदी ने अपनी हरकतों से उस आग को भड़काने की हर कोशिश की। अन्दर से उत्सुकदास और बाहर से दरोगा द्विवेदी गुरुपदस्वामी की जड़ें खोद रहे थे। उन दिनों सरकारी कर्मचारियों के कई खतरनाक विद्रोह हुए जिनसे गुरुपदस्वामी का सिंहासन हिल उठा। लोग कहते हैं इन विद्रोहों के पीछे दरोगा द्विवेदी का हाथ था।

दरोगा द्विवेदी अब तक एक खतरनाक आदमी बन चुके थे। गुरुपद-स्वामी के प्रदेश पार्टी की सरकार के पतन के बाद भी दरोगा द्विवेदी ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। इधर उत्सुकदास ने दरोगा द्विवेदी की हरकतों से तंग आकर उनके भाई भरतप्रताप द्विवेदी को मुअत्तल करवा दिया। असल में दरोगा बनने के बाद भी भरतप्रताप ने अपनी घूसखोरी की हरकतें जारी रखीं। कान्स्टेबल से एकाएक दरोगा बन जाने पर भी भरत-प्रताप घूसखोरी कान्स्टेबल की तरह ही से करते। यह उनको कौन समझाता, दरोगा और कान्स्टेबल के घूस लेने के तरीकों में कैसे फर्क होता। इसी नासमझी में उन्होंने गल्तियाँ कीं जिसकी बदौलत · मारे गये। अब तो यहाँ तक नौबत आ गयी, दरोगा -भरतप्रताप -कान्स्टेबल बनाया जा रहा था। उधर हालातों ने ऐसे मोड़ पर -को लाकर खड़ा कर दिया, जहाँ एक बार फिर उनके मरण का प्रश्न सामने आ गया था। उनको पूरा विश्वास, उत्सुकदास प्रदेश सरकार के मुख्यमंत्री बने तो उनके भाई भ

फिर से कान्स्टेबल बना दिया जायेगा।

जब रंगीनराय लोबीराम के गुट की बैठक के लिए विधायकों को जुटाने के मकसद से दरोगा द्विवेदी के यहाँ पहुँचे थे, वह उस समय इसी दुख में डूबे थे। वक्त ने उन्हें दोबारा फिर उसी मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया था, जिसे वह तीन वर्ष पहले पीछे छोड़ आये थे। उनके लिए यह मौत से बदतर परिस्थिति थी जब ईश्वर-सरीखा पूजनीय उनका भाई मुग्रत्तल हो जाये, फिर से कान्स्टेबल बना दिया जाये और वह कुछ न कर पायें! इस विडम्बना से निकलने के लिए वह छटपटा रहे थे। वह अपनी निष्क्रियता से और भी ज्यादा दुखी थे। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से उनका मन बेचैनी की करवटें बदल रहा था। रंगीनराय की बात उन्हें उस समय की हालत में किसी वरदान से कम न लगी। दुखी मन को दूर कहीं आशा की किरण दिखायी दी जिसे पकड़ने के लिए वह फौरन उचककर बैठ गये। उनको विश्वास था, रंगीनराय उनकी मजबूरियों का ख्याल करेंगे और कहीं अगर उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनने से पहले ही गिरा दिया जाये, फिर तो उनके भाई की नौकरी बहाल ही न होगी, आगे की तरक्की भी हो सकेगी।

दरोगा द्विवेदी पुराने आदमी थे। गु पदस्वामी गुट के विधायकों से उनके ताल्लुकात आज भी बने हुए थे। दारुलशफ़ा के चक्कर में कई एक विधायकों को रंगीनराय की बैठक में आने के लिए उन्होंने राजी कर लिया। अन्य विधायकों से बातचीत के दौरान उनके दिमाग में एक फ्लैश आया। तभी उनको लगा हालात अब पकड़ में आने लगेंगे अगर आगे की योजना पर रंगीनराय मान जायें। इसी मकसद से वह वापस रंगीनराय के कमरे की ओर चल दिये।

•

प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष बलदेव चौधरी तौलकर राजनीति किया करते। उनके तराजू के पलड़े में एक तरफ पद, प्रतिष्ठा, आगे बढ़ने के मौके होते और दूसरी तरफ उनकी पुण्य वर्षों की तपस्या! वैसे तो पुण्य, तपस्या माने, पार्टी के सैकड़ों नेता थे लेकिन उनकी बात ही और थी। लम्बा कद, गेहुँआ रंग, तिकोने भरे हुए चेहरे पर हिटलरी मूँछों की आभा झलकती। महीन लकीरों से भरा, आगे की तरफ चिपका हुआ उनका

छोटे कद का माथा, हवाई अड्डे की पेटी की तरह, सन जैसे सफेद बालों वाले सिर के एक तरफ से दूसरी तरफ तक, जैसे उनके पूरे व्यक्तित्व से अलग होकर पड़ा था। बिना रोएँ वाली भौंग्रों के नीचे, चुन्दी जैसी आँखों के बीच मोटी-सी नाक गोभी के छोटे फूल की तरह चारों ओर भागने को हर वक्त तैयार रहती। पतली गर्दन और एक तरफ को झुके हुए कंधों के साथ उनका मातमी सीना पिटा हुआ जितना अन्दर को घुसा हुआ था, उनका पेट उतना बाहर की तरफ गोल घड़े की तरह लटका रहता। सब मिलाकर बलदेव चौधरी हृष्ट-पुष्ट खाये-पिए, अच्छे आदमी, अच्छे खासे नेता लगते।

बलदेव चौधरी, इधर कई वर्षों से मुख्यमंत्री पद के उम्मीदवार थे। वहाँ पार्टी में उनके जैसे कितने दिग्गज घुसे थे। फिर भी बढ़ती हुई उम्र की बेल का फैलाव देखकर वह अधिक प्रतीक्षा करने की स्थिति में नहीं थे। उनके जीवन का समय बड़ी रफ्तार से भाग रहा था। समय की रफ्तार उनको अपनी पकड़ से बाहर भागती हुई लग रही थी। मंत्रि-मंडल में साधारण मंत्री बनकर रहना अब उनको गवारा नहीं था। वैसे भी अपनी मान्यताओं के स्तर के अनुसार उनको प्रदेश का मुख्यमंत्री पाँच वर्ष पहले बन जाना चाहिए था। लेकिन राजनैतिक दादागीरी, केन्द्रीय नेताओं के हस्तक्षेप के कारण वह अभी तक न तो मुख्यमंत्री बन पाये ना ही आगे के बारे में कोई विश्वास या आश्वासन उन्हें मिला। उत्सुकदास के नेतृत्व में बनने वाले मंत्रिमंडल में, एक बात तो तय थी, वह हर बार की तरह वरिष्ठ मंत्री होंगे। फिर भी इस बार उनको अपनी प्रतिष्ठा खतरे में दिखाई दे रही थी।

पार्टी उत्तराधिकार की परम्परा में बलदेव चौधरी उत्सुकदास से बहुत आगे थे। उनका हक तो तभी बनता था जब गुरुपदस्वामी मुख्यमंत्री बने थे। उस समय तो वह मन मारकर बैठ गये क्योंकि गुरुपदस्वामी उनके बराबर के थे। कुछ माने में गुरुपदस्वामी उनसे बड़े नेता थे। और फिर पार्टी में उनका समर्थन भी ज्यादा था। उसमे पहले पुरानी पीढ़ी के हाथो मे सत्ता की बागडोर थी। वह पीढ़ी आजादी की लड़ाई के दिनो से अधिकारों, स्वर्थों के समझौते करती आ रही थी। उस पीढ़ी ने सत्ता का सुख भोगना शुरू करा, तो बस उससे चिपककर रह गई थी। जितनी तेजी से उत्पादन, समृद्धि, साधन बढ़ने की योजनाएँ

बनतीं, उतनी तेजी से पुरानी पीढ़ी, खुराकियों, मददगारों, गुटबाजों से घिरी जा रही थी। शासनतंत्र से बड़ा गुरु कौन होगा? कुर्सी सब कुछ सिखा देती। फिर शासनतंत्र हाथ से निकलने, कुर्सी नीचे से खिसक जाने के डर से कोई भी इस धरातल पर नहीं जाना चाहता जहाँ बलिदानों की समाधि थी। लेकिन बलदेव चौधरी की आँखों में कुछ धूमिल सपने आज भी झिलमिला रहे थे। सन् '४२, जाड़े की अँधेरी रातों, गर्मी के लम्बे दिन, जेल की सीकचों के अन्दर जो उन्होंने पथरीली जमीन पर काटे थे, उनको याद थे। उस दौरान वह अक्सर देश के बारे में सोचा करते। तभी से वह तरक्की की योजनाएँ बनाते आ रहे थे। उनकी योजनाएँ उनके अपने सामाजिक, आर्थिक चिन्तन का परिणाम थी जो जेल की दीवारों के भीतर तपस्या के समय हृदय की गहराइयों से निकली थीं। कृषि उत्पादन, जमीन की उपज से लेकर औद्योगिक प्रगति, बेरोजगारी और विश्व-राजनीति तक के अनन्य क्षेत्रों में उनके विचार लम्बी अवधि की वैज्ञानिक खोजों के निश्चित परिणाम की तरह महान उपलब्धियों के रूप में उनके चारो ओर व्याप्त रहते। बलदेव चौधरी उन्हीं विचारों की दुनिया मे रहा करते। धीरे-धीरे, जैसे-जैसे समय गुजरता गया, उनके विचार, उनकी योजनाएँ जीवन में इतने गहरे बैठ गये, उनसे अलग होना किसी प्रकार सम्भव नहीं था। कुर्सी का तिकड़म, सत्ता की गुटबाजी में तो वह चूक गये, लेकिन पार्टी के अन्दर एक ईमानदार नेता के रूप में उन्होंने अपना एक स्थान बना लिया। इसीलिए दक्षिणी जिलों के प्रतिनिधित्व के लिए प्रदेश में बनने वाले हर मंत्रिमंडल में उनका नाम अवश्य लिया जाता।

इधर कुछ वर्षों पहले कृषि उत्पादन, सहकारिता और भूमिगत सुधारों के क्षेत्र में उन्होंने कुछ नयी खोज की थी जिनको लागू करने के लिए वह हर बार संघर्ष कर रहे थे। जहाँ एक तरफ उनकी खोज, विचार, उनकी योजनाएँ करीब-करीब सभी विभागों से सम्बन्धित होतीं, काम करने के लिए उनको सिर्फ एक-दो विभागों का ही मंत्री बनाया जाता। मंत्रिमंडल मे अन्य मंत्रियों को वह बड़ी घिन से देखा करते। पार्टी के अधिवेशन होते तो खुलकर हर मौके पर वह अपनी योजनाएँ सामने रखते। पार्टी के अधिवेशन में पार्टी अध्यक्ष, बड़े नेताओं, मुख्यमंत्री, प्रधानमंत्री सभी को समय-समय पर अपने विचार-दर्शन से उन्होंने अवगत करा रखा था। फिर

भी पार्टी के कार्यक्रम, पंचवर्षीय योजनाएँ बलदेव चौधरी से पूछकर नहीं बनायी जाती थी। परिणामस्वरूप अन्य विभागों में क्या, स्वयं अपने मंत्रिमंडलीय विभागों में उनको अपनी योजनाएँ लागू करने में बड़ी कठिनाई हो रही थी।

हर आम चुनाव में वह दो-चार लोगों को चुनाव का टिकट दिलवा दिया करते, जिसकी वजह से पार्टी के अन्दर करीब ग्यारह विधायक उनके महान समर्थक थे जो हर समय उन्हीं का गुणगान किया करते। बलदेव चौधरी की योग्यता, ईमानदारी, लगन की पार्टी में बड़ी धाक थी। लेकिन उनको मालूम था, पार्टी की गुटबन्दी, केन्द्रीय नेताओं की नाराजगी और स्वयं अपनी जाति के कारण वह मुख्यमंत्री स्वाभाविक रूप से नहीं बन सकेंगे। गुरुपदस्वामी मंत्रिमंडल के गिरने के बाद जब उन्हें प्रदेश पार्टी का अध्यक्ष बनाया गया, तब उनके मन में एक बार आशा बँधी थी। तभी उन्होंने पार्टी अध्यक्ष से अपना जेल का पुराना सम्बन्ध बढ़ाया। अपने विचारों, योजनाओं को विस्तारपूर्वक उनके सामने बेनकाब किया। एक तरह से वह पहली बार खुलेआम मुख्यमंत्री पद के लिए अपना हक माँग रहे थे। राजनीति के दाँव-पेंच उनको आते नहीं थे, लेकिन पार्टी अध्यक्ष को उन्होंने करीब-करीब तोड़ ही लिया। उनको उस समय विश्वास था, अखिल भारतीय पार्टी अध्यक्ष अगर मान जायें तो स्वाभाविक रूप से उनके जैसे वरिष्ठ नेता और प्रदेश पार्टी अध्यक्ष के लिए मुख्यमंत्री बनना कोई मुश्किल काम नहीं था। उधर पार्टी अध्यक्ष कट्टर समाजवादी थे, जबकि बलदेव चौधरी घोर गांधीवादी। दोनों के विचार कहाँ मिलते? फिर भी पार्टी अध्यक्ष को उनकी ईमानदारी, योग्यता पर पूरा भरोसा था। वह खुद तो उनके हक के माफिक थे, लेकिन भला वह उनको कैसे समझाते। प्रदेश के मुख्यमंत्री के लिए उनसे पूछा तक नहीं जायेगा। मुख्यमंत्री, पार्टी अध्यक्ष, कार्यकारिणी, संसदीय बोर्ड या विधायकों की गिनती से नहीं राजनीति के तिकड़म से बना करता है। बलदेव चौधरी बस वहीं लटके रह गये और उत्सुकदास का मुख्यमंत्री पद के लिए नाम घोषित कर दिया गया। असल में उन्होंने मुख्यमंत्री बनने की अपनी आकांक्षा पार्टी अध्यक्ष के अतिरिक्त और किसी को बतायी भी नहीं थी। उन दिनों वह दिल्ली के तमाम केन्द्रीय नेताओं के घरों की परिक्रमा करते रहे, प्रधानमंत्री से भी इस आशा से कई बार मिले, कोई उनसे मुख्यमंत्री

बनने का प्रस्ताव कर दे। स्वयं अपना मुंह खोलकर वह कहना नहीं चाहते थे। उधर किसी भी केन्द्रीय नेता या प्रधानमंत्री ने उनसे इस बारे में कुछ भी नहीं कहा। गुरुदयालजी का मंत्रिमंडल भ्रष्ट आचरण के आरोपों के कारण हटाया गया था। उस समय ईमानदार, योग्य मंत्री होने की प्रतिष्ठा उनके हक में थी। उत्सुकदास का नाम तब तक नहीं चला था। उस समय बलदेव चौधरी अगर साफ-साफ अपनी इच्छा जाहिर कर देते तो शायद एक बार उनका नाम जोर पकड़ लेता। लेकिन वह तो संकोच में मारे गये। जब केन्द्रीय नेताओं, प्रधानमंत्री से वह मिल चुके और किसी ने उनसे मुख्यमंत्री बन जाने का प्रस्ताव नहीं किया तो वह पार्टी अध्यक्ष के यहाँ तम्बू तानकर बैठ गये। जिस संकोच में बलदेव चौधरी ने केन्द्रीय नेताओं से स्पष्ट बात नहीं कही थी, कुछ उसी प्रकार के संकोच में पार्टी अध्यक्ष भी उनसे मुख्यमंत्री के मसले में अपनी सही हैसियत खुलासा कह न सके। पार्टी अध्यक्ष ने कई बार इशारे से उनसे प्रधानमंत्री के चमचों तथा अन्य केन्द्रीय नेताओं से मिलने के लिए कहा तो वह चुप ही रहे। उस समय उनके अन्दर खुशी की लहर दौड़ जाती, क्योंकि वह मिलने-जुलने का काम, भले ही अपने तरीके से हो, वह पहले ही कर चुके थे। उधर केन्द्रीय नेताओं को उनकी परिक्रमा के पीछे मंत्रिमंडल में अपना पद सुरक्षित रखने का प्रयास दिखायी दिया। मंत्रिमंडल में उनके लिए पद तो सुरक्षित हो गया।

आखिर में बलदेव चौधरी गच्चा खा गये तो उनको होश आया। तब उनको पार्टी अध्यक्ष ने अपने बचाव के लिए किस तरह उत्सुकदास का नाम मुख्यमंत्री के लिए तय हुआ, बताया। पार्टी अध्यक्ष की जुबानी, अन्दर की बातें जानकर बलदेव चौधरी का मन दुखी हो गया। वह समझ गये यह सब धोखा था। सबके सब उनको बना रहे थे। तब उनको अपनी खुद की बेवकूफियों पर आश्चर्य हुआ, लेकिन इसके साथ ही एक बात उनके सामने साफ थी : इस तरह वह कभी मुख्यमंत्री नहीं बन सकेंगे। वह अपने को कुछ माने में मुख्यमंत्री पद के लिए अनुपयुक्त समझने लगे। इतनी तिकड़म, इतनी लम्बी राजनीति कितने धोखे-धड़ी के रास्तों से गुजरकर वहाँ पहुँचती जहाँ से उन्होंने अपनी योजनाओं, अपने धार्मिक दर्शन सिद्धान्तों को लागू करने का सपना देखा था।

बलदेव चौधरी की निराशा ने उनको वहशी बना दिया।

रंगीनराय ने आरामकुर्सी के सामने रखी हुई तिपायी से पैरों को हटाकर वालकनी की मुंडेर पर रख लिया था। उस समय वह मासूम निगाहों से यहां होने वाली बैठक के अस्तित्व को तोल रहे थे। सफेद चाँदनी पर रखे हुए गावतकिये बार-बार उन्हें किसी सन्नाटे की तरफ घसीटे लिये जा रहे थे। उनको मालूम था कुछ लोग आयेंगे जरूर! फिर लोचीराम के भी तो विधायक थे। लेकिन उससे होगा क्या'''वह सोच रहे थे। अब हो भी क्या सकता था। कहीं ऐसा तो नहीं'''यह सब कोई ऐसी राजनैतिक भूल हो, जिसका परिणाम उनको भविष्य में भुगतना पड़े। अब वह थोड़ा-सा डरने लगे थे। उनको थोड़ा डर इस बात का लग रहा था, प्रदेश पार्टी अध्यक्ष के लिए उनका नाम जो करीब-करीब तय था अब कहीं कट न जाये। एक तरह से अगर उत्सुकदास का मुख्य-मंत्री बनना टाला नहीं जा सकता तो उनके प्रदेश पार्टी अध्यक्ष बन जाने से आगे के विरोध की राजनीति को बड़ा सहारा मिलेगा। प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष होने के बाद उत्सुकदास को नष्ट करने का अभियान सही समय पर प्रभावशाली ढंग से चलाया जा सकता है। फिर उत्सुकदास के ऊपर इतना बड़ा अंकुश रहने से वह अधिक कुछ गड़बड़ नहीं कर सकेंगे। इस समय के अपने विश्लेषण के अनुसार उनको ऐसा महसूस हो रहा था, आगे आने वाले समय की राजनैतिक व्यूह रचना के लिए इस समय उनको शान्त ही रहना चाहिए था। पहले पार्टी अध्यक्ष बन जायें तब बैठकबाजी होनी चाहिए थी। लेकिन कहीं अगर इस समय रुक गये, उत्सुकदास मुख्यमंत्री बन गया और पार्टी अध्यक्ष कोई और हो गया'''तब! किसे मालूम था, तब क्या होगा? हां, तब तो उत्सुकदास को सँभलने का समय मिल जायेगा। रंगीनराय राजनीति के दाँव-पेंच खेलने में नये तो थे नहीं। मुख्यमंत्री पद के लिए उत्सुकदास के नाम की घोषणा हो जाने के बाद भी जब प्रदेश पार्टी अध्यक्ष के लिए उनके नाम की घोषणा नहीं हुई, तभी उनको दाल में कुछ काला लगा था। अपने निकटवर्ती सूत्रों से प्रदेश पार्टी अध्यक्ष के नाम की घोषणा उत्सुकदास द्वारा रुकवाने की खबर उनको मिली थी'''अब मुख्यमंत्री बन जाने के बाद किसी भी कीमत पर उत्सुकदास उनको अध्यक्ष तो बनने नहीं देगा। ऊपर से ऐसे हालात पैदा करने की कोशिश करेगा, जिसमें अपने गुट के साथ उनको पार्टी तक छोड़नी पड़ सकती है। फिर भी इन स्वार्थों से ऊपर उत्सुकदास

के प्रति उनकी घृणा, उनका आक्रोश, बराबर उनको उकसा रहा था। अपने विचारों के मंथन से भी वह कोई रास्ता ढूंढ न पाये। लेकिन तभी दरोगा द्विवेदी ने आकर उनको झकझोर दिया।

"अरे वाह राय साहब! आप तो महफ़िल सजाये बैठे हैं।" दरोगा द्विवेदी ने रंगीनराय के फ्लैट में दाखिल होकर वहाँ होने वाली बैठक का इंतजाम देखकर कहा।

दरोगा द्विवेदी को देखते ही रंगीनराय उचककर बैठ गये। यह हँसी-मजाक का समय नहीं था। इस समय जिन्दगी और मौत में बाजी लगी हुई थी। उनके चेहरे पर धुआँ-सा फैलकर गाढ़ा होता जा रहा था। उन्होंने दरोगा द्विवेदी की ओर देखकर आशाजनित विश्वास से पूछा, "दरोगा भाई! कितने लोग मिले?"

"पहले चक्कर में बीस, दूसरे चक्कर में बारह। सब मिलाकर बत्तीस।"

"क्या सब आयेंगे?"

"इसका तो क्या कहें? इन लोगों का क्या आना, क्या नहीं आना।"

"लो दरोगा! बत्तीस तो तुमने लिये, पाँच-छः हमें टेलीफोन पर मिल गये, कुछ पड़ोसी हैं। यह पड़ोसी तीन हैं। दस मान लो। बत्तीस दस बयालीस! फिर खुराकी भी दौड़ रहे हैं कुछ तो वह भी खींच लायेंगे।"

"राय साहब! इन खुराकियों को कम न समझिये। कभी-कभी दस एम० एल० ए० तक ये ले आते हैं।"

"लेकिन साले, सही बात कभी न बतायेंगे। उनके यहाँ जायेंगे तो उनकी जैसी, यहाँ आयेंगे तो यहाँ जैसी। कुछ तुमने भी भेजे?"

"हाँ, तीन लोग हमने भी दौड़ाये।"

"फिर तसल्ली के लिए दस इनके ले लो। अब कित्ते भये?"

"बावन! यह बावन क्या, पचास कर लें?"

"नहीं···नहीं, कम न करो।"

"तो फिर पचपन ले लें।"

"साठ! अच्छा, दरोगा बताओ तो भला, लोबीराम के कित्ते लोग होंगे?"

"लोबीराम के पच्चीस से कम क्या होंगे?"

"बस पच्चीस! तब क्या खाक मीटिंग होगी। अमाँ! पचपन-साठ

तो आपने जोड़े है।"

"तो क्या सब आ जायेंगे?" दरोगा ने व्यंग्य से कहा।

"तो फिर कित्ते आयेंगे।"

"अपने?"

"हाँ।"

"आधे कर लो, तीस।"

"फिर भी, अपने तीस होंगे तो क्या लोबीराम के सिर्फ पच्चीस? इसका मतलब हुआ हम लोबीराम से बड़े नेता है।"

"आप रायसाहब, लोबीराम से बड़े नेता तो है, लेकिन इस अर्थ में नहीं। लोबीराम के पास तीन चीजें आपसे ज्यादा हैं।" दरोगा द्विवेदी ने बदमाशी के स्वर मे कहा।

"कौन तीन चीजें?"

"एक तो पैसा, दूसरे हरिजन, पिछड़े वर्ग के सब मिलाकर साठ विधायक तो होंगे।"

"अभी तो कह रहे थे, पच्चीस!"

"सो तो अपनी बैठक में आने वाले। फिर उसने न तो हरकारे दौड़ाये, न किसी से कहा। इत्ते तो सिर्फ हवा सूँघकर पहुँचेंगे।"

"अच्छा हाँ, वह तीसरी चीज तो रह गयी?"

"कौन तीसरी?"

"वही, लोबीराम की तीसरी।"

"अरे वो! छोड़ो भी रायसाब, इस वक्त तुम्हारा मूड नहीं है।"

"मेरा मूड नही है, भला किस बात का?"

"वही तीसरी बात का।"

"चल बे, बता जल्दी। अभी बहुतेरे काम धरे हैं।"

"लोबीराम की तीसरी बात तो लछमनिया है।"

मुसीबत और परेशानी के इन लमहों में भी रंगीनराय को हँसी आ गयी। कुछ हँसी रोकने की कोशिश करते हुए वह बोले, "तो यह बात है।"

कुछ शर्माते हुए दरोगा द्विवेदी ने कहा, "और कुछ नही, बस, लछमनिया को समझाय दिया जो लोग वहाँ लोबीराम को पूछें, उन्हें बस यहाँ भेज दे।"

"तो लछमनिया के कहने से लोग इधर आ जायेंगे?"

"रायसाव, बात हमरी या लछमनिया या खुराकियों के कहने-सुनने की तो है नही। इस वक्त तो सारा हमला बस ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को जमा करने का है।"

"तो कुल कित्ते आयेंगे?" रंगीनराय घूमकर फिर वहीं पहुँच गये, जहाँ से बात शुरू हुई थी।

"साफ-साफ कहता हूँ, बुरा न मानना! ज्यादा लोगों के आने की उम्मीद कम है।"

"काहे?"

"एक तो पार्टी मीटिंग के लिए लोग सजते-सँवरते होंगे, कुछ उत्सुकदास की पूँछ बन पड़े होंगे और फिर पार्टी अध्यक्ष भी तो आये हैं।"

"तब क्या किया जाये! बैठक में साठ-सत्तर भी न भये तो सब बेकार!"

"एक आइडिया तो आता है!"

"बोल···दरोगा···बोल, इस समय आइडिया की बड़ी सख्त जरूरत है।"

"क्या है, रायसाब, यह सारा हिसाब पच्चीस उनके, तीस अपने—सब हवा में हैं! सच में इससे होगा क्या? लोग यहाँ बैठक में आ भी जायें तो भी वक्त कहाँ है, उनको भाषण पिलाने का! फिर हमरे ख्याल में बहुत कम लोग आ पायेंगे, क्योंकि उनको इस 'बैठक के पीछे हमारी साजिश के बारे में कुछ पता है, कुछ नहीं पता। जिनको पता है, वह केन्द्रीय नेताओं के डर से नहीं आयेंगे। जिनको नहीं पता है, वह वक्त की कमी या उत्सुकदास और पार्टी अध्यक्ष के यहाँ हो रहे बड़े तमाशों की वजह से टाल जायेंगे।"

"लोबीराम के लोग?"

"वहाँ भी ऐसा ही कुछ है। वह तो जो मिलेंगे, उन्हें साथ ले आयेंगे।"

"तो सब नष्ट है।"

"नहीं·· मेरा यह मतलब नहीं, मेरी बात तो सुनें।"

"तो ठीक है, कहो, तुम्हारी विचारधारा ठीक ही लगती है।"

"मैने कहा ना, एक आइडिया मिला है, हमें बलदेव चौधरी के यहाँ।"

"बलदेव चौधरी कहाँ मिलि गये?"

"बस वे जा रहे थे, पार्टी अध्यक्ष के यहां। बड़े दुखी हैं। प्रदेश पार्टी अध्यक्ष पद से उनका इस्तीफा कब का मंजूर है, अब उत्सुकदास मंत्रिमंडल में शामिल होने को उनका जी नही मानता।"

"यह सब तो पता है।"

"का तुमका या भी पता है, दिल्ली से पार्टी अध्यक्ष आये हैं?"

"हां! या भी पता है!"

"तब तो या भी पता होगा, पार्टी अध्यक्ष उत्सुकदास का जानी दुश्मन हैं।"

"होव!"

"बलदेव चौधरी खार खाये बैठल हैं।"

"होव!"

"गुरुपदस्वामी का डर है, बस लोगन का यही कारन···"

"बस दरोगा! समझि गये! गुरुपदस्वामी का जवाब है अई पार्टी अध्यक्ष!"

"और बलदेव चौधरी, ग्यारह तो हैं उनके साथ!"

"धत तेरे की! ग्यारह नही, एक सौ ग्यारह कहा। बलदेव चौधरी जो खड़े हुए जायें तो पूरे दारुलशफ़ा मा तहलका मचि जाई!"

"सो तो है! इत्ते बड़े नेता!"

"तुमने उनकी टोह तो ली होगी।"

"बोला ना, तपे बैठे हैं। उत्सुकदास का मंत्रिमंडल उनके लिए वैसे भी बेकार ही है। उसमा वह शामिल होने वाले नहीं।"

"इसलिए! उसे ना बनने देने में वह सहयोग दे सकते हैं।" दरोगा के स्वर में स्वर मिलाकर रंगीनराय ने कहा। दरोगा के फर्टाइल दिमाग का यह आइडिया बेहद नमकीन था। इनके मुंह का जायका बदलने लगा, साथ में दिमाग पर छायी हुई धुन्ध भी साफ होने लगी। तभी आरामकुर्सी के बगल, मसनद लगाकर बैठे हुए दरोगा द्विवेदी को ललकारते हुए वह आगे बोले, "तो पार्टी अध्यक्ष को तोड़ना है।"

"वह तो टूटे ही पड़े हैं, असल में अब उनको अपनी तरफ जोड़ना है।"

"हां यह ठीक कहा! और बलदेव चौधरी?"

"रायसाब! आज उत्सुकदास को गिराना है, तो बलदेव चौधरी का नाम आगे बढ़ा दो!"

"पार्टी मीटिंग में, नेतापद के लिए ?"

"और क्या !"

"और लोबीराम ?"

"वह तो अंधे की बटेर है। किसको मिली, किसको नहीं मिली। फिर उस पर भरोसा भी न करना। आखिरी वक्त पर भी अगर दाम लग गये, टूट जायेगा।"

"सो तो हो, लेकिन उसे छोड़ा भी तो नहीं जा सकता। साठ विधायकों का जोर है उसके साथ। उधर बलदेव चौधरी के ग्यारह हैं।"

"लेकिन ग्यारह के साथ हवा जो बनेगी। अभी खुद ही कह रहे थे।"

"कह तो रहा था ! लेकिन यार वक्त कितना कम है।"

"इस कम वक्त का एक फ़ायदा भी है।"

"वह क्या ?"

"अगर इतने समय में हम अपनी व्यूह रचना ले जायें, जब वहाँ उत्सुकदास के यहाँ दीवाली मन रही। अगर किसी तरह, इतने ही वक्त में बलदेव चौधरी को मिला लें और लोबीराम को उत्सुकदास के दल्लालों से बचा ले जायें तो···"

"तो, किला फतह !" दरोगा द्विवेदी की बात में अपनी बात जोड़कर रंगीनराय बहुत खुश हुए। उनको लगा, निराशा की शून्य स्थिति से कितने महत्त्वपूर्ण मुकाम पर आ पहुँचे। फिर भी इस सबकी शुरुआत कैसे होगी। पहला ढेला कौन फेंकेगा ? अभी तक तो बिना बात की बात थी। अब एक धरातल बन रहा था। डरते-डरते उन्होंने दरोगा द्विवेदी से अगला सवाल किया, जिसके जवाब पर आगे की कार्यवाही निर्भर थी। उनको मालूम था, अगर यहाँ दरोगा चूक गया तो अब तक की सारी बातें खयाली पुलाव की तरह धरी रह जायेंगी।

"हाँ दरोगा, फिर जरा मामला सुलझ जाये। जरा ध्यान से सुनना···"

उधर दरोगा मसनद पर अधलेटे, आँखें बन्द किये हुए उन्हीं सवालों के बारे में सोच रहे थे जो रंगीनराय के मन में भी उठ रहे थे। था, सवाल ये, शुरुआत कैसे होगी, पहला ढेला कौन मारेगा ? बैठक की आधारशिला कैसे बनेगी ? इतने कम समय में पार्टी अध्यक्ष को यहाँ कैसे लाया जायेगा। इन तमाम सवालों का हल उनको इस तरह मिलने

वाला नहीं था। इस समय उनका दिमाग सवालों की हल्दीघाटी से गुज़र रहा था। चारों ओर उनको प्रश्नचिह्नों के अम्बार दिखायी दे रहे थे, जिनके ऊपर, एक सिरे से दूसरे सिरे तक, एक काफी बड़ा-सा प्रश्नचिह्न लगातार चक्कर लगा रहा था। यह प्रश्नचिह्न था उनके ईश्वर समान पूजनीय बड़े भाई के भविष्य का। उनको अपना पूरा जीवन इन्हीं प्रश्नचिह्नों के बीच घिरा-सा दिख रहा था। आज सिर्फ एक प्रश्न का उत्तर चाहिए था। एक प्रश्न दरोगा द्विवेदी का बड़े भाई के भविष्य का था, उधर एक प्रश्न रंगीनराय की बैठक के भविष्य का था। बड़े भाई के भविष्य के प्रश्न का ही उत्तर ढूँढ़ने के लिए, दरोगा द्विवेदी रंगीनराय के प्रश्नों में इतना उलझे थे। दरोगा द्विवेदी के अंदर खुजलाने की आदत थी। कभी नाक, कभी बगलों में कभी जाँघिया के अंदर हाथ की उँगलियों से खुजलाकर वह उँगलियों को नाक के नथुने पर ले जाकर सूंघ लिया करते। न जाने कौन-सी खुशबू थी जो उनको इतनी पसंद थी। खासकर जब उनका दिमाग शून्यगत परिस्थितियों में उलझा रहता, उस समय उनकी यह हरकतें बढ़ जाती। ऐसे वक्त एक तरफ के कान या कन्धे के नीचे की बगलों को खुजलाने में स्वाभाविक रूप से वह मुँह दूसरी तरफ घुमा लिया करते। कुछ इसी प्रकार की शून्यगत परिस्थितियों में, जब उनका दाहिना हाथ, शरीर के विभिन्न स्थानों से खुशबू बटोरने में लगा हुआ था, जब उनकी निगाहें मुँह के साथ, रंगीनराय के चेहरे से अलग हटकर बैठक की सफेद चाँदनी, गावतकिये से होते हुए अंदर तक बिना किसी मकसद के भटक रही थी, तभी बैठक के अंदर वाले कमरे से चाय के प्लेट-प्यालों के खनकने की आवाज आने लगी, कुछ अँगीठी का धुआँ, कुछ खुराबियों, चमचों का बार-बार अंदर से बाहर की ओर, और बाहर से अन्दर की ओर आना-जाना देखकर, उनका हाथ जो बदन की खुशबू बटोरकर नाक के नथने मे घुसेड़ चुका था, वापस न लौट सका। लेकिन दरोगा इन कुछ क्षणों के बाद ही रंगीनराय के और पास खिसक लिये। दोनों हाथों की हथेलियों को दो-तीन बार रगड़-रगड़कर उन्होंने साफ किया, फिर बोले, "हाँ रायसाब, क्या कहा आपने?"

"क्या कहा···हमने तो यही कहा···जरा ध्यान से सुनना। फिर तुम्हे कहीं और जानकर हम चुप रह गये।"

"कहीं और नहीं, हम यहीं थे।···एक बात बताएँ रायसाब, यह सब

का होइ रहा है।" अंदर के कमरे से धुआँ, चाय, नाश्ते की प्लेटें-प्यालियाँ वगैरह लाते-ले जाते खुराकियों की ओर इशारा करके दरोगा ने पूछा।

"यह सब बैठक की चाय-पार्टी···"

"चायपार्टी ! ···रायसाब जिन्दाबाद···चायपार्टी जिन्दाबाद··· !" आँखें मिचकाकर दोनों हाथ ऊपर की ओर उठाकर, दरोगा द्विवेदी खड़े हो गये।

"अब यह कौन नाटक है ?" रंगीनराय ने पूछा।

"यह बैठक की नाटक का पहला भाग है।"

"मैंने तो इसे आखिर में रखा था।"

"नही, वर्तमान परिस्थितियो मे इस चायपार्टी ने नया मोड़ ले लिया है।"

एक क्षण रंगीनराय, दरोगा की चायपार्टी सम्बन्धी दाँव को समझाने की कोशिश मे चुप रहे। दरोगा भी चायपार्टी में पार्टी अध्यक्ष को बुलाने की बात कहे, इतने में बाहर से शोरगुल, चीखने-चिल्लाने की आवाजें आने लगी। रंगीनराय बालकनी के पास, सामने दरवाजे की तरफ मुँह किये बैठे थे, तो पहले उन्होंने देखा पाँच-सात लोग नारे लगाते हुए, सामने के बरामदे से उन्ही की तरफ बढ रहे थे। इतने में दरोगा द्विवेदी ने मसनद छोड़ दी और उठकर रंगीनराय से जरा आगे बढकर खड़े हो गये। तभी अंदर-बाहर खड़े-पड़े खुराकी और चमचे जिन्हे आपस की गुप्त गम्भीर बातचीत की वजह से रंगीनराय ने अलग बैठा दिया था, झपटकर आ गये। उन लोगों ने रंगीनराय को सुरक्षात्मक घेरे मे ले लिया।

पाँच-सात लोगों का वह जुलूस अब पास आ गया था। इनकी नारेबाजी रंगीनराय और दरोगा द्विवेदी को अब साफ-साफ सुनायी दे रही थी।

"बलदेव चौधरी जिन्दाबाद।"

"तानाशाही नही चलेगी।"

"पार्टी एकता जिन्दाबाद।"

"फर्जी चुनाव बंद करो।"

दरोगा द्विवेदी की बाछें खिल गयीं। उसने देखा, इस जुलूस मे बलदेव चौधरी के दो खास विधायक मनोहरलाल और मूलचन्द सबसे आगे थे। उधर रंगीनराय दोनों हाथ फैलाकर आगे बढ़े। मनोहरलाल ने उनको देखकर अपने भी दोनों हाथ फैला दिये। फिर मनोहरलाल रंगीनराय

के और मूलचन्द, दरोगा द्विवेदी के गले मिल रहे थे। तभी मनोहरलाल के पीछे खड़े हुए लोगों ने रंगीनराय जिन्दाबाद के नारे लगाने शुरू कर दिये। इधर रंगीनराय के यहाँ जमा गुरा को भी उनके साथ मिलकर पहले तो रंगीनराय जिन्दाबाद फिर बलदेव चौधरी जिन्दाबाद के दमतोड़ नारे लगाने लगे। इन लोगों की चीख-पुकार सुनकर आस-पड़ोस के विधायक और उनके साथ के चिलगोजे, चवन्नरबन्ध, चमचे जमा हो लिये। लेकिन इस जमा होती भीड़ को देखकर दरोगा द्विवेदी सनके, उन्होंने कुछ भीड़ की वजह से कुछ मूलचन्द के मुँह से निकल रही पायरिया की भारदार बदबू की वजह से अपने को अलग किया और मूलचन्द, मनोहरलाल को अंदर की ओर आने के लिए कहा। उसी समय रंगीनराय ने अपने यहाँ की भीड़ को, मूलचन्द, मनोहरलाल के साथ आये लोगों को, वहीं बाहर रुकने के लिए कहकर दरोगा द्विवेदी के साथ अन्दर की ओर चल दिये।

"आइये। मनोहरलालजी! आइये मूलचन्दजी, यहाँ बैठें।" अंदर की बैठक में रखे हुए बड़े गद्दे के पास इन लोगों को बैठने के लिए कहते हुए रंगीनराय भी बैठने लगे। लेकिन तभी मनोहरलाल की तेज आवाज गूँज उठी, "रायसाब, हम यहाँ बैठने नहीं, आपको लेने आये हैं।"

रंगीनराय ने दरोगा द्विवेदी की ओर सहारे के लिए देखा तो दरोगा ने कहा, "अरे भय्या! अब इन्हें कहाँ ले जाओगे। इहाँ तो बैठक होने वाली है।"

"सो तो हम देखते हैं। लेकिन अभी तक एक बार इनका जाना जरूरी है।" मनोहरलाल ने कहा।

"लेकिन कहाँ गुरु?"

"इस्टेट गेस्ट हाउस तक, जहाँ पार्टी अध्यक्ष ठहरे हैं।"

"और चौधरी साब कहाँ हैं?"

"वो भी वहीं हैं।"

"तब तो ठीक है।" फिर रायसाब की ओर घूमकर दरोगा ने कहा, "यही तो हम तुमसे कहे जाय रहे थे, तब तक ई लोग आइ गये।"

"लेकिन इस वक्त पार्टी अध्यक्ष से बात हुइ पायेगी?" रंगीनराय सकुचा रहे थे।

"बातें खूब होऐंगी, आप चलो ना!" मूलचन्द फटे हुए गुब्बारे की तरह बोल उठे।

"लेकिन कार्यक्रम का है?" दरोगा ने पूछा।

"लेव इनका देखो ! अब्बो कार्यक्रम बतावैं का परी ! जैसे उत्सुकदास का एकसूत्री कार्यक्रम है मुख्यमंत्री बनना, हमारा एक सूत्री कार्यक्रम है उसका मुख्यमंत्री ना बनने देना।" मनोहरलाल के स्वर में किसी लुटे हुए जुआरी की तरह सब कुछ दाँव पर लगा देने की जिद थी।

"हाँ रायसाब, यह ठीक कहता है, आप जल्दी जाओ ! पार्टी अध्यक्ष आपका मानते है। मनोहरलाल से दरोगा ने कहा, "लेकिन भई तनिक ध्यान से सुनो ! वहाँ बैठ न जाना। कौनो तरह, बस चाय पीने के बहाने, पार्टी अध्यक्ष और चौधरी साब का इहाँ बुला लावा। इस बीच हम पूरे दारुलशफ़ा भरे मा, खबर उड़ाय देंगे।"

"का खबर भई, का खबर ?" मूलचन्द शंका में भरीया।

"अरे *यही खबर*, पार्टी *अध्यक्ष* और चौधरीसाब *यहाँ* होने वाली बैठक मे आ रहे हैं।"

"बस !" मनोहरलाल ने दुख मे पूछा।

"नही यार, तू घबड़ाओ नहीं। यह तो खबर का पहिला हिस्सा हब !"

"तो दूसरा भी तो बताओ।"

"दूसरा···दूमरा होयेगा वलदेव चौधरी, आज के नेता !" इतना कहकर दरोगा रंगीनराय, मनोहरलाल, मूलचन्द को बाहर की ओर निकालने लगे। बाहर पहुँचते ही, अब तक काफी-कुछ जमा हो गयी भीड़, इन लोगों को देखकर बारी-बारी से महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू फिर पार्टी अध्यक्ष, वलदेव चौधरी और रंगी [illegible] करने लगी। इसी बीच [illegible] धीरे-से उत्सुकद [illegible] का नारा लगा दिया।

जब तक [illegible] उतरकर [illegible] गाड़ी में आकर बैठे, [illegible] आगे [illegible] दरवाजा खोलने के लिए प [illegible] जय [illegible]

[illegible]

अध्यक्ष थे, उनके ऊपर राष्ट्रीय पार्टी की जिम्मेदारी थी। यह उनकी शान, प्रतिष्ठा के खिलाफ था, वह असन्तुष्ट नेताओं से बातचीत में पहल करते ? हाँ, कोई कुछ कहे तो सुन लेने में इन्हें भला क्या एतराज हो सकता है ? हालाँकि पार्टी अध्यक्ष हृदय से उत्सुकदास को गिराना चाहते थे, लेकिन अभी तक उनको कोई सूत्र नहीं मिला था। इन मूर्तियों की रहस्य-पूर्ण ढंग से आकर पहले बलदेव चौधरी से गुप्त वार्ता, फिर उनसे चाय-पार्टी में आने का निमन्त्रण ! पार्टी अध्यक्ष को साफ-साफ इस निमन्त्रण में कोई चाल दिखायी दे रही थी। इसीलिए वह टाल गये थे। फिर भी अगर चाय-पार्टी में जाने से, बिना फँसे, अगर उत्सुकदास के खिलाफ कोई जेहाद उठ सके तो उन्हें वहाँ जाने में खुशी ही होनी चाहिए थी। उनका प्रधानमंत्री से, टेलीफोन पर, बात करने का समय भी अब पास आ रहा था। जो कुछ भी अगर था, उसे प्रधानमंत्री से बात करने से पहले ही होना था। अपने तजुर्बे की पैनी निगाहों से उन्होंने पहचान लिया, यह लोग शरमा रहे हैं ! और कोई वक्त होता तो पार्टी अध्यक्ष लम्बा खेल खेलते लेकिन इस समय थोड़ा भी रुक सकने की स्थिति में वह नहीं थे। उधर रंगीनराय यह सोच रहे थे, आखिर दाँव फेंका कैसे जाये, पार्टी अध्यक्ष ने तो पहले ही झटक दिया था। इनके अब चाय-पार्टी में न आने से सब गुड़-गोबर हो जायेगा। वहाँ दरोगा ने खबर फैला दी होगी। उनको पता था इस समय दारुलशफा के हर कमरे से निकलकर लोग उनके कमरे की ओर जा रहे होंगे। अच्छा-खासा माहौल बन गया होगा तो ये दगा देंगे। रंगीनराय उन अनमोल पलों में परिस्थिति को तौल रहे थे।...उन्होंने सोचा आज अभी पार्टी अध्यक्ष अगर बैठक में नहीं आते तो उनकी उपयोगिता, अभी की राजनीति में जीरो हो जायेगी। यहाँ उनके साथ, बंद कमरे में, बात करके कुछ कर गुजरने का समय निकल चुका था। यह वक्त तो हमले का था। हमले के लिए यहाँ बन्द कमरे में नहीं, खुले आम दारुलशफ़ा में एक इन्कलाबी माहौल पैदा करना था। उस इन्कलाबी माहौल को पैदा करने के लिए ही पार्टी अध्यक्ष और बलदेव चौधरी की जरूरत थी। अगर पार्टी अध्यक्ष नहीं चलते तो खाली बलदेव चौधरी से काम चलाना होगा। बलदेव चौधरी भी तब खुलेआम सामने आयेंगे ? उधर पार्टी अध्यक्ष के न आने से दारुलशफा के विधायकों के अंदर बसा हुआ गुरुपदस्वामी का खौफ भी बाहर न जा पायेगा।...जब तक खौफ बाहर

"काहे की चायपार्टी ?"

"पार्टी अध्यक्ष जो आये हैं।"

"उनसे बात कही।"

"जिसके लिए आपके पास आये !"

"अच्छा तो तुम लोग इधर आवो।" बलदेव चौधरी अंदर की ओर पार्टी अध्यक्ष के पास पहुँचने के लिए चल दिये। उनके पीछे-पीछे मनोहरलाल, मूलचन्द, रंगीनराय भी थे। पार्टी अध्यक्ष उस समय कुछ पत्रकारों से पार्टी के कार्यक्रमों के बारे में बात कर रहे थे। बलदेव चौधरी ने उनको जरा-सा अलग बुलवाकर रंगीनराय से मिलाते हुए कहा, "रायसाब को तो आप जानते होंगे ?"

"हाँ···हाँ, खूब अच्छी तरह, कहिये ?"

"प्रणाम ! आप अच्छे हैं।"

"बस ठीक ही है।"

"अध्यक्षजी, यह अपने रायसाब हैं ना ! इन्होंने आपके सम्मान मे एक छोटी-सी चायपार्टी रख ली है। मैंने ही कह दिया था, आप थोड़ी देर के लिए आ जायेंगे।"

"वाह चौधरी साब ! आपने मुझसे बिना पूछे ही हाँ कर दी।" पार्टी अध्यक्ष ने हँसते हुए कहा।

"वो क्या था, आठ बजे तो आपको पार्टी मीटिंग में जाना ही था इसी······"

"अरे हाँ, मुझे तो पार्टी मीटिंग में जाना था। रायसाब इस बार तो माफ करें···"

"इन्हे कुछ बातें भी करनी थी।" बलदेव चौधरी बोले।

"तो आइये, अंदर के कमरे में चलें।" बलदेव चौधरी बोले। पार्टी अध्यक्ष पास ही खड़े पत्रकारों से माफी माँग अंदर की ओर चल दिये अंदर जाते-जाते रास्ते में बलदेव चौधरी ने इशारे से मूलचन्द, मनोह लाल को बाहर ही रुकने को कह दिया। अंदर के कमरे में बड़े वाले सो पर पार्टी अध्यक्ष, उनके दाहिनी ओर बलदेव चौधरी ओर बायीं ओर रंगीन राय बैठ गये। कुछ पलों को कमरे में सन्नाटा छाया रहा। सवाल था, बा कौन शुरू करे ! बलदेव चौधरी का व्यक्तिगत मामला था, उनके ख़ास आदमी उनके साथ थे, वह कैसे बोलते ? पार्टी अध्यक्ष तो फिर पार्

अध्यक्ष थे, उनके ऊपर राष्ट्रीय पार्टी की जिम्मेदारी थी। यह उनकी शान, प्रतिष्ठा के खिलाफ था, वह असन्तुष्ट नेताओं से बातचीत में पहल करते? हाँ, कोई कुछ कहे तो सुन लेने में इन्हें भला क्या एतराज हो सकता है? हालांकि पार्टी अध्यक्ष हृदय से उत्सुकदास को गिराना चाहते थे, लेकिन अभी तक उनको कोई सूत्र नहीं मिला था। इन मूर्तियों की रहस्यपूर्ण ढंग से आकर पहले बलदेव चौधरी से गुप्त वार्ता, फिर उनसे चाय-पार्टी में आने का निमन्त्रण! पार्टी अध्यक्ष को साफ-साफ इस निमन्त्रण में कोई चाल दिखायी दे रही थी। इसीलिए वह टाल गये थे। फिर भी अगर चाय-पार्टी में जाने से, बिना फँसे, अगर उत्सुकदास के खिलाफ कोई जेहाद उठ सके तो उन्हें वहाँ जाने में खुशी ही होनी चाहिए थी। उनका प्रधानमंत्री से, टेलीफोन पर, बात करने का समय भी अब पास आ रहा था। जो कुछ भी अगर था, उसे प्रधानमंत्री से बात करने से पहले ही होना था। अपने तजुर्बे की पैनी निगाहों से उन्होंने पहचान लिया, यह लोग शरमा रहे हैं! और कोई वक्त होता तो पार्टी अध्यक्ष लम्बा खेल खेलते लेकिन इस समय थोड़ा भी रुक सकने की स्थिति में वह नहीं थे। उधर रंगीनराय यह सोच रहे थे, आखिर दाँव फेंका कैसे जाये, पार्टी अध्यक्ष ने तो पहले ही झटक दिया था। इनके अब चाय-पार्टी में न आने से सब गुड़-गोबर हो जायेगा। वहाँ दरोगा ने खबर फैला दी होगी। उनको पता था इस समय दारुलशफ़ा के हर कमरे से निकलकर लोग उनके कमरे की ओर जा रहे होंगे। अच्छा-खासा माहौल बन गया होगा तो ये दगा देंगे। रंगीनराय उन अनमोल पलों में परिस्थिति को तौल रहे थे।···उन्होंने सोचा आज अभी पार्टी अध्यक्ष अगर बैठक में नहीं आते तो उनकी उपयोगिता, अभी की राजनीति में जीरो हो जायेगी। यहाँ उनके साथ, बंद कमरे में, बात करके कुछ कर गुजरने का समय निकल चुका था। यह वक्त तो हमले का था। हमले के लिए यहाँ बन्द कमरे में नहीं, खुले आम दारुलशफ़ा में एक इन्कलाबी माहौल पैदा करना था। उस इन्कलाबी माहौल को पैदा करने के लिए ही पार्टी अध्यक्ष और बलदेव चौधरी की जरूरत थी। अगर पार्टी अध्यक्ष नहीं चलते तो खाली बलदेव चौधरी से काम चलाना होगा। बलदेव चौधरी भी तब खुलेआम सामने आयेंगे? उधर पार्टी अध्यक्ष के न आने से दारुलशफ़ा के विधायकों के अंदर बसा हुआ गुरुपदस्वामी का खौफ भी बाहर न जा पायेगा।···जब तक खौफ बाहर

लगे। कोई बुलाकर खौफ के अंधेरों से बाहर, हमसे करीब आकर बात करे.तब तो मालूम होगा।"

"कैसा खौफ ?"

"गुरुपदस्वामी का खौफ, उत्सुकदास की शैतान हरकतों का खौफ ! और अब पार्टी मीटिंग मे हमें मुख्यमंत्री चुनना होगा आपके डर से।"

"मेरे डर से ? नहीं···नहीं, आप लोगों को कम-से-कम मुझसे डरने की कोई जरूरत न होगी।"

"मान्यवर ! आप मानें या न मानें, पूरे दारुलशफा में सबको मालूम है, उत्सुकदास की आपके ऊपर कितनी निष्ठा है ! फिर भी जब से आप यहाँ आये, आपने भी करीब-करीब सारा समय उन्हीं के लोगों से घिरकर ही गुजारा। आप बड़े नेता है, फिर भी जब तक आप हमारे बीच नहीं आयेंगे, आपको सही बात भला मालूम भी कैसे होगी ? हमारी लडाई सिद्धान्तों की लड़ाई है। एक तरफ धोखाधड़ी और फरेब के तीन-तिकड़म से सत्ता हथियाने की साजिश चल रही है—अब साजिश चल क्या रही, पूरी ही समझिये ! इस खतरनाक खेल का अर्थ भला आज आप लोगों को कैसे समझ आयेगा ! उधर दूसरी तरफ हम लोग पार्टी के समाजवाद के आदर्श के लिए, हथेली पर जान लेकर,उन राक्षसी शक्तियों से भिडने जा रहे हैं, जिनकी निरंकुश सत्ता ना सिर्फ पार्टी की जडें खोखली कर देगी, प्रदेश की भोली-भाली जनता को धन्धेबाजों के हाथों सौप देगी, सरे-आम नोचने-खसोटने के लिए !"

"रायसाब ! मैं आपकी बातें समझता हूँ लेकिन मैं तो मजबूर हूं।"

"पार्टी अध्यक्ष मजबूर है ? सच्चाई ना देखने के लिए ?"

"नही···नही, यह बात नही, मेरा मतलब क्या है, उत्सुकदास का नाम तो प्रधानमंत्री ने स्वीकृत कर दिया है ! फिर भी पार्टी मीटिंग तो होगी ही !" पार्टी अध्यक्ष ने इशारा किया।

"इसे आप पार्टी मीटिंग कहेंगे ? विधायकों का गला दबाकर, उनकी आत्मा की आवाज कुचलकर जब उनके ऊपर अनुशासन की नंगी तलवार लटकी होगी, उन्हें हाईकमाण्ड का निर्देश मानना होगा।"

"ऐसा तो नही कहा मैंने। पार्टी मीटिंग का मकसद है नेता का चुनाव। लेकिन चुनाव तो तभी होगा जब एक से ज्यादा उम्मीदवार होंगे ?"

"हमारा तो यही कहना है, आज नेता का चुनाव जो हाईकमाण्ड ने

किया है वह गलत है। उत्सुकदास के ऊपर भ्रष्टाचार के गम्भीर आरोप हैं जिससे पूरी पार्टी में भीषण असंतोष की ज्वाला धधक रही है। आप दारुलशफा आकर देखें तभी तो मालूम होगा।"

बात लम्बी होती जा रही थी और बलदेव चौधरी का धीरज छूटता जा रहा था। इधर रंगीनराय को भी अब यहाँ रुकना बेकार ही लग रहा था। तभी पार्टी अध्यक्ष ने कहा, "आखिर आप लोग मुझसे चाहते क्या हैं?"

अब बलदेव चौधरी से रहा नही गया, "मैं भी यही कह रहा था, आप रायसाब की चायपार्टी का निमन्त्रण मान ही लें। दस-पन्द्रह मिनट के लिए हम लोग वहाँ हो ही लें।"

"लेकिन मुझे पार्टी मीटिंग से पहले दिल्ली बात जो करनी है?" पार्टी अध्यक्ष के मुँह से इन शब्दों के निकलते ही रंगीनराय उठकर खड़े हो गये।

"तो फिर आप दिल्ली बात करें, हम चलते हैं। जब हमारी बात तक कोई सुनने को तैयार नही है तो फिर हम जो ठीक समझेंगे, वही करेंगे।"

रंगीनराय को उठते हुए देखकर बलदेव चौधरी भी उठ पड़े और उनके साथ पार्टी अध्यक्ष भी। पार्टी अध्यक्ष को उसी समय लगा अब काफी हो गया। कुछ कहना चाहिए जिससे आगे का रास्ता खुला रहे। इधर रंगीनराय ने दोनो हाथ जोड़कर प्रणाम किया और बाहर की ओर चलने लगे। वह कमरे के बाहरी दरवाजे तक पहुँचे होंगे, उन्हे पार्टी अध्यक्ष की आवाज सुनायी दी, "रायसाब! क्या आपको याद है, सन् ४२ में हम और आप एक साथ जेल में थे?"

रंगीनराय ने आश्चर्य से वापस घूमकर पार्टी अध्यक्ष को देखा, "हाँ मान्यवर खूब याद है। तब हम लोगों में समाजवाद पर गोष्ठियाँ हुआ करती थी, और उन गोष्ठियों मे आपके आदर्शवादी भाषण हुआ करते थे। जब जेल में सब लोग गहरी नीद मे सोये रहते, हम लोग रात-रात भर जागकर देश के गरीब मजदूरों-किसानों के लिए क्रांतिकारी योजनाएँ बनाया करते थे।"

"हाँ···हाँ ठीक कहा आपने, हम लोगों के सम्बन्धों की नीव कितनी पुरानी है। फिर तो अब लखनऊ आने पर क्या हम आपके यहाँ चाय भी पी सकते।" पार्टी अध्यक्ष ने मुसकुराकर कहा।

पार्टी अध्यक्ष के ये शब्द किसी तोप के धमाके से कम न थे। रंगीनराय तो क्षोभ-घृणा में कुछ और ही सोच रहे थे। अब एकाएक खुशी की लहर आयी और दौड़कर वह उनके पास आए, अपना माथा झुकाकर दोनों हाथ जोड़कर श्रद्धापूर्वक उन्होंने पार्टी अध्यक्ष को एक बार फिर प्रणाम किया।

"लेकिन रायसाब एक विनती है।"

"हाँ, बोलिए।"

"जब तक मैं वहाँ रहूँ, कोई ऐसी बात ना हो जिससे प्रधानमंत्री के सामने मुझे शर्मिन्दगी उठानी पड़े।"

"यह मेरी जिम्मेदारी होगी।" बलदेव चौधरी ने जोश में आकर आगे बढ़ते हुए कहा। फिर रायसाब से उन्होंने पूछा, "कितनी देर में आना है?"

"सात बजे के करीब!"

गुरुपदस्वामी भी पार्टी अध्यक्ष के साथ ही दिल्ली से आज आये थे। हवाईअड्डे पर जब जरूरतमन्द उत्सुकदास ने हमेशा की तरह उनके पैर छुए तो उन्होंने खुद को छोड़कर पार्टी अध्यक्ष के पीछे लग जाने का इशारा किया। वहीं से वह, अलग दूसरी मोटर में बैठकर चले आये। हमेशा सागर की तरह गुरुगम्भीर रहने वाले गुरुपदस्वामी आज बड़े विचलित थे। दिल्ली में ताँबाकांड के तूफान ने उन्हें हिला दिया था। वैसे तो उनका पूरा जीवन अनेक प्रकार के काण्डों से भरा था जिनके एक से एक किस्से आज वर्षों से पार्टी प्रदेश से लेकर दिल्ली तक बराबर चलते रहे। लेकिन ताँबाकांड ऐसे वक्त में उठा, जब वह प्रधानमंत्री के करीब थे। कुछ ही दिन हुए उन्हें केन्द्रीय सरकार का गृहमंत्री बनाया गया, पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी का सदस्य बनाया गया। इन जिम्मेदारियों और दिल्ली के नये माहौल में अभी वह पूरी तरह घुल-मिल भी नहीं पाये थे, ताँबाकांड उठ खड़ा हुआ। ऐसा शर्मनाक मामला उनके जीवन में उठेगा, ऐसा उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था। उनके पिछले जीवन से सम्बन्धित जितने घपले थे, वह सब उन्होंने जान-बूझकर अपने माने-बेमाने बेटों की बीवियों के रिश्तेदारों, भाई की लड़की-लड़कों की खातिर झेले थे। उस

विरोधी मुख्यमंत्री बन गया। डर, शंका के अँधेरे में उनको सिर्फ उत्सुकदास का ही सहारा दिखा। उत्सुकदास का मुख्यमंत्री बनना उनके जीवन और मरण का प्रश्न था। शाम का वक्त था। राजभवन में गुरुपदस्वामी प्रदेश के आला दर्जे के अफसरों के बीच बैठे थे। मुख्यसचिव, गृहसचिव, बड़े पुलिस अधिकारी अलग-अलग अन्दाज में अपनी-अपनी बात करते। यह लोग क्या कह रहे थे, उन्हें कुछ समझ नहीं आ रहा था। इस समय उनका मन बड़ा विचलित था। कुछ ही देर पहले उनकी मुलाकात राज्यपाल से हुई थी। राज्यपाल को आज राष्ट्रपति शासन समाप्त करने के लिए एक बयान जारी करना था। इस बयान के साथ ही पार्टी मीटिंग के बाद, उत्सुकदास को सरकार बनाने के लिए आमन्त्रित करना था।

राज्यपाल बड़े गुरुघंटाल थे, *यह तो गुरुपदस्वामी को पता था।* आज तो कमाल कर दिया, कहने लगे, वैसे तो सब कुछ ठीक था लेकिन राष्ट्रपति शासन समाप्त करने का आज्ञापत्र जारी करना या नहीं इस विषय में दिल्ली से टेलीफोन आने वाला था। यही थी वह बात जिसने गुरुपदस्वामी को विचलित कर दिया। जाहिर था, ताँबाकांड से सम्बन्धित हल्ले की वजह से ऐसा निर्देश प्रधानमंत्री के यहाँ से आया होगा। गुरुपदस्वामी को बड़ी खीझ आ रही थी। जब वह खुद मुख्यमंत्री बने थे, ऐसा तो कुछ नहीं था। शान्ति से सम्मानपूर्वक डंके की चोट पर स्वाभाविक रूप से उन्हें मुख्यमंत्री नियुक्त किया गया। कहीं न तो कोई विद्रोह, ना ही कोई कांड, सब कुछ नियति की बँधी धारा में बिना किसी अड़चन में हुआ था। पर उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बनवाने में उनको लोहे के चने चबाने पड़ रहे थे। गुरुपदस्वामी को राज्यपाल की बातों पर विश्वास नहीं हुआ। वह खुद प्रधानमंत्री से मिलकर आये थे। इतने दिनों की उठापटक के बाद उत्सुकदास को ही मुख्यमंत्री बनाने के निश्चित निर्देश जारी कर दिये गये। लेकिन अब राज्यपाल की बातों से लगा मामला सौ फीसदी तय नहीं था। इसमें टाल-मटोल करने से उनकी प्रतिष्ठा तो गिरनी थी, आगे क्या होगा, किसे पता? इसी राज्यपाल ने उनके जमाने में अपने पद का सम्मान छोड़कर खुलेआम अफसरों, नेताओं से साँठ-गाँठ करके उनको गिराने में कोई कसर नहीं छोड़ी। राज्यपाल होकर अफसरों को बुलाकर प्रशासनिक मामलों में हस्तक्षेप किया करते। उन दिनों राजभवन उनके विरो-
का मुख्य अड्डा था, जहाँ उखाड़-पछाड़ की योजनाएँ बना करतीं

पार्टी अध्यक्ष ने क्या कहा···पार्टी मीटिंग से पहले [illegible] बात करनी···दिल्ली बात करने का अर्थ, प्रधानमंत्री या पी० एम० हाउस में बात करनी···उधर राज्यपाल ने क्या कहा राष्ट्रपति शासन समाप्त करने की घोषणा अभी तक अधिकृत रूप में नहीं हुई। लेकिन घोषणा का [illegible] तो सवेरे ही उनके यहाँ आने से पहले ही चला गया···तो अब [illegible]···घोषणा राष्ट्रपति की मेज पर रखी होगी···इधर राज्यपाल की अधिकृत घोषणा के बाद का प्रजातान्त्रिक सरकार बनने का बयान···[illegible] सरकार बनाने का आमंत्रण···शपथ समारोह की [illegible] वगैरह सब टाइप होकर राज्यपाल की टेबल पर [illegible] रखी थीं। उन्होंने देखा था, राजभवन के पुराने [illegible] रोह के लिए सजाये गये दरबार हाल तक [illegible] जैसा होने वाला सारा इन्तजाम पक्की तरह पूरा हो चुका था [illegible] क्यों···क्यों···भला क्यों ?

गुरुपदस्वामी के चाँद की तरह जगमगाते चेहरे पर [illegible] नहीं आयी, हाँ पूजा के तिलक से शोभित [illegible] विशाल माथे पर चिन्ता की रेखाएँ उभर आयीं। [illegible] जाम तो पूरा था अपने तजुर्बे से, उन्होंने [illegible] पति भवन से लेकर लखनऊ के राजभवन [illegible] दस मिनट लगने थे। पी० एम० हाउस [illegible] मिनट, राष्ट्रपति भवन से राजभवन [illegible] राजभवन में कागजों पर राज्यपाल [illegible] अधिकृत घोषणा बताने में : [illegible] पति भवन में, इधर राजभवन [illegible] आखिर यह समय [illegible] जाँघ पर मुक्का मारा और [illegible] कौन था पी० एम० हाउस ! [illegible] हजारों लोगों की [illegible] था। पी० एम० हाउस [illegible] दस्तखत, [illegible] हुए हाथ, [illegible] प्रदेश की [illegible]

लोगों से हँसी-मजाक करने की अपनी पुरानी प्रथा वह निभा न सके। चौथे मुलाकाती के आने तक उनका धीरज टूटने लगा। "परसों रात मेरी बीवी को एक गुण्डा भगा···" चौथा मुलाकाती कह ही रहा था कि गुरुपदस्वामी ने चिल्लाकर कहा, "कोई है?" फौरन दरवाजे के पास, बाहर खड़ा हुआ चपरासी हाजिर हो गया। गुरुपदस्वामी ने उससे अपने पी० ए० को बुलाने के लिए कहा। लेकिन पी० ए० को बुलाने की जरूरत नहीं पड़ी, वह खुद ही टेलीफोन का लम्बा तार उनकी ओर बटोरते हुए बढ़ रहा था। पी० ए० के हाथ से लेकर गुरुपदस्वामी ने टेलीफोन का रिसीवर अपने कान में लगाया ही था, उनकी निगाह चौथे मुलाकाती पर पड़ी जो बीवी के भाग जाने के गम से, फटी-फटी आँखों से उनको देख रहा था। उन्होंने माउथपीस को हथेली से ढककर पी० ए० से कहा, "देखो, इनको ले जाओ! इनकी बात अच्छी तरह समझकर उचित कार्यवाही कर देना।"

यह सुनते ही चौथा मुलाकाती उनके पैरों पर गिरकर रोने लगा। और कोई वक्त होता तो वह टेलीफोन को तो अलग रख देते और उस मुलाकाती को गले लगाकर पूरा किस्सा ध्यान से सुनते। एक तो भाग जाने वाली बीवी का किस्सा, ऊपर से पैरों पर पड़ा हुआ मुलाकाती, यह सब उनको हिला देने के लिए काफी था। लेकिन इस समय उनके ऊपर राज-नीति की नंगी तलवार लटक रही थी, उनके पास टेलीफोन रखा था जिसका रिसीवर उनके एक हाथ में और दूसरे हाथ से वह माउथपीस को ढके हुए थे। फिर टेलीफोन का सम्बन्ध पी० एम० हाउस से लगा हुआ था। उन्होंने माउथपीस को ढकने वाला हाथ उठाकर उस मुलाकाती के कंधे पर फेरा और उसे पी० ए० के साथ चले जाने के लिए इशारा किया। फिर उन्होंने पी० ए० को रोककर मुलाकात के लिए आये हुए विधायकों को अन्दर भेज देने को कहा।

चौथा मुलाकाती जैसे ही उनके पी० ए० के साथ बाहरी दरवाजे पर पहुँचा, गुरुपदस्वामी ने टेलीफोन पर बात करना शुरू कर दिया।

"हलो, मैं गृहमंत्री बोल रहा हूँ।"

"हाँ जी!" पी० एम० हाउस की तरफ से कहा गया।

"क्या प्रधानमंत्रीजी हैं?"

"हैं तो लेकिन अभी मीटिंग में हैं।"

"लेकिन मेरी बात जरूरी है।"

"तो आप बात बता दें, हम उनसे पूछकर आपको फोन करेंगे।"

"हूँ..." गुरुपदस्वामी ने सोचा शुरुआत तो गलत है, फिर भी अब कहना ही होगा।

"यहाँ, अभी कुछ देर पहले, राज्यपाल कह रहे थे, राष्ट्रपति शासन समाप्त होने के घोषणा पत्र पर राष्ट्रपति के अभी तक दस्तखत नहीं हो पाये।"

"जी हाँ।"

"जब तक घोषणा पत्र की सूचना राज्यपाल को नहीं मिलेगी, आगे का काम कैसे होगा?"

"जी हाँ।" गुरुपदस्वामी ने समझ लिया बिना प्रधानमंत्री से पूछे यह लोग कुछ कहेंगे नहीं। फिर भी प्रधानमंत्री तक अपनी बात तो पहुँचानी ही थी।

"मेरा कहने का मतलब था इस मामले में प्रधानमंत्री को तुरन्त निर्देश जारी करना चाहिए क्योंकि पार्टी मीटिंग भी तो होनी है।"

"जी हाँ!"

"वैसे आपने, इस विषय में कुछ सुना तो होगा!"

"जी नहीं।"

रूखी ही थी पी० एम० हाउस की बात। गुरुपदस्वामी ने पूछा, "मन्त्रिमंडल की सूची में कुछ उलट-फेर तो नहीं होगा?"

"क्या पता! ऐसा करते हैं, हम प्रधानमंत्री से बात करके आपको अभी हाल फोन करेंगे।"

"ठीक है।" कहकर उन्होंने फोन काट दिया। फिर टेलीफोन रिसीवर पर झुका हुआ चेहरा, जो उन्होंने ऊपर उठाया तो तीन लोग दाहिनी तरफ बैठे थे। उनका ध्यान अपनी ओर पाकर वह लोग उठ खड़े हुए, प्रणाम करने के लिए।

"बैठिये...बैठिये!" कहते ही उनके बायीं तरफ से आवाज आयी:

"हम भी हैं, गुरुजी।" कहते हुए बलराम शास्त्री ने आगे बढ़कर उनका चरणस्पर्श किया।

दाहिनी तरफ बैठे हुए तीनों लोग गुरुपदस्वामी गुट के खास विधायकों में थे। बायीं ओर बलराम शास्त्री भी विधायक थे, पर साथ में उन दिनों

उन्हें गुरुपदस्वामी की अन्तरदृष्टि कहा जाता था। गुरुपदस्वामी को उनके ऊपर बड़ा भरोसा था। यहाँ तक उनकी प्रदेश की राजनीति से लेकर जमीन, जायदाद, घरेलू मामलों तक का इन्तजाम एक तरह से बलराम शास्त्री ही देखते। दाहिनी ओर बैठे बाकी तीनों विधायक बलराम शास्त्री को मंत्रिमंडल में ले लिए जाने पर उनको बधाई देने के बहाने चले आये। बलराम शास्त्री पैर छूकर पास ही सोफे पर बैठ गये।

"अरे बलराम तोहार नाम तो है ही!" गुरुपदस्वामी ने कहा।

"हाँ गुरु जी।···"

तभी तीनों विधायक एक साथ चिल्लाने लगे, "बधाई हो! बधाई हो!!"

"सो तो ठीक है···लेकिन तुम लोग जरा चुप बैठो!" बलराम शास्त्री ने डाँटा।

"वाह बलराम, इन लोगों को बधायी भी न देने दोगे।" गुरुपदस्वामी ने धिक्कारा।

"विभाग बड़ा अधकचरा मिलि रहा है, तौने खातिर ई गुस्साए हैं।" एक विधायक बोला।

"विभागों का अभी बँटवारा कहाँ हुआ?"

"उत्सुकदास ने तो लिस्ट बना ली!" दूसरे ने कहा।

"धरे ऊ ससुरा बदमाश है!"

"हमरे बलराम, कौनो माने मा कृष्णबल्लभ से कम नहीं। फिर भी सुना है उनको सिंचाई विभाग मिलेगा और बलराम भय्या को लघु सिंचाई!" तीसरे विधायक ने दाँव फेंका।

"तुम साले, बकवास बन्द करो, मुझे गुरुजी से जरूरी बात करनी है।" बलराम गुर्राया।

"देखो···अब इनका देखो, जिनके लिए जान दे दें, वही गरियावत हैं।" विधायक दुख से बोला।

"बड़े आये है, जान देने वाले, तनिक देर चुपाय जाओ ना!"

"अरे बलराम, का बात है, काहे रिसआत हो?" गुरुपदस्वामी ने बलराम से पूछा।

"गुरुजी! क्या नाम, आपका पता है, लोबीराम टूट गया।"

"क्या कहा! लोबीराम टूट गया?"

[illegible]?"

"हाँ गुरुजी, [illegible] हम [illegible] यहाँ [illegible]।"

"[illegible] ?"

"इनको [illegible] [illegible] लगे। फिर [illegible] [illegible] नहीं [illegible]।"

"[illegible] दिल्ली में [illegible], सोवीरान के [illegible] [illegible]।"

"[illegible] ?"

"[illegible]! ऐसा है, [illegible] बने ?"

"और क्या! उनके [illegible] हैं सब सिरे बैठे हैं, उसका न जाने काहे [illegible] इन्तजाम है।"

"इन्तजाम सब कुछ [illegible]। उसका [illegible] नहीं। सोवीरान के बारे का कोई खबर नहीं है, बलराम!" [illegible] मुँह घुमाते हुए गुरुपदस्वामी ने कहा, "फिर टेलीफोन लगाओ।"

बलराम शास्त्री ने टेलीफोन उठाने के लिए हाथ बढ़ाया, तभी फोन की घंटी बजने लगी।

"हलो! किनसे बात करनी है ?"

"गृहमंत्री।" उधर से कोई बोला।

"आप कहाँ से ?"

"पी० एम० हाउस।"

"बाप रे बाप! गुरुजी पी० एम० हाउस!"

गुरुपदस्वामी ने झपटकर रिसीवर ले लिया, "मैं गृहमंत्री बोल रहा हूँ।"

"हाँ गृहमंत्रीजी, पी० एम० से बात हो गयी।"

"क्या कहा उन्होंने।"

"उन्होंने कहा है पार्टी अध्यक्ष और आप एक बार स्थिति का जायजा लेने के बाद फोन करें।"

"अभी स्थिति का जायजा लेना होगा ?" गुरुपदस्वामी को जैसे साँप सूँघ गया हो, बड़ी मुश्किल से आवाज निकली।

"उनका कहना है, कार्यक्रम में तो कोई परिवर्तन नहीं है। फिर भी दिल्ली से चलते समय पार्टी अध्यक्ष से पार्टी मीटिंग से पहले बात को कहा गया था। यहाँ हम लोग उन्हीं के फोन का इन्तजार

लिए शहीद होना पड़ता। कभी-कभी तो उनको लगता, यह अनगिनत घपले, जो लोग-बाग उनकी सिधाई और शराफत का फायदा उठाकर उनके पीठ पीछे उन्ही की छत्रछाया में उनका आशीर्वाद लेकर किया करते, एक बार उनकी जान लेकर ही छोड़ेंगे। इन घपलो ने उनका जीना दूभर कर दिया था। अब तो बडी ऊब लगने लगती। घपले करने वाले चाहे उनके अपने घर के भाई-भतीजे हो या राजनैतिक जीवन के उनके सहयोगी, मंत्रिमंडल, पार्टी कार्यकारिणी के सदस्य वे अन्त में उनके ऊपर ही लाद दिये जाते। जैसे पूरे मुल्क मे साजिश चल रही थी, हर घपले से गुरुपदस्वामी का सम्बन्ध जरूर होता। घपले और कांड एक प्रकार से उनके जीवन का अंग बन चुके थे। मजे की बात थी, इन घपलों से कभी भी, कसम खाने को भी जो एक पैसे का फायदा हुआ। चोकरकांड, धनिया कांड, पट्टीकांड, चनाकांड, सडक, पुल और बांध के घपले, फर्जी परमिट, लोहा, सीमेण्ट, स्कूल और कालेज के घपले अफसरों, ठेकेदारों, विधायको, धन्धेबाजों के तमाम घपले बस घुमा-फिराकर उनके सिर मढ़ दिये जाते। अपने विशाल जीवन में उनको दूर-दूर तक कभी खतम न होने वाले घपलो के पहाड़ दिखाई देते।

इतना सब होने पर भी वह बचे हुए थे। इसका मुख्य कारण आजादी की लड़ाई में उनके त्याग और बलिदान की कहानियाँ थी। और आजादी के बाद अपनी शराफत की सीधी-सीधी राजनीति से, आदमियत के वसूलों की स्वाभाविक व्योहार कुशलता के जरिए, वह बराबर पद और प्रतिष्ठा में ऊपर ही बढ़ते रहे। ऐसा नही था, उन्होंने कभी खुद घपले नही किए। लेकिन जो घपले वह खुद करते वह बड़े स्वाभाविक, सादगीपूर्ण और निश्छल होते, जिनसे किसी का नुकसान न होता। उनके ऐसे घपले आज तक कभी खुले नही जिसकी वजह से न हल्ला हुआ, न कांड।

आज एक बार फिर एक नया घपला तांबाकांड की शक्ल में उनके ऊपर थोपा जा रहा था। तांबाकाण्ड के बारे में उनको कुछ भी नही पता था। इससे उनको एक पैसे का भी फायदा नही हुआ। इस बार ना ही उनके किसी भाई-भतीजे को कोई कुछ मिला। हमेशा की तरह उनको तो इस बात की भी जानकारी नही थी, आखिर किन परिस्थितियों मे तांबाकांड का जन्म हुआ। क्या तीन-तिकड़म किये गए।

हाउस से बात करने के बाद पार्टी अध्यक्ष के बलदेव चौधरी के साथ कहीं चले जाने की खबर सुनकर क्षोभ, पीड़ा का जो झटका उन्हें लगा था वह बाईजी के आने से हर्ष, उन्माद की अनुभूतियों के गर्त में खो गया।

गुरुपदस्वामी पिछले सोलह वर्षों से विधुर थे। उनकी धर्मपत्नी तो कबसे उन्हें अकेला छोड़कर चली गयी। जब तक वह जिन्दा रहीं, गुरुपद-स्वामी आजादी की लड़ाई मे जूझते रहे। जेल की दीवारों के अन्दर, उनकी जवानी के गुबार राष्ट्रसेवा के धरातल पर टूटते और बाहर आकर जुलूस, मीटिंग, धरना शुरू हो जाता। घर का सुख, पत्नी का सुख उनके लिए अनजाना ही था। पत्नी से उनका रिश्ता बस उन चन्द रातों का ही था जो जुलूस मीटिंग, धरना के बाद कभी-कभी उनको बच रहता। इस भाग-दौड़ के तूफान में चन्द रातों के यह सम्बन्ध सिर्फ बच्चे पैदा करने-भर को ही हो पाए। जितने दिन वह जेल में रहते, उनकी धर्मपत्नी अन्दर जाने से पहले दिये गये बच्चे को जन्म देने मे लगा देती। बाहर आने पर फिर वही सिलसिला बन जाता। अन्दर-बाहर के इस दौरान में गुरुपदस्वामी की धर्मपत्नी ने आठ बच्चों को जन्म दिया। आठवाँ बच्चा पैदा होते ही वह चल बसी और गुरुपदस्वामी हमेशा-हमेशा के लिए अकेले हो गये। अब तो न जुलूस थे, न धरना, ना ही सख्त जेल की दीवारें, जिनमें मन मसोसकर वह लम्बी सर्द रातें गुजार लिया करते।

इसी बीच गुरुपदस्वामी के छोटे भाई ने दूसरी शादी कर ली। उनका छोटा भाई उम्र में उनसे काफी छोटा था। असल में छोटे भाई की दूसरी शादी करवाने में गुरुपदस्वामी ने काफी दिलचस्पी ली। तब तक गुरुपद-स्वामी खुद भी विधुर हो चुके थे। घर में और कोई औरत थी नहीं। इस-लिए काफी जोर-जबरदस्ती करके उन्होने अपने छोटे भाई का रिश्ता बाई-जी से करवा दिया। उसके बाद उनके यहाँ मौत की आँधी आई। दो बरस मे पहले, एक-एक करके उनके अपने चार बच्चे मर गये और फिर बिना बताये एक दिन अचानक उनका छोटा भाई भी ईश्वर को प्यारा हो गया।

ये दिन गुरुपदस्वामी के लिए बड़े संकट के दिन थे। मरघट में चिता जलाने से तेरहीं तक के चार बच्चों के संस्कार में, बावन दिन तो

यह भी [illegible] नहीं [illegible] क्योंकि हर वक्त एक और [illegible] के लिए तैयार [illegible]। [illegible] बच्चों के बाद औरत उनके लिए एक [illegible] [illegible] बन चुकी थी। फिर [illegible] औरत से कम थी। उन्होंने [illegible] ही [illegible] लिया था।

[illegible] की मौत के बाद तक औरत उनके लिए एक डरेस, एक [illegible], एक इस्तेमाल सामान बन चुकी थी। जिसके करीब जाने से उनके पैसा ही जाने के डर से उनके रोंगटे खड़े हो जाते। फिर छोटे भाई की पत्नी को दूसरी नज़र से देखने का प्रश्न ही नहीं उठता। वह घर की रौनक थी। संस्कारों में बंधे हुए पुरुषार्थवालों के लिए तब बाईजी घर के अन्य बच्चों की तरह ही थी। लेकिन नियति के खेल भी अजीब हैं। चार बच्चों, फिर छोटे भाई की मौत ने उनको भीतर से तोड़ दिया। असहाय, मजबूर उन दिनों वह किसी खोये हुए सहारे के लिए तरस रहे थे। वैसे तो हमेशा से उनका व्यक्तित्व अपने में ही समाया रहता। लेकिन अब उनके पास, अन्दर की वह ताकत नहीं थी जिसके भरोसे चट्टान शिला की तरह उन्होंने सारे तूफान अपनी बाँहों में झेले थे।

बाईजी को वह पिछले कई वर्षों से एक सुहागिन गुड़िया के रूप में देखते आ रहे थे। छोटे भाई की मौत के बाद सफेद कपड़ों में, सूने हाथ, नंगी माँग, सूना माथा देखकर उनके कलेजे पर साँप लोट जाता। यहीं स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं से शुरुआत हुई। सब कुछ जानते, चाहते हुए भी फिर वह अपने को रोक नहीं पाये। सब जानकर, छोटे भाई की विधवा को महज सहानुभूति से देखते-देखते, उनके ऊपर कोई मोहक जादू छाने लगा। सुहागिन कपड़ों में लिपटी हुई यह यही नारी थी जो यहीं, इसी घर में, उनके साथ इतने वर्षों से रहती, लेकिन कभी किसी प्रकार की ऐसी-वैसी प्रतिक्रिया नहीं हुई। उनका दैन्य कुछ इस भावना-सहित था : उन्होंने ही जोर-जबरदस्ती से छोटे भाई का विवाह न करवाया होता तो यह परिणाम सामने न होता।

इधर बाईजी के मन में पुरुषार्थवाली के लिए आदर भाव भी। घर से बाहर तो वह पूजे ही जाते, पर घर में हमेशा से उनका बड़ा सम्मान होता। स्वाभाविक रूप से बाईजी के अन्दर उनके लिए एक खास जगह पहले से बनी हुई थी। जब बाईजी के पति का स्वर्गवास [illegible] संसार लुट जाने का उनको इतना दुःख नहीं था। [illegible]

बच्चों की मौत के बाद यह धक्का कैसे सह पायेंगे, इसकी चिन्ता उनको थी। चार दिनों में ही पति की मौत का दुख अपनी गहराइयों में छुपाकर बाईजी गुरुपदस्वामी को सँभालने में जुट गयीं। इतना बड़ा आदमी, जिसका जीवन त्याग और बलिदान की ऊँचाइयों को, दूर-दूर तक छू लेता, ऐसे ही टूट जाये, बिखर जाये, यह उनके नारी-हृदय से देखा न गया। फिर पति के बाद अब और उनका था भी कौन!

बाईजी का करीब आना था, बस गुरुपदस्वामी का ब्रह्मचर्य टूटने लगा। एक तो विधुर होने के बाद किसी औरत को उन्होंने छुआ भी नहीं था, फिर बाईजी कोई मामूली औरत तो थीं नहीं। दुख के दिनों में जरा-सी सहानुभूति बड़ी होती, फिर बाईजी तो हर समय बस उनका ही ख्याल किया करतीं। छोटे भाई की विधवा को, कुछ अपनी भूलों के परिणाम में, दुख और दैन्य की स्वाभाविक भावनाओं में साधारण रूप से देखते-देखते गुरुपदस्वामी को महान सौन्दर्य की मादकता का अहसास होने लगा। कुछ ही दिनों में बाईजी के सिर्फ जरा-सा पास आने से गुरुपदस्वामी की जाँघों में सुरसुरी होने लगती जैसे वहाँ की कोई नस बड़े जोरों से फड़-फने लगी।

इसके बाद गुरुपदस्वामी ने बाईजी से भागने की बड़ी कोशिशें कीं। मुँह अँधेरे घर से निकल जाते और रात देर से घर आते। बस उनके सामने न पड़ जाने के चक्कर में जो कुछ भी हो सकता, वह करते। असल में उनका अपने ऊपर से विश्वास उठ चुका था। अब पिछले तमाम गुजरे हुए वर्षों की अनबुझी प्यास तड़पा रही थी और वह रेगिस्तान की तपती हुई घाटियों में भटक रहे थे। कभी-कभी वह सोचते, हे ईश्वर! यह कैसी पीड़ा है…यह कैसा संघर्ष! लेकिन होनी से कौन भाग सका। भला गुरुपदस्वामी करते भी क्या, भागकर कहाँ जाते? उसके सिवा अब रास्ता भी क्या था! यह घर से भागे रहने का सिलसिला ज्यादा दिन नहीं चला। उनके इंतजार में बाईजी जागती रहतीं। दिन में नहीं आते तो वह भी खाना नहीं खातीं। रात में देर से लौटकर जब वह खाना नहीं खाते तो बाईजी भी ऐसे ही सो जातीं। इस तरह बाईजी का ख्याल करके जब वह रात में खाना खाने लगे तो वह खुद उनको ख… पानी देतीं। खाने के बाद उनके हाथ … । हाथ पोंछ… … देतीं। फिर कमरे में जाकर … ठीक करे

पीने का दूध रख दिया करतीं। यह सब देखकर, महसूस करके, बदन में आग लग जाती। शायद मन के संस्कार ही उनको रोके हुए थे।

ऐसे ही दिनों में तभी एक बार गुरुपदस्वामी रात बड़ी देर से लौटे। सावन की अँधेरी रात थी, चारों तरफ मूसलाधार बरसात हो रही थी। पानी से तर-बतर वह जब घर पहुँचे तो वहाँ बिजली न होने की वजह से अँधेरा छाया हुआ था। बस बाईजी के कमरे से दीए की हल्की-हल्की रोशनी आ रही थी। रेगिस्तान की अंधड़ में फँसे हुए गुरुपदस्वामी जैसे अंधी जवानी की गिरफ्त में आ चुके थे। सब कुछ कर गुजरने पर भी संस्कारों की लड़ाई उनके हाथों से निकल गयी। बाईजी के यौवन की मादकता, सावन की अँधेरी रात के सन्नाटे, दीए की हल्की-हल्की रोशनी, पानी में तर-बतर उनका ठिठुरता हुआ सारा बदन जैसे आज उन झूठे संस्कारों को कुचल डालने मे लग गया।

उधर बाईजी सारे संसार से अलग अपने कमरे मे पलंग पर पड़ी थी। उनके सारे बदन में आग लगी थी। कुछ नीद के झोके में, कुछ अलसाये बदन की अँगड़ाइयों मे उनका आँचल सीने से खिसक गया। साँसों के तेजी से आने-जाने से सीने की गोलाइयों के जोर से ब्लाउज की जकड़नें टूटने लगी थी। न कोई ख्याल था, न अच्छे-बुरे की समझ। सब कपड़े पहिने हुए भी वह उस समय नंगी ही थी। मासूमियत मे पाने और खोने की पहचान अब कहाँ थी। आस्था और विश्वास की गहराइयों तक डूबे हुए गुरुपदस्वामी को उस समय कौन रोकता ? सच मे अगर गुरुपदस्वामी न होते, अगर उनके प्रति असीम श्रद्धा, पूजा की हद तक बढी हुई श्रद्धा न होती, अगर बीस साल की उमर, जब जवानी आग की तरह फैलकर रोम-रोम में समा जाती है, न होती, अगर वह सावन की अँधेरी रात न होती, अगर गुरुपदस्वामी के चार बच्चों के ऊपर छोटा भाई मरा न होता और अगर भागने के लिए वह मुँह-अँधेरे घर से निकलकर गयी-रात तक न लौटते, तो शायद बाईजी से उस रात उनका मिलन नहीं होता। बाईजी के कमरे में टिमटिमाता दीआ एक फूंक में बुझ गया। पानी से नहाया हुआ गुरुपदस्वामी का बदन जब अंगारों पर लोटते हुए बाईजी के निश्चल बदन से समर्पण माँगने पहुँचा, तो ऐसा हुआ, पानी मे आग लग गयी। उस दिन गुरुपदस्वामी को सब कुछ मिल गया। बाईजी के लिए श्रद्धा, पूजा का यह एक मार्ग था !

होकर दिल्ली चले गये लेकिन बाईजी ने अपना ठिकाना नहीं छोड़ा। वैसे कभी-कभी फूलदास के पास और कभी-कभी दिल्ली भी हो आया करती। इसी बीच फूलदास की उन्होंने शादी करवायी। अपने मधुर स्वभाव से फूलदास की बहू को बेटी जैसा प्यार दिया। फिर फूलदास के बच्चों को पालने-पोसने में बहू की मदद करने लगीं। लेकिन समय की धारा तो निश्चल नहीं होती। गति में भी तूफान छिपे होते हैं, टकराव जागते हैं। जो गुजर जाये वो ही अच्छा...। बाईजी ने सोचा था जितना दुख मिलना था, उन्हें मिल चुका। सुख के सपने तो उन्होंने कभी देखे नहीं, फिर भी काफी दिनों से दुख की काली छाया से वह बहुत दूर आ चुकी थी। एक प्रकार से दुख कैसा होता है, यह उन्हें याद नहीं था। तभी एक धमाका हुआ और मन, आत्मा शरीर के चारों ओर बनायी हुई शान्ति और सुख की दीवारें ढह गयीं। फूलदास का खून हो चुका था। लेकिन बाईजी अब पहले जैसी कमजोर औरत नहीं थीं जो इतनी बड़ी मुसीबत को बस यूं ही सह जाती। अब उनके पास ताकत थी। लड़ने की ताकत, दुख झेलने की ताकत। इसीलिए उनको राजभवन आना पड़ा।

बाईजी सामने के दरवाजे से अन्दर आकर गुरुपदस्वामी के सामने रुक गयीं। उनकी निगाहें जो आपस में मिलीं, गुरुपदस्वामी के मन में खुशियों की लहरें दौड़ने लगीं। सत्ता के संघर्ष में घिरे होने पर भी बाईजी का आना उनको बहुत अच्छा लगा। बाईजी उनके लिए एक महकता हुआ फूल थीं, जिसकी खुशबू इस उम्र में भी उनको कुछ पलों के लिए दीवाना बना देती। लेकिन आज बाईजी की गहरी, भूरी आँखों में तरलता देखकर गुरुपदस्वामी क्षणिक सुख के बाद विचलित हो उठे।

"तो, मैं बैठ जाऊँ ?" बाईजी ने पूछा।

गुरुपदस्वामी हड़बड़ाकर सोफे पर सीधा हो गये, "हाँ, हाँ, क्यों नहीं, बैठो!"

बाईजी को बैठते हुए देखकर बलराम शास्त्री ने हाथ का टेलीफोन पी० ए० को दे दिया। फिर तीनों विधायक, बलराम शास्त्री और पी० ए० बाहर की ओर चल दिये।

अब बाईजी और गुरुपदस्वामी अकेले थे। और कोई वक्त होता तो गुरुपदस्वामी इन क्षणों की मोहकता नापने-तौलने में लग जाते। लेकिन बाईजी के शोकातुर चेहरे पर आँखों की तरलता ने उन्हें डरा दिया।

ने कड़कती आवाज में कहा। फिर नर्मी से बाईजी की ओर घूमकर उन्होंने धीमी आवाज मे पूछा, "इस विषय में तुमको कुछ पता है ?"

"हां !"

"तो बताओ ना !"

"सुन सकेंगे आप ?"

गुरपदस्वामी चुपचाप उनकी तरफ देखते रहे।

"मेरे बेटे के खून के पीछे मामूली डाकू नही थे।" बाईजी ने बड़े गहरे, बड़े गम्भीर स्वर में बोलना शुरू किया, "इसके पीछे एक गिरोह था, वह गिरोह जो अफीम की तस्करी करता है, इधर-उधर हथियार, गोला-बारूद पहुँचाता है और डकैती के खौफनाक कारनामों का तो कोई हिसाब ही नहीं है। अभी कुछ दिन पहले से ही झगड़ा बढ़ गया था। अफीम की खेती का गिरोह और दुर्लभकाछी को कुचलने के लिए उसने जरा सख्ती से काम लिया। फिर लोग कहते हैं, यशोदावल्लभ की बीवी शान्तिप्रणाली के साथ उसका मामला चल रहा था।"

"क्या, शान्तिप्रणाली के साथ ?"

"हाँ, लेकिन कुछ दिन पहले, राष्ट्रीय निर्माण संघ का भंडाफोड़ किया था उसने। वो कामयाब सेठ है ना, उत्सुकदास का दल्लाल, कृष्णवल्लभ का दोस्त, उसकी कुछ ट्रकों को उसने पकड़ा था।"

"ट्रकों को पकड़ा था ? क्यों, आखिर क्यों ?"

"उसमें तांबा था, अफीम की पेटियां और तांबे के वण्डल।"

"कैसा तांबा ?"

"वही जिसका बवेला मचा है, तांबाकांड के नाम से !"

"क्या कह रही हैं बाईजी, किसने बताया आपको यह सब ?"

"वह मेरा बेटा था", गरूर से बाईजी ने कहा, "मुझे नही मालूम होगा ? फिर मेरी बहू, मेरी बेटी, उसके दोस्त, सभी तो यह कह रहे हैं। यह कोई आज का किस्सा है, कितने दिनो से चल रहा था !" बाईजी फिर रोने लगी।

"लेकिन मुझे तो कभी नहीं बताया !"

"वह कहता था, आप कुछ न सुनेंगे, उत्सुकदास के जादू ने बाँध रखा था आपको !"

"उत्सुकदास !"

हल्का हो गया। वह चलने के लिए उठीं तो गुरुपदस्वामी भी उठ खड़े हुए। फिर उनकी ओर देखकर बोले, "चलो, तुम्हें छोड़ आएँ।"

"मिट्टी में नहीं आयेंगे ?" बाईजी की आवाज में दर्द था।

गुरुपदस्वामी ने बाईजी की ओर देखा। उनकी नजर पड़ते ही बाईजी ने तो सिर झुका लिया, लेकिन वह कुछ देर सोचते रहे, फिर बोले, "अच्छा, मिट्टी कहाँ लानी थी ?"

"बनारस !"

"तो ऐसा करते हैं, तुम चलकर उन लोगों को रोके रहना, हम यहाँ से निपटाकर आते हैं। फिर जो कुछ तुमने बताया, उसको भी देखना था।"

तभी उनका पी० ए० हाथ में टेलीफोन का रिसीवर लिये हुए सामने दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया। गुरुपदस्वामी ने पी० ए० की ओर देखा, उसे अंदर आ जाने का इशारा किया। फिर बाईजी से बोले, "चाहे तनिक देर रुक जाओ, किसी को इन्तजाम देखने के लिए साथ भेज दें।"

"इन्तजाम तो पुलिस वाले खुद ही करते होंगे।"

"तो कुछ चाय-पानी कर लो।"

"नहीं···इस वक्त कुछ नहीं।"

तब तक पी० ए० टेलीफोन लेकर उनके करीब आ गया। रिसीवर लेने के लिए उन्होंने हाथ बढाया लेकिन तभी जैसे उन्हें कुछ याद आ गया।

"ऐसा है बाईजी, अब तुम्हारा अकेले जाना ठीक नहीं। अगर तुम कुछ देर रुक जाओगी तो हम भी यहाँ से निकल चलेंगे, वर्ना न जाने किस वक्त मुक्ति मिले !"

"लेकिनब हू ! वह तो अकेली होगी ?"

"क्यों ? क्या और लोग नहीं आये ?" गुरुपदस्वामी पास आ गयी बाईजी को किसी कीमत पर छोड़ना नहीं चाहते।

"वो तो आये हैं।" बाईजी का विरोध ढीला पड़ता जा रहा था।

"तो ऐसा करो", बगल के अपने सोने के कमरे की ओर इशारा करते हुए वह बोले, "उधर जाकर कुछ देर आराम कर लो, तब तक मैं इन लोगों को निपटा दूँ।" टेलीफोन का रिसीवर उठाये हुए पी० ए० से दरवाजे पर खड़े दर्जनों मुलाकातियों तक को देखते-देखते उन्होंने कहा, "और हाँ, जिस किसी चीज की जरूरत हो तो मँगा लेना या फिर हमें बता देना।

मैं इस बीच बनारस से पता लगवाता हूँ उसकी मिट्टी किते बजे उठाने का प्रबन्ध है। अभी तो मुझे लगता है, आज क्रिया-कर्म शायद ही हो।"

"क्यों भला !"

"खून के मामले में, पोस्टमार्टम वगैरह भी तो होता है।"

"ओह ! फिर भी आप जरा जल्दी करें। बहू के पास मेरा रहना जरूरी है।" कहकर बाईजी बगल के कमरे की ओर चल दीं।

गुरुपदस्वामी एक क्षण तो बाईजी को जाते हुए देखते रहे, फिर पी० ए० की मौजूदगी का विचार कर वह उधर घूम पड़े।

"अरे भई किसका फोन है, ये तो बताओ।"

"पार्टी अध्यक्ष का।"

"पार्टी अध्यक्ष ? अरे पहले नहीं बताया। लाओ जल्दी।"

गुरुपदस्वामी को पार्टी अध्यक्ष का फोन आ जाने से कुछ आशा बँधी, "हलो !"

"गृहमंत्रीजी, आपने फोन करवाया था।"

"हाँ भई, मैं यह जानना चाहता था, आज का कार्यक्रम क्या है ?" कहने को तो वह कह गये लेकिन सही उनको याद नहीं आया, भला उन्होंने फोन क्यों करवाया था। कुछ बाईजी की बातें और फिर फूलदास की दर्दनाक मौत, सब मिलकर अंदर ही अंदर उनको कचोट रहे थे।

"अभी मैं जरा दारुलशफ़ा जाऊँगा, फिर···आप वहीं रहेंगे ?"

जरा ध्यान देने से गुरुपदस्वामी को पी० एम० हाउस की बातचीत एक झटके में याद आ गयी।

"रुकिये अध्यक्षजी, पी० एम० हाउस मैंने फोन किया था !"

"पी० एम० हाउस ?"

"हाँ, क्या है, राज्यपाल ने मुझे बताया, अभी तक राष्ट्रपति शासन समाप्त होने का घोषणापत्र दिल्ली में जारी नहीं हुआ, इसीलिए फिर मैंने दिल्ली फोन मिलाया।"

"अभी तक ?"

"हाँ भई, फिर मेरे पास प्रधानमंत्री का संदेश आया, आपके फोन का वहाँ इंतजार किया जा रहा है, उसी के बाद आगे की कार्यवाही होनी थी। आखिर यह सब है क्या ?"

"आपको जितना बताया, उतना ही मुझे भी मालूम है।"

"तो, आपकी राय क्या है ?"

"फिलहाल वही, जो आपकी।"

"तो फिर आप दिल्ली बात करें ना !"

पार्टी अध्यक्ष एक क्षण रुके फिर बोले, "ऐसा है, दारुलशफ़ा होकर मैं राजभवन आता हूँ फिर वहीं से बात कर लेंगे। आप रहेंगे तो ?"

"मैं तो यहीं हूँ लेकिन मुझे जाना था।"

"पार्टी मीटिंग में साथ ही चलेंगे।"

"नहीं जी, आपको शायद पता हो, फूलदास को किसी ने मार डाला।"

"वही आपका सम्बन्धी जो पुलिस में था।"

"हाँ···हाँ !"

"प्लेन में जिकर तो आया था ना, क्या कुछ पता लगा ? कौन लोग हैं ? किसी को पकड़ा क्या ?"

"कई बातें हैं, अब फोन पर क्या कहें, आप आयेंगे तो।"

"हाँ···हाँ, मैं आता हूँ, बस दारुलशफ़ा होकर।"

"तो ठीक है।"

इसी बीच न जाने कब बलराम शास्त्री, चुपचाप, दबे पाँव आकर खड़े हो गये। इस बार वह अकेले थे। तीनों विधायकों को बाहर ही छोड़ आये। उनकी समस्या अभी भी अधूरी थी। उनका गुट संकट के बड़े नाजुक दौर से गुजर रहा था। उन्हें मालूम था, लोटेराम के टूट जाने से एक विस्फोटक परिस्थिति पैदा हो गयी है, जिसका सामना कर सकना उत्सुकदास के बस में नहीं था। उधर पार्टी अध्यक्ष से बात करने के बाद गुरुपदस्वामी का मनोबल बढ़ा। बाईजी बगल के कमरे में उनका इंतजार कर रही थीं। वहाँ भी पहुँचना था, तभी उनको कानपुर का ख्याल आया। अपने पी० ए० की ओर देखा तो बलराम शास्त्री पर भी निगाह पड़ी।

"देखो भई ! जरा बनारस पुलिस एस० पी० से बात करो, फूलदास का अन्तिम संस्कार कब होना है और उसकी अर्थी इस समय कहाँ है।"

"अच्छा सर !" कहकर पी० ए० चला गया।

अब रास्ता साफ देखकर बलराम ने कहा, "गुरुजी, कुछ करिये ना !"

"क्या करें ?" गुरुपदस्वामी ने रूखे स्वर में कहा।

"लोबीराम टूट गया जी ! और अब तो खबर आयी है, बलदेव चौधरी और रंगीनराय मिल गये। ऊपर से उनके साथ लोबीराम है।"

"क्या ?"

"हाँ, गुरुजी इन लोगों ने पार्टी मीटिंग से पहले एक मिनी मीटिंग बुलायी है।"

"कहाँ ?"

"रंगीनराय के कमरे में। और फिर सुना है, बलदेव चौधरी ने पार्टी अध्यक्ष को इस मिनी मीटिंग में जाने के लिए राजी कर लिया है।"

"पार्टी अध्यक्ष, इन लोगों के साथ है ?"

"नहीं, यह इन लोगों की चाल है। पार्टी अध्यक्ष को अपने यहाँ बैठक में यह लोग बुला रहे हैं, चायपार्टी के बहाने ! जबकि पूरे दारुलशफ़ा में सारे विधायकों को इस मीटिंग का मकसद पता है।"

"क्या है, मकसद ?"

"उत्सुकदास के विरोध की साजिश। चाल, गुरुजी इसमें बड़े दूर की खेल गये ये लोग। पार्टी अध्यक्ष के वहाँ आ जाने से उन तमाम विधायकों का, जो अंदर से उत्सुकदास के खिलाफ़ हैं, मनोबल बढ़ेगा।"

"फिर !"

"पहले वहाँ रिहर्सल होगा।"

"फिर !"

"फिर पार्टी में विद्रोह !!"

"अरे ! यह क्या…"

"हाँ गुरुजी, मैं सच्ची कहता हूँ, आप मेरा विश्वास तो करें।"

"विश्वास करें और एक नयी मुसीबत मोल लें ?"

"क्यों…क्यों गुरुजी ?"

"और नहीं तो क्या, अब इत्ती देर में वह लोग क्या खाक कुछ करेंगे ?"

"गुरुजी न चाहते हुए, न जानते हुए भी उनकी गतिविधियाँ समय की रफ्तार में जुड़ गयीं तो ?"

"क्या मतलब ?"

"क्षमा कीजिये, कहते हुए बुरा लगता है, फिर भी अभी आपने पी० एम० हाउस से बात की ना।"

"हाँ, तो !"

"राष्ट्रपति शासन कहाँ समाप्त हुआ ?"

गुरुपदस्वामी चुप रहे।

"आपको पता है, यहाँ दिल्ली में राष्ट्रपति शासन समाप्त होने की घोषणा तभी होगी जब पार्टी अध्यक्ष फोन करेंगे। और पार्टी अध्यक्ष रंगीनराय के यहाँ होने वाली मिनी मीटिंग के बाद फोन करेंगे।"

"या फिर पार्टी मीटिंग के बाद ?"

"पार्टी मीटिंग होगी ?"

"क्या ? भला क्यों नहीं होगी ?"

"अगर मिनी मीटिंग में पार्टी अध्यक्ष के पहुँचने की खबर से, कगार पर बैठ विधायकों को वह लोग बहका ले गये, अगर लोबीराम उनकी तरफ मिले रहे, अगर पार्टी अध्यक्ष ने प्रधानमंत्री से मिनी मीटिंग की सफलता के बारे में कह दिया···" फिर कुछ देर राजभवन के कमरे की दीवार पर निगाह गड़ाये रहने के बाद बलराम ने कहा, "अगर उन लोगों ने पार्टी मीटिंग में बवेला मचा दिया ?"

"बवेला ? किस ईसू पर, मामला क्या होगा ?"

"कृष्णवल्लभ, तांबाकाड, कामयाब सेठ, फिर उत्सुकदास खुद कितने बड़े ईसू हैं ! इसूज की कमी है, गुरुजी !"

"कृष्णवल्लभ, यहाँ भी ?"

"कृष्णवल्लभ का हर जगह बोलबाला है, गुरुजी···अफीम की खेती, राष्ट्र निर्माण संघ के घपले, डकैती की कमायी और फिर फूलदास का खून !"

"फूलदास !···" गुरुपदस्वामी को बाईजी का कहना याद आया।

"एक पुलिस इंस्पेक्टर कह रहा था, कत्ल दुर्लभकाछी डकैत ने किया था। और यह सबको मालूम है, कृष्णवल्लभ का सगा भाई यशोदावल्लभ, दुर्लभकाछी का लँगोटिया यार है।"

"शिव···शिव···" गुरुपदस्वामी बुदबुदाये।

"लोबीराम की शक्ति, बलदेव चौधरी का नाम, रंगीनराय के तिकड़म और ऊ ससुरा दरोगा फिर पलटी हवा बनाने के लिए रहेंगे। हम तो कहते हैं, गुरुजी साजिश पक्की है। अब ई कुछ करि ना पाँए तो इन किस्मत !"

"अच्छा तो दरोगा भी जुटा है ?"

"हाँ, ई उत्सुकदास की करामात है, उनके भाई का मुग्रत्तल करवाय दिया। इधर दिल्ली में न जाने वह क्या कर आये हैं, संसद सदस्यों के टेलीफोन आ रहे हैं, विधायकों के पास उनका विरोध करने के लिए।"

"संसद सदस्य कौन ?"

"एक तो वही ठाकुर गुट के नेता झब्बरसिंह, झाँसी वाले मुरली और गोरखपुर के शत्रुघन।" बलराम शास्त्री ने आँकड़े गिनाना शुरू कर दिया, "फिर सुनते हैं यह लोग प्रधानमंत्री से मिले थे।"

"प्रधानमंत्री से ?"

"हाँ, पार्टी मीटिंग टालने के लिए। उत्सुकदास ने भी तो किसी को छोडा नहीं। तब तो जिनने जो कहा हाँ करि दिया, अब निभाने की हैसियत बची न थी।"

"अच्छा बलराम, एक बात बताओ, हम यह कैसे मान लें, ई सब चल रहा है और उत्सुकदास को पता नहीं ?"

"क्या है, गुरुजी, यह सब चल नहीं रहा था, पक रहा था। बड़े धीमे-धीमे, मध्यम-मध्यम, एक खास तरीके से, कुछ पुरानी कुंठाओं, कुछ उत्सुकदास की करनी से, कई चीजें, कई बातें, इकट्ठी होती गयीं। इनको पंक्तिबद्ध होते तो अभी देखा, बस घंटे-दो घंटे पहले। मैं उत्सुकदास के पास गया था लेकिन क्या हालत थी, मुलाकातियों का क्या हजूम था, यहाँ आना था, सो चला आया। फिर इस वक्त हमरी बात वह सुनेंगे ?"

कुछ देर गुरुपदस्वामी स्थिति की गम्भीरता को तौलते-नापते रहे। पहले दिल्ली में ताँबाकांड के हंगामे फिर पी० एम० हाउस से कुछ देर पहले मिला झटका, उनको उत्सुकदास के साथ अपना भाग्य एक महीन धागे से बँधा हुआ नजर आने लगा। लेकिन बाईजी से बातचीत के बाद और अभी बलराम की बातों से, फूलदास के कत्ल सम्बन्धी कई रहस्य जो खुले तो उनका संकल्प हिलने लगा था। फिर भी वह जानते थे, उत्सुकदास वह जहरीला निवाला था जिसे निगलने में विनाश था लेकिन उसे थूका भी नहीं जा सकता क्यों उसमें खुद उनका अपना भी सत्व था।

"तो बलराम, मेरी समझ में तो एक ही बात आयी।"

"हाँ गुरुजी !" बलराम जरा ठसककर बैठ गये।

"इस सारी साजिश में शक्ति है तो लोबीराम की।"

8934

"हाँ गुरुजी।"

"ग्रौर उनका हथियार···"

"कृष्णवल्लभ, गुरुजी हमला उत्सुकदास पर नहीं, कृष्णवल्लभ पर होगा।"

"कैसे !"

"तांबाकांड जब हुआ तो कृष्णवल्लभ विद्युत मंत्री थे ?"

"लेकिन तांबाकांड में तो मुझे फाँसा गया था।"

"वो तो दिल्ली में; यहाँ अब लोगों को मालूम है जिन ट्रकों में तांबा प्रदेश के बाहर ले जाया गया, वो ट्रकें राष्ट्रीय निर्माण संघ की थीं। उन ट्रकों को फूलदास ने पकड़कर नाजायज तांबा ग्रौर अफीम बरामद की। उसी के बाद फूलदास का खून किया डकैत दुर्लभकाछी ने !"

बलराम शास्त्री ने गुरुपदस्वामी की आँखों में अर्थपूर्ण दृष्टि में समर्थन के लिए देखा। उनका चेहरा क्रोध में तमतमा गया था, आँखों में घृणा की लपटें उठ रही थीं। वह समर्थन या विरोध प्रकट करने की स्थिति में नहीं थे।

"ग्रौर दुर्लभकाछी किसका आदमी था ? यशोदावल्लभ-कृष्णवल्लभ का। उसकी डकैती की कमायी से ही इन्होंने राजनीति शुरू की थी। फिर राष्ट्रीय निर्माण संघ, जिसकी ट्रकों में अफीम ग्रौर तांबा मिला, किसका था ? यशोदावल्लभ-कृष्णवल्लभ का !" बलराम शास्त्री असल में लघु सिंचाई जैसे अधकचरा मंत्रालय मिलने की खबर से भी दुखी थे। उनके मुकाबले छोटा नेता होने पर भी कृष्णवल्लभ को सिंचाई विभाग मिलने वाला था। उनको कुछ यह अहसास हो रहा था, मगर कृष्णवल्लभ को कटवा दिया जाय तो सिंचाई विभाग पूरा का पूरा उनको मिलेगा।

इधर गुरुपदस्वामी ने भी अपने क्रोध पर नियंत्रण पाने में कुछ फैसला कर लिया—"फिर बलराम, जाहिर है अगर लोबीराम को तोड़ लिया जाय ग्रौर कृष्णवल्लभ को काट दिया जाय तो !"

बलराम सोफे से उठकर गुरुपदस्वामी के कदमों पर गिर पड़ा, "वाह गुरुजी···वाह ! क्या मीमांसा है। कृष्णवल्लभ को काटा जाय तब, असन्तुष्ट गुट की तरफ से जब हमला पूरे जोर पर, पार्टी को बचाने के लिए हो ! इससे एकदम चारों खाने चित होएँगे हवा खिसक जायेगी।"

"अच्छा तो दरोगा भी जुटा है ?"

"हाँ, ई उत्सुकदास की करामात है, उनके भाई का मुअत्तल करवाय दिया। इधर दिल्ली में न जाने वह क्या कर आये हैं, संसद सदस्यों के टेलीफोन आ रहे हैं, विधायकों के पास उनका विरोध करने के लिए।"

"संसद सदस्य कौन ?"

"एक तो वही ठाकुर गुट के नेता झब्बरसिंह, झाँसी वाले मुरली और गोरखपुर के शत्रुघन।" बलराम शास्त्री ने आँकड़े गिनाना शुरू कर दिया, "फिर सुनते हैं यह लोग प्रधानमंत्री से मिले थे।"

"प्रधानमंत्री से ?"

"हाँ, पार्टी मीटिंग टालने के लिए। उत्सुकदास ने भी तो किसी को छोड़ा नहीं। तब तो जिनने जो कहा हाँ कारि दिया, अब निभाने की हैसियत बची न थी।"

"अच्छा बलराम, एक बात बताओ, हम यह कैसे मान लें, ई सब चल रहा है और उत्सुकदास को पता नहीं ?"

"क्या है, गुरुजी, यह सब चल नहीं रहा था, पक रहा था। बड़े धीमे-धीमे, मध्यम-मध्यम, एक खास तरीके से, कुछ पुरानी कुंठाओं, कुछ उत्सुकदास की करनी से, कई चीजें, कई बातें, इकट्ठी होती गयी। इनको पंक्तिबद्ध होते तो अभी देखा, बस घंटे-दो घंटे पहले। मैं उत्सुकदास के पास गया था लेकिन क्या हालत थी, मुलाकातियों का क्या हजूम था, यहाँ आना था, सो चला आया। फिर इस वक्त हमरी बात वह सुनेंगे ?"

कुछ देर गुरुपदस्वामी स्थिति की गम्भीरता को तौलते-नापते रहे। पहले दिल्ली में ताँबाकांड के हंगामे फिर पी० एम० हाउस से कुछ देर पहले मिला झटका, उनको उत्सुकदास के साथ अपना भाग्य एक महीन धागे से बंधा हुआ नजर आने लगा। लेकिन बाईजी से बातचीत के बाद और अभी बलराम की बातों से, फलदास के कत्ल सम्बन्धी कई रहस्य जो खुले तो उनका संकल्प हिलने लगा था। फिर भी वह जानते थे, उत्सुकदास वह जहरीला निवाला था जिसे निगलने में विनाश था लेकिन उसे थूका भी नहीं जा सकता क्यों उसमें खुद उनका अपना भी सत्व था।

"तो बलराम, मेरी समझ में तो एक ही बात आयी।"

"हाँ गुरुजी !" बलराम जरा ठसककर बैठ गये।

"इस सारी साजिश में शक्ति है तो लोबीराम की।"

"हाँ गुरुजी।"

"और उनका हथियार…"

"कृष्णवल्लभ, गुरुजी हमला उत्सुकदास पर नहीं, कृष्णवल्लभ पर होगा।"

"कैसे !"

"ताँबाकांड जब हुआ तो कृष्णवल्लभ विद्युत मंत्री थे ?"

"लेकिन ताँबाकांड में तो मुझे फाँसा गया था।"

"वो तो दिल्ली में; यहाँ अब लोगों को मालूम है जिन ट्रकों में ताँबा प्रदेश के बाहर ले जाया गया, वो ट्रकें राष्ट्रीय निर्माण संघ की थीं। उन ट्रकों को फूलदास ने पकड़कर नाजायज ताँबा और अफीम बरामद की। उसी के बाद फूलदास का खून किया डकैत दुर्लभकाछी ने !"

बलराम शास्त्री ने गुरुपदस्वामी की आँखों में अर्थपूर्ण दृष्टि में समर्थन के लिए देखा। उनका चेहरा क्रोध में तमतमा गया था, आँखों में घृणा की लपटें उठ रही थी। वह समर्थन या विरोध प्रकट करने की स्थिति में नहीं थे।

"और दुर्लभकाछी किसका आदमी था ? यशोदावल्लभ-कृष्णवल्लभ का। उसकी डकैती की कमायी से ही इन्होंने राजनीति शुरू की थी। फिर राष्ट्रीय निर्माण संघ, जिसकी ट्रकों में अफीम और ताँबा मिला, किसका था ? यशोदावल्लभ-कृष्णवल्लभ का !" बलराम शास्त्री असल में लघु सिंचाई जैसे अधकचरा मंत्रालय मिलने की खबर से भी दुखी थे। उनके मुकाबले छोटा नेता होने पर भी कृष्णवल्लभ को सिंचाई विभाग मिलने वाला था। उनको कुछ यह अहसास हो रहा था, अगर कृष्णवल्लभ को कटवा दिया जाय तो सिंचाई विभाग पूरा का पूरा उनको मिलेगा।

इधर गुरुपदस्वामी ने भी अपने क्रोध पर नियंत्रण पाने में कुछ फैसला कर लिया—"फिर बलराम, जाहिर है अगर लोबीराम को तोड़ लिया जाय और कृष्णवल्लभ को काट दिया जाय तो !"

बलराम सोफे से उठकर गुरुपदस्वामी के कदमों पर गिर पड़ा, "वाह गुरुजी…वाह ! क्या मीमांसा है। कृष्णवल्लभ को काटा जाय तब, असन्तुष्ट गुट की तरफ से जब हमला पूरे जोर पर, पार्टी मीटिंग में बवेला मचाने के लिए हो ! इससे एकदम चारों खाने चित होएंगे और सबकी हवा खिसक जायेगी।"

"हाँ गुरुजी।"

"और उनका हथियार..."

"कृष्णवल्लभ, गुरुजी हमला उत्सुकदास पर नही, कृष्णवल्लभ पर होगा।"

"कैसे!"

"ताँबाकांड जब हुआ तो कृष्णवल्लभ विद्युत मंत्री थे?"

"लेकिन ताँबाकांड में तो मुझे फाँसा गया था।"

"वो तो दिल्ली में; यहाँ अब लोगों को मालूम है जिन ट्रकों में ताँबा प्रदेश के बाहर ले जाया गया, वो ट्रकें राष्ट्रीय निर्माण संघ की थी। उन ट्रकों को फूलदास ने पकड़कर नाजायज ताँबा और अफीम बरामद की। उसी के बाद फूलदास का खून किया डकैत दुर्लभकाछी ने!"

बलराम शास्त्री ने गुरुपदस्वामी की आँखों में अर्थपूर्ण दृष्टि में समर्थन के लिए देखा। उनका चेहरा क्रोध में तमतमा गया था, आँखों मे घृणा की लपटें उठ रही थी। वह समर्थन या विरोध प्रकट करने की स्थिति में नहीं थे।

"और दुर्लभकाछी किसका आदमी था? यशोदाबल्लभ-कृष्णबल्लभ का। उसकी डकैती की कमायी से ही इन्होंने राजनीति शुरू की थी। फिर राष्ट्रीय निर्माण संघ, जिसकी ट्रकों में अफीम और ताँबा मिला, किसका था? यशोदाबल्लभ-कृष्णबल्लभ का!" बलराम शास्त्री असल में लघु सिंचाई जैसे अधकचरा मंत्रालय मिलने की खबर से भी दुखी थे। उनके मुकाबले छोटा नेता होने पर भी कृष्णबल्लभ को सिंचाई विभाग मिलने वाला था। उनको कुछ यह अहसास हो रहा था, अगर कृष्णवल्लभ को कटवा दिया जाय तो सिंचाई विभाग पूरा का पूरा उनको मिलेगा।

इधर गुरुपदस्वामी ने भी अपने क्रोध पर नियंत्रण पाने में कुछ फैसला कर लिया---"फिर बलराम, जाहिर है अगर लोबीराम को तोड़ लिया जाय और कृष्णवल्लभ को काट दिया जाय तो!"

बलराम सोफे से उठकर गुरुपदस्वामी के कदमों पर गिर पड़ा, "वाह गुरुजी...वाह! क्या मीमांसा है। कृष्णवल्लभ को काटा जाय तब, असन्तुष्ट गुट की तरफ से जब हमला पूरे जोर पर, पार्टी मीटिंग में बवेला मचाने के लिए हो! इससे एकदम चारों खाने चित होएँगे और सबकी हवा खिसक जायेगी।"

"तो फिर ठीक है, उत्सुकदास को फोन लगाम्रो, मैं कह देता हूँ लोबी-राम को तोड़ने की खातिर !"

"उनकी सुनेगा ?"

"भैया अब वह सुनेगा किसी की ? इस वक्त तो सिर्फ पैसा ही तोड़ेगा उसको !"

इसके बाद गुरुपदस्वामी ने उत्सुकदास को टेलीफोन पर फौरन लोबीराम से मिलाने की सलाह दी। यह भी कहा बलराम को भेजते हैं, वह पूरी बात समझा देगा। बलराम तो पहले ही पूरी बात समझ चुके थे। इसलिए भागते समय को पकडने के लिए और फिर कृष्णबल्लभ को मंत्रिमंडल से कटवा देने की सफलता के नशे में वह जल्दी-जल्दी उत्सुकदास से मिलने को चल दिये। इस वक्त की गुरुपदस्वामी से भरी-पूरी बातचीत ने उनके मन मे बडा उत्साह पैदा कर दिया था। अब जी-जान से उनको कोशिश करनी थी, टूटते हुए मंत्रिमंडल को बचाने की जिसके ऊपर ही उनका भविष्य निर्भर था।

बलराम शास्त्री के चले जाने के बाद गुरुपदस्वामी कुछ देर अकेले ही बैठे रहे। राजभवन के विशाल कमरे की ऊँची छत जैसे शाम के अँधेरे में डूबकर, फर्श पर पड़े ईरानी कालीन, एम्ब्रायडरीदार सोफे, पेंचदार चमकती मेजें, कुछ ताजे फूलो से सजे फूलदान, किनारे-किनारे से गोल होती हुई दीवारों के मोड पर रुकी थी। बहुत दिन पहले जब गुरुपदस्वामी कुछ भी नहीं थे, किसी समारोह में यहाँ आने पर तब पहली बार राजभवन की विशालकाय काया से उनको कितनी दहशत हुई थी। हर कदम के साथ बस यही डर बना रहता कोई रोक देगा, कोई टोक देगा। जहाँ एक ओर अर्ध शताब्दियों से प्रदेश की सत्ता के मुख्य केन्द्र को अन्दर से देख लेने की खुशी हुई, दूसरी ओर तब उनके अन्दर खुफिया तरीके से एक चाह बस गयी, ऐसे किसी विशाल राजभवन मे रहने और जीने की। उस समय उनको अपनी चाहत पर हँसी आयी थी, उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था, इतने अधिकार से यहाँ बैठकर वह कभी दहशत और संकोच से ऊपर उठकर लोगों से बातचीत करेंगे, हुक्म देंगे, उनका हर शब्द ध्यान से सुना जायेगा।

गुरुपदस्वामी के चुप अकेले बैठने के पीछे, उनके अन्दर की गूँज से ने वाला संघर्ष था। एक तरफ वह खुद थे, जिससे जुड़ी थी, बाईजी,

दूसरी तरफ उनका राजनैतिक जीवन था, जिससे जुड़े थे उत्सुकदास ! गुरुपदस्वामी ने बिन माँगे जो कुछ पाया वह ही इतना काफी था उन्हें किसी से कुछ माँगने की जरूरत नहीं थी । लेकिन आज उनका मन हाथ फैलाकर माँगने का था ईश्वर से, प्रधानमंत्री से या फिर उत्सुकदास तक से । बाईजी का दुख उनसे देखा नहीं जा रहा था । बाईजी जितना कह सकीं, वह उनको हिला देने के लिए बहुत था, क्योंकि वह कभी कुछ कहती नहीं । वैसे तो उन्होंने घरेलू बातों को राजनीति से कभी घुलने-मिलने नहीं दिया । तभी तो घरवालों के हजार-हजार कहने से भी उत्सुकदास पर भरोसा करना उन्होंने नहीं छोड़ा। घरवाले क्या सभी कहा करते : उत्सुकदास उनके साथ दगाबाजी करेंगे । लेकिन आज इन सब लोगों से ऊपर अलग बाईजी ने भी कृष्णवल्लभ-उत्सुकदास की हरकतों का जिस तरह पर्दाफाश किया, उनको अपने राजनैतिक जीवन की तलहटी से लिपटी हुई लपटें दिखायी दे गयी ।

कुछ दिन पहले दिल्ली में उन्होंने सुना था अगले केन्द्रीय मंत्रिमंडल की अदल-बदल में उनको हटा देने की सम्भावना थी । तभी उन्होंने यह भी सुना, उनको किसी प्रदेश का राज्यपाल बनाकर भेजा जायेगा । उनकी पुरानी से पुरानी यादों की तहत किन्हीं अनजानी यादों में मोड़, कटाव आने लगा । सोफे से उठकर गुरुपदस्वामी राजभवन के कमरे को देखते-देखते किनारे की खिड़की पर आकर खड़े हो गये । जिस प्रदेश में उनको जाना होगा, वहाँ का राजभवन क्या ऐसा ही विशाल, ऐसा ही गुरुतर होगा । खिडकी से बाहर दूर-दूर तक फैले हुए बगीचे के हर कोने से अनेक-अनेक पेड़-पौधों की डालियों पर गुलदस्तों जैसी सजी-सजायी फूल-पत्तियों की सजावट, देखते-देखते उनके अन्दर मोहक लहरें उठने लगी ।

भूली बिसरी यादों के घेरों में भटक जाने के बाद, गुरुपदस्वामी का कवि-हृदय, राजभवन के बगीचे की रंगीनियों में न राहत पा सका, न ही ठहर सका । ऐसे ही किसी राजभवन में आने वाले, शक्तिहीन, सत्ता-विहीन अलसाये जीवन की कल्पना मात्र से उनको रोमांच हो आया । इतने वर्षों से खेलते-खेलते सत्ता का खेल उनकी रगों में इतने अन्दर तक घुस चुका था, अब वह सब छिन जाने से वह कैसे जीयेंगे और इसके लिए जिम्मेदार कौन होगा ? रद्दी की टोकरी से उठाकर हृदय से लगा लेने वाला उत्सुकदास जो उनके आशीर्वाद, उनकी कृपा से आज इतनी ऊँचाई

पर पहुँच गया। वाईजी की बातों से साफ जाहिर था, ताँबाकांड से कृष्ण-वल्लभ का सीधा सम्बन्ध था, फिर कामयाब सेठ ! गुरुपदस्वामी के होंठों पर कुत्सित घृणा की परछाइयाँ सिकुड़ने लगीं, उत्सुकदास का ही ग्रादमी था। तो फिर यह सारी साजिश उत्सुकदास ने खुद उनको ग्रँधेरे में रखकर, कृष्णवल्लभ के साथ की।

तभी उनको मुख्यसचिव द्वारा, ताँबाकांड की, प्रधानमंत्री को भेजी गयी रिपोर्ट की याद ग्रायी। बाहर का मोहक नजारा एक खास किस्म की खामोशी में डूबा हुग्रा था। साँझ का धुँधलका गोल-गोल दायरों में, किसी बवंडर के उठने की दस्तक दे रहा था। गुरुपदस्वामी को ऊँचे-ऊँचे यूक्लिपटस की महीन डालों पर लगा उत्सुकदास एक नट की तरह कूदते-फाँदते, उनको ग्रँगूठा दिखाकर चिढ़ा रहा था। बाहर फुहारों की पतली-पतली पानी की ग्रनगिनत लकीरों के बीच-बीच उनको कहीं-कहीं ग्राग की लपटें दिख रही थीं, जिन्हें जगाकर उत्सुकदास भागा चला जा रहा था। ग्रजीबो-गरीब मानसिक उठा-पटक में उनका मन हुग्रा वह राज-भवन की खिड़की से कूद जायें, दौड़कर या फुहारों से उड़ते ठण्डे पानी की लहरों के बीच ग्राग की लपटों को बुझा दें या फिर यूक्लिपटस की टहनियों पर से पकड़कर उत्सुकदास को उन्हीं लपटों में झोंक दें। फिर उनको ग्रपनी पकती उम्र का ख्याल ग्राया। इस तरह उत्सुकदास को पकड़ना नामुम-किन था। एक लम्बी साँस छोड़कर वह खिड़की से वापस लौट चले। सोफे के सामने काफी बड़ी शीशे के टाप वाली गोल मेज पर लाल फीते से बँधी हुई फाइल उन्होंने खोलकर ताँबाकांड की रिपोर्ट देखनी शुरू की ! उसमें ऐसा कुछ भी नहीं था जो उनको मालूम न हो। फिर भी रिपोर्ट का एक-एक शब्द पढ़ते-पढ़ते एक ग्रजीब प्रकार की कमजोरी उनके पैरों में पैदा होने लगी। फिर सोफे पर बैठकर ग्रागे की रिपोर्ट पढ़ने से पहले प्रदेश पुलिस के ग्राई० जी० ग्राकर खड़े हो गये।

ग्राई० जी० पुलिस की गुरुपदस्वामी से पुरानी जान-पहचान थी। जब वह ग्राई० जी० नहीं थे, महज एक मामूली एस० पी० थे, वह भी गुरुपदस्वामी की तरह घपलों में फँस जाया करते। फर्क सिर्फ इतना था, वह घपले खुद करते ग्रौर निपटाना पड़ता उनके बाप को ! उनके बाप बड़े ग्राला ग्रोहदे पर थे। ग्रंग्रेजी जमाने के ग्राई० सी० एस० ऊपर से बेशुमार खानदानी दौलत, बस दूर-दूर तक उनकी तूती बोला करती। बड़े

वसूल के आदमी थे। मंत्रियों, नेताओं को तो वह घास भी नहीं डालते। उन्होंने वह जमाना देखा था जब आज के मंत्री या पार्टी के नेता उनके एक इशारे पर पीटे जाया करते, जेलों मे ठूँस दिये जाते। अपनी इज्जत, ओहदे और दौलत के गरूर में उन्होंने इन पार्टी के नेताओं से कभी सीधे मुँह बात तक नहीं की।

अपने बेटे की आवारगी से वह हमेशा से ही दुखी थे लेकिन जब उसने पुलिस की नौकरी कर ली तो उन्होंने उसके सारे गुनाह माफ कर दिये और उसकी तरफ से निशाखातिर हो रहे। एक तरह से उनके बेदाग जीवन की सफेद चादर पर मँडराते बदनामी, बदरंगी के बादल गुजर गये। तब उन्होंने चैन की साँस ली और पूरे जोर से पार्टी के नेताओं, मंत्रियों को गरिआने में लग गये। अपने बेटे की तरफ से खतरा जो नहीं रहा तो उन्होंने बेलगाम घोड़े की तरह सरपट दौड़ना शुरू कर दिया। पार्टी के बड़े-बड़े नेताओं को वह अपनी पीठ पर हाथ भी नहीं रखने देते।

उन्हीं दिनों गुरुपदस्वामी एक घपले में फँस गये। हुआ यूँ, बाईजी के कोई दूर-दराज के भाई थे, उनके नाम उन्होंने किसी बाँध का ठेका सिंचाई विभाग में दिलवा दिया। बाईजी के भाई सीमेंट में बालू की तादाद बढ़ाते गये क्योंकि उन दिनों सीमेंट का जबरदस्त ब्लैक चल रहा था। बाँध बनते ही ढह गया। फिर क्या था चारों ओर हाहाकार मच गया। विरोधी दलों के साथ मिलकर पार्टी के अन्दर दुश्मनो ने हल्ला बोल दिया। गुरुपदस्वामी सिंचाई मंत्री थे। उनके और बाईजी के किस्से, तब सबकी जुबान पर थे। बाईजी से ठेकेदार भाई का रिश्ता पता लगाकर लोगों ने काफी दिनों उनके ऊपर हमला जारी रखा। प्रदेश सरकार ने बाँध गिरने से सम्बन्धित जाँच के लिए एक उच्चस्तरीय आयोग नियुक्त किया। इस आयोग के अध्यक्ष बनाये गये आई० जी० के आई० सी० एस० बाप जिनकी सख्तमिजाजी की वजह से बाँधकाड का हल्ला तो खत्म हो गया, लेकिन जाँच शुरू हो गयी।

उधर आई० जी० पुलिस की औरतबाजी के किस्से, दबी जबान से फिर चालू हो गये। दिन-दहाड़े लड़कियाँ, औरतें मोटर-जीप मे उठा ली जाया करतीं। पुलिस महकमे का अफसर, फिर आई० सी० एस० बाप का बेटा, भला बोलता कौन ? लेकिन तभी एक बार शहर के ना...

बड़े आदमी की बेहद खूबसूरत लडकी उठा ली गयी जिसके साथ आई. जी. पुलिस ने जो तब मामूली एस. पी. थे, पास के जंगल में बलात्कार किया। लोगों ने तो यहाँ तक कहा उनके तीन साथियो ने भी बलात्कार किया। यह सब करने के बाद बेहोशी की हालत मे लड़की घर पहुँचा दी गयी। फिर क्या था दूसरे दिन से ऐसा बवेला चालू हो गया जैसे कोई जलजला, कोई तूफान आ गया हो। अखबारों में, विधानसभा, विधान-परिषद् से लेकर गली-गली, कूचे-कूचे मे एक बेहद खूबसूरत और पवित्र लडकी का, पुलिस अफसरो द्वारा बलात्कार करने की सनसनीखेज बातें फैल गयी। इन अफसरों को मुअत्तल करने और गिरफ्तार करके मुकदमा चलाने की माँग इतना जोर पकड गयी, सरकार को मामले की जाँच करवानी पडी।

आई० जी० के बाप ने तब तक बाँधकाड की अपनी जाँच करीब-करीब पूरी कर ली थी। उसमें गुरुपदस्वामी बुरी तरह फँसे हुए थे। साथ मे बाईजी के भाई को तो जेल जाने की बारी आने वाली थी। जाहिर था बाँधकांड की रिपोर्ट आने पर गुरुपदस्वामी को मन्त्रिमंडल से इस्तीफा देना पडता। उनका राजनैतिक जीवन बदनामी की अँधेरी घाटियों मे हमेशा-हमेशा के लिए खो जाने वाला था।

उधर आई० जी० के बलात्कार की कहानी शुरू की जाँच से सही निकलने लगी। उनके आई० सी० एस० बाप के ऊपर मुसीबत का पहाड़ टूट पडा। उनका बेटा बलात्कार के मामले में पुलिस की नौकरी से निकाल दिया जाय, यह इतने गैरत की बात थी, जो उनके खानदानी गरूर को तोड़ देने के लिए काफी थी। फिर उनको किसी प्रदेश का राज्यपाल बन जाने की उम्मीद बनी हुई थी जिसके लिए भी इस मामले का कोई इज्जतदार हल निकालना जरूरी था।

इसी बीच गुरुपदस्वामी प्रदेश सरकार के गृहमंत्री बना दिये गये। उन्होंने महज बदले की भावना से बलात्कार के मामले की जाँच में और तेजी पैदा कर दी। इसी सिलसिले में उन्होंने विधानसभा मे कुछ सनसनीखेज बयान भी दिये, जिससे आई० सी० एस० बाप की सख्तमिजाजी ढीली पड़ गयी। और तब दो जरूरतमंद इन्सानो मे, हमेशा की तरह, एक सौदा हुआ। पहले बाँधकांड की रिपोर्ट मे बडी सफाई से, गुरुपद-स्वामी और बाईजी के भाई तमाम घपलो से मुक्त कर दिये गये। बाँध

टूटने की सारी जिम्मेदारी सिंचाई विभाग के कुछ अभियन्ताओं पर डाल दी गयी। इसके बाद बलात्कार कांड की जाँच भी सबूत न मिलने की वजह से खटायी में पड़ गयी।

आज राजभवन में आई० जी० पुलिस को देखकर गुरुपदस्वामी को वह पुरानी बातें याद हो आयी। लेकिन उन बातों के बाद न तो कोई कटुता ना ही किसी प्रकार का विरोध बाकी रहा था। आई० जी० पुलिस तब तक उनके खास आदमी बन गये थे। फिर उन्होंने ही एस० पी० से उनको डी० आई० जी० बनवाया। और जब वह खुद मुख्यमंत्री हुए तो उनको फौरन आई० जी० पुलिस बना दिया। आई० जी० पुलिस की वफादारी और व्यौहार कुशलता की वजह से गुरुपदस्वामी को फिर कभी उनसे शिकायत का मौका नहीं मिला। इसीलिए आज की मनःस्थिति में आई० जी० का आना उनको अच्छा लगा।

हाथ में पकड़ी हुई ताँबाकांड की रिपोर्ट वापस शीशे की गोल मेज पर रखकर गुरुपदस्वामी ने आई० जी० पुलिस को बैठने के लिए कहा। बैठते ही आई० जी० पुलिस घरेलू लहजे में उनके पैर छूकर बोले, "सर, कैसे हैं आप?"

"क्यों, मुझे क्या हुआ, मैं तो ठीक ही हूँ!" गुरुपदस्वामी ने व्यंग्य से कहा, "आप कैसे हैं? हमारी याद कैसे आ गयी आपको?"

"मैं तो, जैसे ही पता लगा, फौरन आया। पिछले दिनों एक बार दिल्ली जाना हुआ था, तो आप थे नहीं।"

"और सब तो ठीक है, घर में लोग कैसे हैं?"

"सब आपकी कृपा है, सर!"

"आपके डैडी के स्वर्गवास से सबको बड़ा धक्का लगा था। वहाँ दिल्ली में उनको राज्यपाल बनाने का प्रस्ताव करीब-करीब तय हो गया था।"

"अच्छा, सर!"

"हाँ भई, मैंने खुद प्रधानमंत्री को सुझाव दिया था।"

"कितना अच्छा होता सर, उनकी भी यही आखिरी तमन्ना थी।"

"ईश्वर की, शायद इच्छा कुछ और थी।"

"हाँ सर! नियति कौन टाल सका।"

"फिर भी दुख तो होता ही है।"

"कामयाब सेठ ?"

"हाँ वही कामयाब सेठ, जिसने पहले तो कोटा लाइसेन्स पर खुद ही माल उठाया और फिर अपनी ही दिल्ली की फर्म को बढे दामों पर बेच दिया। सारा मामला फर्जी था। ऐसा दिमागी जालबट्टा तो कभी सुना नहीं।"

"जो ट्रकें पकड़ी गयीं, वह कहाँ हैं ?"

"पुलिस की हिरासत में !"

"किसकी थीं ट्रकें ?"

"दो ट्रकें तो राष्ट्रीय निर्माण संघ के नाम रजिस्टर्ड है, एक किराये की थी।"

"राष्ट्रीय निर्माण संघ, वही कृष्णबल्लभ वाला ?"

"हाँ साब ! पिछले काफी दिनों से इनके भाई यशोदाबल्लभ की हरकतों की रिपोर्ट पुलिस हेडक्वार्टर्स में बराबर आ रही थी। उस इलाके में अफीम की खेती कोई आज से तो होती नहीं। इसलिए किसी ने कुछ कहा नहीं। ऊपर से कृष्णबल्लभजी का दबाव लगता रहा। लेकिन इधर डकैत दुर्लभकाछी के गिरोह ने बड़ा उत्पात मचा रखा था, तभी···" कहते-कहते आई० जी० पुलिस रुक गये।

"हाँ कहिए······"

"मेरी ही गलती है सर, माफ करें, लेकिन तब हमको भी नहीं पता था, दुर्लभकाछी और यशोदाबल्लभ एक ही थैली के चट्टे-बट्टे थे !"

"आपकी गलती ?"

"दुर्लभकाछी के आतंक के घिनौने किस्से दिन पर दिन बढ़ते जा रहे थे। दिल्ली से भी लिखकर आया था। तभी वह हमसे आकर मिला। हमें···हमें क्या सभी को उसकी काबलियत पर बड़ा भरोसा था। हाई लेबल कमेटी में उसका ही नाम सुझाया गया था। हमें क्या मालूम था···वह भी तैयार होकर आया था,···बस हमने भी उसे आग में झोंक दिया। बाद में सभी ने उसकी शाहजहाँपुर की पोस्टिंग पर संतोष दिखाया। यहाँ तो दुर्लभकाछी के गिरोह के सफाये को बस कुछ ही दिनों की बात समझ लिया गया। लेकिन होनी तो···" आगे आई० जी० पुलिस से बोला न गया। उनकी आँखें भर आयीं। गला रुँध गया।

गुरुपदस्वामी बस फटी-फटी आँखों से उनको देखते रहे। वह समझ

गये थे आई० जी० फूलदाम के बारे में कह रहे थे। तभी उनको बगल के कमरे में बाईजी के होने का ख्याल आया। उसके साथ ही बाईजी, उनसे भीख जैसे माँगी गई बात के शब्द याद आये, "मुझे मेरे बेटे का कातिल चाहिए।" इसी के साथ आई० जी० पुलिस के बोल उनके कान में पड़े।

"गृहसचिव ने मुझे फोन किया था? मैं तो वैसे भी आ रहा था। फिर जरा देर जान-बूझकर कर दी थी। सोचा आपसे मिलने से पहले फूलदास के कातिल गिरफ्तार हो जाएँ तो आपके सामने आँखें उठा सकूँगा।"

गुरुपदस्वामी अब आई० जी० को सिर्फ घूर रहे थे। एक पल रुककर हाथों से मुँह और आँखें पोंछने के बाद आई० जी० ने कहा, "सर, फूलदास के कातिल दुर्लभकाछी और जालिमखाँ, अभी-अभी खबर आयी थी, हरदोई रोड पर जीप से भागते हुए पकड़ लिये गये।"

गुरुपदस्वामी जैसे किसी लम्बी नींद से जागे। उनके मुँह से अनायास ही निकला "क्या?" जिसके जवाब में आई० जी० पुलिस ने सिर हिलाकर हामी भरते हुए अपनी गर्दन नीचे की ओर झुका दी। बिना आगे कुछ पूछे या कहे, गुरुपदस्वामी चुपचाप सोफे से उठकर बाईजी के कमरे की ओर चल दिये।

नौ

कालीशंकर उत्सुकदास के कमरे के अंदर मंत्रिमंडल की लिस्ट लेकर तो गया नहीं। बस वहीं बाहर से उल्टे पाँव लौट आया। फिर अखबारवालों से बचने के लिए वह पीछे के रास्ते से बैठक होता हुआ चुपचाप अपने कमरे में पहुँचा, जहाँ हाथ की फाइल उसने मेज पर छोड़ दी। उस समय उसका जी बहुत खराब हो रहा था। एक धरातल जिस पर आज कितने दिनों से वह रुका हुआ था, वह जमीन जिस पर शायद जन्म की यादों तक से जुड़ा था, टिका था, आज अचानक पैरों के नीचे से निकल गयी और आधाररहित अलग बिना किसी गुरुत्व के जैसे त्रिशंकु की तरह वातायन के खालीपन में झूलता हुआ कालीशंकर उत्सुकदास के घर से निकल गया।

वह न तो वक्त की मार थी, ना ही कोई सीधा-साधा धोखा। यह तो जीते-जी मार डालने जैसी बात थी। कालीशंकर जो कुछ देर पहले तक जोश के सैलाबों मे बहा चला जा रहा था, एकाएक अनजानी गहराइयों में डूब चला। आसपास सहारा पकडने के लिए कुछ भी न था और दूर-दूर तक कभी खत्म न होने वाली अँधेरी ढलानें उसे खींच रही थीं। फिर भी अब कहीं भी न पहुँच पाने की जिद ने जैसे उसके मन और उलझी हुई मानसिक शिराओं को बिना जरूरत, बिना मांग के तन-बदन से बाँध रखा था। वह इस बन्धन को तोड़ना चाहता था, बस किसी भी तरह अँधेरी ढलानों के किसी अन्तिम छोर पर पहुँच जाना चाहता था।

लेकिन आज कालीशंकर ने जो कुछ देखा था, जो कुछ सुना था वह सब उसकी कल्पना से परे नहीं था। बल्कि वह तो अंदर-अंदर इसी सच के सहारे जी रहा था। उसकी ब्याहता औरत प्रतिभा, अपना कहलाने वाला, बेटा राहुल, तमाम रिश्तों-नातों की तह से जुड़े उत्सुकदास और जो कुछ भी तब तक उसके सामने था वह झूठ था, ऐसा उसे मालूम तो नहीं था फिर भी मन के अनेक-अनेक किनारों-कोनों मे, मानसिक प्रक्रियाओं के कितने ही जोड-घटाव हमेशा उसने किये थे। वह सब उसे बेचैन किये रहते। लेकिन इनके सहारे उसने न जाने हुए सच की एक बुनियाद तो बना ही ली थी। आज सब कुछ जो सामने था जब झूठा बन गया, सामने आयी हकीकत उसके अंदर की उसी बुनियाद से जाकर जुड़ गयी जिनमें हर मौके-बेमौके उसने कुछ जमा किया था, मिलाया था। इसीलिए, इस सबके बाद भी, शायद इसीलिए, वह बचा हुआ था, एकदम टूट नहीं गया।

उत्सुकदास के घर से निकलते वक्त तक कालीशंकर ने आगे का कुछ भी सोचा नहीं था। लेकिन प्रतिभा और राहुल, जो इतने दिन बाद लखनऊ आये थे, से एक बार मिले बिना बाहर चले आना खुद अपने आप में ही एक तरह का फैसला था। उसके बाद कुछ देर बस यूँ ही सुनसान सड़कों पर वह भटकता रहा। जाहिर था उसकी गैरमौजूदगी में उसे ढूंढा जायेगा। और फिर प्रतिभा के आ जाने से खोज जरा सरगर्मी में होगी। अब यह सब जान लेने के बाद उत्सुकदास के यहाँ वापस का सवाल नहीं था दारुलशफ़ा के कमरे में भी रुके रहना, उत्सुकदास के पास वापस जाने जैसा ही था।

आज जीवन में पहली बार कालीशंकर को लगा, वह कितना अकेला था। आदमी के कम से कम दो ठिकाने होते हैं। जब घर में चोट लगती है तो बाहर मुंह छिपा लेता है, जब बाहर अहम पराजित होता है तो घर पहुंचकर मां, बहन, बीवी, बच्चों के साये में व्यक्तित्व के घटाव कमी रुकी नहीं रहती है। लेकिन उसका क्या हो, जिसका सब कुछ छिन गया हो—बस एक झटके में जैसे बकरा हलाल हो जाये। फिर भी न तो क्रोध हो, ना ही सिर पे खून सवार हो और उल्टे बर्फीली ठंड-सी खून के कतरे-कतरे में घुसकर बैठ जाये। ऐसे में उसके पास कुछ करने या ना करने के तर्क तक नहीं थे। इसीलिए वह आज अभी, इसी वक्त बस इन सबसे दूर-बहुत दूर चला जाना चाहता था।

सड़कों के सन्नाटों से जरा हटकर कालीशंकर रायल होटल वाले चौराहे की तरफ से बेलदारी लेन होता हुआ मेडूर्खा की सराय के पास तक पहुंच गया। दारुलशफा में घुसने के पहले उसे लगा अब खतरा सामने है। किसी क्षण कोई भी रोककर उससे मंत्रिमंडल की जानदार खबरों को जानने के लिए फूहड़ सवाल कर सकता था। इतने सालों तक सत्ता की राजनीति की धुरी से जुड़ा रहने पर भी आज इस सबसे उसे बेहद घिन आ रही थी। लेकिन एक बार अपने कमरे तक तो जाना ही था। उसने सोचा, काश ! यहां से लेकर कमरे तक जाने के लिए कोई खुफिया सुरंग होती। लेकिन सुरंग तो थी नहीं; उसे बस यूं ही छुट्टा, सरेआम जाना होगा। मर्द न होता तो मुंह ढांक लेता। फिर करे भी तो क्या। उसके अंदर रुलाई का सैलाब जैसा आ गया। तभी उसको पार्टी मीटिंग का ख्याल आया और पार्टी मीटिंग के बाद होने वाले शपथ समारोह तक लोग-बाग शायद बाहर होंगे नहीं। उसी बीच एक बार कमरे तक हो लेगा। तब तक मेडूर्खा की सराय के खंडहरों के किसी कोने में बैठकर जरा देर तक बस रुलाई के सैलाब को भी निकल जाने दे। कालीशंकर वहीं से मेडूर्खा की सराय के अंदर हो लिया।

"आयेगी ! आयेगी !! वह आयेगी !!!" बड़े जोर में चीखकर उसने फिर कहा, "वह आयेगी !"

आसपास से गुजरते हुए लोग रुक गये। कुछ अजब तमाशा दारुलशफ़ा

'ए' और 'बी' ब्लाक के बीच की सड़क के दाहिने किनारे पर एक अजब माहौल था। जहाँ बूढ़े से एक आदमी को घेरे हुए कई एक लड़के चिढ़ा रहे थे, हँस रहे थे।

"कौन आयेगी ?" किसी ने पूछा।

"कहाँ गयी, दोस्त ?" दूसरे ने पूछा, "चली क्यों गयी ?"

वह जवाब क्या देता, वह तो चुप था, खामोश था कितने-कितने सालों से। कोई और बोला, " अमाँ, यार, बीवी मायके गयी होएगी। पीछे-पीछे ये भी वहाँ पहुँचे। बस उसने फटकारा होगा जरा कसके। पता नहीं तुमको कित्ती जबरजस्त होयी थी ये फटकार, तभी तुलसीदास गोसाईं बने ···महाकवि बने। ये झेल न पाये तो मारे-मारे भटक रहे।" बस इतना कहना था, छोटे-बड़ों की घेरे में खड़ी भीड़ से हँसी के ठहाके उठे और तालियाँ बजने लगी।

पर उसे इन बातों की जरा फिकर भी न थी। रामधुन की तरह बस रटता रहता, "वह आयेगी, वह आयेगी।" कोई कुछ भी कहे, लोगों की हर बात का उसके पास बस एक ही जवाब था, "वह आयेगी।" ऐसा था जैसे उसकी पूरी पहाड़-सी जिन्दगी की सारी बातें, अनादि नाद की तरह इन दो शब्दों में सिमट गयी हों। कहते-कहते उसकी मुट्ठी बँध जाती, मुँह लाल पड़ जाता और पूरी ताकत में चिल्लाकर कहता : "वह आयेगी।"

उसके एक हाथ में कुल्हड़ था जिसमे जूठी दाल लगी थी, दूसरे हाथ की बंद होती खुलती मुट्ठी में कुछ चिल्लर दबाये रखने की कोशिश करता। फटी हुई छींटदार कमीज, टुकड़ों-टुकड़ों मे खाकी पैण्ट के साथ उसकी सूखी हुई हड्डियों को छिपा सकने मे नाकाम हो रही थी।

दारुलशफ़ा के कई छोटे-मोटे नेता उससे जलते थे। कई-कई सालों तक सब कुछ कर लेने पर भी उनको उसके जितनी नामवारी हासिल न हो सकी। लखनऊ शहर के कोने-कोने में उसका नाम था, हर जगह उसकी बात होती। वह जिधर भी जाता लोग-बाग उसे पहचान लेते, पूछते, "कहो दोस्त, आयी ?"

हो-हल्ला-हुल्लड़ मचाती हुई लड़कों की टोली उसके पीछे-पीछे उन दिनों चला करती। परेशान, थके हाल इनसे बचने के लिए वह तो लड़के उसे दौड़ाया करते, उसके ऊपर ईंट-पत्थर फेंका करते। ···पागल···पागल है," का नारा लगाती हुई भीड़ उसे बुरी त

देती। लेकिन वह चुपचाप, सबकुछ सह लिया करता। भीड़ के नारे, लडको के हुल्लड़, लोगों के ताने जब उसे बेहद सता देते, तो बस मुट्ठी बाँधकर जोर-जोर से चीखने लगता 'वह आयेगी···वह आयेगी !'

उसकी बड़ी-बड़ी आँखें, सिर पर लम्बे-सूखे उलझे-खिचड़ी बाल, माथे पर मोटी लकीरें जैसे सारी कहानी कह देते। चिल्लाने पर उसका गला फूलकर लटक जाता और मोटी-मोटी नसें जैसे फटकर आगे गिरने को हो जाती। चेहरे पर आधी सफेद, आधी कलौटी दाढी बेतरतीब मे इधर-उधर बढ़ आयी थी। दायें पैर मे उसके एक लम्बा-सा किसी पुराने घाव का निशान था।

किसी को पता नहीं वह कहाँ से आ गया। हाँ, यह तो सभी कहते, यहाँ का था नहीं। कहीं दूर ··बडी दूर से चलता-चलता बस एकाएक, कुछ ही दिनों पहले, आयेगी···आयेगी···वह आयेगी, चिल्लाता हुआ सड़क पर चला जा रहा था। अब तो कई शौकीन-मिजाज हस्तियों ने उसे खिलाना-पिलाना शुरू कर दिया था। कई हसीन मोटी औरतें तो उसे रख लेने को तैयार थीं। उसके यह दो शब्द बस तीर की तरह हर जानने-समझने वाले के मन में पैठ जाते और हमदर्दी का सहारा पैदा कर लेते। उधर आगे और कुछ कह न पाने की वजह से लोग इसके हजार-हजार मतलब निकालते। उसको कई जगह सहारा मिल सकता था, लेकिन वह तो था, जो कहीं टिकता ही नहीं था।

लेकिन, दारुलशफ़ा मे देखने वाले आज कह रहे थे, बेहद चुप था वह। घंटों से लोग चिढा-चिढाकर थक गये पर एक बार भी उसने नहीं कहा तो नहीं कहा,—वह आयेगी। न जाने क्या हो रहा था उसे। बडा बीमार-सा, थका हुआ, बेहद टूटा हुआ जैसे आज बिसरा पड़ा हुआ था। जब जरा ज्यादा शोर-गुल मचता तो बस एक बार फटी-फटी आँखों से देख लेता और फिर बिना हिले-डुले गर्दन झुका लेता।

अब धीरे-धीरे उसकी खामोशी से बोर होकर लोग-बाग छँटने लगे थे। तभी जरा पीछे की तरफ खड़ा हुआ उत्सुकदास का बूढ़ा नौकर जगह हो जाने से आगे बढ आया। कुछ हँसी-मजाक, कुछ अपनी उम्र के आदमी को जरा और नजदीक से देख लेने के लिए ही वह करीब आया था। उत्सुकदास का बूढा नौकर असल में प्रतिमा और राहुल के ठहरने के लिए [illegible] के कमरे में सामान-असबाब जमाने-जुटाने आया था। फिर

कुछ सौदा लेने के लिए जब वह लालबाग की तरफ जाने लगा तो वहीं बीच वाली सड़क पर हुल्लड़ वाली भीड़ देखकर रुक गया था।

भीड कम हो जाने पर भी काफी लड़के, शोहदे, हर मौसम सदा-बहार जीने-जागने वाले दारुलशफ़ा मार्का चमचे और चकरबन्ध जमे थे। वह आयेगी कहने वाला आदमी जिसे पागल-पागल कहकर लोग इतनी देर से चिढा रहे थे, अब उसके सामने था'''बिल्कुल सामने। वही सड़क से लगी दीवार पर टेक लगाये वह बैठा था। बस पहली ही नजर में उसे देखकर बूढ़ा नौकर जैसे दहल गया। कुछ अजीब-सी ममता, एक अनजाना अपनापन, खोया हुआ मिल पाने जैसी कुछ मीठी-मीठी पहचान-सी सुरसुरी उठने-उमड़ने लगी।

बूढे नौकर ने बस एक पल उसे देखकर ही आगे बढ जाने का इरादा किया था। लेकिन देख लेने के बाद उसके कदम जकड़कर वहीं रुक गये। काफी देर तक खड़ा-खड़ा बस उस पागल को देखता रहा। फिर वहीं जरा हटकर बैठ लिया। वह मीठी-मीठी पहचान को अपनी याददाश्त के झरोखे पर बिठाकर ऐसा जान पाने की कोशिश में था, जिसे उसने पहले कहीं पाया, माना था। बडी कोशिशो के बाद भी उसकी कुछ भी तो समझ नहीं आया। लेकिन उठकर वह वहाँ से जा भी न सका, बस बँधा बैठा रहा।

इतने में जो लोग अब भी खड़े थे, उनमें से किसी ने कहा, "मारो साले को!" फिर क्या था, लडको-शोहदों ने उठाकर ढेला फेंकना शुरू कर दिया। तभी एक ने वजनी ढेला उसके ऊपर दे मारा। नुकीला ढेला सीधे उस पागल के सिर पर जाकर लगा और वहाँ से खून की धार निकल पड़ी। जैसे अनेक-अनेक मासूम सवालों में, दर्द से छटपटाते हुए बची हुई साँस का हिसाब देने के लिए, उस पागल ने झुकी हुई गर्दन उठाकर ढेला फेंकने वाली भीड़ की तरफ देखा। उसकी निगाहों मे न बचाव की भीख थी, न उठकर चले जाने की कोशिश!

उत्सुकदास के बूढे नौकर से अब रहा नहीं गया। वह फिर से उठकर खडा हो गया और लगा चीखने-चिल्लाने! उसके अन्दर आदमियत की शक्ल मे जजबातों का सैलाब आया जो गालियों की लफ्फाजी बनकर निकल रहा था। ढेला फेंकने वालों में से एक का हाथ पकड़कर उसने ढेला छीन लिया और एक वजनी गाली दी। फिर औरों की तरफ देखते हुए कहा, "एक-एक को बँधवा दैयेंगे। हमका जानत नहीं हौ तुम लोग

मुख्यमंत्री के घरलू नौकर हूंय !" बूढ़े नौकर की आदमियत-भरी बातों, वजनदार गालियों और आखिर मे उत्सुकदास के जिकर ने सबके हाथ से ढेले तो फेंकवा दिये, फिर भी एक ढीठ प्रकार का चक्करबन्ध बोल ही दिया, "कौन लगता है ये तेरा ?"

बस इतना सुनना था, बूढे नौकर ने घूमकर पागल की ओर देखा। सिर से वह रहे खून की धारा मे सीने की कमीज तक लथपथ होने लगी थी। माथे के नीचे दायी तरफ की कनपटी पर भी बड़ा-सा गुम्मा उभर आया था। तभी आँखें उस पागल की आंखों से मिल गयी। एक पल को बूढे नौकर की नजर वहाँ से हटकर नीचे खिसकती हुई उसके पैरों पर पड़ गये पुराने घाव के निशान पर टिकी और फिर वापस आकर उन्हीं आँखो से जुड़ गयी।

इस बार पागल ने न तो गर्दन झुकायी ना ही बूढ़े नौकर से मिल रही अपनी नजरो को हटाकर कही और ही किया। उधर बूढ़े नौकर के हाथ से छीना हुआ, ढेला छूटकर नीचे गिर गया लेकिन हथेली खुली की खुली रह गयी। हाँ बायें हाथ की उँगलियाँ जरूर अपने गंजे सिर को धीरे-धीरे खुजलाने लगी। इतने मे उसके अंदर बिना आवाज, बिना आंसू की सूखी रुलाई जैसे ठुमकियां ले-लेकर उठने लगी। इसके साथ होंठो के अलग-अलग हो जाने की वजह से आश्चर्य, क्षोभ, पीड़ा में खुला हुआ उसका मुँह फिर से बन्द होने लगा। और तभी सूखी रुलाई की ठुमकन को दबाकर बड़ी मुश्किल से, बेचैन कशमकश के बीच उस पागल की आँखों की गहराइयो में झांकते हुए कहा, "अरे ! बनवारी, तुम !!"

गोविन्दपुर महराज की रियासत के खजांची के यहाँ पहले जमाने में बनवारी नाम का एक कारिन्दा था। उसे उन दिनों उगाही के लिए दूर-दूर रियासत के कोने-कोने मे जाना पड़ा करता। नया खून था, बड़ी ईमानदारी, बडी लगन से काम करता। खजांची को माई बाप और रियासत के मालिकों को भगवान समझकर उनकी पूजा में मरने-मिटने को हमेशा तैयार रहता।

उसका छोटा-सा अपना संसार था जिसकी उमंग में जीते-जागते वह जी रहा था। उसके अपने संसार की बुनियाद, उसके ख्यालों, उसके तसब्वर का फैलाव बस सिमटकर उसकी प्यारी-प्यारी दुल्हन मन्नन में .। जाता। मन्नन का, बनवारी न सिर्फ दुल्हन सरीसा मान करता,

वह तो उसे जान से भी ज्यादा प्यारी थी। उधर मन्तन भी बनवारी पर वारी-वारी रहती। दोनों के जिस्म तो दो थे लेकिन जान एक।

मन्तन असल में बड़ी नखरे वाली थी। उसका लाजवाब हुस्न, उसकी हसीन अदाएँ हर देखने वाले को दीवाना बना देती। चेहरे-मोहरे, नाक-नक्श से बेहद खूबसूरत उसका बदन बस गुलाबी दूध में नहाया हुआ-सा लगता। और दूर-दूर तक के गाँव में उसका जैसा कोई न था। हर औरत से मन्तन अलग जैसी थी। इसकी खास वजह थी, उसके सीने पर की गोलाइयाँ जो न बदन मे समातीं और ना ही कपड़ों मे छिप पाती; वे तो बस जैसे बार-बार उछलकर अलग गिर जाने-सी हरकतें करतीं। इन गोलाइयों को देख-भर पाने, छू लेने को कितने-कितने लोग दिन-रात तड़पते।

लोगों की तड़प, भूखी-नंगी, नापाक निगाहों के बारे में मन्तन बेखबर तो थी नहीं। लेकिन मन से उसके अन्दर बनवारी के लिए बेहद मोहब्बत थी। और फिर बनवारी भी बड़े मन से उसे प्यार करता। अपनी मजबूत बाँहों में भर-भर के वह अपनी महबूबा के तन-बदन, उसके अग-अग के हर कोने से उठती हुई जवानी की अँगडाइयों को खींच लेता। कुछ भी उधार न छोड़ता, कुछ भी बाकी न रखता।

उसके बाद मन्तन को इधर-उधर ताक-झाँक करने की जरूरत ही कहाँ थी। वह तो बस इसी तरह बनवारी के साथ-साथ जीते रहना चाहती। लेकिन जवानी की आग जब खुद को जला न पाये तो बाहर की ओर फैलती है। ऐसे में बस उसे यही लगता कहाँ छुपे, कहाँ भागे। अकेले सुनसान रास्तों, यहाँ तक कि खाली घर की दीवारों तक से उसे डर बना रहता।

उधर बनवारी को मन्तन के ऊपर बड़ा भरोसा था। उसकी चाहत उसकी तमन्नाओं का स्वर्ग उसके पास था। और उसे भला चाहिए ही क्या था। इसीलिए उस स्वर्ग को बनाये रखने के लिए वह दिन-रात गोविन्दपुर महराज की रियासत के खजांची की सेवा करता। जब कभी उसे दूर-दूर उगाही के लिए जाना पड़ता तो उसका जी भारी हो जाता। ज्यादा दिन उससे रहा नही जाता। मन्तन के बिना उससे निवाला निगला नही जाता, पानी का घूंट तक जैसे हलक तक उतरकर ऊपर-ऊपर धरा रहता। जल्दी-जल्दी घर लौट आता वह उन दिनों। लेकिन उस

बार बनवारी को देर हो गयी। गर्मी के दिन थे। घर के लोग छत पर सोये थे। लेकिन मन्तन नीचे आँगन में लेटी थी। बस अगले दिन सबेरे ही बनवारी को आना था।

खजाची का छोटा भाई उस इलाके का नामी बदमाश था। लोग तो यहाँ तक कहते थे, गोविन्दपुर राजमहल मे उसका अच्छा-खासा आना-जाना था। महल के कुछ और लोग भी उसके साथ मिले हुए थे। काफी दिनो से सबकी नजर मन्तन के ऊपर तो थी ही। उस दिन उन लोगो ने ठान ली। रात के अँधेरे में दबे-दबे पाँव पाँच-सात लोग दीवार फाँदकर घर मे घुस आये। उन लोगो ने मन्तन को उसी चारपाई मे जिस पर वह लेटी थी, बाँध दिया और मय चारपाई के उठा ले गए। वही गाँव के बाहर एक नहर थी। उसी नहर के पास के वीराने मे चारपाई जाकर उतारी। और फिर एक-एक करके सात आदमी उसके ऊपर उतरे थे, उस रोज। कहते हैं बेहोशी की हालत मे उसकी छिछालेदर कर डाली उन हत्यारो ने। उसके बाद मन्तन कही भाग गयी।

फिर सबेरा होने पर, दूसरे दिन लौटने पर बनवारी को जब मन्तन नही मिली तो वह कई महीने तक उसे ढूँढता रहा। इन कई महीनों में धीरे-धीरे उसकी रगो मे सबकुछ जहर बनकर उबलता रहा। हसीन रंगीनियो में सदा जीने वाला बनवारी भी दर-दर की ठोकरें खाता रहा। दिल और दिमाग पर बस एक ही जुनून सवार था, एक ही उम्मीद पर शायद वह अपनी साँसो की तारतम्यता रोके हुए था : 'मन्तन आयेगी···वह आयेगी!'

जब काफी दिन गुजर गये, मन्तन नही आयी तो बनवारी पागल हो गया। फिर अकेले वह भी गाँव छोडकर चला गया। उधर बनवारी और मन्तन की अकेली औलाद धीरे-धीरे बडी होने लगी।

बनवारी के बाप तब जिन्दा थे। उन्होने ही अपने बेटे की औलाद को कलेजे से लगाकर खिलाया, जिआया। मन्तन के लौट आने की तो किसी को उम्मीद नही थी, हाँ बनवारी का सभी काफी दिनो तक इन्तजार करते रहे। लेकिन वह भी नही आया और बीस साल तडप-तड़पकर जी लेने के बाद उसके बाप ने जब आँखें मूँद ली थी तब बनवारी की औलाद बाइस-तेइस की रही होगी।

"अरे बनवारी तुम!! बनवारी तुम!!" जैसे बड़ी दूर से, किसी

ऊँचे पहाड़ी टीले पर खड़े होकर कोई कह रहा था बनवारी तुम ! अरे बनवारी तुम ! ! यह वादियों की फुसफुसाहट थी या तनाव की दूरियों की कोई झन्नाटेदार आवाज। आज कितने-कितने सालों के बाद कोई दिलो-दिमाग में सो गये उस नाम को जगा रहा था जिससे अब उसका न तो कोई वास्ता था, ना ही जिससे जुडी हुई यादों की परछाइयाँ ! उसका वजूद, उस नाम का वजूद, उन यादों की हस्ती कब की ढेर हो चुकी थी। वह तो अनजाने शहर के गुमनाम इलाके में बस साँसों का बोझ ढोता हुआ 'वह आयेगी' इन दो शब्दों के सहारे, जो सारी जिन्दगी की यादों की सबसे आखिरी कड़ी से निकले हुए थे, जीने जैसा कर्ज चुका रहा था।

आज करीब तीस-बत्तीस साल बाद अचानक, एकदम से, बनवारी के जहन में उसका नाम नींद की अंधी ढलानों से उठकर बैठ गया। लेकिन अपने नाम का अहसास उसे जब हुआ जैसे कोई जहर से बुझा तीर, तेज—बड़े तेज रफ्तार में, हवा के संग वातायन की दूरियों को लाँघकर चुभ गया। एक पल को तो लगा सबकुछ झूठ था, सच तो था बस इन्हीं दो शब्दों की उम्र जो तीस साल-सी लम्बी थी। लेकिन वह दस्तक, वह फुसफुसाहट, झन्नाटेदार आवाज फिर वातायन की दूरियों में रफ्तार पकड़ता हुआ कोई नुकीला तीर !

बनवारी का हाथ अपने माथे की ओर बढ चला और माथे के नीचे दाहिनी तरफ उभरे हुए गुम्मे पर टिक गया। अब ऊपर से टपकता हुआ खून उसके हाथ पर गिर रहा था। बड़ी कोशिशों के बाद भी उससे सँभलकर बैठा नहीं गया। नाम के अहसास के लौटने लगने के साथ, अपने वजूद, अपनी हस्ती का टूटा-फूटा धरातल भी उभरकर ऊपर आने लगा था। लेकिन यह सब जितनी जल्दी मे, समय के जिन टुकड़ों में हो रहा था, उसको चक्कर आने लगा और फिर कुछ ही पलों में बैठे रहने से वह लुढककर वहीं ढेर हो गया।

उत्सुकदास के बूढे नौकर ने गिरते हुए बनवारी को आगे बढ़कर सँभालने की कोशिश तो की लेकिन वह तो पहले ही लुढ़क गया था। उसने जल्दी से उसका सिर उठाकर अपनी गोद में ले लिया। इतना ही होना था बस वहाँ खड़े लोगों में हलचल-सी मच गयी। किसी ने आगे बढ़कर रूमाल से उसका खून पोंछना शुरू कर दिया। और लोग

न कुछ कर पाने के लिए कहने लगे। तब बूढ़े नौकर ने औरों की मदद से बनवारी को उठाकर बिठाया और उसे फिर कई आदमियों के सहारे से कालीशंकर के कमरे की ओर लेकर चल दिया!

मेहूखाँ की सराय के खँडहरों में बैठे-बैठे, कालीशंकर ने इतनी देर में फैसला कर लिया था। अब यहाँ किसी को उसकी न तो जरूरत थी, ना ही उसके अहम्, उसके जजबातों की कोई भी कद्र करने वाला था। वह एक बड़ी मशीन का बेकार-सा पुर्जा था जिसके अलग हट जाने पर कोई और उस जगह पर लग जायेगा। किसी मामूली से आदमी का भी जो कुछ अपना, सिर्फ अपना कह लेने भर का होता, वह सब भी तो उसका अधूरा-टूटा हुआ था। अब तो उसे लग रहा था वह सब अधूरा, टूटा ही नहीं बेकार और फर्जी था। सच में तो यहाँ उसका कुछ भी नहीं था। सिर्फ कुछ ढकोसलों की अनगिनत पर्त पर चढ़कर बैठा भरम था जो एक झटके में घिनौनी हकीकत बनकर सामने आ गया था।

कालीशंकर को इस सारे माहौल से घिन आने लगी थी। और कोई दिन होता या इस दिन भी उत्सुकदास के यहाँ वह सब उसने देखा न होता, सुना न होता या प्रतिभा उसकी ब्याहता न होती या फिर उत्सुकदास इतने बड़े भाई-बाप न रहे होते तो वह सत्ता-राजनीति की गहरी पैठ मे डूबा हुआ समय की ऐसी इकाइयों से जुड़ा-जुड़ा होता जो सब के लिए मुमकिन नहीं हो पाये। लेकिन यह न होता, वह ना होता, यहाँ नहीं, वहाँ नहीं, ऐसा नहीं, वैसा नहीं···इस सबसे होना क्या था? उसके लिए तो जो भोगा था वही सामने था।

फिर भी, पिछले तमाम दिनों की आस्था आज अब टूट गयी तो रुके रहने से क्या होना था। और जो प्रतिभा नापाक हकीकत की शक्ल में मंत्रिमंडल का समारोह देखने आयी थी, राहुल को साथ लेकर, उस तक रुकना वाहियात-सा लगा उसको। पार्टी मीटिंग भी तो उसी जश्न का एक हिस्सा थी। तब तक भी आखिर क्यों रहे वह! इतनी देर में उसने कमरे तक पहुँचने के बीच की परिस्थितियों के लिए अपने को तैयार कर लिया था। एक बार···बस आखिरी बार, थोड़ी देर के लिए उसे एक [illegible] लगाना था। और उसके बाद हमेशा-हमेशा के लिए वह यहाँ

से दूर'''बहुत दूर जाने के लिए चल देगा।

कमरे में उसको जाना था कुछ पैसे, कपड़े और कुछ और जरूरी सामान लेने के लिए। कालीशंकर उठकर खड़ा हो गया। इतनी देर तक वहाँ यूँ ही बैठे-बैठे अनजाने में लकीरों के जो गड़मड उसने बना डाले थे, उनको जूते के तल्ले से रगड-रगडकर उसने बिगाड़ डाला। और फिर बेजान से बदन को हल्का-सा झटका देकर वह मेडूखाँ की सराय से बाहर की ओर निकल जाने के लिए चल दिया।

बेलदारी लेन को पार करके बी ब्लाक के पिछवाड़े की तरफ से होते हुए दूर-दूर तक ताक-झाँक करते हुए कालीशंकर 'ए' और 'बी' ब्लाक के बीच की सड़क से न जाकर 'ए' ब्लाक के भी पीछे से घूमकर सामने वाले फाटक से लगे हुए किनारे पर जा पहुँचा। वहाँ से उसने बरामदे तक का फासला करीब-करीब दौड़कर पूरा किया। फिर बरामदे में पहुँचकर वह कुछ पलों के लिए सीढ़ी के निचले हिस्से के पीछे छिपा रहा। कुछ लोग सामने से आ रहे थे, जिनके निकल जाने तक वह वहीं रुक गया।

कालीशंकर एकदम से अपने कमरे में घुसना नहीं चाह रहा था। क्या पता, उस वक्त वहाँ कोई हो। इसीलिए सीढ़ियों के पीछे से निकलकर बरामदे का बाकी हिस्सा पार करके वह अपने कमरे की खिड़की के करीब जब पहुँचा तो वहाँ तो उसे काफी भीड़ दिखायी दी। तभी भीड़ को हटाकर उसने देखा, उत्सुकदास का बूढ़ा नौकर बाहर आया। उसके हाथ में डाक्टरी बैग था। फिर एक डाक्टर भी बाहर निकला जिसने बूढ़े नौकर के हाथ से अपना बैग ले लिया। और फिर कुछ कहने के बाद डाक्टर तो बरामदे से बाहर की ओर निकल गया। और बूढ़ा नौकर बार-बार लोगों से चले जाने के लिए कहने लगा था। कुछ तो समझकर चल दिये लेकिन दो-चार जमे रहे। तब बूढ़े नौकर ने अन्दर घुसकर दरवाजा बन्द कर लिया।

अपने कमरे की जिस खिड़की के पास खड़ा हुआ कालीशंकर यह सब देख रहा था, वहाँ उसे और लोग नहीं देख सके। लेकिन उसने खुद जो यह भीड उत्सुकदास के बूढ़े नौकर और वहाँ से निकलकर जाते हुए डाक्टर को देखा तो उसे न जाने क्यों ऐसा लगा, जैसे अन्दर कुछ ऐसा-वैसा हो रहा था, जिससे उसका भी सम्बन्ध हो। वैसे तो जो कुछ भी हो रहा था वह सब उसके अपने कमरे में ही था जिसमें स्वाभाविक था उसके जानने

वाले ही थे। पर बूढ़े नौकर के तेवर, उसका जोश और फिर उसका जोर से दरवाजा बन्द कर लेना, कालीशंकर के अन्दर एक अजीब दहशत उभर-कर उठने लगी।

यह सोच रहा था, कुछ भी हो, कोई लम्बा चक्कर न फँस जाये। अगर लम्बा चक्कर भी हो तो बस प्रतिभा या राहुल से सम्बन्धित न हो। लेकिन उसने हिसाब लगाया, ये लोग अभी शायद यहाँ न आ सके होंगे। उसे तो सिर्फ एक बार कमरे के अन्दर दस एक मिनट के लिए जाना था। लेकिन कमरे के अन्दर जाने के पहले उसे यह जानना जरूरी लगा, आखिर वहाँ हुआ क्या ? बाहर यह भीड़ कैसी ? डाक्टर क्या करने आया था ?

जाहिर था कुछ भी जानने के लिए कालीशंकर को दरवाजा तो खुल-वाना पड़ेगा। लेकिन उसने देखा, दरवाजा बन्द होने के बाद भीड़ भी कम हो चली थी। हालांकि इक्का-दुक्का लोग अभी भी मँडरा रहे थे लेकिन उनमें उसे कोई जाना-पहचाना तो नजर नहीं आया। अब खिड़की के पास और ज्यादा देर रुके रहना ठीक न था, इसीलिए वह वहाँ से जरा आगे ही बढ़ा था तभी खुद-ब-खुद कमरे के सामने इतनी देर से रुके हुए लोगों में से ही एक आदमी उसी की तरफ बढ़ चला।

अपनी ओर बढ़ते हुए आदमी को पलभर देखकर जब उसको न जानने का इत्मीनान हो गया तो इससे पहले वह आगे बढ़ जाये, कालीशंकर ने आखिर उसे रोक ही लिया, *"क्यों भाई साब ! क्या···क्या बात है ?"* अपने कमरे के सामने ही होते हुए भी एक गुजरते हुए की तरह काली-शंकर ने पूछा।

"जी ?"

"मैं पूछ रहा था, वहाँ उस कमरे के सामने भीड़ क्यों थी ?"

"ओ ! वहाँ ? वहाँ तो एक पागल है।"

"क्या ?"

"जी हाँ, लगता क्या है, एक पागल दूसरे पागल से बहुत दिनों बाद मिला है।"

"पागल ? एक पागल···दूसरा पागल ?"

"जी हाँ, साब···मानें तो मानें ! मैं तो शुरू से था···मैंने सब देखा।" उस आदमी ने काफी जोश में कहा।

"क्या देखा आपने ?" कालीशंकर की अजीब हालत हो रही थी।

"आपको शायद पता नहीं। इधर काफी दिनों से लखनऊ की सड़कों पर 'वह आयेगी'''वह आयेगी' बकता हुआ एक पागल घूमता था। आज वह न जाने कहाँ से यहाँ आया हुआ था, तो इस कमरे में मुख्यमंत्री वाले है कोई, वे उसे उठा लाये। शायद उनका ही कोई पुराना साथी रहा होगा।"

इस बातचीत मे कालीशंकर यह तो भूल ही गया कि वह अपने ही कमरे के सामने खड़ा था। बातचीत की आवाज से या यूँ ही किसी और जरूरत के लिए तभी कमरे का दरवाजा खुला और वहाँ से उत्सुकदास के बूढ़े नौकर ने खड़े होकर, जो जरा हटकर खड़े कालीशंकर को देखा तो दहाड़ मारकर रोने लगा।

बजरवट्टू उस दिन यूँ ही थका-हारा जब तिवारी मिस्त्री के मोटरखाने में घुसा था, उसे न आने वाले वक्त की संजीदगी का ही पता था और ना ही उससे जुड़ने वाली अहमियत का अहसास था। फिर वह दुर्लभकाछी की जीप की फटी हुई विण्डस्क्रीन का नक्शा और जीप के फर्जी और असली नम्बरों को अलग-अलग दोनों हथेलियों पर लिखकर दारुलशफा 'ए' ब्लाक के सामने वाली सड़क पर, दोनों हाथ आसमान की तरफ उठाये हुए भागा था। बजरवट्टू की वह दौड़ कोई खास दौड नहीं थी। उसे तो बस दारुलशफा के दाहिनी मेन गेट तक ही दौड़ना पड़ा था जहाँ उसे फूलदास का दोस्त चरणजीत मिल गया था।

चरणजीत ने फिर तिवारी मिस्त्री को हिरासत में ले लिया था और थाने में उससे पूछताछ के दौरान बजरवट्टू वहाँ मौजूद था। तभी जब तिवारी मिस्त्री ने जीप खटी करने वाले का हुलिया बताया तो बजरवट्टू के सामने घुटने तक कुर्ता, खद्दर की धोती, कीचड़-धूल में सनी चप्पल में छः फिट के, बड़ी-बड़ी मूँछ और लाल-लाल दहकती आँखों वाले दुर्लभ-काछी का चेहरा घूम गया। यही चेहरा उसने आज ही चार-साढे चार बजे 'ए' ब्लाक की सीढियों पर कमलासिंह के चेहरे से, कुछ पलो के लिए, जुड़ते देखा था।

मामला चूँकि उसके दोस्त फूलदास के कत्ल का था, ... कुछ भी छिपाया नहीं गया। उल्टा उसने तो खोद-खोदकर ...

कमलासिह, रंगीनराय, बढई के साथ की अपनी नोक-झोंक चरणजीत को बता दी। उसके बाद बजरबट्टू वहीं चरणजीत के पास बैठा-बैठा आने वाली बाजियों का हिसाब लगाता रहा। हर बाल की पेंचदगियों-बारीकियों को तोलने के बाद चरणजीत और बजरबट्टू के सामने यशोदा-बल्लभ और कमलासिंह को दुर्लभकाछी से सांठ-गांठ साफ-साफ नजर आ रही थी। लेकिन चरणजीत तो सिर्फ दुर्लभकाछी के पकड़े जाने का इन्तजार कर रहा था। उधर बजरबट्टू भी दारुलशफा लौटने के पहले दुर्लभकाछी की आखिरी तक खबर जान लेना चाहता था।

आज बनने जाने वाले मंत्रिमंडल के खासुलखास कृष्णबल्लभ के सगे भाई यशोदाबल्लभ और इनके वकील दोस्त कमलासिंह के खिलाफ चरणजीत कुछ भी करने को तैयार नहीं था। उधर दुर्लभकाछी के पकड़े जाने की खबर आने में देर लग रही थी। इसलिए इस बीच खाली हाथ पर हाथ धरे रखकर बैठे रहना बजरबट्टू को अच्छा नहीं लग रहा था। फिर अब तक तो रंगीनराय के यहाँ की बैठकी भी गर्मा रही होगी। यह सोचकर बजरबट्टू चरणजीत से इजाजत माँगकर वहाँ से चला आया।

बजरबट्टू अब तक बिलकुल खाली हो चुका था। तिवारी मिस्त्री के गैराज के हादसे से चरणजीत के साथ की संगीन वारदातों और सनसनीखेज बातों ने जैसे उसके अन्दर का वह सारा सत्त निकाल लिया था जिसके सहारे वह पिछले दो घंटों से लम्बी उड़ान में झूल रहा था। उसकी नसों का तनाव ढलता जा रहा था। मोटी गर्दन पर झूलती हुई गुदियाँ और भद्दे फ्रेम के चश्मे के पीछे गोल-गोल घूमती हुई आँखों में एक ठण्डापन घुसता जा रहा था। कुछ दौड़-भाग, कुछ उधार हालातों के नक्श-नक्श तक ढीले पड़ जाने से उसे नई खुराक चाहिए थी। वह भला चुप बैठने वाला कहाँ था? हर पल, हर क्षण जीने के लिए उसे कुछ चाहिए था, भले ही ऐसा भी कुछ जो सीधा अपना ना भी हो।

वैसे भी कहने के लिए भी तो बजरबट्टू का सीधा अपना कुछ भी तो नहीं था। इधर-उधर भटकते-भटकते आज कितने वर्षों से वह दारुलशफ़ा की बेजान दीवारों और उन दीवारों से जुड़े बेजान या मोटी खाल वाले ईमान कहला सकने वाले लोगों के बीच रुका था, न जाने किस उम्मीद में, किस मिल सकने वाली चाह में। जैसे हर तरफ जा-जाकर, कभी-कभी आदमी एक ऐसी जगह ठहर जाये जिसके बाद, जिसके आगे कोई और

ठिकाना न हो। जीने और मरने के लिए यूँ हजार बहाने हों पर बजरबट्टू को बस एक ही था। वह बहाना उसके लिए बस दूर रेगिस्तान में किसी रेत की अनगिनत पर्त की तह में छिपी एक प्यास की तरह था जो बस मन-ही-मन कभी-कभी कोई हल्की-हल्की, मीठी-मीठी चुभन उठा जाती थी। उसका बहाना, उसकी मीठी-मीठी चुभन शान्तिप्रणाली की बदनाम याद के साथ जुडी थी।

आज इस खालीपन के अँधेरेपन मे बजरबट्टू के अन्दर वही वदनाम याद उभरने लगी थी, जिससे दूर भागने के लिए ही वह रंगीनराय की बैठक मे चला जाना चाहता था या फिर कमलासिंह और यशोदावल्लभ की फिराक में। लेकिन उससे पहले उसे धतूरे के बीज का नशा भी करना था। इसीलिए वह धीरे-धीरे वहीं 'बी' ब्लाक के पीछे वाली नौकरों की लाइन की तरफ चल दिया जहाँ उसके चाहने वाले रोजाना की खुराक तैयार करते।

धतूरे के बीज की खुराक उसके लिए वैसी ही थी, जैसे लोग खइनी या मैनपुरी तम्बाकू लेते। फिर भी वह नशे को गले के ऊपर तक कभी भी चढने नही देता। लेकिन आज बजरबट्टू का मन हो रहा था सारे धतूरे खा ले, एक बार में ही निगल डाले और फिर हमेशा-हमेशा के लिए सभी चक्करों-घनचक्करों से मुक्ति मिल जाये उसे!

शान्तिप्रणाली को दारुलशफा आये हुए अब तक काफी देर हो चुकी थी। इस बीच उसकी न तो यशोदावल्लभ से मुलाकात ही हुई और ना ही उसने किसी से यशोदावल्लभ को ढूँढने की कोशिश ही करवायी थी। आज सवेरे जब उसे फूलदास के कत्ल की खबर मिली तो उसके अन्दर एक खौफ, एक दहशत किसी जहरीले नाग की तरह फन उठाकर खडी हो गयी। और वह करती भी क्या ? उसे तो बस यही लगा था, फूलदास की मौत खुद उसके ऊपर एक कातिलाना हमला था, जिसका मकसद उसके वजूद, उसकी हैसियत को मिटा डालना था।

इसीलिए वह शाहजहाँपुर के सडे माहौल से भागकर लखनऊ आयी थी। लेकिन वहाँ आकर उसे लग रहा था, उसने गलती की! गलती का अहसास उसे हो रहा था जब वह यहाँ पहुँच चुकी थी। अन्दर की दहशत बार-बार उसके बीचोबीच उठकर खड़ी हो जाती और उसे चैन से बैठने न देती! अपने घर के लोगों के मामलों में यूँ भी उसकी कोई खास

दिलचस्पी थी नहीं। फिर कृष्णवल्लभ और यशोदावल्लभ के हुडदंग उसे हमेशा से ही बेहद उबाया करते। वह तो इस वक्त अपने अकेलेपन में डूब-डूबकर कोई छोटा-सा तिनका पकड़ लेने की फिराक मे थी, जिसके सहारे वह शायद कुछ देर और जी सके।

शान्तिप्रणाली जिन स्वाभाविक अनुभूतियों को पकड़ लेने की फिराक में थी वे वैसे तो उसे कभी मिली नहीं। फिर भी इतने तमाम दिनों की कोशिशो में एक बात उसके अन्दर पैदा हो चुकी थी। वह बात थी उसकी दिलेरी—यशोदावल्लभ की शख्सियत के खिलाफ अपनी शख्सियत को पकड़ रखने की जिद! लेकिन आज उसे लग रहा था यह सब झूठ था, धोखा था। वह अनजाने में अपने को धोखा दे रही थी। आज जो खौफ बार-बार उठकर उसकी धडकनों पर डंक मारे जा रहा था, उससे घबड़ाकर उसे लगा, किन्हीं शातिर बदमाशों के चंगुल मे वह फँसी हुई थी।

अन्दर के कमरे में लेटे-लेटे वह उकता गयी थी। तभी बढ़ई दीक्षित का फोन आया था और उसकी बेहूदी बातों को वह फोन रखते ही करीब-करीब भूल गयी। फोन रख देने के बाद वह वापस अन्दर के कमरे मे तो गयी नहीं। वहीं बैठक के सोफे पर लुढककर ढेर हो गयी। कुछ और कर सकने की इच्छा भी अब बाकी नहीं बची थी। हाँ, कुछ पुराने घाव जो पूरे सूख नहीं पाये थे अब फिर कच्चे-पक्के टाँकों को तोड़कर उभरने लग गये। और उनकी मीठी-मीठी सिहरन, खौफ, दहशत के डंक की चुभन से मिलकर एक अजीब जहरीला असर छोड़े जा रही थी।

शान्तिप्रणाली को दारुलशफा के उस बन्द कमरे मे किसी मासूम फरिश्ते का इन्तजार था जो उसकी भोली, नादान तमन्नाओं को दुलरा सके और थोड़ा-सा प्यार दे। एक अजीब बात थी जब इस वक्त, हमेशा की तरह, उसे मर्द की कड़क जवानी नहीं चाहिए थी, इस वक्त तो उसे कोई नादान सहारा चाहिए था। उसे मालूम था यह नादान सहारा उसे यशोदावल्लभ सहित तमाम अपने कहलाने वालों से कतई-कतई नहीं मिलने वाला था। हाँ, शाहजहाँपुर से चलते समय बजरबट्टू को खयाल जरूर आया था। बजरबट्टू का खयाल वैसे तो बस फूलदास के सिलसिले में ही आया था, वह बजरबट्टू और फूलदास के रिश्तों से वाकिफ तो थी ही। बस यूँ ही किसी जमाने के अपने से जो फूलदास का भी

अपना था, वह पल दो पल दुख बाँटना चाहती थी जो उसे बेहद डरा गया था।

दुख तो उसने कभी भोगा ही नहीं था। जब अपने स्तर से बहुत-बहुत नीचे गिरकर उसने यशोदाबल्लभ को पाया था, तब भी उसे दुख नहीं, एक गन्दी किस्म की वितृष्णा ही हुई थी।

लेकिन आज···आज शान्तिप्रणाली ने पहली बार दुख पाया था। और कोई ऐसा-वैसा नहीं वैधव्य जैसा दुख ही पाया था। सच में तो यशोदावल्लभ की इतने वर्षों तक ब्याहता होते हुए भी पुरुष का पूर्ण सुख उसे कहाँ मिला था। वह तो काफी कुछ दिन पहले ही उसे बजरबट्टू की बाँहों में सिमट-सिमटकर मिला था। उन दिनों उसकी मस्त जवानी को, उसके गदराये बदन को, उसके अंगों की मोहकताभरी खुशबू को एक बड़ा प्यारा-सा ठिकाना मिल गया था।

तभी तो जब कालचक्र के हाथों ने उस ठिकाने को छीन लिया और जब उसे इसका पता लगा तो वही खौफ, दहशत की डंक-भरी चुभन अनेक-अनेक दायरों में घूम-घूमकर उसके अन्दर, उसके ऊपर, उसके नीचे, उसके चारों ओर मँडराने लगी थी।

बजरबट्टू ने जब धतूरे के बीज खा लिये तब कहीं जाकर उसकी दिमागी मशीन ने फुर्तीली हरकतें करना शुरू किया। एक बार उसका फिर चरण-जीत के यहां लौटकर दुर्लभकाछी की खबर लेने का बड़े जोरों से मन हो रहा था। लेकिन रंगीनराय की बैठक की हलचल भी गर्माने लगी होगी। उधर कमलासिंह के पीछे पड़ रहने का भी वादा वह चरणजीत से कर आया था। और मंत्रिमंडल बनने में अब देर ही कितनी बची थी? पार्टी मीटिंग का क्या होगा? क्या वह सब उसके बिना, उसकी गैर-मौजूदगी में हो जायेगा।

ऊपर से तिवारी मिस्त्री के घरवालों को भी समझाना था और उनकी जरूरतों का खयाल रखना था। वह किधर जाये, क्या करे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था। हर जगह उसको अपनी जरूरत का अहसास हो रहा था, हर जगह उसका पहुँच जाना जरूरी था। यह कैसा फासला था जिसे इतने कम समय में पूरा कर लेना मुमकिन नहीं था। उसे लग रहा

था, काश, वह एक नहीं अनेक बजरबट्टू होता, हर जगह पहुँच पाता।

बचे हुए वक्त में, पहले वह कहाँ जाये जब इस बात का फ़ैसला बजरबट्टू काफ़ी देर तक न कर पाया और धतूरे के बीज का नशा उसके खून के दौरान को बड़ी तेजी से उड़ाये लिए जाने लगा तो बस यूँ ही वह उठकर चल दिया। बेमन, बिना किसी इरादे के उसने लम्बी सड़क पार की। फिर 'ए' ब्लाक के बरामदे से धीरे-धीरे निकलता हुआ वह वहीं बाहर की सड़क पर आ गया। अब उसे फ़ैसला करना ही था। दाहिनी ओर घूमकर सीढ़ियाँ थीं जिन पर चढ़कर वह ऊपर यशोदाबल्लभ के कमरे में कमलासिंह की फ़िराक में जा सकता था। दाहिनी ओर मुड़ जाने पर सामने से ही रंगीनराम का छज्जा दिख रहा था। और सामने था दारुलशफ़ा का फाटक जिससे बाहर निकलकर वह चरणजीत के पास जा सकता था। और वहीं से बायीं तरफ़ की पतली सड़क पर तिवारी मिस्त्री का मोटरगैरेज था।

लेकिन वह जाये कहाँ, किधर जाये इस बात का फ़ैसला वह अभी तक नहीं कर पाया था। इसीलिए वह बस वहीं बीचोबीच सड़क पर खड़ा होकर इधर-उधर देखता रहा…कुछ देख पाने, कुछ जान लेने के लिए रुका रहा। ऐसे में कोई छोटा-सा इशारा, कोई हल्की-सी आवाज़, कहीं से कोई गुहार लगा दे, कहीं कुछ होने लगे, बस उसे उधर ही चल देना था।

पाँच मिनट, फिर दस मिनट हो गये और कहीं कुछ भी न हुआ और बजरबट्टू खड़े-खड़े थकने लगा तो सड़क के बीच से हटकर 'ए' ब्लाक के बरामदे वाले जीने पर बैठ गया। फिर उसने जेब से खइनी की डिबिया निकाली। डिबिया के एक तरफ़ से तम्बाकू की पत्तियाँ लेकर, दूसरी तरफ़ से जरा-सा चूना उखाड़ लिया। डिबिया वापस जेब में रखकर हथेली पर चूने के जोर से खइनी का मिक्सचर तैयार करने लगा। जैसे-जैसे खइनी का चूरन बनता जा रहा था, वैसे-वैसे बजरबट्टू की चैतन्यता लौटने लगी थी। इस समय सब कुछ हो पाने पर भी उसका खालीपन वहीं का वहीं था और बहुत सारी भड़ास उसके अन्दर जमा हो रही थी।

बजरबट्टू ने इस बीच हिसाब लगा लिया, पहले चरणजीत के यहाँ एक बार हो लेने पर वह गयी-रात तक के लिए छुट्टी पा जायेगा। उसने खइनी को दो-तीन बार हथेली पर रखकर पीटा और उसे एक हथेली से

दूसरी हथेली पर गिराकर साफ किया। फिर वह उठकर खड़ा हो गया और चुटकी मे खइनी भरकर मुंह में दबाने वाला था, तभी उसने अपने पीछे बड़े जोर से दौड़ने और शोर-गुल की आवाजें सुनी।

शोरगुल की आवाजो के बीच जैसे बजरबट्टू ने मुड़कर देखा तो उसने कई लोगों को भागकर एक आदमी के पीछे जाते हुए देखा। यह सारे लोग 'ए' ब्लाक के बरामदे मे किसी आदमी के पीछे दौडते हुए चले जा रहे थे। तभी उसने हाँफते हुए यशोदाबल्लभ को देखा। सबसे आगे का आदमी, जिसके पीछे यह सारे लोग दौड-भाग रहे थे, बाहरी बरामदे को पार करके दाहिनी ओर मुड़ा फिर कुछ देर बाद बायी ओर मुडकर पहली मजिल की सीढ़ियों पर चढ गया। उस भागते हुए आदमी की एक झलक सीढ़ियो पर उछलकर चढने पर जो आयी तो बजरबट्टू को लगा, वह तो बढई था।

खइनी की चुटकी जो अब तक हवा में लटकी हुई थी जल्दी से उसने अपने होठो के बीच मे जमायी और हाथ कुरते के पिछले हिस्से में पोंछकर वह भी आगे बढ चला। जरा दूर जाने पर ही उसने पहली मंजिल के बरामदे मे बढई दीक्षित को रंगीनराय के कमरे की ओर कूदकर पहुँचते हुए देखा। और लोग भी वही पास ही लग रहे थे। अब बजरबट्टू से रुका नही गया और वह भी रंगीनराय के कमरे की ओर कुछ दौड़ते हुए चल दिया।

उधर रंगीनराय के यहाँ फसाद का माहौल बना हुआ था। बढई दीक्षित के अन्दर आकर गिरते ही उसके पीछे आ रहे लोगो से निपटने के लिए खुद रंगीनराय और उनके कितने ही चमचे, चकरबन्ध और खुराकी सीना तानकर खडे हो गये। बस फिर क्या था, दूर से यशोदा-बल्लभ और उनके साथी दबे-पाँव लौट गये। लेकिन जिन लोगों ने महज हल्ला-गुहार पर वजह जाने बिना दौड़ लगायी थी वे फिर भी वही आकर खड़े हो रहे। बजरबट्टू जब तक वहाँ पहुँचा बढ़ई को हिफाजत से टाँगकर भीतर ले लिया गया था।

बजरबट्टू के लिए वह काफी बड़ी खुराक थी। चरणजीत के यहाँ से लौटकर उसने सोचा था उसका आज का कोटा करीब-करीब पूरा था। उसके बाद आगे जो कुछ भी होना था वह बस दुर्लभकाछी की गिरफ्तारी या उससे सम्बन्धित चटपटेदार कुछ खबरें ही होगी। बहुत हुआ तो

"अरे बजरबट्टू आज हम बड़ी मुसीबत मे फँस गये थे। बस समझ लो रायसाब की कृपा से बच निकले नही तो वो हत्यारे मार ही डालते !"

"हत्यारे ! हत्यारे कौन बढई ?"

"नही जानते···तुम नही जानते !"

"जानता हूँ, दारुलशफा मे बहुतेरे हैं लेकिन तुमने किसकी बात कही ?"

एक क्षण को बढई सोच में पड गया—कहे ना कहे। कितना भी हो बजरबट्टू क्या कम फसादी है लेकिन सबने देखा जो है। सारे दारुलशफा में फैल जायेगा बढई भागा था—मंत्रीजी की फाइल लेकर भागा था ! किसको-किसको सफाई देगा। फिर उसकी सफाई सब मानेंगे ? हां लोगों के पूछने से पहले अगर कोई अच्छी-सी कहानी चल जाये तो आगे आसानी रहेगी। और अगर कोई कहानी चलवानी हो तो बजरबट्टू क्या बुरा था ? यह खुद ससुरा कृष्णबल्लभ को गरियाता है। फिर भी रंगीनराय को बुलवा ही लें···मिनी मीटिंग के लिए मसाला जो देना था ! कुछ देर यूँ ही बढ़ई कई-कई बार हर बात को तौलता-नापता रहा, फिर बोला :

"क्या है, बजरबट्टू बात बड़ी संगीन है। हमें सबकुछ कह देना है। क्या पता कब का होय जाये ? काट डालें सारे, मार डालें वो हत्यारे, हरामी की औलाद ! लेकिन अभी अगर रायसाब से नही कहा तो कलेजे पर से बड़े पत्थर-सा बोझ नही हटेगा। फिर मेरे पास एक राकेट है जो रायसाब के बडे काम आयेगा !"

"राकेट, कैसा राकेट ?"

"वह है जिसके लिए सभी बेहाल हैं। रायसाब खुद सवेरे से उसी की तलाश में दुखी है। उनकी युद्ध-रचना उस सबके बिना फटेहाल रहेगी।"

"यार पहेली ना बनाओ, अब कुछ बताओ भी।"

"जाओ बजरबट्टू, जल्दी रायसाब को बुला लो। उनसे कहना तांबा-काण्ड की असली फाइल मिल गयी।"

यह सुनते ही बजरबट्टू कुर्सी से उछलकर खड़ा हो गया, कुछ तांबा-काण्ड की फाइल की जिकर, कुछ नये रहस्य की सनसनी के कारण। जाहिरी तौर पर बढ़ई की बातों में दम था।

"तांबाकांड ? क्या कहा तांबाकांड की फाइल मिल गयी ?"

बढ़ई ने डरी-डरी आंखों में मासूमियत लटकाते हुए गर्दन झुकाकर हां करने का इशारा किया जिसे देखते ही बजरबट्टू ने लपककर कमरे का दरवाजा खोल दिया।

फिर रंगीनराय के बढ़ई के पास आ जाने में जरा भी देर नहीं लगी। रंगीनराय के आते ही कमरे का दरवाजा अन्दर से बजरबट्टू ने बंद कर लिया।

"क्यों बढ़ई, कैसी तबियत है ?"

"तबियत तो ठीक है। रायसाब आज आपने बचा लिया वर्ना आज बस अन्त था अपना तो।"

"क्या कह रहे हो बढ़ई ?" रायसाब ने आश्चर्य से कहा।

"हां रायसाब, हां ! मुझे तो आज पता लगा यशोदाबल्लभ और कमलासिंह कितने खतरनाक किस्म के जानवर हैं।"

"देखो बढ़ई इस वक्त एक-एक क्षण कीमती है। बाहर सब लोग आ चुके हैं, बस मीटिंग शुरू समझो। बजरबट्टू ने अगर तांबाकांड का जिकर न किया होता तो मैं अभी नहीं, रात ही तुमसे बात कर पाता…"

"नहीं रायसाब, मैं आपका ज्यादा समय नहीं लूंगा।" अब बढ़ई ने थोड़े में ही, बिना भूमिका बांधे सबकुछ कह डालने का निश्चय कर लिया।

"हां रायसाब तांबाकांड की फाइल मिल गयी…मैं जानता था आपको उसकी बड़ी जरूरत थी…इसीलिए शाम को अपने घर जाकर मैंने तलाश किया और मिल गयी।"

रंगीनराय को लगा, बढ़ई ने पूरी बात बतायी नहीं। फिर भी वह चुप रहे बस इतना ही पूछा, "लेकिन यशोदा ने दौड़ाया क्यों ? उसी फाइल के लिए ?"

बढ़ई के लिए बड़ी मुश्किल हो गयी। वह साफ-साफ कहना नहीं चाहता था, वहां ब्लैकमेलिंग के लिए वह गया था। वह तो साफ-साफ बच निकलना चाहता था। उसे यह तो सूझा ही नहीं था, कोई पूछेगा, वहां गये क्यों तो क्या कहेगा ? अब रंगीनराय के सीधा सवाल का कोई ज़वाब उसके पास नहीं था। फिर भी जवाब तो देना ही था।

"वो लोग रायसाब हमें ढूंढ रहे थे। उनको शक था फाइल मेरे पास

रही होगी। पर थोड़ी देर रुककर मैं दारुलशफ़ा लौटा तो उधर चला गया। सोचा देख लूँ, कृष्णवल्लभ का ड्रामा खत्म हुआ कि नहीं।"

"फिर ?" बढ़ई की बनायी बात जम रही थी।

"कृष्णवल्लभ के कमरे के पास पहुँचने पर जो दरवाजा खुला दिखा तो हम अन्दर जाने वाले थे तभी अन्दर से यशोदावल्लभ के चिल्लाने की आवाज सुनायी दी तो फिर मैं अन्दर नहीं गया। वहीं खिड़की पर रुककर उसकी बातें सुनने लगा। रायसाब बातें क्या थीं बस यह समझिए वहाँ तो मुझे मारने-काटने की साजिश चल रही थी।"

"क्यों···आखिर क्यों ?" रंगीनराय का धीरज टूटने लगा था।

"उनको शक था, ताँबाकांड का चश्मदीद गवाह मेरे सिवा कोई और है नहीं। यह सुनते ही मैं तो भागा, उन लोगों ने दौड़ा दिया। उनको मेरा चुपके से दुर्लभकाछी वाली बात सुन लेने का शक था।"

"दुर्लभकाछी ?" थोड़ी दूर बैठे बजरबट्टू ने चीखकर कहा जैसे कोई अंगारा उसकी छाती पर गिर पड़ा।

"हाँ···हाँ दुर्लभकाछी···यही नाम था। कह रहे थे उसे बेकार भेज दिया नहीं तो आज ही मेरा सफाया करवा देते।"

"कौन है यह दुर्लभकाछी ?" रंगीनराय ने बजरबट्टू की ओर घूमकर उससे जानना चाहा।

"रायसाब, दुर्लभकाछी···दुर्लभकाछी डकैत···जिसने फूलदास को मार डाला, जिसकी तलाश में पूरी पुलिस फोर्स बौखलायी है।"

"हाँ···हाँ फूलदास के खून की बात भी वे कहते थे।" बढ़ई बोला।

"छोड़ो भी तुम लोग—यह सब तो कल के दाँव हैं।" कहते हुए रंगीनराय जाने के लिए उठ खड़े हुए बढ़ई को आखिरी बार जैसे चुनौती दी, "देखो बढ़ई, इन बातों को फिर रात में या कल बैठकर हम लोग मथ लेंगे। अभी ताँबाकांड पर कुछ हो तो जल्दी बोलो।"

बढ़ई ने समझ लिया अब रायसाब रुकने वाले नहीं थे। और रायसाब के चले जाने से कृष्णवल्लभ, यशोदावल्लभ से वह बदला कैसे लेगा ? बहुत पहले ब्लैकमेलिंग का बुनियादी वसूल किसी जासूसी किताब में उसने पढ़ रखा था। अगर माँग पूरी न हो तो ब्लैकमेलर को बन्धक हलाल कर देना चाहिए। जाहिर था यशोदावल्लभ ने उसके साथ दोगलापन किया जिसकी वजह से ताँबाकांड का भंडाफोड़ हो जाये तभी उनको अपनी बेवकूफी का

मजा मिल पायेगा। उसने सोचा भंडाफोड़ के बाद तो कोई फायदा होना नहीं और उसके पहले कुछ मिलता नजर नहीं आ रहा था। फिर भी फाइल दिखा भले दे : हाथ से निकल जाने नहीं देनी थी। वक्त की दौड़ थी नहीं तो रायसाब से कोई आगे का सौदा कर लेता।

कुछ और तौल न पाने पर वह जिस चारपाई पर लेटा था वहाँ से उठकर खड़ा हो गया। उसके उठकर खड़ा होते ही दरवाजा खोलने को रंगीनराय का बढा हाथ रुक गया और वह घूमकर खड़े हो गये। तब बढई ने चमकती हुई आँखों में लालच की बू घोलते हुए कहा, "रायसाब, अब मैं अपने को आपके हाथो सौंपता हूँ, जो कुछ हो सके करवा दीजिएगा।"

"ठीक है, बढ़ई तुम्हारा पूरा खयाल रखा जायेगा।"

रायसाब के इतना कह लेने से बढई को आसरा मिला और उसने बुश्शर्ट का निचला हिस्सा एक झटके मे पेंट से निकाल दिया। पेंट से बुश्शर्ट का निकलना था, ऊपरी हिस्से से बनयान के अन्दर दबी हुई फाइल जरा-सा झाड़ने से निकलकर नीचे गिर पड़ी। बढई ने फाइल के गिरते ही उठा लिया और उसे हाथ मे सँभालकर उसने ऐलान किया, "यें रही, रा···साब यही है ताँबाकाड की असली फाइल !"

पहले की हरकतो और बढई के ऐलान ने वजरबट्टू को हिला दिया। रायसाब अमोघ अस्त्र पा लेने जैसी हालात मे घुरघुराने लगे। लेकिन फाइल पढ पाने का वक्त तो था नहीं। वह अब और रुक सकने की स्थिति मे थे नहीं। बाहर दरवाजा पीट-पीटकर लोग चिल्ला रहे थे। इससे पहले कि उनको दरवाजा खोलकर मिनी मीटिंग में होने वाले युद्ध मे जूझना पड़े, वह इस हथियार को ले लेना चाहते थे।

"गुड·· बढई ! ···वेरी-वेरी गुड ! अच्छा यह तो बताओ तुमने यह फाइल देखी है ?"

"हाँ।"

"इसमे उत्सुकदास और कृष्णबल्लभ के दस्तखत हैं ?"

"दस्तखत ! रायसाब इसमे तो कामयाब सेठ की सिफारिश मे दोनों ने वजनदार नोट लिखा था।"

"कोई और बात ?"

"हाँ आपकी और लोबीराम की चिट्ठियाँ भी हैं इसमे !"

यह सुनते ही रंगीनराय को पलभर मे सबकुछ याद आ गया और

अनजाने मे उनके होंठो मे हल्की-सी सीटी बज गयी। पर तुरन्त सँभलकर उन्होने कहा, "ठीक है, फाइल यही रखो। मैं दरोगा को भेजता हूँ, वह पढ़ेगा।"

इतना कहकर रंगीनराय दरवाजा खोलकर बाहर निकल गये। उनके निकलते ही इसमे पहले दरवाजे से सटे हुए लोग अन्दर आ जायें बजरबट्टू ने फिर दरवाजा बन्द कर लिया। अब तक फाइल को बढ़ई तकिया के नीचे रख चुका था और उसने बजरबट्टू को फाइल न दिखाने का भी फैसला कर लिया था।

लेकिन बजरबट्टू को तो फाइल देखनी नही थी, उसको तो दुर्लभ-काछी का पीछा करना था। फूलदास के कत्ल के बारे मे पूछना था। उसे लग रहा था बढ़ई को कई बातें पता थी जो न तो उसको, ना ही चरण-जीत को मालूम थी।

बढई फिर से तकिया के ऊपर कोहनी जमाकर अधलेटा हो गया तब बजरबट्टू ने छेड़ा, "हाँ यार! तो दुर्लभकाछी का नाम तुमने खूब लिया, वही साला फूलदास का कातिल है। चरणजीत उसे छोड़ेगा नही। दारुलशफा से वो साले भागे तो पर उससे पहले हम उनके पीछे लग लिये थे!"

डकैत दुर्लभकाछी···खूनी दुर्लभकाछी यह नाम एक ठण्डी दहशत की तरह बढई की रीढ मे जाकर चिपक गया।···बेकार दुर्लभकाछी को भेज दिया नही तो साले को काटकर गोमती मे फेंक देता·· यशोदाबल्लभ के शब्द नामी खूनी डकैत के साथ जुड़े हुए उसके कलेजे में फिर से कँपकँपी उठाने लगे। बाहर से भागकर आया था तो बस बढ़ई अपने अन्दर ही कुछ ढूँढने लगा···कोई ऐसा खयाल, कोई हिम्मत वाला ऐसा दिमागी संबल जो दारुलशफ़ा के माहौल मे उसे सहारा दिला दे। मन की अन्दरूनी ताकत टूट चुकी थी, रीढ मे दुर्लभकाछी का नाम चिपचिपा रहा था! उसके कलेजे की कँपकँपी सिहरन बनकर नस-नस में, रोये-रोये तक में घुस गयी। ऐसे मे छटपटा रहा था बढई! तभी शाम को यशोदाबल्लभ के कमरे मे दिखा रिवाल्वर एक भयानक शक्ल मे याद आकर जैसे उसके सीने पर टिक गया। उसके साथ ही बढई के मुँह से दर्दभरी चीख निकल गयी।

चीख सुनते ही बजरबट्टू उसके और करीब आ गया। वह बढ़ई के

सिर पर हाथ फेरता रहा और फिर फुसफुसाते हुए धीमी, मुलायम लेकिन सख्त आवाज में बोला, "बढ़ई बोल ना! कह डाल! नहीं तो तू सह न सकेगा।"

बजरबट्टू की आवाज बढ़ई की मोटी चमड़ी को छीलकर दहशत को पकड़ लेने लगी थी और फिर हाथ की मुट्ठियाँ मींजकर उसने कह दिया, "रिवाल्वर, खूनी रिवाल्वर···बजरबट्टू!"

"कहाँ है···बताओ बढ़ई, बताओ।" इतना कहकर बजरबट्टू ने देखा बढ़ई की आँखों की पुतलियाँ उलट चली थीं। उसने जल्दी से उठकर पास ही स्टूल पर रखे हुए गिलास का सारा पानी उसके मुँह पर उँडेल दिया। बजरबट्टू खुद डर गया था। अगर बढ़ई बेहोश हो गया तो खूनी रिवाल्वर का रहस्य काफी देर के लिए दफन हो जायेगा। फिर बाद में पता नहीं साला बताये या नहीं। और फिर लग रहा था रिवाल्वर की याद से ही ज्यादा परेशान था।

पानी के गिरते ही, बढ़ई झटके के साथ सिहरकर जैसे फिर से जी उठा! उसके साथ ही बजरबट्टू ने वहीं से गमछा उठाकर पानी पोंछना शुरू कर दिया फिर कुछ पल रुककर उसने पूछा, "कहाँ है रे बढ़ई, कहाँ है दुर्लभकाछी का रिवाल्वर?"

अब तो बढ़ई ने कहना था इसलिए वह थकी-थकी, डरी-डरी आवाज में बजरबट्टू के पास अपना मुँह ले जाकर बोला, "यशोदावल्लभ के कमरे में पड़ा है!"

"क्या···यशोदावल्लभ के कमरे में?"

"हाँ···हाँ, मैंने देखा था।"

"तुमने···तुमने कैसे देखा?"

"मैं वहाँ कृष्णवल्लभ की चिट्ठी देने गया था।"

"ओह!" तभी बजरबट्टू को भी याद आया। शाम के वक्त रंगीन-राय, बढ़ई और कमलासिंह के साथ ए ब्लाक की सीढ़ियों से वह लोग उतरकर नीचे आ रहे थे। वहीं···वहीं तो सीढ़ियों के निचले हिस्से पर घुटने तक के कुर्ते, कीचड़-धूल में सनी चप्पलों में, दहकती हुई लाल-लाल आँखों, जंगली किस्म की मूँछों वाला एक खतरनाक किस्म का आदमी मिला था जिसे देखते ही कमलासिंह घबड़ाकर रुक गया था। दोनों धीरे-धीरे बोल रहे थे फिर भी भनक तो लगी ही थी। पहले कमलासिंह ने

चरियाया था लेकिन उस खतरनाक आदमी के गुर्राने पर भीगी बिल्ली की तरह दुबककर कमलासिंह नीचे उतर आया था। फिर बाद में चरणजीत के साथ तिवारी मिस्त्री से जीप ले जाने वाले आदमी का हुलिया जानते वक्त भी बजरबट्टू की आँखों के सामने यही चेहरा घूम रहा था। अब यशोदावल्लभ का जिकर आते ही फिर कमलासिंह याद आया। कमलासिंह यशोदावल्लभ के ही कमरे में टिकता, यह तो सबको मालूम ही था। फिर उस खतरनाक आदमी, जो एतानिया दुर्लभकाछी था, से कमलासिंह की बातचीत से उसने यही मतलब निकला, शाम वहाँ सीढ़ी के निचले हिस्से पर मिल लेने के बाद, अलग-अलग दोनों यशोदावल्लभ के कमरे गये होंगे। और अब बढ़ई कह रहा था वहाँ उसने रिवाल्वर देखा था। कहीं··· दुर्लभकाछी का खूनी रिवाल्वर यशोदा के कमरे···। बजरबट्टू ने चमककर अपने को झटका दिया और आगे बिना और कोई बात कहे, दरवाजा खोलकर बाहर निकल गया।

खौफ और दहशत के बीच घिरी-घिरी शान्तिप्रणाली ने उस दिन कुछ कर गुजरने की जिद पकड़ ली थी। लेकिन करे तो क्या करे! एक कमजोर औरत जिसका अब अपना तक कह लेने वाला कोई नहीं था। कुछ अपना कहला लेने वालों को वह जिन्दगी के सफर में बहुत पीछे छोड़ आयी थी। कुछ जो अभी मिले थे वक्त ने उनको छीन लिया था। और उसे अब तो लग रहा था वक्त उसे, खुद उसे भी मिटा देने के लिए बढ़ आया था। सिर्फ चन्द साँसें, कुल पा लेने, जी लेने की चाह से रहित जैसे ऊपर-नीचे हो रही थीं।

वह जवानी और मस्ती का दरिया जो हमेशा से शान्तिप्रणाली की रग-रग में उन्माद की तरंगें उठाया करता था आज जैसे उसके टूटे हुए मन के साथ सूख गया था। और कोई वक्त होता तो खाली बन्द कमरे में अब तक उसने अपने सारे कपड़े उतार डाले होते और नंगे बदन खाली बिस्तर पर किसी आ गये या आने वाले मर्द के साथ तसव्वर में झूल-झूलकर जीती-जागती रहती। सबकुछ बटोर लेने की, मन से सब कुछ पा लेने की, और तन की एक अजीब हवस हमेशा-हमेशा उसके अन्दर रही थी। लेकिन आज न तो तन की हवस थी, न उन्माद की तरंगें और

प्रणाली ने बडी-बड़ी प्यारी ग्रांखो से रिवाल्वर को तौलते हुए हाथ बढा-कर उठा लिया। रिवाल्वर के हाथ ग्रा जाने पर न जाने कहाँ से ग्रनेक-ग्रनेक तूफान जाग उठे। एक बार तो नुकीली सूइयो-सी चुभन जाँघो के बीच उठकर हलक तक जा पहुँची फिर इतनी देर का जैसे कुछ भी हो जाने का ठहराव टूट गया।

सबकुछ छोडकर चले जाने-सा खयाल, ग्रनजानी, ग्रनचाही जैसी एक विरक्ति ग्रौर इतने दिन जैसा जी लेने ग्रौर ग्रागे जो कुछ रहने वाला था उससे न बच निकल पाने का ग्रहसास ग्रब उसे वजनदार पथरीले दबाव मे ले लेने लगा था। फूलदास कुछ नही, बजरबट्टू कही नही था, टूटी हुई शख्सियत का हिसाब भी नही था। थी ग्रगर तो एक तनहाई एक बेबस ग्रकेलापन जिसमें ग्रब डूबे रह पाना उसके लिए मुमकिन नही हो पा रहा था।

शान्तिप्रणाली इस समय ऐसे मुकाम पर पहुँची हुई थी जहाँ वे सारी बातें, जो भूली हुई थी, ठहराव के किन्ही मोड पर खोयी हुई थी, एक हलचल बनकर उभर ग्रायी। फिर तमाम-तमाम जजबातो का मंजर, घुटी-घुटी पनाह माँगती भोली बिनमोल चाह ग्रौर बुझी हुई जिन्दगी की उडती हुई खाक ग्रांखो के सामने ग्रपने हाथ के रिवाल्वर पर उतरकर बैठने लगी जिसके साथ कोई डर नही एक हिम्मत, एक ताकत सिर उठा-कर खडी हो रही थी।

वैसे उसके लिए जीना ग्रौर मरना बेमाने था। जीने पर यशोदा-वल्लभ का खयाल उसे खुद मार डालने जैसा था। ग्रौर मरना किसी मकसद के लिए नही था इसीलिए वह कोई फैसला नही कर पा रही थी। क्या वे सब चैन-खुशी मे जीते रहेगे, जिन्होने पल-पल उसे तबाही के ग्रँधेरों में भटकने को मजबूर किया था ? क्या यूँ ही भाग जाना मुमकिन था ? इन सबसे क्या उसे ग्रब कुछ न लेना था, न देना था। कही भी किसी को क्या उसकी जरूरत नही थी ? क्या वह किसी से खुद कुछ भी न छीन सकेगी—वैसे ही जैसे सबने उससे सबकुछ छीना था, नोंचा-घसीटा था।

तभी कितनी ही पर्त-दर-पर्त नीचे दबा हुग्रा एक छोटा-सा हसीन खयाल उभरकर उसके मन में ग्रा गया। एक ऐसी याद जिसके ग्रा जाने से न जाने क्यों शान्तिप्रणाली को लगा, शायद उसे बची हुई

साँसों का हिसाब देना था। लेकिन क्या यह मुमकिन था ? फिर फूलदास की मौत के बाद अब वह अपनी वजह से किसी और की मौत का कारण नहीं बनना चाहती थी। अगर वह इस तरह बिना बाकी बची साँसों का हिसाब दिये मरना नहीं चाहती थी तो शायद यह सब दुबारा कर लेने या पा लेने की हिम्मत भी उसमें नहीं बची थी। फिर भी यह याद जो बजरबट्टू की थी और उसे कर पाने या न कर पाने का फैसला उसका था जो उसे इतनी देर तक रोके रहा।

उधर बजरबट्टू बढ़ई के पास से जो बाहर निकला तो एक बार फिर जैसे तेज रफ्तार से भागते हुए घोड़े पर उड़ा चला जाने लगा। अभी शाम ही तो उसने फूलदास के कातिल को पकड़वाया था। अब उसी सिलसिले मे एक और खोज की कड़ी उसके हाथ में थी। मामला फूलदास का नहीं होता तो वह इस वक्त रंगीनराय के यहाँ से टलने वाला नहीं था। मिनी मीटिंग ऊपर से मंत्रिमंडल की हलचल, यही सब तो उसे अपनी अन्दरूनी खाक में छिपे हुए चन्द अंगारों और उन अंगारों से निकले फफोलों की कुढ़न से अलग रखता।

बढ़ई जिस कमरे के अन्दर था उसके बाहर से लेकर बाहरी बैठक के बरामदे तक कहीं तिलभर पैर भी उस समय रख लेना मुमकिन नहीं था। फिर भी सीधी गर्दन ताने हुए वह काटकर-फाँदकर बाहर निकल आया। कई लोगों ने इस बीच उसे पुकारा जरूर था लेकिन रुकने की कौन कहे उसने उन लोगों की बात का जवाब तक नहीं दिया। वह तो उस वक्त किसी भी तरह यशोदावल्लभ के कमरे पर पहुँचकर बढ़ई की बतायी हुई रिवाल्वर पकड़ लेना चाहता था। क्या पता उसी रिवाल्वर से फूलदास का खून किया गया हो। वैसे तो बजरबट्टू को मालूम था दारुलशफ़ा मे बन्दूक-रिवाल्वर तो न जाने कितनों के पास थी। लेकिन जब बढ़ई की बात के साथ शाम दुर्लभकाछी और कमलासिंह की घुसर-पुसर उसे याद आयी तो उसके जहन मे कहीं वहाँ रखी हुई रिवाल्वर का खुफिया रिश्ता फूलदास की मौत से जुड़-सा गया था।

रंगीनराय के घर से बाहर बरामदे तक का हिस्सा निकाल लेने के बाद बजरबट्टू बायें, यशोदावल्लभ के कमरे तक का लम्बा फासला पार कर लेने के लिए, मुड़ जाने वाला ही था तभी उसे चरणजीत की याद आयी। एक तो चरणजीत से दुर्लभकाछी की खबर लेनी थी, दूसरे

रिवाल्वर की बात भी बतानी थी। लेकिन चलकर उसके पास तक चले जाने का सवाल नही था। फिर अगर जिस रिवाल्वर को वह उठाने जा रहा था वही कतलेआला थी और अगर अब तक चरणजीत ने दुर्लभकाछी को धर-पकड़ा था तो उस पर हाथ डालने से पहले चरणजीत को बता तो देना ही था। ऐसे मे उसके पास एक ही जरिया था, टेलीफ़ोन ! हालांकि टेलीफ़ोन मे यह सब कहना-सुनना उसे ठीक नहीं लग रहा था। मगर और कोई जरिया नही था। इसीलिए उसने सोचा, कुछ इशारे मे कहकर चरणजीत को यही बुला लेगा।

चरणजीत को फोन करने का फ़ैसला तो बजरबट्टू ने कर लिया था लेकिन फोन करे तो करे कहाँ से। हर एक जगह से तो बात की नही जा सकती थी। ऊपर से इधर-उधर भटककर वह किसी भी तरह अपना कीमती वक्त बरबाद नही कर देना चाहता था। इसीलिए वह वापस रंगीनराय के कमरे पर टेलीफ़ोन कर लेने के लिए लौट चला। टेलीफोन तो बैठक मे नही अन्दर था। फिर अन्दर जाकर एक कोने में थोडी-सी जगह बनाकर उसने चरणजीत को फोन मिलाया तो वह मिला नही। थाने के मुंशरिम से तब बजरबट्टू ने फुसफुसाती हुई आवाज में कतले-आला मिलने जैसी उम्मीद के बारे में बतलाकर किसी भी तरह दारुल-शफा मे यशोदावल्लभ के ठिकाने पर चरणजीत को अभी हाल भेजने को कहा, और फिर बाहर निकल आया।

इतना कर लेने के बाद बजरबट्टू को अब सिर्फ यशोदावल्लभ के यहाँ पहुँच जाना भर रह गया था। फिर भी वहाँ पहुँच जाने पर उसको एक नाटक तो करना ही था। वहाँ अन्दर घुसकर उसे फटाका रिवाल्वर तो उठा लेना नही था। इतना तो उसे इतमिनान था यशोदावल्लभ इस वक्त पार्टी मीटिंग और उसके बाद के समारोह के इंतजाम में जुटा होगा। दुर्लभकाछी चूंकि दारुलशफ़ा से भागकर चला जा चुका था, कमलासिंह भी शायद ही वहाँ हो। लेकिन किसी का भी वहाँ न होना भी उसकी स्कीम मे उल्टा बैठ रहा था। अगर कहीं ताला बन्द होगा तो वह अन्दर घुस ही नही पायेगा। ताला तोड़कर तो चरणजीत भी शायद ही अन्दर घुसेगा।

फिर न जाने क्यों उसको इतमिनान था, आज के माहौल में जब दूर दूर से हर नेता के चाहने वाले उमड़ने लगे थे, यशोदावल्लभ के कमरे

ताला तो नहीं बन्द होने का। धीरे-धीरे पहली मंजिल के बरामदो की बूटेदार बालकनी से लगा-लगा बजरबट्टू वहाँ पहुँचने पर पहले तो अन्दर पसरकर बैठ लेने का निश्चय कर चुका था। उसके बाद उसे बैठक का मुआयना दबी-तिरछी निगाहो से करना था और अगर जहाँ बढई ने रिवाल्वर होने की बात कही थी रिवाल्वर होगी तो उसे ताक लगाकर चरणजीत के आ जाने तक इतजार करना था।

बजरबट्टू ने यशोदाबल्लभ के कमरे के सामने वाली बालकनी पर आ जाने पर कुछ देर वही रुके रहना ठीक समझा। कमरे का दरवाजा तो बन्द था लेकिन बाहर से ताला नही लगा था यह देखकर उसने चैन की साँस ली। वहाँ सामने न रुककर वह जरा आगे बढ़ चला। बैठक के कमरे की खिड़की तो बन्द थी लेकिन अन्दर पखा चलने जैसी आवाज तो आ ही रही थी। जाहिर था अन्दर कोई था। फिर वापस लौटकर वह सामने के दरवाजे पर खड़ा हो गया।

लेकिन दरवाजा खटखटाने से पहले एक बार फिर बालकनी से दारुलशफा के दोनो मेन गेट और उनके सामने सडक पर आते-जाते लोगों को कुछ पहचान लेने के इरादे से देखा। जब आखिरी बार चरणजीत या उसके किसी साथी के नही आ जाने का उसे इतमिनान हो गया तो बालकनी से हटकर उसने मजबूती के साथ यशोदाबल्लभ के कमरे पर थापें मारना शुरू कर दिया।

एक···दो···तीन थापो के बाद भी अन्दर से कोई जवाब नही आ रहा था। कुछ क्षण रुकने के बाद बजरबट्टू ने फिर से दस्तक देने के बाद, कुण्डी खडखड़ानी शुरू कर दी। फिर भी जवाब नही आया तो हाथ की मुट्ठी बनाकर वह दरवाजा पीटने लगा। इतने मे अन्दर से किसी की घिसटकर आने जैसी आवाज आयी जिसके साथ ही जैसे बड़ी मजबूरी मे लम्बी नीद से जागकर उठे हुए किन्ही मजबूर हाथो ने अन्दर से हौले-हौले सिटकनी गिराना शुरू किया।

बजरबट्टू ने तब तक दरवाजा खुलते ही अन्दर घुस लेने का फैसला कर लिया था। दरवाजा कोई भी खोले आगे की बात उसने अन्दर जाकर ही करनी थी। लेकिन वह ऐसा नही कर सका। दरवाजा खुलते ही उसके सामने खुले हुए रेशमी बालों के बीच वही हसीन चेहरा था जिसकी याद में वह कितने-कितने दिनों से गुमनाम दर्द की घाटियो में

भटक रहा था।

वहाँ उस समय शान्तिप्रणाली को देखकर बजरबट्टू के होश उड गये। अपने वहाँ आने का उसे मकसद भला क्या याद रहता, उसे तो तब यह भी याद नही रहा, वह कहाँ था। जैसे ही उसकी निगाह शान्ति-प्रणाली की बडी-बडी हिरनी जैसी प्यारी आँखों से उठकर खडे हो गये बेचैन सवालो से जाकर मिली तो वह खुद बेग्राक मजबूर, बडे दिन से बीमार इंसान की तरह अन्दर ही अन्दर कराह उठा।

वह तो यहाँ फूलदास के कातिल को पकड़ लेने के बाद उस कातिल के हथियार को उठाने के लिए आया था। सात समन्दर पार तक भी उसे कहीं सपने मे भी शान्तिप्रणाली का खयाल नहीं आया था। जब वह किस-किसके यहाँ होने पर नाटक करने की स्कीमे बना रहा था तब भी उसे इतनी मामूली-सी बात नही सूझी थी, आज के दिन वह शान्ति जो उसकी अपनी थी कभी, यहाँ हो सकती थी।

एक क्षण तो बजरबट्टू स्तब्ध, बिना हिले-डुले खडा रहा फिर दूसरे पल ही उसके अन्दर नफरत का सैलाब उमड़ पडा। यह अपनी प्यारी शान्ति नहीं, यह तो वह नागन थी जिसने उसका सबकुछ छीन ही लिया था पर साथ में जहर बुझे कुछ घाव भी छोड़े थे जो आज भी रिस-रिस कर उसे मारे डाल रहे थे। यही था वह मुकाम जहाँ आने के बाद हमेशा-हमेशा बर्राने वाला बजरबट्टू चुपचाप खामोश खड़ा था।

लेकिन उसे वहाँ रुके रहना तो था नहीं। एक ही चक्कर मे अभी तक की सारी बातें उसके दिमाग से गायब हो गयी जैसे वे वहाँ थी ही नहीं और तेजी से बजरबट्टू वापस लौट चलने के लिए मुडने वाला था, तभी शायद इसका अहसास होते ही शान्तिप्रणाली के मुँह से चीख-सी निकल गयी···

"नही···नही···मुझे ऐसे छोड़कर न जाओ।" बस इतना ही कहकर शान्तिप्रणाली वहीं उसके सामने ढेर हो गयी। उसके गिरते ही बजरबट्टू रुका और आगे उसे सहारा देने के लिए बढा तो उसकी निगाह उस रिवाल्वर पर पडी जो इस समय शान्तिप्रणाली के हाथ मे था।

बजरबट्टू ने हडबड़ाकर रिवाल्वर ले लिया। उसने फिर शान्ति-प्रणाली को खीचकर अंदर किया और कमरे का दरवाजा बंद कर लिया। धीमी आवाज मे चीख लेने के बाद बुदबुदाती हुई शान्तिप्रणाली जैसे तमाम

दर्द की तड़प में, घुटन में बजरबट्टू के कंधे पर छटपटाती रही थी।

कालीशंकर को दारुलशफ़ा से, अपनी कहलाने वाली बीवी प्रतिभा और राहुल और उत्सुकदास से, उस सारे माहौल से जिसमें वह इतने दिनो तक जी रहा था, भागकर दूर कही चले जाने की योजना मे विघ्न आन पडा था। वह तो अपने कमरे पर कुल दस मिनट के लिए कुछ रुपया-पैसा, स्कूल, कालेज-यूनिवर्सिटी की डिग्री वगैरह ले जाने के लिए आया था। उसने उस वक्त कसम खा रखी थी, कोई भी वजह उसे रोक नही सकेगी, कोई मोह जाना-अनजाना छलावा उसके चले जाने के लिए उठ पड़े पाँव नही रोक पायेगा।

लेकिन अपने ही कमरे से पहले डाक्टर को फिर बैग उठाये हुए उत्सुकदास के नौकर को जब उसने निकलकर जाते हुए देखा, तभी उसका माथा ठनक गया। हालातों को सूँघकर कुछ जान लेने की पुरानी आदत के सहारे ही उसी समय उसे कुछ गड़बड़ी लगी थी। फिर वहाँ की बच गयी भीड़ से निकलकर जाते हुए एक आदमी को रोककर उसने जब गड़बड़ की वजह जाननी चाही थी, तभी जरा-सी बातचीत के दौरान ही उसके कमरे का दरवाजा दुबारा खुला था और वहाँ से निकलकर उत्सुकदास का बूढ़ा नौकर दहाड़ मारकर रोने लगा था।

अब तो आगे बढ़कर बूढ़े नौकर को सँभालने के सिवा और चारा नही था। लेकिन उससे पहले वहाँ बच गये एक-आध लोगों को भगाना था। काफी देर से चल रहे नाटक में अब लोगों को वैसे भी कोई खास दिलचस्पी बची नही थी। इसीलिए एक हाथ से बूढे नौकर को पकड़कर, उन लोगो से चिल्लाकर फौरन दफ़ा हो जाने को कहा तो बच गये लोग भी जल्दी-जल्दी खिसक गये। फिर तो कालीशंकर फौरन बूढ़े नौकर के साथ अंदर गया और कमरे का बाहरी दरवाजा बन्द कर दिया। दरवाजा बन्द करने के बाद कालीशंकर जो मुडा तो बैठक में पडे दीवान पर उसे रूखे-सूखे बाल, फटी कमीज-पैण्ट, लम्बी-उलझी हुई दाढ़ी मे बेहद गंदा एक भिखारी लेटा हुआ दिखा। उसके माथे पर डाक्टर की बाँधी हुई ताजी पट्टी थी जिस पर हल्के-हल्के खून का दाग रिस आया था।

इधर बूढा नौकर फूट-फूटकर रोये चला जा रहा था। अजीब उलझन

में कुछ भी न समझ पाने की स्थिति ने जब कालीशंकर को तंग किया और यहाँ से तुरन्त भागकर चले जाने का ख्याल उसे परेशान करने लगा तो थोड़ा खीझकर उसने बूढ़े नौकर से पूछा, "काका ! यह सब है क्या ?"

"बेटा···काली बेटा यह बनवारी है···बनवारी ।" बूढ़ा नौकर, जो जरा सँभला था, फिर से रोने लगा ।

"बनवारी···कौन बनवारी ?" कुछ डरते हुए कालीशंकर ने सवाल किया ।

"तुम्हारा बाप है यह, बनवारी ।" आँसू पोंछकर अनजानी चुनौती को झेल लेने जैसी मनःस्थिति में बूढ़े नौकर ने कहना शुरू किया, "जब तू बड़ा छोटा-सा था तेरी माँ मन्नन और बनवारी पूरे गोबिन्दपुर रियासत के कोने-कोने तक अपनी मोहब्बत के लिए जाने जाते थे । बिल्कुल तेरे जैसा था यह हट्टा-कट्टा गठीले बदन और गोरे रंग वाला । तब बड़ी शान थी इसकी । और तेरी माँ, मन्नन बहुत···बहुत सुन्दर थी, यही था शायद उसका सबसे बड़ा कसूर !" फिर जैसे बूढ़े नौकर को कुछ और याद आया । "अरे तुझे भी तो याद होगी अपने बाबा की । मुझसे कहता था ना बाबा मर गये, तेरे से कुछ कहना चाहते थे, बता नहीं पाये । कालीशंकर तेरे बाबा इसी बनवारी के बारे में तुझसे कहना चाहते थे । यह बनवारी हम सबको छोड़कर चला गया था । पहले तो छठे-छमाहे एक-दो दिन के लिए गाँव का चक्कर लगा लिया करता था । लेकिन जब मन्नन फिर भी नहीं मिलती और ऊपर से लोग खिल्ली उड़ाने लगे थे तो इसने वहाँ भी आना छोड़ दिया था ।"

"क्या, क्या हुआ था मेरी माँ को ?" जैसे किसी नींद में खोये रहने पर भी यह शब्द कालीशंकर ने कह दिये । यही था वह सवाल जिसका जवाब बूढ़ा नौकर देना नहीं चाहता था पर जवाब तो उसे देना ही था । बाप को आज जीवन मे पहली बार देखकर जब माँ का जिकर आ ही गया हो तो कैसे खामोश रहा जा सकता था ।

"का करिओगे वह सब जानकर !" कहने को तो बूढ़ा नौकर कह गया लेकिन उसको मालूम था जवाब उसे देना होगा और बनवारी अगर जाग गया तो शायद वह जवाब दे भी न पाये । इसीलिए दोनों हाथ माथे पर रखकर वह बैठ गया और धीमी-धीमी आवाज मे उसने कालीशंकर को बिना देखे हुए कहा, "बेटा काली, धीरज रखो ! यह बनवारी तो

आया है ना ! मैंने तो तेरे को अपने बेटे से कभी कम नहीं माना। नहीं चाहता था वह सब कहना जो जिन्दा रहते तुम्हारे बाबा भी न कहि पाये। फिर सोचता हूँ अब न बताया और जो बनवारी आ ही गया तो तेरे मन में कैसे पैठ पायेगा। मैंने कहा था ना, तेरी माँ मन्तन बड़ी सुन्दरी थी। अरे वैसी लड़कियाँ तो अब देखने मा ही नहीं आतीं। बस यही उसका कसूर था। अ् सारे महराज के चट्टे-बट्टे थे उनमें खजांची का बदमाश भाई भी रहा। सबने मिलकर उसे मार डाला बेटा ! मार डाला था ! तेरी माँ मन्तन को यह बनवारी बहुत चाहता था। उस दिन यह रहा नहीं। बस लौटकर जब इसे मन्तन नहीं मिली तो यह पागल हो गया। इतने दिन बाद यह मिला है। हमें शायद भगवान इसी दिन के लिए जिम्राये थे। हम न होते तो इसे भी आज इहाँ के लोग मारे डालि रहे थे। अब इसे गले लगा ले कालीशंकर ! बड़े दुःख उठाये हैं इसने। गले लगा ले इसको, यह तेरा बाप है, बनवारी तेरा बाप है···।" बस इतना कह लेने के बाद बूढ़े नौकर को जो कुकुर खाँसी का दौरा पड़ा तो वह आगे और कुछ न बोल पाया।

लेकिन बूढ़े नौकर के शब्द "बड़े दुखः उठाये हैं इसने···यह तेरा बाप है···*बनवारी तेरा बाप है।" कालीशंकर के दिलो-दिमाग पर तेज नशे* की तरह असर कर चुके थे। उसके अंदर का अपना भी सारा दुख जैसे आज उबलकर बाहर निकलना चाह रहा था। कैसे बताता वह बूढ़े नौकर को वह भला बनवारी को क्या गले लगाये उसे खुद ही आज सहारे की जरूरत थी···हाँ आज, जब वह अंदर से बुरी तरह टूटा हुआ था, बेहद अकेला था। खुद अपने कलेजे पर पहाड़ उठाये वह तो यहाँ चले जाने के लिए आया था। उसके बाप बनवारी के पास मन्तन का सहारा तो था भले ही दो शब्दों का, मन्तन के आ जाने के इन्तजार का नादान सहारा हो, उसकी बुनियाद तो मजबूत थी। लेकिन उसके अपने पास अब न तो कोई धरातल था और अपनी बनायी बुनियाद चूर-चूर हो चुकी थी, अब तो वह टूटे-फूटे खँडहरों जैसा था जिसके ऊपर कोई भी साबुत छत नहीं थी और जिसकी बुनियाद भी खोखली थी।

फिर भी कालीशंकर के पास वक्त तो था नहीं, जो वहाँ बस खड़ा-खड़ा यूँ ही अपने पागल बाप को घूरता रहता। जब सब सहारा छिन गया तो उसे अपने दिमाग से सहारा मिलने लगा। चूँकि वह अभी बाहर से आकर खड़ा था, इसलिए वह अपने मकसद से बहुत दूर नहीं जा सका था। इससे पहले

बूढ़े नौकर की कुकुर खाँसी पूरी तरह रुक जाये और वह आगे कुछ सवाल-जवाब करे और इससे पहले उसका बाप बनवारी नींद से जागे, कालीशंकर ने तो फैसला कर लिया। अपने अंदर उबलते हुए तूफान को दबाकर उसने बूढ़े नौकर से कहा, "अरे काका ! हम आज अभी यहाँ से जाय रहे। कुछ जरूरी सामान जमा करते हैं, इतने में तुम रिक्शा मा बैठकर एक टैक्सी बुला लो।"

"अरे बन···वारी !" खाँसी दबाकर बूढ़ा नौकर बोला।

"और क्या ? इनकी वजह से तो अब और ही जल्दी जाना है। यह हमरे साथ जायेंगे। टैक्सी लै आओ काका वर्ना वो आ गयी तो बड़ी खराबी हो जायेगी।"

दस

लोबीराम के कुछ वसूल थे और इन वसूलों का वह बड़ी सख्ती से पालन किया करते। तभी तो हजार कमजोरियों के बावजूद भी दिनों-दिन राजनीति पर उनकी पकड़ मजबूत होती जा रही थी। उनके खास वसूलों में एक था दुश्मन को आखिर तक मौका देने का। दिये हुए मौके तक अगर उनकी इच्छा नहीं पूरी हो तो फिर वह सीधा हमला करते। और दूसरा वसूल था हमला कर देने के बाद वह पीछे नहीं हटते और ना ही फिर किसी प्रकार का समझौता करते। क्योंकि उनके तीसरे वसूल के अनुसार, ऐसा करने में, खतरा होता जिसके तहत फँस जाने की अधिक सम्भावना रहती। और इसलिए हमेशा वह नयी परिस्थितियों से ही आगे का कोई रास्ता निकाला करते। पीछे मुड़कर उन्होंने कभी नहीं देखा। करीब दो घंटे पहले रंगीनराय जब उनके यहाँ आये थे तब उन्होंने बिखरी हुई शक्ति-सत्ता की कड़ियों को जोड़ने-गाँठने के मकसद से असंतुष्ट विधायकों की मीटिंग बुलाने का सुझाव तो दिया था। फिर भी आने वाले दो घंटों तक, उत्सुकदास का कोई आदमी नहीं आयेगा, उस समय उनको इस बात का कभी यकीन नहीं था। मीटिंग कर लेने का रंगीनराय को दिया गया उनका सुझाव उस समय एक शोशा छोड़ देने जैसी बात थी जिसे

अगर जरूरत पड़ ही जाये तो फिर पकड़कर उभारा जा सके। हालांकि ऐसा करते समय खुद उनको यह सब बेकार-सा ही लगा था। लेकिन एक तो रंगीनराय खुद चलकर आये थे, दूसरे उत्सुकदास के यहाँ से कोई आया नहीं था, तीसरे मौका अपने अन्तिम चरण पर था। अब सबकुछ उनके सामने साफ-साफ था। और अपने खुराकी दिमाग की वह बार-बार दाद दे रहे थे जिसके साथ ही साथ उत्सुकदास की कब्र खोदने को वह चल दिये।

लोबीराम अपने घर से जरा देर करके ही निकले थे। देर उन्होंने जान-बूझकर की थी। वह उत्सुकदास को आखिर तक मौका देना चाहते थे। वैसे भी उत्सुकदास के लिए उनका निकाला हुआ मसौदा बड़ा सीधा-साधा और सुलझा हुआ था। अपनी साफगोई पर वह खुश ही थे। लेकिन उनको हैरत इस बात पर हो रही थी, करीब दो घंटे पहले उड़ायी खबर उत्सुकदास जैसा खिलाडी कैसे पकड़ नहीं पाया। उन्होंने तो अपने कमरे में इस बीच आये हुए हर आदमी से हाल-खुलासा कर दिया था। कुछ उत्सुकदास के यहाँ के मिलने-मिलाने वाले भी थे जिन्हें और बढ़ा-चढ़ाकर डराया था। गुरुपदस्वामी के यहाँ होते हुए भी उनकी बातें दबा दी जायेंगी, उनका जी यह मानने को तैयार नहीं था। उनको मालूम था यह बातें तो हर जान लेने वाला, दौड़-दौड़कर उन्हें बतायेगा। फिर उनकी पूरी ताकत से कौन वाकिफ नहीं था। फिर भी जब काफी देर तक कोई नहीं आया और उधर रंगीनराय के यहाँ से गर्माती हुई खबरों ने उछाल मारनी शुरू कर दी, तो बड़े मजबूर होकर लोबीराम को कमरे से बाहर निकल आना पड़ा। उस समय उनकी हालत साँप-छछूंदर जैसी हो रही थी। जहाँ एक तरफ एक अन्तिम कोशिश वह और कर लेना चाहते थे, दूसरी तरफ उनको डर था रंगीनराय के यहाँ, मौके पर मौजूद न रहने से अगर कमजोरी पैदा हो गयी तो खेल बिगड़ जायेगा।

रंगीनराय की बैठक की ओर बढ़ने वाला एक-एक कदम, उनको मालूम था, आने वाली एक लम्बी लड़ाई की शुरुआत थी। फिर भी जब तक रंगीनराय के कमरे पर पहुँच वह बैठक के अन्दर घुसकर बैठ नहीं जाते तब तक उन्हें बराबर उत्सुकदास का प्रस्ताव मंजूर कर लेने का अधिकार था। इसमें उसूलों का भी बन्धन नहीं था। लेकिन प्रस्ताव कोई हो तब न? कोई ले आनेवाला नजर आये तब न? इसीलिए बार-बार लोबीराम

पीछे मुड़कर देख लेते। एक बार तो बैठक के दरवाजे तक आ जाने के बाद, वह वापस लौटकर अपने कमरे तक महज पूछ लेने भर को लौट आये थे। रास्ते मे फिर कई एक बार रुके खड़े रहे···और बार-बार उनकी निगाह मोटे चश्मे को भेदकर इधर-उधर ताक रही थी। और मन की शका दूर-दूर तक की हर होने वाली बात से, अपन असर भर के लिए, कुछ निकाल सकने की प्रक्रिया मे भिड़ी हुई थी।

फिर भी जब इन तमाम हरकतों के बावजूद, उत्सुकदास का कोई आदमी न आया, ना ही किसी आने वाले की खबर आयी और ना ही किसी प्रस्ताव का संकेत, और उधर दरोगा के भेजे हुए चमचे बार-बार उन्हें घेरने उगे, तो आखिर में हारकर वह रंगीनराय की बैठक में घुसकर बैठ गये थे। उसके बाद उनके दिमाग में उत्सुकदास का जब-जब ख्याल आया तो एक मक्खी मसल डालने जैसा ही ख्याल आया था। तब उनका दिमाग किसी और बडे खेल की तैयारी मे लगने लगा था। उनको मालूम था यहाँ आ जाने के बाद दुनिया की कोई ताकत पैसे का बड़े से बड़ा लालच, उनसे उत्सुकदास का समर्थन नही करवा सकता था। उनको यह भी मालूम था, अब खुद अपने पुरुषार्थ से, वह बहुत बडी ताकत, बहुत बडा पैसा पैदा करने वाले थे और यह तभी मुमकिन था जब उत्सुकदास खत्म हो जाये, नष्ट हो जाये।

लोबीराम, उत्सुकदास को मजा चखाने की कसम उठाकर निकले थे। बस दो सवाल थे जिनका जवाब उनको ढूंढ लेना था। पहले तो पार्टी मीटिंग मे खुल्लमखुल्ला विद्रोह करने के बाद उनको क्या करना होगा? आगे का खेल अगली चाल जाने बिना इतना खतरनाक कदम उठा लेना ठीक था। दूसरे अब वह जिद-भरी नफरत में सुलगते हुए बात को इतने आगे तक ले जाना चाहते थे, जहाँ से अगली चाल सुलभ हो जाने पर लौट आने का भी रास्ता बन्द हो जाये! उनका मन रह-रहकर उत्सुकदास को तोड देने के लिए बेताब था। हमेशा नशे की गहराइयों मे खोये रहने वाले लोबीराम आज नशे के ऊपर चढने लगे थे। उनके रोम-रोम में अंगारों-सी तपन उभरकर बार-बार अन्दर-बाहर पैर के अंगूठे से लेकर सिर के बालों तक क्रोध की लहरें जगा रही थी। हमेशा शान्त दिखने वाले लोबीराम आज बड़े बेचैन थे, बेताब थे। एक बार अपने को परख लेने के लिए उन्होंने अन्तिम क्षणों मे उत्सुकदास के यहाँ से कुछ पहुँच जाने

की सम्भावना को सोचा था लेकिन फिर क्रोध की गहराइयों ने झटक दिया था, इस पलायनवादी भटकाव को। अब वह किसी और खेल की भूमिका बनाने लगे थे।

रंगीनराय के यहाँ आने पर लोबीराम को बलदेव चौधरी की बाबत सबकुछ पता लग चुका था। पार्टी अध्यक्ष की पेशकश पर उन्होंने कोई उम्मीद तो लगायी नहीं, फिर भी इससे माहौल बनाने में आसानी हो जायेगी यह उनको भी पता था। ऊपर से मिनी मीटिंग का अन्दाज बड़ा जहरीला था। वहाँ हर आदमी किसी जबरदस्त ताकत के भरोसे पार्टी नेतृत्व का उल्लंघन करने को भिड़ा हुआ था। सिर पे कफन बाँधकर निकले हुए विधायकों के गोल, हाथ नचा-नचाकर मुँह से आग उगल रहे थे। जो भी मंत्री नहीं बनने वाले थे, जिनके-जिनके करीब के गाँव-जिला इलाके से किसी के मंत्रिमंडल में होने की उम्मीद तक नहीं थी या फिर जिनके *गाँव-जिले-इलाके से मंत्री तो कोई हो रहा था लेकिन जो उनकी पटरी* वाला नहीं था, जिससे उन लोगों की बात बनने वाली नहीं थी, वे सब-के-सब हल्ला बोले हुए थे। रंगीनराय की मिनी मीटिंग इन सबके लिए अपनी-अपनी भड़ास निकाल लेने का मौका था।

लोबीराम को अच्छा लग रहा था, न सिर्फ इसलिए *यह उनकी योजना* का प्रारूप था, इसलिए और यह सब उनका ही छोड़ा हुआ था। दो-ढाई घंटे में इतनी बड़ी साजिश खड़ी कर देना कोई हँसी-ठट्ठा तो था नहीं। *न तो रंगीनराय को और ना ही खुद उनको अपनी धतूरे की सनक* के इतनी गहरी पैठ जाने का अंदेशा था। यह था तो महज इत्तफाक लेकि सधी-सधायी चाल खेलने जैसा लग रहा था। यह सब तो ठीक चल रहा था। तजुर्बे के बिना पर लोबीराम को पता था अगर वह थोड़ा जोर और लगा दें तो पार्टी मीटिंग टल जायेगी। लेकिन उसके साथ तिजोरी भर लेने का मौका भी हाथ से निकलने वाला था। यही सोच-सोचकर उनको बार-बार गुस्सा आ रहा था। उत्मुकदास जैसा खिलाड़ी इतनी मामूली-सी बात नहीं पकड़ पायेगा और फिर पिछले दो घंटों से दारुलशफ़ा में जो गदर चला हुआ था उसकी खबर तक उनको नहीं मिलेगी, और खबर मिल जाने के बाद भी घुट्टी मार के चुप बैठे रहेंगे, लोबीराम की ताकत जानते हुए भी, बस यह बात किसी भी तरह उनके गले से उतरने वाली नहीं थी। इधर उनके दिमाग में धतूरे के

बीज, चरस का धुम्रां बार-बार उछाल मार रहा था, उधर आने वाले वक्त में कुछ बडा मिल पाने की चाह ने साँसों के संग, बार-बार गुद-गुदी मचा रखी थी। दूर कहीं, बडी दूर से उनको पैसो की खुशबू आने लगी थी। हालाँकि इसमें कोई खास बात नही थी। अक्सर उनको, जब भी मौके पर दाँव लगा रखा हो, ऐसा होता रहता। फिर भी आज मौका था, साथ में माहौल, ऊपर से रह-रह अपनी ताकत के भरोसे मौका हासिल कर पाने का अहसास भी था।

लोबीराम थे तो धुन के पक्के, जो चाहते हासिल कर लेते, पर इस बार दिक्कत कुछ ज्यादा ही होने लगी थी। इतना लम्बा खींचना उनको कभी अच्छा नही लगता, इसीलिए रंगीनराय के यहाँ उनको उलझन तो हो ही रही थी। लेकिन आज लग रहा था एक बार उनको अपनी ताकत का प्रदर्शन करना ही होगा। अब आखिरी मुकाम के करीब पहुँचने ही वाले थे। वैसे ही वहाँ लोग-बाग चिल्ला रहे थे, चीख रहे थे, रह-रहकर वजनी गालियों की ड्रेसिंग से उत्सुकदास, कृष्णवल्लभ और गुरुपद-स्वामी तक को गरिया रहे थे लेकिन पार्टी अध्यक्ष और बलदेव चौधरी के आने में अभी भी थोडी देर थी। जिसके बाद ही मिनी मीटिंग का असली स्वरूप सामने आना था।

इतनी देर की उठा-बैठक के बाद लोबीराम ने अपने दिलो-दिमाग में खुरेच रहे दोनों सवालो के हसीन जवाब तैयार कर लिये थे जिससे एक खास तरह का सुकून उनमे घर कर चुका था। अगली चाल के तौर में उन्होने पार्टी छोड़ देने की धमकी का इजाद कर लिया था। जहाँ तक अगली चाल के सुलभ हो जाने का सवाल था उनकी ताकत के भरोसे पार्टी में या विरोधी दलों मे कोई भी सरकार बना लेने के लिए खुलकर उनको सर-आँखो पर उठा लेगा। अगर बलदेव चौधरी सौदा नही करते तो और कोई करेगा और अगर पार्टी मे कोई भी उनसे सौदा करने वाला नही था तो ऐसी पार्टी मे अब खुद उनका ज्यादा दिनों तक टिके रहना बेमाने ही था।

भीड बढ़ती जा रही थी जिसकी वजह से रंगीनराय को लगा, तम्बू तनवा लिया गया होता तो ठीक रहता। लेकिन तब किसको पता था इत्ते आ जायेंगे। दरोगा द्विवेदी के साथ लोबीराम से जरा हटकर बैठे हुए वह अब आखिरी हिसाब लगाने मे लगे हुए थे।

"क्यों···रा···साब कहाँ खो गये ?" दरोगा ने आवाज लगायी।

पहले एक बार दरोगा की कही बात पर उसकी तरफ देखा उन्होंने जरूर फिर तीन वर्ष तक लगातार गाजर खाते रहने से चमकती आँखें अपनी पूरी बैठक मे गडमड बैठे हुए तमाम लोगों को देख लेने के लिए चक्कर लगाती रहीं। सब कुछ तौल चुकने के बाद उन्होंने जवाब दिया, "दरोगा ! सब ठीक है न ?" उनकी बात में संतोष था।

"ठीक तो है लेकिन अभी दो रेले और आने हैं।"

"वह कैसे ?"

"एक रेला तो पार्टी अध्यक्ष के साथ आयेगा···"

"जिसमें बलदेव चौधरी भी होवेंगे। और दूसरा ?"

"दूसरा पार्टी अध्यक्ष के आने के बाद आयेगा।" पुराने और सधे हुए खिलाडी की तरह दरोगा ने सामने के बरामदों की बालकनी पर लटकी हुई तमाम भीड़ को इशारा करते हुए कहा, "वो देख रहे हैं, ये सब बस ताक में हैं, दूर से झाँक रहे हैं। इन सबको बस पार्टी अध्यक्ष के ही आ जाने का इन्तजार है। फिर कुछ लोग अभी तौल रहे हैं, नाप रहे हैं।"

"अच्छा दरोगा, क्या पार्टी अध्यक्ष आयेंगे ?"

"क्यों भला, आयेंगे क्यों नहीं ?"

"वो सब नाटक बताया तो था लौटकर ?"

"वे आयेंगे राय साब, जरूर आयेंगे। फिर चौधरी भी तो घेर कै लावेंगे ! यहाँ उनको नेता बना लेने की बात जो हमने कह दी थी।"

"सो तो है लेकिन चौधरी पे कोई खास असर तो तब हुआ नहीं था। वो तो इशारों···इशारों हमने पार्टी मीटिंग मे, खुल्ला विद्रोह कर देने की बात कही, उसे वे पार्टी छोड़ देने जैसी समझे तो पुराना, सन् ४२ का वास्ता याद आया !"

"कुछ भी कहो पार्टी अध्यक्ष बड़े गुरु घंटाल हैं। अन्दर ही अन्दर वे उत्सुकदास से तपे बैठे हैं। बस पी० एम० का डर न हो तो दो मिनट मा उखाड़-पछाड़ करके चल दें।"

"फिर हमसे तो उनने इहाँ आने पर हल्ला न बोलने को कहा था।" रंगीनराय ने आतंक में कहा।

"कहा तो था, दरोगा को ही रास्ता सुझाना था, लेकिन आप किस-किसका मुँह रोकेंगे। सब आपके गुलाम तो हैं नहीं ?"

"फिर भी जिम्मेदारी तो अपनी है ही।"

"अरे, रा···साब कभी-कभी आपको का होय जात है। बिल्कुल गड़बड़ाय जात हौ।"

"काहे, भला, काहे?"

"अरे यह वक्त जिम्मेदारी निभाने का तो है नहीं। अपनी राजनीति तो देखो! पार्टी अध्यक्ष भला क्या खाकर बुरा मानेंगे? इधर उत्सुकदास के बन जाने पर जो उनकी पराजय होयेगी, उसका हिसाब तो करेंगे या नहीं?"

"लेकिन मैंने वादा कर लिया था।"

"मैंने तो नहीं किया? और भी तो हैं जिनने गंगाजली नहीं उठायी।"

"ओह!"

"लेकिन आप बस घुमाकर जरा जड़ देना! बाकी हम देख लेंगे।"

"मतलब?"

"मतलब सीधा-साधा है," दरोगा ने अपना बायाँ हाथ उठाकर वहाँ पर बैठे हुए विधायकों की ओर इशारा करते हुए कहा, "ये सब···ये लोग यहाँ क्या चाय पीने आये हैं···या फिर आपके दर्शन करने? ये सब जले-भुने हैं, वर्रा रहे हैं कैसे, यह तो आपने देखी होगी। इनको आग भड़काओ, इनको मजबूत करो!"

रंगीनराय की आँखों में उभरने को आता हुआ डर भागने लगा और चेहरे पर आती हुई कायरता भी दब चली। दरोगा ने एक झटके में उनकी तमाम शंकाओं को भगा दिया था और फिर साफ-साफ लफ्जों में दरोगा उनसे बोलने के लिए, भाषण देने के लिए कह रहा था। जाहिर था उनको भाषण तुरन्त शुरू कर देना होगा और जब तक पार्टी अध्यक्ष आयें वहाँ, विधायकों को ऐसी दिमागी हालत में डाल देना होगा जिसमें उनके आ जाने के बाद अगर संतुलित बात हो भी तो सबके सब [illegible] बता उठाकर भिड़ें, आवाजें कसें, हमला करें और आगे आने [illegible] खुद ही जोश के सैलाब में बहा ले जायें। इसमें एक फायदा [illegible] अध्यक्ष को दिया हुआ उनका वादा टूटेगा नहीं और [illegible] फिर रंगीनराय कोई ऐसे वैसे तो हैं नहीं जो उनकी [illegible] अभी का अभी खत्म हो जाये। वह तो बढ़ेगा, बढ़कर [illegible]

बड़ी खींचतान के बाद उतर सकेगा।

दरोगा ने इस बीच आस-पास बैठे लोगों से इशारों में सब सम
दिया था और जब रंगीनराय ने शुरू होने के लिए देखा तो उनको
सीने तक ले जाकर फिर आगे फैलाकर सिगनल दिया और तभी उठ
खड़े होते हुए रायसाब का हाथ पकड़कर दरोगा ने धीरे-से 'लोबीर
का नाम लिया, जिसका मतलब समझते हुए रंगीनराय ने सिर हिला
हुंकारी भर दी।

अपने विशालकाय शरीर पर कुरते की सलवटें ठीक करते
रंगीनराय कुछ पल भिनभिनाती हुई आवाजों के शान्त हो जाने
इन्तजार करते रहे और तब भी जो लोग चुप नहीं हुए तो दो-तीन बज
तालियाँ बजाकर उन्होंने सबका ध्यान अपनी ओर खींच लिया। फिर
आवाज में उन्होंने अपना भाषण शुरू कर दिया :

"आदरणीय लोबीरामजी और दोस्तो, आज के दिन आप सबने य
आने में न सिर्फ मेरे ऊपर उपकार किया है, अपनी पार्टी, प्रदेश और दे
के उन आदर्शों, उन मूल्यों को मजबूत किया है, जिनकी खातिर हमने
तमाम सालों संघर्ष किया। यह मूल्य, यह आदर्श कोई हमने तो इज
किये नहीं, यह तो पचास सालों की एक लम्बी लड़ाई से पैदा हुए हैं। उ
लड़ाई से पैदा हुए जिसके लिए कितने ही शहीदों ने सर कटा दिया औ
उन अनगिनत कुर्बानियों का न तो कोई हिसाब है, जो न गिनी जा सकें
और जिनको ना ही कोई भुला सकेगा। हम लोग भी सर पै कफ़न बाँध
कर निकले थे। सनसनाती हुई गोलियों की बौछार के बीच, हथेली प
जान लेकर जब हमने सड़कों की धूल फाँकी, जेल की दीवारों के अन्द
महीनों, सालों तक सड़ते रहे, तब हमारी पलकों में बसा एक ही सपन
था, वह सपना था, दोस्तो, आजादी का सपना! उस आजादी क
सपना जिसे छू-भर पाने के लिए हमने तरस-तरसकर दिन गुजारे, तड़प
तड़पकर रातें काटीं। गांधीजी की आवाज पर हजारों, लाखों लोगों ने
पढ़ाई-लिखाई, बीवी-बच्चों को त्यागकर, माँ-बाप, भाई-बहन के प्यार से
भागकर अपने देश को सबकुछ दे डाला'''सबकुछ! उस समय दोस्तो
हमने, लोबीरामजी ने, अपने दरोगा द्विवेदी या आप सबने कुछ पा लेने का
हिसाब करने को कौन कहे, ख्यालों तक में सोचा तक नहीं था। हमारा
बलिदान, हमारा त्याग एक पूजा थी, एक इबादत थी, हम सब अपने स्वर्

को मिल-बाँटकर धरती पर उतार लाने के लिए जी-जान से जुटे थे ! उस आजादी की लड़ाई में हिमालय की विशाल चोटियों से लेकर कन्याकुमारी तक, गंगा की उत्ताल तरंगों की तरह जोश का सैलाब आया था जिसमें बह जाने वाले तो शहीद हो गये, जो बच गये उन्होंने अपने मुल्क की सेवा में अपना जीवन-दान कर दिया और ऐसे लोगों को भी शहीद ही कहना होगा क्योंकि उन्होंने अपने जीवन की तमाम खुशियाँ आने वाले राष्ट्रीय-यज्ञ में होम कर डालीं । दोस्तो ! उस वक्त तो हमने कभी इस बात की कल्पना तक नहीं की थी कि आजादी के बाद ऐसा भी होगा जब हमारी आत्मा हमसे अपनी पवित्रता का हिसाब माँगने लगेगी । हमें अपने मूल्यों, अपने आदर्शों को बचाने के लिए संघर्ष करना होगा ! क्यों, आखिर क्यों ? मैं आपसे पूछता हूँ आखिर क्यों ? शायद इसलिए कि वे दरिन्दे जो आजादी के समय से ही धन्धा कर रहे थे, हाँ मैं चीख-चीखकर कहूँगा उस समय भी वे धन्धा ही कर रहे थे, वे जलूस में रहते तो लाठी बचाकर, आंदोलन करते तो गोलियों की बौछार से भागकर, वे जेल जाते तो मजबूरी में या फिर बाहर की मुसीबतों से बचने के लिए, वे लोग, मैं तो कहता हूँ आजादी की लड़ाई के सिपाही नहीं थे...कभी नहीं थे, वे तो उस समय भी धन्धेबाज, बड़े फंदेबाज थे और आज भी हैं और कल भी रहेंगे !"

पुराने लोग समझ गये इशारा उत्सुकदास की तरफ था । बड़े जोर की तालियाँ बजीं, कुछ लोग शर्म करो...शर्म करो...कहने लगे लेकिन उनको रंगीनराय ने रोका और आगे अपनी बात जारी रखी—

"तो मैं कह रहा था, इन धन्धेबाजों ने आजादी के बाद सत्ता हथियाने की पूरी कोशिश की लेकिन पं० जवाहरलाल नेहरू और पहली पंक्ति के अन्य नेताओं की वजह से ये कामयाब न हो सके । फिर भी यह खामोश नहीं बैठे, ये चुप नहीं रहे, देश के, प्रदेश के पूँजीपतियों, कालाबाजारियों के साथ मिलकर नयी चालें चलते रहे, नयी तरकीबों का इजाद करते रहे । ये चन्द लोग, यह मुट्ठी-भर लोग, पूरे देश की अखंड पवित्रता को अपनी काली करतूतों से बेबुनियाद बना देना चाहते थे । इनकी कोशिशें तब भी चल रही थीं, आज भी चल रही हैं और शायद हमेशा...हमेशा चलती रहेंगी । इनका उद्देश्य बस सिर्फ मुल्क की जड़ें खोखली करना है, यह देश के दुश्मन हैं, यह गद्दार हैं। इन्होंने पार्टी को बदनाम किया है । इनके

कितने किस्से हैं जिनको सुनकर आपके रोंगटे खड़े हो जायेंगे, ये खतरनाक, जहरीले साँप की तरह अपना शिकजा सत्ता के ऊपर कड़ा करते जाते है। इनका···इन पार्टी के, देश के दुश्मनों का कोई नाम नही लेकिन हमेशा की तरह यह सत्ता से चिपके हुए···राजगद्दी हथियाना चाहते हैं। राजगद्दी हथियाने के पीछे कोई सेवा···किसी प्रकार की जनसेवा की भावना नही, ये तो अपने निहित स्वार्थों के लिए चक्कर लगाते रहते हैं।

"दोस्तो ! आज एक बार फिर संकट आया है। तिलक, गोखले, गांधी और नेहरू की पार्टी पर संकट आया है। राम, कृष्ण, भरत और बुद्ध के देश पर संकट आया है। मुझे दिखायी दे रहा है···दूर से आता हुआ एक काला अंधड जो बस एक झटके मे हमारे आदर्शों, हमारे मूल्यों, हमारे इतिहास के रंगीन धरातल को तोड़ देगा, सबकी आशाओं पर, विश्वास पर पानी फेर देगा, मिटा देगा ! अब हमारे सामने एक विनाश की ओर जाने वाला रास्ता है और दूसरा रास्ता आदर्शों और मूल्यों का रास्ता है जिनके लिए हम पार्टी मे है, जिनके लिए पार्टी है, सरकार है। मैं आपको चुनौती देता हूँ···हाँ अपनी ही किसी निहित कमजोरी से अगर हमको, आपको, पार्टी को आज अन्याय, अनाचार सत्ता के दुर्विचारों के सामने झुकना पड गया तो आने वाला समय, आने वाली पीढी हमे कभी माफ करने वाली नही। इतिहास के पन्नों में इन सत्ता के दुराचारियो का नाम तो काले धब्बो में लिखा ही जायेगा लेकिन अपने नाम, अपनी असलियत पर भी अच्छी तरह कालिख पुत जायेगी।"

इस पर दारोगा ने बडे जोर से तालियाँ बजवा दीं। तालियों की गड़गड़ाहट के साथ वे अपने धाराप्रवाह भाषण का संजीदा असर तौलने लगे। जाहिराना तौर पर असर अच्छा था। दरोगा ने भी आँख के इशारे से संतोष प्रकट किया। तालियों की आवाज धीमी पड़ने लगी थी जिसके साथ रंगीनराय ने फैसला किया, लोबीराम को फँसाने का वक्त आ गया था। लोबीराम की कमजोरियों से रंगीनराय अच्छी तरह वाकिफ थे। जरा भी छुट्टा छोड़ देने से लोबीराम के भटक जाने का अंदेशा था जिसकी काट के लिए दरोगा ने अपनी योजना पहले ही उनको बता रखी थी।

"···तो दोस्तो मेरे इस अहसास में शामिल हैं प्रदेश के जाने-माने नेता और आजादी की लड़ाई के पुराने नेता लोबीरामजी। मैं तो यहाँ तक कहूँगा आज का यह सारा कार्यक्रम उन्ही के आशीर्वाद और प्रेरणा

का परिणाम है और इसलिए क्योंकि लोबीरामजी हम सबसे बड़े हैं, हमारे पूजनीय नेता हैं, इसलिए मैं इस बात का प्रस्ताव करता हूँ, आज की इस मीटिंग की अध्यक्षता लोबीरामजी ही करें।"

रंगीनराय की इस घोषणा के साथ ही एक बार फिर तालियाँ बजीं। लेकिन इस बार की तालियों में लोबीराम का दिल डूबने लगा। इतनी देर की खोजबीन के बाद उन्होंने अपनी जो योजना बनायी थी उसके अनुसार उनको यहाँ पूरी तरह किसी खूँटे से बँधना ही नहीं था। मीटिंग की सदारत का मतलब पूरी तरह अपने को रंगीनराय के हाथों में सौंप देना था। उसके साथ पार्टी मीटिंग में खुल्लमखुल्ला विद्रोह कर लेने के बाद इनसे ही जुड़े रहना होगा। शायद अब इसके बाद वह कहीं आ-जा तक नहीं सकेंगे। सीधे सबके सब यहाँ से उठकर पार्टी मीटिंग में जायेंगे जहाँ उनके कंधे पर से उत्सुकदास पर तीर चलाये जायेंगे। वह घिर जायेंगे, फँस जायेंगे। बाहर निकलने का ना तो कोई रास्ता होगा और ना ही निकल सकना मुमकिन होगा। उनके हाथ-पाँव फूलने लग गये। रास्ता तो खुला रखना ही होगा···लोबीराम ने सोचा। हाँ, अगर पार्टी मीटिंग हो जाने तक कोई और विरोधी दल का आफर नहीं आया तो सीधे-सीधे इनके संग मिलकर विद्रोह करने के अलावा कोई रास्ता ही नहीं होगा। फिर भी तब तक उनको रंगीनराय से बचे रहना होगा। लेकिन अब रंगीनराय के उनका नाम बढ़ा देने और दरोगा को उठते हुए देखकर उनके सामने अँधेरा छा जाने लगा। उनको लगा, आज तो अपने को बचा लेना मुमकिन नहीं होने वाला था।

लोबीराम हमेशा से मुकद्दर के धनी थे और ऐसी मुसीबत आ जाने पर एक बार फिर तकदीर ने उनका साथ दिया। इससे पहले कि उठकर खड़े हो गये दरोगा द्विवेदी रंगीनराय के प्रस्ताव का अनुमोदन करते, बैठक के बाहरी कोने से लोग चिल्लाने लगे, "पार्टी अध्यक्ष आ गये", "बलदेव चौधरी आ गये"। जिसके साथ ही लोग उठकर बाहर की ओर पार्टी अध्यक्ष का स्वागत कर लेने के लिए निकलने लगे। कुछ ओर ने नारेबाजी शुरू कर दी।

सन् '४२ में विमलादेवी पन्द्रह-सोलह के बीच रही होंगी। पुनीः

मेहरबानी या माहौल का तकाजा था, वह आजादी की लड़ाई मे कमर कसके कूद पड़ी। पहले जुलूस की तमाम यादें उनको कभी भूली नही। उस वक्त जुलूस मे तो कम, चुन्नीदेवी को कुछ कर दिखाने की जिद ज्यादा थी। चुन्नीदेवी असल में आजादी की राजनीति में पहले से ही थी। उनके कितने चाहने वाले थे, सब लोग उनकी कितनी खातिर करते··· यह देखकर विमलादेवी को बड़ा रश्क होता। चुन्नीदेवी के चारों ओर सबेरे से गयी-रात तक मँडराते हुए हज्जूम को विमलादेवी के नये बेदाग दिमाग ने, कच्ची उम्र मे ऐसा आत्मसात किया कि बस हमेशा···हमेशा के लिए कुछ ऐसा ही पा लेने की तमन्ना घर कर गयी।

अपने पहले जुलूस मे ही विमलादेवी ने अच्छे-खासे जौहर दिखाये थे। पर्चे फेंके, नारे लगाये, पुलिस के घेरे को तोडकर अन्दर घुस गयी। कइयो का मन हुआ था, उठा ले जायें लेकिन मुमकिन नही हुआ तो उनको जेल में डाल दिया गया। वहाँ जेल में भी उन्होने बड़े ऊधम मचाये। उनकी वचकानी बातें सभी को अच्छी लगा करतीं। जेल से बाहर आने पर धीरे-धीरे चुन्नीदेवी के गोल में फिर वह फँसी तो लोगों ने हाथ फेरना शुरू कर दिया। एक-दो बार तो चुन्नीदेवी से शिकायत भी की, पर उनके सब चला करता है, कह देने पर, उन्होंने हल्ला करना भी छोड़ दिया।

लेकिन विमलादेवी को जवानी का अहसास बड़े दिनों बाद हुआ। सबकुछ होने पर भी किसी ने बदन के खुफिया रास्तो का अहसास तो कराया नही था और जिस उम्र मे जवानी आये, जिस उम्र मे गुलाबी डोरों से पलकों में रंगीनी जागे, जब दिल और दिमाग मे आदमियत की बू बार-बार नस-नस छेड़ दे···गुदगुदी करे, गदर मचाए, वो सारी उम्र तो उन्होने जुलूस, जेल और आन्दोलन में गुजार डाली थी। उन दिनों तो एक-न-एक मुसण्डों के बीच घिरे रहने पर, उनके इधर-उधर हाथ लगा देने पर भी, सुरसुरी तक नही हुआ करती थी।

जब तक विमलादेवी को जवानी की रंगीनियों में जाने का मौका मिला, उम्र ढलने लगी थी। तब तक एक तरह से वह कुँआरी थी। फिर शादी की तमन्ना छोड़ देने के बाद भी वह अपने कौमार्य को किसी ऐसे मर्द से जोड़ना चाहती थी जो आने वाले वक्त में किसी-न-किसी तरह उनको सहारा देता रहे। आजादी की लड़ाई और बड़ी डिग्रियों के बाद यही तो उनके पास बचा था जिसकी बिना पर वह उन दिनों कोई

बड़ा सौदा करना चाहती थी।

आखिर में विमलादेवी ने यह सौदा उत्सुकदास के साथ कर लिया था। वैसे तो जब उन्होंने सौदा किया था, उत्सुकदास की कोई खास हस्ती नहीं थी लेकिन आज उनको अपनी पसंद पर नाज हो रहा था। तब से लेकर आज तक दैहिक सम्बन्ध भले ही सिर्फ उत्सुकदास से न रहा लेकिन हमेशा-हमेशा वह उनके ही इर्द-गिर्द घूमती रही। काफी दिनों तक विमलादेवी को यह भ्रम रहा कि उत्सुकदास सिर्फ उनके हैं। पर जी भर जाने के बाद उत्सुकदास ने छिपना-छिपाना छोड़ दिया था जिससे उनकी इधर-उधर मुँह डालने की आदतों से वह वाकिफ हो चुकी थी।

और उन्हीं दिनों से उनको सौतिया डाह सताने लगी थी। ऐसी-वैसी औरतों से तो विमलादेवी ने भी खतरा महसूस किया नहीं। वहाँ से तो घूमकर उत्सुकदास उनके पास लौट ही आते। लेकिन काफी दिनों बाद जब उनको प्रतिभा की असलियत पता लगी, बड़ी देर हो चुकी थी। वह एक तरह से उत्सुकदास को खो चुकी थी। लेकिन तब तक विमला देवी खुद भी चलने लगी थी और पार्टी में उन्होंने साख जमा ली थी। इस सबके बाद भी उन्होंने उत्सुकदास का पीछा कभी नहीं छोड़ा। जब-तब उन्हें फिर से हथियाने की कोशिश में लगी रहती। हालांकि उत्सुकदास के एक इशारे, एक हुक्म पर, वह सबकुछ कर डालने को हमेशा तैयार रहती, इतने वर्षों के बाद भी उनके अन्दर सौतिया डाह फन उठाये हुए थी।

दिल्ली की राजनीति और मंत्रिमंडल की गतिविधियो मे इन दिनों, विमलादेवी, बराबर एक बार पहले की तरह, उत्सुकदास के साथ रही। पिछले वक्त का क्षोभ, अपमान, यहाँ तक अपने सौतिया डाह को भूलकर लगे मन से उन्होंने सेवा की। एक बार छोड़ी हुई को अपना लिए जाने जैसा गौरव उनको महसूस होने लगा। और यह सब हो रहा था, जब उत्सुकदास मुख्यमंत्री होने जा रहे थे। उनको लग रहा था, मुख्य-मंत्री बन जाने तक सिर्फ वह ही रहेंगी। और तब तक उनकी पकड़ मजबूत हो चुकेगी। लेकिन जरा देर के लिए पार्टी अध्यक्ष के यहाँ तक हो आने में ही सबकुछ बिगड़ गया। लौटकर उन्होने देखा उनका संसार उजड़ चुका था। प्रतिभा, उत्सुकदास के बेडरूम में मौजूद थी।

आसमान तक की उड़ानें भरती हुईं, विमलादेवी एक धमाके के साथ जमीन पर आ गिरी। अपनी इस पराजय से उनका जोड़-जोड़ दुखने लगा था। और वह उत्सुकदास के बगीचे में अकेले बैठकर अपनी बरबादी का तमाशा देख रही थी।

उत्सुकदास के कमरे में पाँच मिनट के अन्तर पर बार-बार टेलीफोन की घंटी बजती रही लेकिन उन्होने तुरन्त फोन उठाया नही था। वैसे ड्रेसिंग टेबल के सामने दाढ़ी बनाते समय वह अपनी प्रतिभा से जुड़ी हुई पुरानी यादो में पूरी तरह जब खो गये थे और कई बार टेलीफोन की घंटी सुन लेने के बाद उठे तब सपनो की रंगीनियों से निकलकर वही कमरे में सामने सोफे पर बेटे राहुल के साथ प्रतिभा खुद-ब-खुद बैठी हुई नजर आ गयी।

वह लमहा एक बार तो उत्सुकदास की रग-रग को झन्ना गया। सारा वैभव, आने वाले वक्त की शानदार ऊँचाइयो तक अकेले-अकेले पहुँचने में उनको कुछ खास मजा आ नही रहा था। बस एक मशीनी रफ्तार में पुर्जों के जोड-घटाव से वह बढ़ते जा रहे थे। यूँ तो इतने तमाम दिनों की लम्बी लडाई के बाद मनचाही मिल जाने की संतुष्टि थी फिर भी सबकुछ बेगाना-सा, अलग-अलग लग रहा था उनको। और एक ऊब, एक थकान उनकी शिराओं को घेरने लग गयी। जैसे धर्मयुद्ध में उनसे बहुत कुछ छीना जा चुका था। जिसके ऊपर चेहरे पर फेनिल साबुन की तह से उठकर प्रतिभा और राहुल ने अलग उनकी दुखती रग छेड़ रखी थी। लेकिन पल-भर में, बस ड्रेसिंग टेबल से घूम लेने तक में सबकुछ बदल गया था। और तभी राहुल को प्यार कर पाने के लिए वह आगे बढ़े तो उनके होंठ प्रतिभा से जा टकराये थे।

यह सबकुछ मिल जाने जैसी बात थी। उपलब्धियो का स्वर्ग उत्सुकदास के सामने था और उसे भोगने के लिए उनके पास वक्त नही था। ऊपर से बार-बार टेलीफोन की घंटी तंग कर रही थी। बस टेली-फोन का चोंगा उठाकर अलग रख देने के लिए उन्होंने हाथ लगाया था। पर रख देने से पहले कान तक ले जाने में उनको गृहमंत्री का नाम सुन गया जिसके बाद बिना बात किये फोन रख देना मुमकिन नही था।

गुरुपदस्वामी ने फोन पर बलराम शास्त्री का जिक्र कर दिया था, पर अन्दर की बात तो बतायी नही थी। ऐसा नहीं था उत्सुकदास ने उनकी

बात को कोई बड़ा वजन दिया लेकिन गृहमंत्री को किसी तरह टाल देना भी तो सम्भव नहीं था। इसके बाद बाकी बातों को बाद के वक्त पर छोड़कर, बस एक बार राहुल को कलेजे से लगाकर उत्सुकदास ने उन लोगों को बगल के कमरे में जाकर शपथ समारोह के लिए तैयार हो जाने के लिए भेज दिया। फिर जल्दी-जल्दी एक बार ड्रेसिंग टेबल के सामने लौटकर पानी के छींटों से सूख गये साबुन को जरा गीला करके उन्होंने सेफ्टीरेजर से खींच डाला और फिर मुँह धोकर नये धुले हुए कपड़े पहन लेने में जुट गये।

वैसे तो बलराम शास्त्री को रोक-टोक करने वाला कोई नहीं था, लेकिन उत्सुकदास के बेडरूम में, आज के दिन कहलाकर ही जाना उन्होंने ठीक समझा। उत्सुकदास खुद भी जरा जल्दी में थे। बिन बुलाये मेहमान की तरह बलराम शास्त्री का आना कोई अच्छा तो लगा नहीं था। वह तो किसी तरह भी उनको निपटाकर पार्टी मीटिंग में जाने के पहले प्रतिभा और राहुल से कुछ देर के लिए मिल लेना चाहते थे। ताजे-नये कपड़े तो वह पहिन ही चुके थे। बस फौरन निपट लेने के लिए उन्होंने बलराम शास्त्री को बुला ही लिया।

उत्सुकदास की पुरानी आदत थी, हर जगह पहला हमला उनका होता। वैसे तो यहाँ हमले जैसी कोई बात नहीं थी, बलराम शास्त्री गुट के आदमी थे भले ही वह गुरुपदस्वामी के कुछ ज्यादा नजदीक रहे हों, थे तो अपने ही गुट के, उस गुरुपदस्वामी गुट के, जो खुद अपना अस्तित्व बचा लेने के लिए जी-जान से जुटा था।

"मुझे मेरे दोस्तों से बचाओ! हाय···हाय, बचाओ!" बलराम के कमरे में घुस आने पर उत्सुकदास चिल्लाये।

"वाह गुरुजी, अब इसके का माने!" बलराम ने इधर काफी दिनों बाद 'जी' लफ्ज जोड़ा था जिसकी काफी अच्छी प्रतिक्रिया होने लगी थी।

"तुम जानते हो बलराम, मैं अपने दुश्मनों को कभी बख्शता नहीं। सबका टाइमटेबल है! फिर इनसे मैं डरता भी नहीं! इनको तो जानते हैं सब।"

"फिर?"

"फिर? इधर कुछ दिनों से मुझे खासकर दोस्तों से डर लगने लगा था।"

"दोस्तों से ?"

"हां ! बस देखो अब तुम ही दोस्त हो ना !"

"क्यों ? भला क्यों नहीं ?"

"क्या पड़ी थी, आज के दिन तुमको भला वहां जाकर भड़काने की ?"

"भडकाने की ?"

"हां कह रहे थे ना ! जब बहुत थोडी-सी देर हैगी, कहने लगे खतरा होने वाला है ! ···वह भी लोबीराम जैसे चूतिए से !"

"चूतिए अन्धे होते, चूतिए बहरे होते लेकिन चूतिए गधे नहीं होते। सो तो अब आप भी मानेंगे गुरुजी, लोबीराम गधा नहीं है, वह हरामी है ! हरामी ! !" बलराम ने इतनी जल्दी बात साफ की थी, उत्सुकदास गच्चा खा गये। लेकिन उसकी निहायत साफगोई से बात का हल्कापन फौरन भाग गया।

"हां, बलराम कितने दिन बाद आज अक्ल की बात की है तुमने ! लोबीराम न सिर्फ हरामी है, दोगला भी है ! साले का इतिहास तो नहीं बताना होगा।"

"ना···ना वह तो इतिहास बनाने में लगा हुआ है !"

"अच्छा तो बोलो, अब करना क्या होगा ? क्या गृहमंत्री के हाथ कांप गये ?"

"उनको दोष काहे देते हैं ? पार्टी अध्यक्ष भी तो हैं !"

"वो, वो तो गोबर के चोत हैं !"

"हां, हां लोबीराम चूतिया है, पार्टी अध्यक्ष गोबर के चोत हैं और रंगीनराय, दरोगा द्विवेदी की हैसियत भी क्या है ?"

"सो तो है, उनकी हैसियत क्या है ?" उत्सुकदास ने कसके उछाला।

"और चौधरी···बलदेव चौधरी···?"

"अरे क्या वे भी···?"

बलराम ने धीरे-से सिर हिला दिया।

"ओह तो बलदेव चौधरी···रंगीनराय···पार्टी अध्यक्ष···द···रो···गा इनके साथ लोबीराम !" उत्सुकदास का दिमाग बड़ी तेजी से हिसाब लगा रहा था, "तुम ठीक कहते हो बलराम, ये सब चोर हैं। बला की मुसीबत और इस वक्त, हे राम !"

"अब और क्या कहूँ···गृहमंत्री को खुद पता है दिल्ली से अभी तक ग्रीनसिगनल नही आया।"

"मतलब ?"

"राजपाल के कहने पर उन्होंने मेरे सामने पी० एम० हाउस फोन किया था।"

"पी० एम० हाउस ?"

"पी० एम० ने बात नहीं की और कहला दिया, राष्ट्रपति शासन समाप्त होने के घोषणा पत्र पर दस्तखत पार्टी मीटिंग के बाद होंगे।"

"हूँ···इतनी बड़ी साजिश ? और मुझे पता तक नहीं ?"

"और मैं आया जो !"

"लेकिन हमने जो छोड़ रखे थे !"

"वे जश्न मनाते होंगे !"

"स्साले···हरामखोर ! बस पाल रखे हैं। फिर एक बात बताओ ये पी० एम० हाउस में क्या गड़बड़···"

"नही···नहीं, गड़बड़ जैसा कुछ खास नहीं है। लेकिन तमाम संसद सदस्यों का सुना था दबाव बढ़ रहा है ताँबाकांड में···"

"अरे ताँबाकांड ! वो सब तो पता है। उसे पकने में समय लगेगा। फिर भी गृहमंत्री ने कहा और तुम भी कहते हो तो घपला सेट करना होगा। अब जल्दी बोलो, करना क्या है।"

"लोबीराम को ठीक करना होगा।"

"लेकिन और लोग···पार्टी अध्यक्ष···!"

"यह सत्ता की लड़ाई है, ताकत से फैसला होगा ! अगर हम लोबीराम को तोड़ लें तो खतरा टल जायेगा।"

"फिर करना क्या होगा, है कोई योजना ?"

"योजना ? योजना या बातचीत से काम चलने वाला नही। इतने थोड़े वक्त में बस सीधा हमला करना होगा।"

"कैसे···भला कैसे !" उत्सुकदास ने चौकन्ने होकर पूछा।

"पैसे देने होंगे।"

"पैसे ?···लोबीराम को ?"

"हाँ···" बलराम ने कुछ जोर देकर कहा।

एक लम्बी साँस भरकर उत्सुकदास ने सहमति में सिर हिलाया और

हथेली खुजलाते हुए बोले, "ठीक···बिल्कुल ठीक ! और सब तो देख-सुन लिया होगा।"

"अब और क्या देखना ! सबकुछ पार्टी मीटिंग से पहले करना होगा।" मामले को साफ-साफ पेश करने के लहजे मे बलराम ने बात आगे बढ़ायी, "समस्या पहली तो लोबीराम को पकड़ने की होगी, ससुरा ऐसे वैसे हाथ भी तो नही धरने देगा।"

"और दूसरी ?"

"पैसे जमा करने की। और जो भी जाये पैसे सामने रखकर तब बात करे।"

"वो सब हो जायेगा।"

"जी हाँ ! इत्ता आसान तो है नहीं। मालूम है वो होगा कहाँ ?"

"कहाँ भला ?"

"रगीनराय की मिनी मीटिंग मे।"

"मिनी मीटिंग।" उत्सुकदास ने मुँह चिढाया, "या रंडी का नाच !"

बलराम ने कुछ नही कहा, वह खामोशी से उत्सुकदास को देखते रहे।

"बस जरा देर के लिए उसको बाहर बुला लेना। फिर एक झलक नोट की···लेकिन नोट आयेंगे कहाँ से ! कोई है बाहर ?"

"वो तो आप जानो ! फिर मेरे जाने से कुछ होने वाला नही।"

"क्यों भला ?"

"जानते नही आप ? वो चिढता है हम लोगों से।"

"ओह ! तो फिर पैसे कितने देने होंगे ?"

"इसका भी तो तजुर्बा आपको ही ज्यादा होगा।"

"धत तेरे की ! यह सब अभी होना था। तो फिर ऐसा करें, कित्ते है उसके पास ? तीस-चालिस ?"

"तीस-चालिस ! नही गुरुजी साठ से कम क्या होंगे।"

"साठ ! बाप रे बाप ! ! तो क्या रेट है आजकल ?" सवाल तो उत्सुकदास ने खुद पूछा और खुद ही जवाब देने लगे, "पाँच तो राज्य के चुनाव में दिये गये थे, इसमें मंत्रिमंडल न मिलने के लिए एक-दो और चाहेगा साला !"

"तो साठ पर सात लगायें और बीस पर बीस और फिर दो बीस और ! इत्ते हजार होवेंगे।"

"माने चार सौ बीस," कहकर उत्सुकदास ने ठहाका जमाया, "चलो अस्सी ढेरी के मिलाकर पूरे पाँच लाख बनते हैं। वैसे तो साले को दो में लटका देता लेकिन इस सबका वक्त कहाँ है।"

"बस जल्दी करो गुरुजी !"

इतने बीच में राजनीति के हर दाँव में माहिर उत्सुकदास ने हालातों को अच्छी तरह तौल लिया था, "और हाँ वो लोबीराम को बाहर तक बुलाने के लिए···" एक पल रुककर उत्सुकदास ने कहा, "विमलादेवी जायेंगी लेकिन पैसे तुम्हारे पास होंगे।"

"क्यों पैसे भी विमला ही दें ! मुझसे तो लेगा नहीं !"

"फिर भी वहाँ आप भी रहेंगे !"

विमलादेवी बगीचे में बैठे-बैठे उकता गयी थी जब उत्सुकदास का बुलावा आया। पहले तो उनको ताज्जुब ही हुआ था आज अब सौतन प्रतिभा के आ जाने पर उनको बुलाया ही कैसे गया, लेकिन फिर उनको अपनी अहमियत का, अपने राजनैतिक महत्त्व का ख्याल आया तो यकीन हो चला, उनके बिना मुख्यमंत्री का काम चलने वाला नहीं था। फिर भी एहतियातन उन्होंने कुछ नखरे दिखाये थे। नखरे दिखा लेने पर भी उनको बुला ले जाने के लिए आया आदमी जब नहीं टला तो उन्होंने समझ लिया था जरूरतमन्द उत्सुकदास ने बुलाया है।

उत्सुकदास की जरूरत विमलादेवी की अपनी जरूरत थी। उत्सुकदास के लिए वह कुछ कर बैठना चाहती। उनको लग रहा था जरूर उनकी अपनी ही तपस्या में कोई कमी रह गयी होगी, तभी पिछले दिनों प्रतिभा ने उनकी जगह छीन रखी थी। हालाँकि विमलादेवी जानती थीं, प्रतिभा को नष्ट करने में चुटकी भर की देर लगानी थी। बस कालीशंकर को भड़का देने से काम हो जाना था। फिर भी अभी तक उनको कालीशंकर पर पूरा इतमिनान नहीं था। और फिर अगर कालीशंकर ने उनकी बात सच न मानकर प्रतिभा को बाँध नहीं लिया और ऊपर से उत्सुकदास को उनकी चाल का पता चल गया, तो शायद वह कहीं···कहीं की नहीं रहने वाली थी। इसीलिए बगीचे में बैठकर वह कोई ऐसा मौका पा लेने के लिए बेताब होकर तड़प रही थी, जिसके आने पर वह चुपचाप

उत्सुकदास की बगल छीनकर वापस ले लें। इसके लिए वह कुछ भी कर गुजरने को तैयार थी। वह तो उत्सुकदास की बगल पा लेने के लिए अपनी जान की बाजी भी लगा देने को हर तरह से तैयार थी।

कोई सवाल ही नहीं था, इन्कार का! उत्सुकदास ने बुलाया था। और इस वक्त जब उनके बगल में प्रतिभा मौजूद थी। जाहिर था, उनकी अपनी उपयोगिता थी, अपना एक महत्त्व था। एक पल को वह खुद को प्रतिभा से ऊँचा…बहुत ऊँचा समझने लगीं। क्योंकि प्रतिभा के पास आखिर था क्या? जो भी प्रतिभा के पास था वह उसके पास अगर उससे अच्छा नहीं…तो उससे कम अच्छा भी नहीं था। ऊपर से अब तक उनका एक राजनैतिक महत्त्व भी तो हो चुका था जिसकी कोर-कसर भी प्रतिभा सात जन्म तक छू लेने वाली नहीं थी। इसलिए बस थोड़ा-सा ही नखरा दिखा लेने पर वह खरामा-खरामा उत्सुकदास के कमरे की ओर चलीं। उस समय उनका मन बस एक ही दुआ माँग रहा था, एक ही तमन्ना थी उनके मन में, कोई…कोई भी उत्सुकदास के कमरे में ना हो जिससे एक बार तो अपने महबूब को छू लें।

"पार्टी अध्यक्ष की जय", "समाजवाद की जय", "इन्कलाब जिन्दाबाद", "बलदेव चौधरी जिन्दाबाद", "समाजवाद जिन्दाबाद" के दमदार नारों से दारुलशफ़ा का कोना-कोना गूँज उठा था। पार्टी अध्यक्ष के इधर आते ही दरोगा के पूर्वनिर्धारित षड्यन्त्र के तहत 'ए', 'बी' ब्लाक के दो-दो किनारों से तीन-तीन विधायक, दस-दस चमचों और चिलगोजों की जुलूसनुमा भीड़ लिये हुए निकल पड़े। इनको पूरे दारुलशफ़ा का चक्कर लगाकर रंगीनराय के मुकाम पर मिल जाना था। ये सब के सब पार्टी के छोटे-बड़े झंडे लिये हुए तिलक, गोखले, गांधी, नेहरू और सरदार पटेल की जय-जयकार कर रहे थे। बीच-बीच में ब[illegible] धरी, लोबीराम
और रंगीनराय के जिन्दाबा[illegible] ते जा[illegible]

दारुलशफ़ा में तो [illegible] जहाँ [illegible] अध्यक्ष
के रंगीनराय के यहाँ आ[illegible] ों [illegible] दूसरी
तरफ 'ए' और 'बी' ब्लाक
के जुलूस घूमने लगे तो बहुते

के आ जाने की खबर को दरोगा की ऋैक बटालियन ने ऐसा जमकर उछाला कि सब पनाह मांगने लग गये। सब के सब भीतर-भीतर उत्सुकदास से चिढ़े थे, जले-भुने थे, अब अपनी-अपनी खोह से निकलकर बाहर आने लगे। कुछ लोगों को, जिन्हें हमेशा की तरह, हवा का रुख, बड़े नेताओं के तेवर देखकर शामिल होना था, अब एक नयी चाल परखने का मौका मिलने वाला था।

फिर यह सब, दरोगा ने इतनी अच्छी तरह पूर्ण नियोजित ढंग से; दारुलशफ़ा के कोने-किनारों में, नया राग ही छेड़ देने जैसा करिश्मा दिखाया था। इधर, इस प्रक्रिया के आरम्भ होने के कुछ देर पहले से ही स्वयंसेवक-चकरबन्ध दौड़ा दिये गये थे। जिन्होने कमरे-कमरे जाकर, पी० एम० से गुरुपदस्वामी की बात करने की नाकाम कोशिश, राष्ट्रपति शासन समाप्त होने के घोषणापत्र पर राष्ट्रपति के अभी तक दस्तखत ना होने और राज्यपाल की पी० एम० हाउस से ग्रीन सिगनल तक न मिलने से आगे की कार्यवाही रोक दिये जाने की खबरों को खींच-खींचकर बढ़ा-चढ़ाकर उड़ाया था।

लोग सकते में थे। विधायकों के अंदर, गलत साइड में रह जाने के खतरे का अहसास पैदा होने लगा था। कुछ भी फैसला करने से पहले अब तो वह सभी एक बार सही नाप-तौल कर लेना चाहते थे। ऊपर से बड़े-बड़े नेताओं के नाम जुड़ने लगे थे। जहां एक तरफ हरिजन और पिछड़े वर्गों के लोबीराम थे, दूसरी तरफ हलवाहों, गुजर और दक्षिण-पश्चिमी जिलों के नेता बलदेव चौधरी। पूर्वी तरफ के रंगीनराय और दरोगा तो थे ही। इनके अलावा और दिग्गजों के टूट जाने की खबर उड़ने लगी थी। जो भी कमरे से निकलकर उधर चला उसको बस इस सबसे जोड़ दिया गया। भले ही वह तमाशा देख लेने को चल दिया हो। इस सबसे और कुछ हो न हो, कम से कम एक इंकलाबी दौर पैदा हो गया था। लोग उछल रहे थे, कूद रहे थे, गला फाड़कर चीखते हुए चिल्ला रहे थे।

दस-बारह की जोड़ी की चार टुकड़ियां जब तक रंगीनराय की बैठक के सामने पहुंची, इनकी ताकत बढ़ चुकी थी। बारह की जगह इनमें बीस-पच्चीस तो विधायक मिल चुके थे। और तमाशबीनों को भला कौन रोकता। ऊपर से हर विधायक के साथ कम-से-कम चार-चार चमचों, समर्थकों और खुराकियों के हिसाब से करीब सौ, सवा सौ और लग चुके थे।

यह दो-तीन सौ लोगों की भीड़ रंगीनराय की बैठक के सँकरे बरामदे में हजार-दो हजार से कम नहीं लग रही थी। फिर सब के सब तरन्नुम में नारे लगा रहे थे। अब तो खुलेग्राम उत्सुकदास के खिलाफ नारे लगाने के लिए, बीच-बीच में लोग हल्ला मचा देते। बलदेव चौधरी ने इशारों-इशारों में पार्टी अध्यक्ष को सबकुछ समझा दिया। दरोगा की इस गहरी चाल का पार्टी अध्यक्ष पर अच्छा-खासा असर होने लगा था। वे उत्तर प्रदेश के सभी विधायकों को पहचानते तो थे नहीं, भीड़ वाले जुलूस में बीच-बीच में विधायक ऐसे बिखरे हुए थे, जहाँ निगाह जाये, लग रहा था बस वे ही उखड़े-पिछड़े उमड़ पड़े हैं। फिर दरोगा की आचारसंहिता से, पार्टी अध्यक्ष की जय-जयकार मची हुई थी। यह सबकुछ, देख-देखकर पार्टी अध्यक्ष के भी तेवर करवटें बदलने लगे। अभी तक मन-ही-मन उन्होंने रंगीनराय और बलदेव चौधरी की हरकतों को गम्भीरता से लिया नहीं था। लेकिन पहले तो बैठक का माहौल देखकर, फिर बाहर से अपने आप बिन बुलाये हुए अचानक आ गयी इस विशाल भीड़ को देखकर वह काफी हद तक प्रभावित हो गये। अब उनको सिर्फ इन सबकी गहराइयों का अन्दाज लगाना ही बाकी रह गया था।

पार्टी अध्यक्ष को रंगीनराय के यहाँ आये हुए मुश्किल से पन्द्रह-बीस मिनट हुए होंगे जब विधायकों, चमचों और खुराकियों का जुलूस आ पहुँचा। दरोगा के सामने एक धर्मसंकट खड़ा हो गया था। जगह की कमी की वजह से सारे लोग अंदर तो बुलाये नहीं जा सकते थे। और फिर सिर्फ विधायकों को ही अंदर बुला लेने से बाकी लोगों के विधायक ना होने की बात पैदा हो जाती। ऐसा करने से अपनी ताकत के साफ खुलासा हो जाने का भी खतरा था। जबकि वह सबकुछ ऐसे ढग से पेश करना चाहते थे जिससे ना तो पूरी बात झूठ मालूम हो और ना ही सही स्थिति का किसी को पता लग सके। और जानने और ना जान लेने की मनःस्थितियों में जहाँ तक हो सके अपना-अपना मतलब निकालने की सबको छूट मिली रहे।

इससे पहले पार्टी अध्यक्ष बैठक से निकलकर बाहर आते और एक-एक विधायक से अपना परिचय प्राप्त कर लेने की इच्छा प्रकट करते, दरोगा ने खुद आगे बढ़कर अपना दाँव खेल दिया। अभी-अभी आये लोगों से वहीं बैठक से लगकर बैठ जाने की प्रार्थना करते-करते दरियाँ, कालीनें

और चद्दरें बिछायी जाने लगी। अब मीटिंग बड़ी होने लगी थी। फिर भी इस समय न तो उठकर कहीं और चले जाने का वक्त था और न ही सबको अंदर बुला लेना ही मुमकिन था। फिर कुछ खासुलखास विधायकों को हाथ पकड़-पकड़कर अंदर ले आने के साथ ही और लोगों को खुद दरोगा और रंगीनराय भाग-भागकर बिठाने-जमाने में लग गये।

अब हल्ला शान्त होने का सवाल नहीं था। चारों ओर से भिन-भिनाती हुई आवाजें, फिक-फिक करती हुई फब्तियाँ उठती जा रही थीं। अंदर की बैठक में, पहले से जमे हुए विधायक, अपनी-अपनी तकदीर को धन्य मानकर, हिलने-डुलने से भी रुकने लगे थे। सबको अब पार्टी अध्यक्ष के बोलने का इन्तजार था। लेकिन पार्टी अध्यक्ष अभी भी भीड़ में घूम-घूमकर लोगों का परिचय प्राप्त कर लेने में जुटे हुए थे। कुछ देर के लिए घिसे हुए पुराने नेताओं को पार्टी अध्यक्ष की हरकतें छिछोरी लगने लगीं। फिर शायद पी० एम० का निर्देश समझकर सब के सब बदलती हुई राजनीति के नये आयाम नाप लेने में लग गये।

इस सारी भीड से बने हुए माहौल का लोबीराम के ऊपर काफी अच्छा असर पड़ा था। जहाँ एक तरफ वह अपने गुट के विधायकों को गिन लेने के चक्कर में थे, दूसरी तरफ बार-बार उनकी निगाहें बस पार्टी अध्यक्ष की तरफ उठ जातीं। वह सिर्फ उनके तेवर का अन्दाज लगा लेने में मशगूल थे। लोबीराम उस वक्त एक तरह का हिसाब लगा नेमें लगे हुए थे। उनके हिसाब में निश्चित रूप से पार्टी अध्यक्ष की महत्त्वपूर्ण भूमिका थी। इस भूमिका से जुडा हुआ एक और सवाल था जिसका जवाब उनको ढूंढ़ लेना था। यह सवाल था खुद अपनी अहमियत का, पार्टी की राजनीति में केन्द्रीय धुरी में अपने प्रभाव को तौल लेने का।

लोबीराम की पार्टी राजनीति में बस एक ही कमजोरी थी। यह कमजोरी थी उनकी केन्द्रीय नेताओं से सत्ता नियन्त्रण के संतुलन से संबंधित मुद्दों की। पार्टी की केन्द्रीय शाखाओं में लोबीराम का असर कुछ था ही नहीं। असल में वह हमेशा अपने आपमें घुसे रहते। दूर की राजनीति कर लेने भर का दिमाग ही उनके पास नहीं था। वह तो अभी-अभी मिल सकने वाले फायदे की बात सोचकर ही कोई चाल चला करते, जिसकी वजह से जिले और प्रदेश स्तर पर तो उनकी राजनीति ठीक रहती, लेकिन राष्ट्रीय स्तर के वह नेता कभी न बन सके।

के चुनाव की मांग करते ही, गदर मच जायेगी। जिसके साथ ही इतनी जल्दी में और कुछ मुमकिन ना होने पर, विधानमंडल दल के नेता का चुनाव टाल दिया जायेगा, लोबीराम के खैराती दिमाग पर, कुटिल चक्र की छाप घर कर लेने लगी थी। उनका अन्दाज था, हाईकमाण्ड के नेता आज चुनाव के लिए तैयार होकर नहीं आये थे। इस तैयारी के न होने का अहसास बार-बार उनके अंदर नयी ताकत बनाता जा रहा था।

नेता के चुनाव के टाल भर पाते ही, लोबीराम की कीमत दुगुनी होने वाली थी। फिर सत्ता में साझेदारी मिलने की उम्मीद अलग से थी। अब जाकर उनके मन में एक नयी तरह की खुशियाँ उछाल लेने लगीं। यह अच्छा ही हुआ था जो इस बीच उत्सुकदास का कोई आदमी आया नहीं। नगद कीमत बढ़ने के साथ, सत्ता की साझेदारी कामधेनु की तरह आने वाले तमाम दिनों तक बराबर लगातार आमदनी करवाती रहेगी। दौलत और वैभव का अपार भंडार बन जाने लगेगा। सम्पदा की कोई सीमा तो होगी नहीं। और तब उनको एक नहीं, कई एक नयी तिजोरियाँ बनवानी पड़ेंगी। यह सोचते ही लोबीराम का मन फिर से उछल-कूद मचाने का होने लगा और वह हसरत-भरी निगाहों से चारों ओर की भीड़ को निहारने लग गये।

इन तमाम ख्यालों की उठापटक के बीच लोबीराम के अन्दर एक और तरंग आयी। अगर कहीं चलते-चलते उत्सुकदास ने जोर-जबरदस्ती में एक लम्बी रकम तिजोरी तक भेज ही दी, तब वह क्या करेंगे? इस ख्याल की महज तरंग ने ही उनको धीरे-से गुदगुदाया जरूर लेकिन मन मजबूत करके उन्होंने उसको कुचल डाला। तब वह अपनी दूरदर्शिता की ऊँचाइयों तक पहुँच चुके थे और एक बार अपनी सोती हुई ताकत जगाकर, न सिर्फ उत्सुकदास को बल्कि पूरी पार्टी के दिग्गजों को झटका देने की योजना के नशे में डूब चले। इस नये आयाम की रोशनी उनके व्यक्तित्व में बार-बार नयी दृढ़ता जगा रही थी। और तभी उन्होंने फैसला कर लिया कोई भी आये, भले उत्सुकदास खुद अब सिर के बल चलकर आये, उनके कदम जो आगे बढ़ चुके थे, पीछे हटने वाले नहीं थे। और फिर इन परिस्थितियों में उनको एक नहीं कई एक तिजोरियों के सपने झुलाने लगे।

उधर इससे पहले पार्टी अध्यक्ष कुछ और देखें रंगीनराय और दरोगा उनको घेरकर वापस अंदर की तरफ लाने लगे। लोबीराम भी जो अब

बढ़ाने का तय किया होगा ?" बलदेव चौधरी न सिर्फ रंगीनराय को टटोल रहे थे, वह तो लोबीराम के दांव को भी सही-सही पकड़ लेने की कोशिश कर रहे थे। विद्रोह की साजिश, यह मिनी मीटिंग, यह सारी उछलकूद उनके लिए बेमाने थी, अगर खुद उनको ये लोग नेता बना लेने को तैयार नहीं होते। वह तो कोई मामूली नहीं एक बड़े मंत्री का पद, प्रदेश पार्टी के अध्यक्ष की प्रतिष्ठा ठुकराकर यहां इनके साथ बैठे हुए हाईकमाण्ड के निर्देश की साफ-साफ अवहेलना करने लगे थे।

रंगीनराय के पास कोई जवाब था ही नहीं तो वह बोलते भी क्या? अगर वह बलदेव चौधरी की बात का जवाब दे देते तो लोबीराम पर क्या गुजरने वाली थी, यह उनको मालूम ही था। वह तो इस समय न लोबीराम को छोड़ सकने की स्थिति मे थे और ना ही बलदेव चौधरी को ! फिर भी उनको इतना मालूम था, बलदेव चौधरी के साथ आने से हवा बननी थी और लोबीराम के बने रहने से उत्सुकदाम को उलट देना मुमकिन हो जाने वाला था। लेकिन बलदेव चौधरी ने सवाल तो पूछा ही था और उसका जवाब भी देना था। बस कुछ ही पल की और देर जवाब देने में हो जाने से, उनको मालूम था चौधरी को शक होने लगेगा, इसलिए बिना किसी स्पष्ट प्रतिक्रिया के उन्होने कहा, "अरे हां, हमने इस सवाल पर तो गौर किया ही नहीं ! वैसे भी चौधरी साब ! यह बेमाने है। अभी तो उत्सुकदास को सिर्फ गिराना है।"

"वाह रायसाब, वाह ! क्या खूब कहते हैं आप ! भला ऐसा भी कहीं होता है। वहां पार्टी मीटिंग मे अगर फटाका चुनाव हो गया तब !"

"सो तो है।" कहते हुए रंगीनराय ने लोबीराम की ओर सहारे के लिए देखा।

लोबीराम को साफ-साफ बाजी अपने हाथ से निकलते हुए लग रही थी। ऊपर से उनको पता था वह मुख्यमंत्री बनवा तो सकते थे, लेकिन खुद बन जाना संभव हो सकने वाला नहीं था। इस [illegible]
से लोबीराम
कहीं गलत
है चौधरी
का मतलब
सवाल भी

अध्यक्ष को असंतोष दिखेगा ?"

"बताओ ना, उनको बता दो !"

"ना···ना अब आप ही कहो !"

"मैं ?"

"और क्या ? हमारे कहने की मानेंगे ?"

"क्यों नहीं ? ये लो, हमारे कहने का तो उल्टा मतलब न निकाल लें ?"

"अरे चौधरी साब खुलकर सामने आवो ? यूँ छुपे-छुपे रहने से, कुछ होने वाला नहीं है !"

"या फिर लोबीराम जी खुद कह दें।"

"मैंने उन लोगों से कुछ कहना नहीं था, अब तो वस भुगतवा देंगे सबको।" लोबीराम मुकरे हुए थे।

"ठीक है···ठीक है अभी कहना-सुनना उचित नहीं होगा। पहले चाय-पानी हो ले, फिर चलने लगें, तो जरा अलग बुलाकर उनसे बतिया लेंगे।"

उधर पार्टी अध्यक्ष को लोगों ने घेर रखा था। पुराने तो, अपनी-अपनी यादों के साये में से खोद-खोदकर पार्टी अध्यक्ष से जुड़े हुए, किस्से निकालकर पेश कर रहे थे। नये नेता, जिनसे पार्टी अध्यक्ष का किसी प्रकार का ताल्लुक नहीं रहा था, अपनी जयगाथा खुद कहने में लगे थे। हाँ उनके साथ, सधे-सधाये पेशेवर बीच में टोककर कुछ टिप्पणियाँ जरूर करते जा रहे थे। नेताओं के ऊपर जैसे जुनून सवार होने लगा था। सब के सब मिलकर पार्टी अध्यक्ष का दिमाग सारा समूचा खा जाने में लगे हुए थे। पार्टी अध्यक्ष तो भला क्या बोलते वह तो अपनी महत्ता को ही, बड़ी-बड़ी आँखों से बस देखते रहे। जब कोई पुरानी यादों की समझी-भुगती, बात सामने आती तो वह जरूर कुछ कह देते या हाथ, मुँह, आँख हिलाकर अपनी सहमति जाहिर कर देते।

तभी रंगीनराम ने लोबीराम, बलदेव चौधरी से निपटकर पार्टी अध्यक्ष की ओर देखा तो उनकी असित काया को टूटने से बचा लेने के लिए उठकर आगे को उनकी तरफ तेजी से बढ़ चले। बलदेव चौधरी को भी उठकर खड़े होते हुए देखकर लोबीराम भी वहाँ पहुँच गये। इन लोगों के आगे बढ आने से, दरोगा, मूलचन्द और मनोहरलाल ने मिलकर विधायकों और फसली नेताओं को नर्मी-नर्मी से पीछे हटाना शुरू कर दिया।

"हाँ" हाँ कहिए ना ?" चौधरी तर हो गये थे।

"आप अगर मुख्यमंत्री होवेंगे तो तीन मंत्री हमारे होवेंगे और उनका विभाग हमारी राय से तय होगा।"

"बलदेव चौधरी ने बड़े जोर से नाक सिकोड़ी पर दूसरे ही क्षण अपने को सँभाल लिया, "हाँ, हाँ क्यों नहीं ?"

लोबीराम की सौदेबाजी शुरू होगी यह रंगीनराय ने भांप लिया था। वह चौधरी की हाँ-में-हाँ मिलाते हुए बोले, "और आपके सवाल क्या थे ?"

"मेरा पहला सवाल था," लोबीराम को जोश आ रहा था, "अगर हाईकमाण्ड ने हमारी बात न सुनी तो ?" फिर रायसाब और चौधरी को खामोश देखकर उन्होंने सवाल आगे बढ़ाया, "मैं पूछता हूँ तो हम क्या पार्टी छोड़ देंगे ?"

बड़े जोर की बिजली गिरी थी, लोबीराम की सनक से उपजे इतने अहम सवाल के अचानक उठ आने से ! चौधरी और रायसाब के प्राण काँप गये। चालीस साल पुरानी पार्टी छोड़ देना कोई हँसी-खेल नहीं था। फिर भी लोबीराम अपनी जगह सही थे। यह दोनों को मालूम था, इस सवाल से बचा नहीं जा सकेगा।

"वैसे आप लोग कुछ करें या नहीं, हमने तो पार्टी छोड़ने का फैसला कर लिया है !"

"क्या ?" रायसाब और चौधरी एक साथ दहशत खाकर बोले। लोबीराम असल में एक दाँव छोड़ना चाहते थे। तीन मंत्रियों और चार विभागों के अलावा एक तरीका था, जिसके तहत वह मुख्यमंत्री भी बन सकते थे। हाँ ! इसके लिए पार्टी छोड़ देनी थी। लेकिन वह बलदेव चौधरी को साथ लेकर पार्टी छोड़ देने के मूड में नहीं थे, भले ही, रंगीनराय साथ हो लेते। इसकी खास वजह थी बलदेव चौधरी के वहाँ भी उनके ऊपर ही बैठे रहने की हद जो तब भी वह फाँद नहीं सकते। फिर भी अब समय आ गया था, जब उनको अपनी घोषणा कर देनी थी, जिससे और कुछ नहीं तो उत्सुकदास को उखाड़ने में तेजी लायी जा सके, "हाँ चौधरी साब आज तो हम कफन बाँधकर निकले हैं। उत्सुकदास तो बर्दाश्त के बाहर हो गया है।"

रंगीनराय को प्वायंट मिला था, "तो चौधरी साब, अब तो पार्टी

अध्यक्ष को असंतोष दिखेगा ?"

"बताओ ना, उनको बता दो !"

"ना···ना अब आप ही कहो !"

"मैं ?"

"और क्या ? हमारे कहने की मानेंगे ?"

"क्यों नहीं ? ये लो, हमारे कहने का तो उल्टा मतलब न निकाल लें ?"

"अरे चौधरी साब खुलकर सामने आवो ? यूं छुपे-छुपे रहने से, कुछ होने वाला नहीं है !"

"या फिर लोबीराम जी खुद कह दें ।"

"मैंने उन लोगों से कुछ कहना नहीं था, अब तो बस भुगतवा देंगे सबको।" लोबीराम भुकरे हुए थे।

"ठीक है···ठीक है अभी कहना-सुनना उचित नहीं होगा। पहले चाय-पानी हो ले, फिर चलने लगें, तो जरा अलग बुलाकर उनसे बतिया लेंगे।"

उधर पार्टी अध्यक्ष को लोगों ने घेर रखा था। पुराने तो, अपनी-अपनी यादों के साये में से खोद-खोदकर पार्टी अध्यक्ष से जुड़े हुए, किस्से निकालकर पेश कर रहे थे। नये नेता, जिनसे पार्टी अध्यक्ष का किसी प्रकार का ताल्लुक नहीं रहा था, अपनी जयगाथा खुद कहने में लगे थे। हाँ उनके साथ, सधे-सधाये पेशेवर बीच में टोककर कुछ टिप्पणियाँ जरूर करते जा रहे थे। नेताओं के ऊपर जैसे जुनून सवार होने लगा था। सब के सब मिलकर पार्टी अध्यक्ष का दिमाग सारा समूचा खा जाने में लगे हुए थे। पार्टी अध्यक्ष तो भला क्या बोलते वह तो अपनी महत्ता को ही, बड़ी-बड़ी आँखों से बस देखते रहे। जब कोई पुरानी यादों की समझी-गुणी, बात सामने आती तो वह जरूर कुछ कह देते या हाथ, मुँह, और हिलाकर अपनी सहमति जाहिर कर देते।

तभी रंगीनराम ने लोबीराम, बलदेव चौधरी से निपटकर पार्टी अध्यक्ष की ओर देखा तो उनकी ग्रसित काया को टूटने से बचा लेने के लिए, उठकर आगे को उनकी तरफ तेजी से बढ़ चले। बलदेव चौधरी को भी उठकर खड़े होते हुए देखकर लोबीराम भी वहाँ पहुँच··· ···ा था। आगे बढ़ आने से, दरोगा, मूलचन्द और मनोहरलाल ने और फसली नेताओं को नर्मी-नर्मी से पीछे हटाना शुरू

सबको सामने खड़े हुए देखकर अब पार्टी अध्यक्ष से भी बैठे न रहा गया। वह भी उठने की मुद्रा में हुए तो रंगीनराय ने उन्हें रोककर कहा, "अब आप यहीं से कुछ संदेश दें।"

"मैं तो यहाँ सिर्फ आपकी चाय के लिए आया था।"

"सो तो है, फिर भी आपकी यहाँ उपस्थिति से हमारा फायदा उठा लेने को जी ललचा रहा है, कुछ तो कहें आप!"

"नही रायसाब, अब यह सब तो पार्टी मीटिंग मे ही होगा।" इतना कहकर पार्टी अध्यक्ष ने जरा उचककर रंगीनराय को अपनी तरफ झुकाया, "अरे सुनो भी, यह सब राग यहाँ न फैलाओ! तुम्हे अच्छी तरह मालूम है, मेरी गति क्या होने वाली है। अब बस इत्ता-सा बाकी था," चुटकी-भर का इशारा करते हुए उन्होंने कहा, "वो भी भाषण से पूरा हो जायेगा!...नहीं यह सब नही। चाय पिलाना हो तो पिला दो!"

"हाँ...क्यों नहीं, फिर भी लोबीरामजी आपको धन्यवाद तो देंगे ही!"

उत्सुकदास ने विमलादेवी को ही लोबीराम को परकाने के लिए चुना था, इसकी खास वजह थी वह खुफिया रिश्ता जो विमलादेवी ने काफी दिनों पहले से लोबीराम के साथ बनाये रखा था। तरुणाई की करवटों में किसी अँधेरी रात को, उत्सुकदास के आगोश में तड़पते हुए, विमलादेवी ने अपने सारे गुनाह कबूले थे और आगे से सिर्फ [illegible] रहने का इकरार किया था। लेकि[illegible] को [illegible] के बाद भी, धन्धे की उलझ[illegible] के लिए [illegible] से वह मिलती रहती। पि[illegible] था [illegible] जाये तो विमलादेवी लोबीरा[illegible] शहीद हो जाने को, बड़ी [illegible] वि[illegible] के सहारे [illegible] दे[illegible]। [illegible] के [illegible] ने [illegible] पर [illegible]

और बलराम शास्त्री बार-बार उछल-फांद कर रहे थे। एक-दो घंटे रुक सकने की हालत नहीं थी। घड़ी की सूई बड़ी तेजी से खिसकती जा रही थी और खुद उत्सुकदास बेताब होकर हर पल लोबोराम के और दूर चले जाने का हिसाब लगा रहे थे। एक बार तो लोबोराम के काफी दूर तक निकल जाने के अहसास-भर से वह दहल गये थे। फिर भी उनको यकीन था, जिन तीन जगहों पर उन्होने टेलीफोन करवाया था, उनमें से अगर कोई, एक कुछ भी रकम लेकर आ गया तो बाकी का काम, विमला करवा लेगी।

यकीन से अधिक भरोसा उत्सुकदास को अपने मुकद्दर पर था। वह कुछ सोच नहीं पा रहे थे, उनकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था और ऊपर से बलराम के बार-बार हल्ला मचाने से उनके भी होलदली हो जाने लगी थी। फिर भी न जाने क्यों उनके अन्दर से बार-बार कोई आवाज उठ रही थी : कुछ होगा, कुछ भी हो जाने वाला था। हमेशा-हमेशा की तरह तमाम बन्द रास्तों के बीच से, जमीन फोड़कर, आसमान की ऊँचाइयों से टपककर, खुद-ब-खुद कोई रास्ता, कोई तरीका, जैसे जादुई चिराग से निकलकर, सामने आ जायेगा। अब सत्ता···पूर्ण सत्ता के इतने करीब आकर उनको लौट जाना नहीं होगा, वह मुख्यमंत्री बनेंगे और अपने तमाम दुश्मनों को सदैव की तरह पटकनिया दे डालेंगे।

लेकिन जब पन्द्रह-बीस मिनट गुजरने लगे और तीनों जगहों से कोई भी नहीं आया और बलराम भी उठकर चले जाने लगे, तो उत्सुकदास कमरे से निकलकर बाहर आ गये। यह संकट की घड़ी थी, एक-एक पल भारी हो रहा था। एक तरफ अन्दर के कमरे में, प्रतिभा और उनका बेटा राहुल, बार-बार जी को खींचने लगा था और दूसरी तरफ बलराम शास्त्री बला की मुसीबत लेकर सिर पर सवार थे। इसलिए विमलादेवी के आने पर भी उन्होंने न तो कोई छेड़छाड़, ना ही कोई चुलबुली हरकतें-इशारे या फिर चुटकी बजा देने तक की कोशिश ही की थी। बस उनको अन्दर चलकर बैठने को कह दिया था।

अब बलराम शास्त्री का और देर रुके रहना मुमकिन नहीं था। ऊपर से वह दौड़कर गुरुपदस्वामी को उत्सुकदास के यहाँ की खबरें भी सुना देना चाहते थे। वैसे तो उत्सुकदास बलराम शास्त्री को बाहर तक छोड़ने कभी आते नहीं, लेकिन आज उदासी और हल्की-सी पराजय

की कुंठा में घिरे-घिरे गैलरी के दरवाजे तक निकल आये। वह चल तो बलराम शास्त्री के साथ रहे थे, लेकिन उनकी निगाहें बस लगातार सामने के मैदान और उससे लगी पगडंडी से लेकर फाटक तक के इलाके में जूझी हुई थीं। दो-तीन मिनट तक खामोशी की आक्रांत मनःस्थितियों के बीच उत्सुकदास खड़े रहकर वापस लौट आने वाले ही थे, तभी न जाने किस कोने में छुपकर खड़ा हुआ *कामयाब सेठ, सामने निकलकर आ* गया। उसके हाथ में काला ब्रीफकेस था।

कामयाब सेठ कुछ देर पहले ही श्रीकांत पाठक को छोड़कर वापस लौटा था। *असल में श्रीकांत पाठक ने उसे डरा दिया था। किसी वक्त* भी उसके पकड़ लिए जाने का अंदेशा था। इसलिए वह उत्सुकदास के पास ही छिप लेने को आया था। बाहर-बाहर मँडराते हुए वह तो बलराम शास्त्री के चले जाने का इंतजार कर रहा था। लेकिन साथ में उसे डर भी था, कहीं बलराम के चले जाते ही उत्सुकदास फिर कमरे में घुस न जायें जहाँ प्रतिभा और विमलादेवी के होने का भी उसको पता था। वह तो सिर्फ दो क्षण के लिए उनको अपनी हालत बता देना चाहता था, जिससे आजभर के लिए वह उसे पकड़ लिए जाने से बचा देने का कोई पक्का इंतजाम करवा दें।

जितनी देर उत्सुकदास बलराम शास्त्री और फिर कामयाब सेठ के साथ रहे, उसी बीच विमलादेवी ने कमरे में घुसकर शृंगार कर लिया था। उनके पर्स के ऊपरी हिस्से में रूमाल वगैरह के साथ खादी के गीत या रामधुन के गुटके रहते लेकिन पर्स की निचली पाकेट में केक पाउडर और हल्के रंग की लिपस्टिक के साथ हथेली भर की कंघी रक्खी थी। उत्सुकदास की ड्रेसिंग टेबल के सामने बैठकर बड़ी फुर्ती से उन्होंने पाउडर, लिपस्टिक की कई एक परतें लगा डाली। फिर कंघी से उलझ गयीं लटों को सुलझाने लगीं। बालों को ठीक करते समय उनको अपने बुलाये जाने का सबब का बिलकुल पता नहीं था। वह तो उत्सुकदास के लिए ही सजने लगी थीं। हाँ, ड्रेसिंग टेबल के शीशे से एक बार जब पीछे पड़े हुए पलंग दिखे तो पल-भर के लिए उनको वह रात याद आ गयी, जब उत्सुकदास उनके साथ बत्ती जलाकर सोये थे। तैयार हो जाने के बाद विमलादेवी को, वहाँ रुककर आ गयी याद को आगे तक बढ़ा लेने का मौका नहीं मिल सका। इतने में ही उत्सुकदास अन्दर आ गये थे। लेकिन

वह अकेले नहीं थे। उनके साथ कामयाब सेठ और बलराम शास्त्री भी थे।

कामयाब सेठ तो कमरे में अन्दर आते ही बिलकुल किनारे पर, खिड़की के करीब रखी हुई मेज पर अपने ब्रीफकेस को ठीक करने में लग गया। इस बीच उत्सुकदास ने विमलादेवी को बलराम शास्त्री के साथ कर दिया। साफ-साफ लफ्जों में उनको क्या सौंपा जा रहा था, इसकी जानकारी तो नहीं दी। हाँ, सबकुछ खुलासा बता देने की जिम्मेदारी बलराम पर ही डाल दी थी। विमलादेवी ने एक आध बार उत्सुकदास का ध्यान अपनी ओर खींचने की कोशिश जरूर की, पर अगले क्षण, माहौल को तौल लेने पर उन्होंने राजनैतिक मुखौटा लगा लिया।

उत्सुकदास के कमरे से बाहर निकलते समय विमलादेवी के हाथ में कामयाब सेठ वाला ब्रीफकेस था और साथ में बलराम शास्त्री भी। उत्सुकदास तो यही चाहते थे, काला ब्रीफकेस बलराम शास्त्री ले जायें लेकिन उनके मना कर देने पर उन्होंने उसे विमलादेवी के हाथों में सौंप दिया था। पहले तो वह विमलादेवी को दारुलशफ़ा छोड़कर तनिक देर के लिए राजभवन जाना चाहते थे, फिर उन्होंने वहीं रुके रहना ही ठीक समझा। रास्ते में बलराम शास्त्री ने विमलादेवी को सारी बातें समझा दी। बिना कोई खबर लिये गुरुपदस्वामी के पास चले जाना अर्थहीन ही लगा उनको। वह दारुलशफ़ा में रुक तो गये थे। लेकिन विमलादेवी के साथ ऊपर नहीं गये। लोबीराम के फ्लैट से थोड़ी दूर, झुरमुट के पास ही गाड़ी रुकवायी थी उन्होंने। वहीं गाड़ी में बैठे-बैठे उनको विमलादेवी के लौट आने का इंतजार था।

बलराम शास्त्री को अपने गुरुपदस्वामी पर बड़ा भरोसा था। वह उनकी गहरी पैठ के कायल थे। तभी तो उठते हुए तूफान के अंदेशे से दुखी होकर वह गुरुपदस्वामी के पास गये। बस पलक झपकते ही गुरुपद-स्वामी ने रंगीनराय के यहाँ हो रही साजिश को तोड देने का संजीवनी उपाय बता दिया था। बलराम को लघु सिंचाई विभाग मिलना था और इससे वे दुखी थे। इसके बदले में वह सिंचाई विभाग पा लेना चाहते थे, लेकिन किसी कीमत पर मंत्रिमंडल के टूट जाने का खतरा पैदा नहीं होने देना चाहते थे। ऐसी हालत में तो कोई भी विभाग उनके हाथ न

की कुंठा में घिरे-घिरे गैलरी के दरवाजे तक निकल आये। वह बस तो बलराम शास्त्री के साथ रहे थे, लेकिन उनकी निगाहें कम लगातार सामने के मैदान और उससे लगी पगडंडी से लेकर फाटक तक के इलाके में जूझी हुई थीं। दो-तीन मिनट तक खामोशी की आक्रांत मनःस्थितियों के बीच उत्सुकदास खड़े रहकर वापस लौट आने वाले ही थे, तभी न जाने किस कोने में छुपकर खड़ा हुआ कामयाब सेठ, सामने निकलकर आ गया। उसके हाथ में काला ब्रीफकेस था।

कामयाब सेठ कुछ देर पहले ही श्रीकांत पाठक को छोड़कर वापस लौटा था। असल में श्रीकांत पाठक ने उसे डरा दिया था। किसी वक्त भी उसके पकड़ लिए जाने का अंदेशा था। इसलिए वह उत्सुकदास के पास ही छिप लेने को आया था। बाहर-बाहर मँडराते हुए वह तो बलराम शास्त्री के चले आने का इंतजार कर रहा था। लेकिन साथ में उसे डर भी था, कहीं बलराम के चले जाते ही उत्सुकदास फिर कमरे में घुस न जायें जहाँ प्रतिभा और विमलादेवी के होने का भी उसको पता था। वह तो सिर्फ दो क्षण के लिए उनको अपनी हालत बता देना चाहता था, जिससे आज भर के लिए वह उसे पकड़ लिए जाने से बचा देने का कोई पक्का इंतजाम करवा दें।

जितनी देर उत्सुकदास बलराम शास्त्री और फिर कामयाब सेठ के साथ रहे, उसी बीच विमलादेवी ने कमरे में घुसकर शृंगार कर लिया था। उनके पर्स के ऊपरी हिस्से में रूमाल वगैरह के साथ खादी के गीत या रामधुन के गुटके रहते लेकिन पर्स की निचली पाकेट में फेक पाउडर और हल्के रंग की लिपस्टिक के साथ हथेली भर की कंघी रक्खी थी। उत्सुकदास की ड्रेसिंग टेबल के सामने बैठकर बड़ी फुर्ती से उन्होंने पाउडर, लिपस्टिक की कई एक परतें लगा डालीं। फिर कंघी से उलझ गयीं लटों को सुलझाने लगीं। बालों को ठीक करते समय उनको अपने बुलाये जाने का सबब का बिलकुल पता नहीं था। वह तो उत्सुकदास के लिए ही सजने लगी थीं। हाँ, ड्रेसिंग टेबल के शीशे से एक बार जब पीछे पड़े हुए पलंग दिखे तो पल-भर के लिए उनको वह रात याद आ गयी, जब उत्सुकदास उनके साथ बत्ती जलाकर सोये थे। तैयार हो जाने के बाद विमलादेवी को, वहाँ रुककर आ गयी याद को आगे तक बढ़ा लेने का मौका नहीं मिल सका। इतने में ही उत्सुकदास अन्दर आ गये थे। लेकिन

वह अकेले नहीं थे। उनके साथ कामयाब सेठ और बलराम शास्त्री भी थे।

कामयाब सेठ तो कमरे में अन्दर आते ही बिलकुल किनारे पर, खिड़की के करीब रखी हुई मेज पर अपने ब्रीफकेस को ठीक करने में लग गया। इस बीच उत्सुकदास ने विमलादेवी को बलराम शास्त्री के साथ कर दिया। साफ-साफ लफ्जों में उनको क्या सौंपा जा रहा था, इसकी जानकारी तो नहीं दी। हाँ, सबकुछ खुलासा बता देने की जिम्मेदारी बलराम पर ही डाल दी थी। विमलादेवी ने एक आध बार उत्सुकदास का ध्यान अपनी ओर खींचने की कोशिश जरूर की, पर अगले क्षण, माहौल को तौल लेने पर उन्होंने राजनैतिक मुखौटा लगा लिया।

उत्सुकदास के कमरे से बाहर निकलते समय विमलादेवी के हाथ में कामयाब सेठ वाला ब्रीफकेस था और साथ में बलराम शास्त्री भी। उत्सुकदास तो यही चाहते थे, काला ब्रीफकेस बलराम शास्त्री ले जायें लेकिन उनके मना कर देने पर उन्होंने उसे विमलादेवी के हाथों में सौंप दिया था। पहले तो वह विमलादेवी को दारुलशफ़ा छोड़कर तनिक देर के लिए राजभवन जाना चाहते थे, फिर उन्होंने वहीं रुके रहना ही ठीक समझा। रास्ते में बलराम शास्त्री ने विमलादेवी को सारी बातें समझा दीं। बिना कोई खबर लिये गुरुपदस्वामी के पास चले जाना अर्थहीन ही लगा उनको। वह दारुलशफ़ा में रुक तो गये थे। लेकिन विमलादेवी के साथ ऊपर नहीं गये। लोबीराम के फ्लैट से थोड़ी दूर, झुरमुट के पास ही गाड़ी रुकवायी थी उन्होंने। वहीं गाड़ी में बैठे-बैठे उनको विमलादेवी के लौट आने का इंतजार था।

बलराम शास्त्री को अपने गुरुपदस्वामी पर बड़ा भरोसा था। वह उनकी गहरी पैठ के कायल थे। तभी तो उठते हुए तूफान के अंदेशे से दुखी होकर वह गुरुपदस्वामी के पास गये। बस पलक झपकते ही गुरुपद-स्वामी ने रंगीनराय के यहाँ हो रही साजिश को तोड़ देने का संजीवनी उपाय बता दिया था। बलराम को लघु सिंचाई विभाग मिलना था और इससे वे दुखी थे। इसके बदले में वह सिंचाई विभाग पा लेना चाहते थे, लेकिन किसी कीमत पर मंत्रिमंडल के टूट जाने का खतरा पैदा नहीं होने देना चाहते थे। ऐसी हालत में तो कोई भी विभाग उनके हाथ न

आता । उन्होने तो पूरा हिसाब लगा रखा था, भाई, भतीजे, दूरदराज के रिश्तेदारों और तमाम समर्थको तक से उनने कितने ही वादे कर डाले थे । सबके काम पूरा करने के वादे ! कैबिनेट स्तर के मंत्री बन जाने का सपना, गूलर के फूल की तरह—कई-कई बार उनकी आँखों से, उनके हाथो से गुजर चुका था । इसलिए अब खुद-ब-खुद मन-ही-मन उत्सुकदास से जलते हुए भी, जागी हुई हसरतो के महल उठाये हर पैदा होने वाले संकट से वह लड रहे थे ।

इससे पहले कि बलराम शास्त्री आने वाले सुनहरे वक्त के ख्वाबों मे खोने लगते, विमलादेवी लौट आयी । उन्होने आशा-भरी नजर से विमलादेवी को देखा । लोबीराम के पास पैसे की गंध गयी थी । न मानने का तो सवाल ही नही था । लेकिन विमलादेवी के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थी । कुछ चलने-फिरने, कुछ तेजी से निकल रहे पसीने से, सस्ते पाउडर का पफ बह निकला था । बालो की लट बार-बार हल्की हवा के झोंकों में उड़कर, उन्हें लगा, उनको चिढ़ा रही थी । जब हक्के-बक्के, भौचक बलराम शास्त्री ने कुछ नही पूछा तो विमलादेवी ने साडी का पल्लू सँभालते हुए खुद ही कह दिया, "वे तो नही मानते हैं । हमे तो भगाय दिया । कहने लगे...सबको मजा चखायेंगे...अब क्या आये हो ।"

बलराम शास्त्री तो फौरन गुरुपदस्वामी से आगे की दिशा निर्देश लेने चल दिये लेकिन विमलादेवी को उनको साथ न जाना था और ना ही वह गयी । बलराम शास्त्री चले गये पर ब्रीफकेस विमलादेवी के हाथ मे ही लटका रहा । उसे उस वक्त इसका ख्याल ही कहाँ था । उनके मन में उस वक्त रुलाई के बडे उबाल उमड़ चले थे । लोबीराम का ठुकरा देना इतना मायने नही रखता, जितना अपने महबूब के किसी काम न आ सकने का अहसास ! विमलादेवी की सारी आकांक्षाएँ, सारी पूँजी, पूरी जिन्दगी की कमायी उत्सुकदास ही थे । उधर प्रतिभा ने खतरो के बडे-बड़े दरवाजे खोल रखे थे । उनको फक्र सिर्फ अपनी राजनैतिक उपयोगिता का ही था । और चीजों में उनका प्रतिभा से बाजी जीत लेना, किसी तरह मुमकिन होने वाला नही था । और आज लोबीराम वह धरातल, वह जमीन ही उनके नीचे से ले उड़ा था, जिसके ऊपर उन्होने आने वाले वक्त के सुनहरे सपने बुन रखे थे, उम्मीदों की बड़ी-बड़ी कनातें उठा थी ।

आज विमलादेवी को अपना अस्तित्व ही खतरे में नजर आने लगा था। क्या मुंह लेकर, कैसे…कैसे आखिर कैसे, वह नाकाम, रुसवा, अपमानित, फटी-उधड़ी हस्ती लिये उत्सुकदास के सामने जायें? उनके सामने सवाल लोबीराम का नही था, आज बनने वाले मंत्रिमंडल का नही था, उनके सामने तो सवाल अपने मालिक को खुश कर सकने का था। उस वक्त बेबाक, तेज रफ्तार हवा मे, वह अपना रास्ता ढूंढ रही थी। एक पराजय, एक कुंठा, हद दर्जे की एक शर्मिन्दगी में घिरी हुई विमलादेवी कुछ भी कर गुजरने को तैयार थी। लेकिन उनके सामने बार-बार एक ही सवाल घूम जाता, करें भी तो करें क्या?

यह होने न होने की हद थी, जहां अब कही न तो भाग जाना मुमकिन था और ना ही चैन से जी पाना। बेहद सदमे में, उदास…उदास, लुटी…लुटी विमलादेवी बेजान कदमो से उठकर चली तो उनको यही लगा अगर कच्ची उम्र में उन्होने शादी कर ली होती तो शायद, आज इस तरह धक्के नही खाना पडता। लेकिन फिर शादी हो जाने से उत्सुकदास के न मिल सकने की बात सोचकर, वह फफक…फफककर रो पडी। दिल, दिमाग और बीच के हिस्से से बार-बार कचोट…कचोटकर कोई दर्द उठता जो उनके पोर-पोर हिला रहा था। और फिर शादी न कर लेने पर, उत्सुकदास के मिल जाने के बाद, अब जरा से लोबीराम तक को जीत न सकने पर खुद उत्सुकदास को या अपने वजूद की बुलन्दियो तक खो देने की संभावना से बड़े जोर की कसक उठी जो उनकी कोख की पसलियो को मरोड़…मरोड़कर निचोड़-सी लेने लगी।

रंगीनराय ने लोबीराम का नाम उछाल दिया तो पार्टी अध्यक्ष सकते में आ गये और इसके पहले असर कम हो जाने लगे, वह उठकर खड़े हो गये। इस बार पार्टी अध्यक्ष की मौजूदगी से वातावरण में आयी हुई संजीदगी के लिहाज में या किसी बड़े धमाके की हो जाने की उम्मीद पर सबके सब खामोश हो गये थे जैसे उनको सांप सूंघ गया। उधर मौके का फायदा उठाने की गरज से रंगीनराय ने बोलना शुरू कर दिया :

"…दोस्तो! आज का दिन हमारे जीवन का सौभाग्यशाली दिन है। आज यहां हमारी महान पार्टी के महान अध्यक्ष हमारे बीच आये हुए हैं।

वैसे तो पार्टी अध्यक्ष की आस्था, निष्ठा और त्याग से आप सभी परिचित हैं, मैं खुद अपना एक खुफिया रिश्ता निकाल लाया हूँ। आज उनको यहाँ देखकर मेरा जीवन, मेरी यह छोटी-सी कुटिया धन्य हो उठी। हम दोनों के जीवन में राजनीति के अनेक मोड़ आये जब मैंने इनके कंधे से कंधा मिलाकर राष्ट्रीय हितों की भूमिका तैयार कर सकने का काम किया था। हमने कुर्बानियाँ दी थी, ईमानदारी से देश के भूखे-नंगे तमाम बाशिंदो को गरीबी, दुख और आपदाओं के घेरे से निकालकर, हिम्मत, लगन और संघर्ष से बनाये हुए स्वर्ग का सपना दिखाया था। मेरे दोस्तो यह सपना पार्टी अध्यक्ष का सपना था, इनकी देन थी, इनके आदर्शों की ऊँचाइयाँ देखकर तब भी लोगों के हौसले पस्त हो जाया करते थे। लेकिन उस समय मैंने इन्ही के चरणो में बैठकर ज्ञान पाया था। उसके बाद के तूफानी दौर मे हमारा दुर्भाग्य था, हम इनसे अलग हो गये, टूट गये, बिखरकर दूर भटक गये। लेकिन अब कितने दिन बाद इतनी बड़ी प्रतिष्ठा के सिंहासन पर बैठे रहने पर भी इन्होने मुझे पहचान लिया, जेल के एक ही सीकचों के पीछे हुई वह भूली-बिसरी बातें इनको याद आयी तो आज यहाँ आकर मेरे ऊपर महान उपकार किया।

"दोस्तो ! यहाँ, इनके सामने किसी प्रकार के राजनैतिक विवाद मैं उठाना नही चाहता और आपसे भी यह प्रार्थना करूँगा कि पार्टी अध्यक्ष की यहाँ पर मौजूदगी का आप भी किसी प्रकार का दुरुपयोग न करें। लेकिन इसके साथ, मैं आपको इस बात का भी विश्वास दिला देना चाहूँगा, हमारी बैठक श्रद्धेय पार्टी अध्यक्ष के जाने के बाद भी चलेगी, जिसमे आज खुलकर हमें राष्ट्रीय हितों की भूमिका में, अपनी महान पार्टी के आदर्शों की रक्षा के लिए कुछ न कुछ करना होगा। और मैं आपको यह भी बता देना चाहूँगा, पार्टी अध्यक्ष हमारी बातों पर, समय से, पूरा ···पूरा ध्यान देंगे। लेकिन यहाँ ··अभी···"

रंगीनराय के धाराप्रवाह भाषण के बीच लोबीराम को जरा ऊँघ-सी आने लगी थी। लेकिन जब उनके कान मे खुद अपना नाम सुनायी दिया तो वह सतर्क हो गये। रंगीनराय उनसे उठकर पार्टी अध्यक्ष को धन्यवाद देने को कह रहे थे। अब उनको कुछ तो कहना ही था लेकिन कुछ कह सकने की स्थिति मे वे थे नही। फिर भी उनका नाम तो आ ही गया था।

"साथियो! मैं अपने मित्र रंगीनराय जी का आभारी हूँ। उन्होंने मुझे इस लायक समझा जो मैं पार्टी अध्यक्ष जैसे महान नेता को यहाँ आ जाने के लिए धन्यवाद दूँ। मैं अपनी तरफ से, आप सब लोगो की तरफ से और चौधरी साहब की तरफ से अध्यक्षजी के यहां आने के लिए धन्यवाद देता हूँ। वैसे तो यहाँ किसी भी राजनैतिक विवाद के उठाने की मनाही कर दी गयी है, फिर भी मैं, अध्यक्षजी से इस बात की प्रार्थना कर सकने से कतराने वाला नही हूँ: वह जो यहाँ लखनऊ आये हैं, पार्टी मीटिंग करवाने के लिए तो अगर और कुछ नही तो हमारे प्रजातांत्रिक अधिकारों को सुरक्षित रख सकने मे हमारी मदद करें। हमारे ऊपर मुसीबतों के बादल मँडरा रहे हैं, हमारा दिल भरा हुआ है। इसलिए मैं उनसे प्रार्थना करूँगा वह हम सबके दुख को समझें, हमारी मजबूरियों को जानें और पार्टी के आदर्शों को ऊँचाइयों तक ले जाने में हमें रास्ता दिखायें। हम तो अंधेरों में भटक रहे हैं और दूर···बड़ी दूर कही अगर रोशनी की कोई झलक है तो वह स्वयं अध्यक्षजी के व्यक्तित्व से फूटकर निकलती हुई किरणों से बनती नजर आ रही है। अब मैं कुछ और न कहकर एक बार फिर पार्टी अध्यक्षजी को सम्मानपूर्वक धन्यवाद देता हूँ।"

रंगीनराय का दाँव पूरा उतरा। साँप मर गया और लाठी भी नहीं टूटी थी। तालियों और शोरगुल में दरोगा, मूलचन्द, मनोहरलाल के साथ अन्य लोग लोबीराम को घेरकर प्रशंसा करने लगे। फिर कुछ लोग जब उनको कंधों पर उठा लेने के लिए आगे बढ़े तो रंगीनराय ने मना कर दिया। उसी वक्त पार्टी अध्यक्ष को नाश्ते की मेज की तरफ चलने का अनुरोध करते हुए वह बलदेव चौधरी के साथ हो लिये।

यही मौका था, जब विमलादेवी के दूत ने लोबीराम को आ पकड़ा। बड़ी चिरौरी विनती करने पर वह भीड़ को पार कर बाहर बरामदे के दूसरे कोने की सीढ़ियों से लगी दालान पर विमलादेवी से मिल लेने के लिए आ तो गये थे लेकिन वहाँ वह रुके नहीं। विमलादेवी ने गलती की थी जो उनके आते ही अपना मकसद बता दिया। अभी अन्दर की बैठक में काफी देर पहले चल रहे द्वन्द्व और फिर अपनी राजनीति के नशे मे जूझे हुए लोबीराम को अब उत्सुकदास का संदेशा आ जाने से जहाँ एक तरफ भँड़ास निकालने का मौका मिला था, दूसरी तरफ अपनी ताकत का

अहसास और पक्का हो गया। अब लगा उनको, फैसला ठीक ही था। जब उत्सुकदास खुद तैयार है, तो और लोग तो दुगनी कीमत देंगे और साथ मे सत्ता की साझेदारी भी।

विमलादेवी को भगा देने के बाद लोबीराम अन्दर बैठक की ओर चल देने के लिए बरामदे की बालकनी तक पहुँचे तो लोग-बाग उन्हें घेर-कर सवालों की बौछार करने लग गए। एक-एक कदम आगे बढ़ाना मुश्किल हो रहा था। चारो तरफ जैसे भूचाल आ गया। बस एक ही धमाके मे, बिना साफ-साफ कुछ कहे हुए भी उन्होने इशारे···इशारे में सबकुछ कह डाला था। कुछ ही पलो में···चमचे, चिलगोजे और चकर-बन्ध घुट्टी मारकर बैठे हुए विधायकों को जगाने में लग गये थे। पीछे न छूट जाने के डर से विधायकों का हुज्जूम उमड़ चला। और लोगों की आँखें, इस हैरतअंगेज कारनामे के पीछे, पार्टी अध्यक्ष के होने से हैरान थी। उधर लोबीराम बड़े संतोष, बड़े गर्व से यह सब अपना ही किया हुआ जानकर, आने वाली सुनहरी घडी के लिए तैयार होने लगे थे।

जब किसी भी तरह भीड को चीर सकने मे वह नाकाम रहे और अन्दर तो चाय-पानी मे सबके व्यस्त होने का उनको इतमिनान हो गया, तो लोबीराम, धतूरे के बीज, चरस की सिगरेट और मलाईपान की डोज से ऊब और थकान मिटा देने के लिए वापस मुड चले। यह आज का आखिरी मौका था जब अपने कमरे मे उनको जाना था, फिर तो पार्टी मीटिंग का जटिल युद्ध सामने आने वाला था।

ग्यारह

मंजूर ने जिसे धोबन की गठरी समझा था, वह और कुछ नही मोलोटोव काकटेल का गट्ठर था, और फिर राघव की बेरहम, बेशर्म-सी मोटी आवाज जो उस वक्त जरा तीखापन लिये हुए थी; देख-सुनकर वह चकित हो उठा। अफसोस और निराशा की पैनी-सी चीख उसके अन्दर से उठकर जहन के हर किनारे को भरती हुई; कुछ कह सकने के लिए निकलने वाले लफ्जों को कुचलते हुए जीभ के तालुओं मे जाकर चिपक

गयी। ऐसा नहीं था जो राघव की यह हरकत बेमानी-सी लगे या फिर ऐसा नहीं होगा जिसकी उसे बिलकुल उम्मीद ही नहीं थी। लेकिन आज दारुलशफ़ा के इस माहौल में जब केन्द्र के बड़े नेता मौजूद थे और लोकतान्त्रिक सरकार का गठन होने जा रहा था, इतनी खतरनाक साजिश के अहसास ने पल-भर में ही उसे जड़सहित हिला दिया था। दूसरे ही क्षण उसके सामने अपने भाई मुख्तार अहमद का चेहरा घूम गया और उनकी राघव का जरा ख्याल रखने को कही बात का मतलब भी अब जाकर उसकी समझ में आ गया था।

लेकिन इस वक्त राघव के तेवर ऐसे नहीं थे जिनमे उससे कोई बात कह सकना मुमकिन हो पाता। और फिर कुछ देर पहले तक की सारी हरकतों का हिसाब, उसके इरादों को सामने-सामने साफ कर चुका था। जाहिराना तौर पर, बड़ी कोशिशो में मजूर ने अपनी सारी प्रतिक्रियाओं को दबा लिया और कुछ सोचते हुए, खामोश कदमो से, कमरे के बाहर निकल आया। फिर राघव के बाहरी कमरे मे आते ही, मंजूर बाथरूम में घुस गया।

नहानघर मे पानी का नल पूरा खोलकर, महज राघव को इतमिनान दिलाने के लिए, मंजूर कोई पुरानी गजल गुनगुनाने लगा। हाथो में झिन-झिनी छूट रही थी, पैरो मे कमजोर होता हुआ नशा, चीटियो की शक्ल मे रेंगने लग गया। साथ-ही-साथ वह बड़ी तेजी से सोच रहा था। भाई मुख्तार अहमद के पास तक पहुँच न पाने का अहसास और खुद ही इन सारे झमेलों से निपटना होगा, इस जानकारी ने उसके अन्दर चिढ़ और कुढ़न की लहरें उठा दी। नहाने-धोने मे उसका जी तो लग नहीं रहा था, फिर भी बाहर निकल आने की भी उसे जल्दी नही थी। क्योंकि बाहर फिर उसे राघव का सामना करना था। और राघव का सामना कर लेने से पहले वह बचाव का कोई रास्ता निकाल लेना, ढूँढ लेना चाहता था। काफी देर तक नल से गिरते हुए पानी को बीच-बीच में छेड़ते रहने से मंजूर के दिमाग मे फिर से हरकत होने लगी तब एकाएक उसके जहन में एक ख्याल न जाने खुदा के करम से कैसे उठकर बैठ गया जिसके साथ ही वह बस खुशी मे हल्के-हल्के सीटी निकालने लगा।

उधर राघव अपने सलूक पर कुछ शर्मिन्दा हो गया था। बात उसने कोई सख्त तो नहीं कही, लेकिन सख्त बात कह देने से बड़ी हरकत की

थी उसनें। एक तो मंजूरभाई के कमरे में बारूद के गोले, बिना जाने-बताये रख छोड़े, ऊपर से उस वक्त जब वह हँसी से दोहरे-तिहरे हो रहे थे, उस समय जब खुद उसे खुश कर सकने को वह कहकहे लगाये जा रहे थे, उस समय उसने एक तरह डाँट दिया था उनको। बस, सामने चेहरे पर से हाथ बढ़ाकर जैसे एक प्यारी-सी श्रदा छीन ली थी। श्रादतन-वसूलन और लिहाज के खातिर वह ऐसा करता नहीं, लेकिन खुद अपनी गलती छिपाने भर को उससे ऐसा हो गया था।

अब मंजूरभाई बाथरूम से निकलेंगे तो उनका सामना कैसे करेगा, इसकी फिक्र हो चली थी राघव को। स्वाभाविकता, अपनेपन का मुखौटा जब खुद राघव ने उनके चेहरे से उतार लिया तो अब कहेगा क्या वह। मंजूरभाई, उसके गुरु मुख्तार अहमद के भाई ही नहीं, खुद उसके जिगरी दोस्त थे। फिर इधर काफी दिनों से वहीं रहता था वह। बड़े अहसानात थे मंजूरभाई के उसके ऊपर। न जाने किस लिहाज से वह किसी भी पल उसे पलकों से श्रोझल तक नहीं होने देते। जरा देर के लिए जो वह कहीं चला जाये, बस आसमान उठा लेते हैं। जब तक वह लौट नहीं आता, दसियों जगह पर जाकर पूछ आते, "भला राघव को देखा···अरे राघव दिखा क्या?" "कहाँ होगा राघव?", "इधर तो नहीं आया राघू?"

राघव और मंजूर के जिस्म तो दो थे लेकिन जान एक ही थी। लेकिन इधर कुछ दिनों से राघव में बड़ी तेजी से बदलाव आया था। यह बदलाव शायद इसीलिए आया हो क्योंकि मंजूरभाई विधानसभा के सदस्य हो लिए और वह अभी भी सड़कछाप नेता था। या फिर इतने दिनों तक की लड़ाई में अपने लिए, आदर्शों, उद्देश्यों के लिए, गरीब मज-दूरों, किसानों के लिए, तनिक भर हासिल न कर पा सकने का अहसास उसे मारे डाल रहा था। न जाने क्यों उसे लगने लग गया जो और आगे बढ़कर उसने इंकलाबी दौर में अगला कदम नहीं उठाया तो घिसी-पिटी व्यवस्था का, किसी वक्त, किसी वक्त भी वह हिस्सा बना लिया जायेगा। उसे भी लोग फाँस लेंगे, वैसे ही, जैसे मंजूरभाई को फाँस लिया। तब वह किसी काम के लायक न रह पायेगा। और तभी से राघव का दिमाग तो छिटककर अलग हो गया लेकिन दिल फिर भी मंजूरभाई से ही जुड़ा रहा—उनकी गर्मजोशी में सराबोर, बेहिसाब डूबा हुआ!

और कोई वक्त होता तो राघव वहाँ से चला जाता। मंजूरभाई का

सामना न कर सकने के लिए, वह कुछ भी कर बैठता—गायब हो जाता, कहीं भी भटकता रहकर तब तक नहीं लौटता, जब तक उसे अपनी जहालात से ज्यादा मंजूरभाई पर तरस नहीं आने लगता। लेकिन आज की बात और थी। आज वहाँ बारूद का गट्ठर रखा हुआ था। और फिर उसकी बाबत मंजूरभाई को पता लग चुका था। हालांकि उसे इस बात का पूरा यकीन था, उसकी इजाजत के बिना अब मंजूरभाई गट्ठर को हाथ भी नहीं लगायेंगे, फिर भी एहतियातन वह वहाँ से जा नहीं सकता था। बारूद के गट्ठर के अलावा अपनी योजना से ताल्लुक गुदगुदाहट उसे लगातार छेड़ती जा रही थी। अभी न सिर्फ कुछ और सोचना बाकी था, उसे अभी अपने चन्द साथियों का भी इन्तजार था, जो उसे लेने के लिए आने वाले थे।

इससे पहले राघव आगे का कोई और रास्ता सोचता या फिर ख्यालों की बुलन्दियों की उड़ान में खो जाता, बाहरी कमरे का दरवाजा खटका, जिसके साथ चौकन्ना होकर वह उछल खड़ा हुआ। उसे लगा यहाँ से तिल-भर भी हटना ठीक नहीं था। अपने मकसद की कामयाबी के लिए, अब वह हर पल उसे यहीं पर मौजूद रहना होगा। लेकिन दरवाजे के अन्दर जाकर, जब सी० पी० ने पर्दे हटाकर उसकी ओर देखा तो अनायास ही राघव ने कह डाला, "धत तेरे की!"

"लो, अब इनको देखो, यहाँ बैठे हैं। भला वहाँ से कब खिसक आये?"

"क्यों?"

"अरे उस वक्त हम तुम्हारे पास ही तो आये रहे!"

"मेरे पास? मुझसे भला क्या काम था?"

"काम तो कुछ खास नहीं था···लेकिन अब बैठूँ तो! तेरे को ढूँढते-ढूँढते थक गया यार!"

"ढूँढते-ढूँढते, और फिर मुझे? मैं कहाँ की तोप हूँ?"

"अरे यार तुम मेरी तोप हो!" सी० पी० कुर्सी पर बैठ गया था। पैरों से चप्पल उतारकर पालथी मारते हुए उसने आगे कहा, "न जाने क्यों उस वक्त मंजूरभाई ने मुझे यहाँ आने नहीं दिया या फिर उनको पता नहीं होगा, तुम साले यहाँ होगे?"

"हाँ, भला उन्हें क्या पता। मैं तो ऐसे ही चला आया था!"

सी० पी० का आना वैसे तो राघव को बुरा ही लगता, पर इस वक्त जब उसे यहाँ से हटकर जाना नहीं था और अकेले में मंजूरभाई का सामना कर सकने की स्थिति में भी वह नहीं था, उसका आना कुछ खास खला नहीं। लेकिन वह बस थोडी देर तक के लिए ही उलझना चाहता था। उसे मालूम था, सी० पी० जैसे चिपकू किस्म के आदमी से जल्दी-जल्दी छुटकारा पाना मुमकिन नहीं। इसलिए उसने फौरन बातचीत का सिलसिला शुरू कर दिया, "तो गुरु, चक्कर क्या है?"

"चक्कर नहीं, घनचक्कर कहो!"

"वह कैसे?"

"क्या है, राघू, आज तो हम फँस गये!"

"फँस गये?"

"हाँ-हाँ, अच्छे-खासे फंसे हैं अब!"

"पहेलियाँ बुझाने से क्या होगा?"

"यहाँ तो पसलियाँ तक गिन लेने की हसरत पूरी नहीं हो पाती, अब देखो, पहेलियाँ कौन बुझायेगा?"

"तो फिर?"

"राघू, मेरे जुलूस का क्या होगा?"

जिस दयनीय भाव से पूर्ण कातरता की मुद्रा में सी० पी० बोला था, उसे सुनकर राघव को एकाएक हँसी आ गयी। हँसी तो रुकने का नाम नहीं ले रही थी, हाँ उसके साथ इतनी देर से धुन्ध में उलझे हुए मन के तार सुलझने लगे। एक तरह का संतोष, राघू की हस्ती में समाने लग गया। उसे लगा सी० पी० ने यहाँ आकर ठीक ही किया। फिर जब हँसी का दौर कम हो गया, तो उसने कहा, "अरे सी० पी०, जुलूस निकालना भला इतना मुश्किल कब से होने लगा। यही तो इल्म था तुम्हारे पास, इसीलिए तो सब सारे बर्दाश्त करते थे।"

"हाँ-हाँ, और तो हममें कुछ है ही नहीं। घर छोड़ा, बीबी छोड़ी..."

"फिर कहोगे बच्चे छोड़े..."

"देखो राघू!" सी० पी० ने हाथ उठाकर धमकाया।

"बुरी लगती है बात, तो मेरे सामने कुर्बानियों का हिसाब न दिया कर। तुम सारे घर क्या खाकर छोड़ोगे? लतियाकर भगा दिया था

घरवाली ने, अब आये हैं बातें बनाने !"

सी० पी० रुआँसा हो गया था। मजाक में ही सही, राघव ने उसकी दुखती रग छेड़ दी थी। वह तो आदतन यह सब कहता और लोग उसकी बरजोर, छिनार औरत के बारे मे जानते जरूर थे, लेकिन आमने-सामने कोई कहता नहीं। आज राघव ने बड़े दिन बाद साफ बात कह डाली थी जिसकी वजह से उसे लगा, वह एकाएक पूरा नंगा हो गया है। फिर लम्बी साँस जो किसी जलती हुई आह से कम न थी, छोड़ते हुए, वह दर्द-भरी आवाज मे बोला, "हाँ राघू, खोट जब अपने अन्दर है तो और किसे कहे, किसका मुँह बंद करें ? वह ससुरी बदजात, हरामजादी, कुतिया है, यह तो सभी जानते है, लेकिन एक बात कोई नही जानता, घर मैंने खुद छोडा था ? और घर छोड़ देने के पहले उसे इस काबिल बना आया था जिससे आगे बदकारी करने लायक ही न रहे ?"

"ना रे, सी० पी०, ना···मेरा ऐसा कुछ मतलब नही था, मैंने तो बस ऐसे ही छेड़ दिया था।" राघव को अपनी गलती का अहसास हो गया और बात सँभाल लेना ही उसने ठीक समझा, "चलो·· चलो भूल जाओ वह सब। हाँ तो जुलूस का मामला अभी बना नहीं क्या ?"

तब तक सी० पी० भी सँभल गया। वह जानता था, जब राघव ने अपनी गलती समझ ली तो बात आगे बढाने से जहालत ही हाथ लगनी थी। कोई सुखद प्रसंग तो था नही जिसमे भिडा रहता।

"कहाँ बना ! सब साले सर पै सवार हैं ! कहते हैं सर फोड़ो, कुछ भी करो, जहाँ से भी लाओ, कुछ होना है आज !"

"कित्ते मिले ?"

"मिले तो हैं पचास···साठ, लेकिन अधकचरे हैं सब ! ठीक से नारे भी नहीं लगा पाते !"

"अरे, भय्ये, नारे लगाने के लिए कलेजे मे दम और दिमाग मे जोश चाहिए !"

"सो तो है !"

राघव ने सी० पी० को बताया था, इसलिए वह और से पेश आ रहा था, "तो क्या सोचा है ?"

"मेरी तो कुछ भी अक्ल में नहीं आया। ये सब जो पुलिस की एक घुड़की में भाग खड़े होवेंगे !"

"फिर !"

"तुम्हारे पास तभी श्राया हूँ, वैसे उन्हें तो बी ब्लाक के पिछले मैदान में रोक रखा है।"

"मैं कर क्या सकता हूँ ?"

"अरे राघू, यह तुम कह रहे हो ? क्या कर सकता हूँ ? तुम गुरु, तुम क्या नही कर सकते !"

"मतलब !"

"मतलब सीधा है, अगर तुम चाहो तो सबकुछ हो सकता है।"

"वह कैसे ?"

"अच्छा तो सुनो," सी० पी० के तेवर बदले हुए थे, "आदर्श और इन्कलाब यहाँ बैठे-बैठे नही आयेगा। उसके लिए सड़क पर लड़ाई लड़नी होगी। जेहाद बोलना होगा। माना, आज तुम्हारी पार्टी अलग है, मेरी अलग। लेकिन कुछ दिन पहले तक हम एक ही पार्टी में थे। हम दोनो समाजवाद के लिए प्रतिक्रियावादियों के खिलाफ बड़ी-से-बड़ी कुर्बानियाँ दे देने के लिए जूझे हुए थे। आज प्रतिक्रियावादियों का बाप उत्सुकदास जब मुख्यमंत्री बनने जायेगा तो क्या हमे सांकेतिक विरोध भी नही करना चाहिए ? सवाल पार्टी की लोकतांत्रिक सरकार का नही, सवाल उत्सुकदास जैसे जालिम के ऊपर सीधे हमले का है।"

"लेकिन…"

"मुझे कहने दो, राघू ! आज, सच पूछो तो यह जुलूस के लिए आदमी जुटाने का तो सब नाटक था। असल में हम लोग कुछ कर गुजरना चाहते थे। ऐसा कुछ जिसे देखकर मुख्यमंत्री बन जाने के बाद भी उत्सुकदास के अन्दर एक दहशत, कोई डर घर कर जाये। और फिर वे तमाम पढ़े-लिखे, मध्यम श्रेणी के लोग जो बुर्जुवा शासन का सड़ा हुआ हिस्सा बनकर जी रहे है, अलग हों नही तो अलग होने की सोचने लग जायें या फिर अपनी सड़ांध निकालकर फेंक दें और कभी-न-कभी हमारे आंदोलन के लिए गाहे-बगाहे सहयोग दें।"

"तो ? क्या सोचा है ?"

"आज गुरिल्ला लड़ाई होगी। इसलि…
पुलिस का घेरा तोड़कर राजभवन की दीव…
जायें और उत्सुकदास के हाथ से शपथ

"पूरा इतमिनान है तुम्हे ?"

"हाँ !"

"क्या उम्मीद रखूँ, अगर चार इन्कलाबी तुम्हारे चार जत्थे के साथ भेज दूँ तो यह बात छिप सकेगी ?"

"क्यों नही ?"

"पर यह इतना आसान नही है ! तेरे को कसम उठानी होगी, जो मेरा नाम आया, अगले दिन काटकर फेंक दिये जाओगे ।"

"ऐसा ?"

राघव के दिमाग में बात साफ हो चुकी थी । वह खुद इतनी देर से इसी उधेड़-बुन मे था, आखिर कैसे, कहाँ और कब बारूद के गोले फेंके जाएँ । अब सी० पी० की योजना सुनकर उसे लगा अगर अपने इंकलाबियों को इसके आदमियों में घुसपैठियों की तरह मिला दिया जाय तो जब तक इसके जत्थे नाटक करें, इकलाबी अपना काम निपटाकर निकल जायें । फिर भी एक-दो बातें और थी ।

"सी० पी०, तुमको मेरी कही बात का बुरा नहीं मानना चाहिए, लेकिन क्या है, हम इंकलाबी तुम्हारी बुर्जुवा विचारधारा वाली पार्टी के संग खुल्लमखुल्ला मिल-जुटकर कोई भी एक्शन नहीं ले सकते । और यह तुम्हारे खुद के हित मे नही होगा ।"

"सो तो है ।"

"फिर ऐसा करो, हमारी बातें टाप सीक्रेट रहेंगी । तुम्हारे चारों जत्थों में हमारे लोग शामिल हों । सभी आदमियों को कब क्या करना यह बताते रहे और वहाँ तुम अपना काम करो और हम अपना । हम दोनों वहाँ आपस में बातचीत नही करने के !"

"ठीक !"

"और अपने जलूसियों से कह देना उन्हे जैसा कहा जाय वे वैसा ही करें, नही तो वही के वही ढेर कर दिये जावेंगे !"

"नही, राघू उन्हे डराना ठीक नही होगा ।"

"क्यो ?"

"इससे उनके ऊपर बुरा असर पड़ेगा । वे तो सबके सब वैसे ही लँगोट बाँधकर आने वाले हैं । उनको हुक्म मिलेगा तो पुलिस तक की ~धिया बैठा देंगे लेकिन अगर डरा दिया गया तो मौका मिलते ही भाग

लेंगे।"

"लेकिन झण्डा ?"

"झण्डा तो हमारा होवेगा !"

"वाह ! वाह !"

"नही राघू, इसमे कोई समझौता नहीं होने का। झण्डा तो हमारा ही रहेगा।"

पहले तो राघव का मन हुआ सब बात तोड दे···इसी प्वायन्ट पर सी० पी० को भगा दे। फिर यह उसके भी हित में होगा, यह सोचकर वह खामोश रह गया। झण्डा इनका, बारूद हमारी और मारे जायेंगे ये ही साले। एक बुर्जुवा दूसरे को पीटेगा।

राघव ने सी० पी० की शर्त तो मान ली थी, फिर भी उसे यह सब अच्छा नही लग रहा था। इसकी दो वजह थी। एक तो सी० पी० वैसे तो ठीक आदमी था लेकिन इंकलाबी दौर के लायक था भी या नही और दूसरे उसकी सियासती पार्टी बुर्जुवा किस्म की थी। फिर भी सवाल सी० पी० का नही था, सवाल उसकी बुर्जुवा किस्म की पार्टी का नही था, सवाल बारूद के धमाके का था जो आज लोकतांत्रिक नकाब ओढ़े हुए जालिमों को दहलाने के लिए बहुत, बहुत जरूरी था। वसूलों, इंकलाबी आदर्शों, जिनके वास्ते ही शायद उसने जिन्दगी समर्पित कर रखी थी, उसे हर तरफ खीचते और जिम्मेदारियों का बोझ उठाये उसने बार-बार अपने मकसद, अपने आदर्शों के लिए शहीद हो जाने की ही दुआ माँगी थी। वह जजबाती हदों तक जिन मजदूर-गरीबो के दुख से बँधा था, उसकी कोई हद नहीं थी।

सी० पी० बेचारा कहीं फँस न जाये, बस यही खरोच उसे चुभ रही थी। सी० पी० को जुलूस, प्रदर्शन का हल्ला बोलना था, बारूद का धमाका खुद उसे मार न डाले। कही उसकी भोली-भाली योजना किसी बदनुमा दाग की शक्ल बनकर, हमेशा के लिए जेल, सजा के काले अँधेरो मे गुम न हो जाये। अगर कोई बड़ा आदमी व्यवस्था का कोई ठेकेदार होता तो भले ही उसकी जान चले जाने का भी खतरा होता तो एक पल को भी उसे हिचक न हुई होती। लेकिन सी० पी०, सी० पी० तो खुद एक अपने ढंग से इंकलाबी दौर का हिस्सा था। वह खुद व्यवस्था के जागीरदारो के खिलाफ जेहाद बोले हुए था। वह तो समाजवाद का सिपाही था। उसे

ऐसे ही आग में ढकेल देना मुनासिब नहीं था। राघव को बड़ी तकलीफ हो रही थी लेकिन वक्त कम था और कुछ हो भी नहीं सकता था, उसे सही बात बता देना भी मुमकिन नहीं था। और फिर वह खुद राघव के पास आया था। खुद तो उसे बुला लेने गया नहीं था। अफसोस की गहरी साँस निकालते हुए राघव ने कहा, "तो चलो तुम्हारे आदमी देखें तो, वे हैं कहाँ?"

"वे तो उधर बी ब्लाक के पीछे जमा होंगे, और तुम्हारे लोग?"

"हमारे···हमारे वे तो वहीं पहुँच जायेंगे।" राघव असल में सी. पी. की बात से हड़बड़ा गया था। अपने इंकलाबी साथियों से सी. पी. को मिला देना किसी तरह उचित नहीं लग रहा था और अभी तो वे सब रात की तैयारी में जुटे होंगे। इसी बौखलाहट में उसने सी० पी० की ओर जब अपनी बात को बिना किसी सवाल के मान लेने के लिए देखा तो उसकी नजरें सी० पी० के पीछे आकर खड़े मंजूरभाई से मिल गयीं।

मंजूरभाई के अंदाज ही बदले हुए थे। पिछली बातें जैसी हुई ही नहीं और अगर हुई भी तो नहा-धोकर वह उन्हें वहीं बाथरूम में ही छोड़ आये थे। जोश के सैलाब सँभालते हुए मंजूरभाई ने कहा, "अरे···अरे रुक क्यों गये···बोलो···बोलो क्या मजाक चल रहा था?"

"मजाक?" राघव को जैसे झटका लग गया था। उसे हैरत थी मंजूरभाई के लहजे पर। इतनी खतरनाक साजिश के सबसे अहम् दौर में वह कह रहे थे, क्या मजाक चल रहा था, "कमाल है मंजूरभाई, तुमको यह सब मजाक लग रहा है।"

"अरे बच्चे हो तुम···सी० पी० भी बच्चा है। बच्चे मजाक नहीं करेंगे तो क्या हमारे जैसे खानदानी बुजुर्ग लोग करेंगे।" बिना कफ के खाँसते हुए मंजूरभाई ने कहा।

"हाँ···हाँ, क्यों नहीं, तुम तो दादा की उम्र के हो?" राघू ने चुटकी ली।

"क्या है, राघू उम्र दो तरह की होवे है?"

"वह कैसे?"

"एक तो शरीर की और एक···"

"और एक लोबीराम की!"

"हो···हो···हा···हा···" मंजूरभाई चीखने लगे। फिर अपने को

रोककर बोले, "बात तो पूरी कर लेने दो।"

"हाँ···हाँ, उतर गयी हो तो बोलो।"

"तो मैं कह रहा था, दूसरी उम्र होती है ग्रक्ल की।"

'जो ग्रापने उधार बाँट रखी है!"

"बाँटने से भला ग्रक्ल कहीं कम होवे है?"

"ग्रच्छा छोड़ो भी, यह रागबट्टा!" सी० पी० ने कुछ ऊबते हुए कहा।

इसी बीच राघव ने सी० पी० को ग्राँख मारकर चुप रहने का इशारा किया ग्रौर खुद बोल पड़ा, "मजूरभाई! ग्राप तो इधर ही हैं ना, हम लोग जरा ठेके तक हो ग्रायें।"

"ठेके पर···ग्राज के दिन भला वहाँ क्या जाना?"

"क्यों···क्यों भला?"

"ग्राज दारुलशफा का त्योहार है जो।"

"त्योहार?"

"मन्त्रिमंडल बनेगा, प्रजातांत्रिक सरकार···"

"देखा! देखा सी० पी०, बड़ी उम्र वाली ग्रक्ल की बात!"

सी० पी० जरा ग्रच्छे मूड में ग्रा चुका था क्योंकि जुलूस के सिलसिले में उसकी तमाम समस्याएँ राघू ने हल कर दी थीं। इसीलिए वह दोनों की नोकझोंक पर मजे ले-लेकर हँस रहा था।

"ग्ररे राघू तू किसके चक्कर में पड़ा है, ये ग्रब पहले वाले मंजूरभाई तो रहे नहीं! ये तो जब राजभवन में शपथ समारोह चल रहा होगा, बाहर खड़े होकर ढपली बजाने वाले थे तो मैंने रोका···मुख्तार साब की इज्जत का वास्ता दिया तब···"

"ऐ सी० पी० क्या बकता है?"

"हाँ, हाँ, सी० पी० तो बकता है ग्रौर ग्राप···मंजूरभाई!"

"कुछ भी हो, भाईजान का नाम भला क्यों बीच में लाया?"

"सजधज कर जो ग्राये, फिर त्योहार की बात जो कह दी। वहाँ नहीं तो रमजानी बुग्रा के घर जायेंगे।" सी० पी० ने उछाल मारी।

मंजूरभाई ने ग्राँखें मटकाकर पहले राघू को चिढ़ाया ग्रौर फिर राघू की ग्रोर देखकर बोले, "ग्राज बेट्टा मैं वहाँ जाऊँगा जहाँ इस दिल को करार ग्रा जाये।"

बचे हुए चन्द लमहों में, भूली-बिसरी जिम्मेदारियाँ निभा सकने के हसीन इरादे तड़फड़ाने लग गये।

असल में जिस दौरान राघव ने सी० पी० के साथ मिलकर जुलूस के जत्थों के जरिये बारूद के गोलों का धमाका कर सकने की साजिश की थी, उसी बीच नहाने के नल से तेज रफ्तार में गिरते पानी से छेड़-छाड़ करते हुए मंजूरभाई ने भी अपनी साजिश को अंजाम दे डाला था। जहाँ एक तरफ राघव की साजिश इंकलाब की गहरी आस्था से निकली थी, और सी० पी० की प्रजातान्त्रिक जद्दोजहद से, वहाँ मंजूरभाई की साजिश प्यार-मोहब्बत के उन जजबाती रिश्तों की बिना पर टिकी थी जिसके लिए, उन्हें लग रहा था, बड़ी'''बहुत बड़ी एक जिम्मेदारी बराबर उनको मजबूर किये जा रही थी। अपनी आँखों के सामने वह जान से भी ज्यादा अजीज और बड़े भाई के हबीब राघव को तबाह होते भला कैसे देख पाते।

मंजूरभाई को बारूद के गट्ठर देख लेने के बाद, दारुलशफा में केन्द्रीय नेताओं की मजलिस और ऊपर से नयी सरकार के गठन से सम्बन्धित हालातों को तौलने-नापने के बाद, इस बात का पूरा यकीन था, राघव वे बारूद के गोले और किसी पर तो नहीं खुद अपने ऊपर फेंक लेने वाला था। और कोई मौका होता तो शायद मंजूरभाई इस साजिश से हाथ झाड़कर अलग हो जाते या अगर मुमकिन हो सकता तो पलीते में आग तक लगा देते। लेकिन आज का खेल खतरनाक ही नहीं, जान लेवा था, जिसके बाद राघव के हमेशा-हमेशा के लिए खत्म हो जाने का खतरा पैदा होने वाला था।

कुछ सी० पी० की बातों की भी भनक उनके कान में पड़ी थी। मंजूरभाई जानते थे, राघव जैसा इन्कलाबी, बिला खास मकसद के, सी० पी० जैसे पेशेवर जुलूसबाज के साथ कोई राजनैतिक या इंकलाबी एक्सन करने वाला नहीं था। इसलिए और उनको अपनी साजिश को पूरा अमल कर लेने की जरूरत का अहसास होने लग गया था। क्योंकि उनको शक था, सी० पी० एक अनाड़ी था और वह राघव को फँसा देगा। भले ही राघव ने उसके ऊपर विश्वास कर लिया हो, उनको सी० पी० पर ज़रा भी भरोसा नहीं हो पा रहा था।

मंजूरभाई को राघव के अभी कुछ देर तक न लौट पाने का प्र

वह बाहर से आये हुए रिक्शे के खाली हो जाने तक रुके रहे।

रिक्शे वाले से रिक्शा अपने फ्लैट के सामने वाली मुंडेर तक ले आने को कहकर मंजूरभाई वापस चल दिये। बरामदे के पार, दूर तक घूमकर, बी ब्लाक के सामने की सड़क तक वह झांक आये। फिर दूसरी तरफ के आने के रास्ते को भी देखा उन्होने। इस तरह उनको इतमिनान हो गया। अगले दस मिनट तक राघव के लौट आने का अंदेशा नही था। वापस लौटते समय उनकी रफ्तार काफी तेज थी और जहाँ भी मैदान साफ देखा, करीब-करीब दौडकर उन्होने फासला तय किया। एक तो वे मिले हुए वक्त का फायदा उठाना चाहते थे, फिर उनको रिक्शे वाले के चले जाने का भी डर था। ऊपर से उढ़के हुए दरवाजे बार-बार उनके दिल मे खुल जाने जैसी दहशत पैदा कर रहे थे। असल मे दहशत दरवाजे खुल जाने की बात से नही थी, दहशत तो वहाँ कमरे में रखे हुए बारूद के गट्ठर की थी।

कमरे के सामने पहुँचते ही मंजूरभाई बाहर रिक्शे वाले को न देखकर परेशान हो गये। गनीमत थी रिक्शा वहाँ था। फौरन पलटकर वह कमरे के अन्दर गये और सरसरी तौर पर सब ठीक देखकर वापस आकर मुंडेर पर टेक लगाकर खड़े हो गये। हर एक गुजरते सेकेन्ड पर उनको पसीने छूट रहे थे। दूर तक देख आना भी, उनको अपनी बेवकूफी ही लगा, जिसकी वजह से ही एक तो उतना समय जाया हुआ, ऊपर से ससुरा रिक्शेवाला खिसक गया था। शायद फाटक के करीब से रिक्शे वाले ने उनको मुंडेर पर बार-बार मुक्के मारते देख लिया था। वह भागता हुआ आया और उनसे लगा माफी माँगने। बस एक करारी डाँट बताकर मंजूरभाई ने उससे वही मुंडेर की उस तरफ की दीवार से लगकर खड़े रहने को कह दिया।

पैनी निगाहों से सामने फाटक से लेकर, दूर बरामदों तक खूब अच्छी तरह एक बार और उन्होने कुछ क्षणो तक देखा और अन्दर की ओर चल दिये। मजूरभाई जब लौटकर बाहर आये तो दोनों हाथों से बारूद का गट्ठर उठाये हुए थे। वजन काफी होने की वजह से, दोनों हाथ लगा लेने पर भी गट्ठर ठीक से उठ नही पा रहा था। इतनी देर मे ही वह हाँफने लगे थे। रिक्शे वाले को उनकी हालत पर तरस आ गया और वह तपाक से मुंडेर पर कूदकर चढ़ गया। वहाँ से नीचे की ओर झुककर, उसने

से गट्ठर ले लिया और उसे मुंडेर की दीवार पर रखकर बाहर की तरफ कूद आया। अब मंजूरभाई ने पूरा जोर लगाकर गट्ठर नीचे की तरफ बढ़ा दिया, जहाँ उसे रोककर रिक्शे वाले ने सँभालते हुए रिक्शे में रख दिया। फिर मंजूरभाई ने रिक्शे वाले से हुड चढ़ाकर रिक्शा फ़ाटक के बाहर ले जाने को कहा।

कमरे का दरवाजा बंद कर लेने के बाद उनको इतमिनान हुआ। लेकिन उनका इतमिनान बड़े कम वक्त के लिए था। क्योंकि जरा-सा आगे बढ़ने पर उनको रंगीनराय के यहाँ से छूटे हुए विधायकों और खुराकियों ने घेर लिया। बड़ी मुश्किल से जान छुड़ाकर वह भागे। उतने ही बीच उनकी हालत काफी पतली हो चुकी थी। एक तो वक्त कम होने का डर था, फिर यह भी मन में भय जग रहा था कि कहीं बाहर खड़ा रिक्शा वाला गट्ठर लेकर ही चंपत न हो जाये।

बारह

मेढ़ूखाँ की सराय के खँडहर से निकलकर बिरजू बाहर आ गया था। उसके जहन में इस समय तमाम खयालों ने चिन्दियों जैसे उड़-उड़कर गुदगुदी मचा रखी थी। बस उसकी समझ मे नही आ रहा था, यह गुदगुदी चरस की सिगरेटों ने लगायी थी या उन कोयले से खींची गयी लकीरों ने,जो चमकी के लिए थी और जिन्हें आज वह आखिरी बार हमेशा-हमेशा के लिए मिटा देने वाला था, या फिर यह लछमनिया के जवान जिस्म की खुशबू थी जो बार-बार महक मार रही थी। लेकिन साथ-ही-साथ न जाने क्यों, इतनी देर की दिमागी खोज-बीन में, तसव्वर की उधेड़-बुन में उसके अन्दर अनजानी डर की छायाएँ भी मँडराने लग गयी थी।

बिरजू के जिस्म के अन्दर यह डरावनी छायाएँ दो सबब से उमड़ पड़ी। एक तो लछमनिया को साथ लेकर बम्बई चले जाने का था। उसे मालूम था, इसमें खतरा था। लखनऊ से बम्बई तक का लम्बा सफर तीस घंटे का था, जिसके दौरान किसी वक्त भी वह पकड़ा जा सकता था। वैसे अपने खुद के पकड़ लिये जाने का उसे कोई अंदेशा नहीं था। वह तो वेद

बदल लेने में माहिर था। फिर फुर्तीली उछल-कूद और लम्बी दौड़ में भी उसका मुकाबला कर सकने वाले बहुत कम थे। लेकिन लछमनिया के साथ होने पर वह न तो मौके पर भाग पायेगा और ना ही अकेले भाग पाने पर उसके बच जाने की उम्मीद रहेगी। दूसरा, उसके डरने का सबब, लम्बी चोरी कर लेने का लालच था, जिसके बाद जाहिर था, बड़े पैमाने पर उसे ढूंढ़ लेने के लिए एक लम्बा, कभी न खत्म होने वाला चक्र चलने वाला था। अभी तक की छोटी-छोटी, बिखरी हुई चोरियों को तो उसे लग रहा था, वह झेल लाया था। खुद अपनी मौजूदगी में चोरियों के इतने दिनों बाद तक उसे किसी भी बड़े खतरे का अहसास भी नहीं हो पा रहा था।

लेकिन अब इतने करीब आकर पीछे हट जाना भी उसे भला कैसे अच्छा लगता! एक-एक कदम, एक-एक बात उसने अच्छी तरह गहराई में पैठकर समझ ली थी। फिर आज के हमले में, पहली बार यकीन और इतमिनान दोनों था। प्यार-मोहब्बत से सराबोर, खुद उसके नीचे दबी लछमनिया उसकी साझेदार थी। पहली बार इतनी आसान और फिर इतनी बड़ी वारदात कर पाने का मौका भी छोड़ सकने की हालत में वह नहीं था।

वैसे तो बिरजू ने लछमनिया को साथ लेकर जाने का ही फैसला किया था; लेकिन लम्बी रकम और लछमनिया के एक साथ गायब हो जाने पर उसे साफ-साफ अपने पकड़े जाने और इतने दिनों की मेहनत के नेस्त-नाबूद हो जाने के आसार भी नजर आने लगे थे। इसीलिए वह इस समय आगे का कोई कदम उठा लेने के पहले लछमनिया से एक बार और मिल लेना चाहता था।···वह सोच रहा था, अगर लछमनिया कुछ दिन यहीं रुक जाने के लिए राजी नहीं होगी तब वह क्या करेगा? गच्चा देकर भाग लेने में खतरा था और उसे साथ ले जाने में उससे भी बड़ा खतरा!

लेकिन बिरजू को मालूम था, अब लछमनिया के संग बात हो पाना मुमकिन नहीं है। जो योजना बनी थी, दोनों में जो तय हुआ था, उसके अनुसार दारुलशफा के इलाके में लछमनिया उसे पहचानेगी तक नहीं, उसकी ओर देखेगी तक नहीं और अकेले में बात कर लेने का तो सवाल ही नहीं उठता था।

बिरजू बेलदारी लेन पर की तरफ वाली चारदीवारी के करीब खड़ा होकर बड़ी हसरत से, बड़ी प्यारी-प्यारी नजरों से दारुलशफ़ा को बेदाग

इमारत को देख रहा था। यही तो थी वह जगह, जिसने कुत्ते से भी बदतर उसकी जिन्दगी को ठहराव दिया था। बम्बई की जेल से लेकर अलीगढ़, कानपुर, बरेली, इलाहाबाद और फिर लखनऊ तक की उसकी जिन्दगी भटकाव, धक्कों और ठोकरों से तार-तार हो चुकी थी, जब उसे दारुलशफ़ा में सहारा मिला था।

दारुलशफा बिरजू के लिए एक इतिहास बनकर रह गया था। एक ऐसा सुनहरा इतिहास जहाँ उसने वह सब कुछ पाया था जो उसके जैसा अदना आदमी कभी ख्वाब तक में नहीं देख सकता। कितने साफ-सुथरे तरीके से, किस्तों में उसने जितनी दौलत जमा कर ली थी, वह उसे काफी दिनों तक सहारा देने वाली थी। फिर यह दौलत, उसने जिस माहौल में, जिन लोगों के खीसे से निकाल ली थी, उससे किसी तरह का अफसोस या सदमा नहीं था। उसे लग रहा था जैसे दयावान ईश्वर, रहमदिल खुदा, उसका परवरदिगार, उसके ऊपर बख्शीशों की बौछार किये जा रहा था और उसकी झोली इतनी छोटी थी, जिसमें यह सब समा नहीं पा रहा था। आज अब यह जो आखिरी मौका उसकी पकड़ के इतना करीब आने लगा था, उसके बाद तो उसे हमेशा-हमेशा के लिए बहुत बड़ा आदमी बन जाना था।

और सबसे बड़ी चीज जो दारुलशफा ने उसे दी थी, वह तो उसके दिल और दिमाग की तमाम हदों को पार कर उसकी आत्मा की अंदरूनी तहों तक को छू-छूकर आज तक खुशियों के समन्दर उठाने लगी थी। यह खुशियों की फुलझड़ियों में सराबोर चीज और कोई नहीं, लछमनिया थी। वह लछमनिया जो अब तक उसका अपना हिस्सा बन चुकी थी। एक ऐसा हिस्सा जिसे वह काटकर फेंक नहीं सकता था, और ना ही उसे अभी से पूरी तरह अपने से, तुरन्त आने वाले लमहों में, दिनों में, जोड़े रख सकता था। जहाँ एक तरफ उसे लछमनिया से प्यार था, उसके बिना कभी-कभी तो पल-भर दूर रह पाने की हालत में वह नहीं रह जाता। फिर भी दूसरी तरफ वह ऐसी कोई बेवकूफी नहीं करना चाहता था, जिसकी वजह से उसके हाथों से न सिर्फ लछमनिया चली जाये बल्कि इतने दिनों की मेहनत से बटोरी दौलत भी छीन ली जाय। और जिसके साथ जो कुछ थोड़ी-सी उम्मीद, चमकी को भी पा लेने की बाकी बच रही थी, वह भी हमेशा-हमेशा के लिए खाक में मिलकर रह जाये।

वेलदारी लेन की सड़क पार करके दारुलशफ़ा के ग्राहाते में घुसते ही बिरजू के अंदर से जजबाती दौर निकल चुका था। जैसे अपने आप वह गुजर जाने वाली परिस्थितियों को आत्मसात करने लग गया। अपने पेशे से उसको बड़ा लगाव था और मौका सामने आ ही जाये तो फिर उसकी इन्द्रियाँ कुदरती हरकतें करने लग जातीं। हालातों के एक मुकाम से दूसरे मुकाम तक पहुँच जाने में उसे बस कुछ पलों का वक्त ही चाहिए होता। जो कुछ भी अब कर गुजरना था, उसके लिए स्वाभाविक रूप से उसने हिसाब जोड़ना-घटाना शुरू कर दिया।

बिरजू को लछमनिया ने जो सात बजे का समय बताया था, उसमें वह पन्द्रह-बीस मिनट की और देर लगाकर ही पहुँचना चाहता था। क्योंकि जाने हुए समय में कुछ देर और जोड़ देने से अच्छा ही रहता है और उससे वह उन न जान सकने वाली बातों के लिए किनारा छोड़ दिया करता जो हो सकती थी। वैसे तो कभी कुछ भी हो सकता था लेकिन पन्द्रह-बीस मिनट के अंदर, आगे हो जाने वाले हादसे-से अपनी छाप इधर-उधर छोड़ने लगा करते।

लोबीराम का कमरा उसका देखा हुआ था और वहाँ का पूरा नक्शा उसने अपने दिमाग में उतार रखा था। इसीलिए हर बात को तरतीबवार यादों में उतारता हुआ वह बी ब्लाक के पीछे वाली पगडंडी से चला जा रहा था। वह जान-बूझकर अन्दर की तरफ से नहीं गया था। वहाँ तो जाकर वह एक बार फिर पुरानी घटनाओं से जुड़ जाने लगता। उन खतरों, उन लमहों में सिमटने लगता जिनसे गुजरकर वह आज अपनी मंजिल के इतना करीब था। पगडंडी का रास्ता खत्म हो चुका था और उसके सामने बी और ए ब्लाक के बीच वाली सड़क थी। उस सड़क पर आज और दिनों के अलावा भीड़ बहुत ज्यादा थी। जगह-जगह फसली नेताओं के गोल और कतार के ऊपर कतार उमड़ती चली जा रही थी। बिरजू भी अपनी जेब मे मास्टर चाभी और पतली सलायी को टटोलता हुआ उन कतारों मे खोकर, धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा।

इस तरह उसको लोबीराम के कमरे के पास पहुँचने तक मे दस मिनट और लगे। उसकी पैनी निगाहें दूर-दूर तक लछमनिया को ढूंढ रही थी। इसी चक्कर मे वह पहले बाहर ही बाहर बी ब्लाक की सामने वाली दीवार को देखता हुआ आखिरी छोर तक गया। फिर उल्टी तरफ देखते हुए धीरे

से उसने अपनी निगाहें लोबीराम की खिड़की के ऊपर गड़ा दी। लेकिन वहाँ अंदर अँधेरा होने की वजह से वह कोई अन्दाज नहीं लगा सका। फिर जरा और आगे जाकर उसने पिछली दीवार से सटी हुई गुमटी देख लेना ठीक समझा। गुमटी आज बन्द थी। जाहिर था लछमनिया या तो अन्दर कमरे मे होगी या अपने बाप लालबाग बीड़ीवाले के पास तक हो आने को गयी होगी। बिरजू वहाँ से लालबाग की तरफ बढ़ गया। उसने वहाँ जाकर इतमिनान कर लेना ही ठीक समझा।

कई दिनों की छानबीन के बाद, सभी पहलुओं को नाप-तौलकर ही बिरजू ने पहले आठ बजे के बाद का समय तय किया था। और तभी वह मेड़ूखाँ सराय के इलाके मे आठ बजने का इन्तजार कर रहा था। लेकिन इसी बीच लछमनिया ने आकर लोबीराम के सात बजे ही चले जाने की बात कही थी। अपने तय किये हुए कार्यक्रम को बदल देने मे बिरजू को बड़ी तकलीफ होने लगी थी। उसे अच्छा नहीं लग रहा था। यह उसके बसूल के भी खिलाफ था। और फिर मेड़ूखाँ की सराय मे कुज्जियों और चरसी सिगरेटों के जो लपेटे उसने लगाये थे, उनका असर पुरजोर था। उसको मालूम था, अपने तय किये गये समय तक ही वह इस काबिल होने वाला था जो पूरी रफ्तार से हमला कर सके।

लेकिन लछमनिया से बात हो गयी थी, इसीलिए वह आ गया था। एक तरह से उसे लग रहा था, यह अच्छा ही रहेगा। इस बीच उसे मौके की, हालातो की, आस-पास सुराग मे मँडराने वालो की, पूरी मालूमात हो जानी थी। और इस बीच अगर कोई बड़ी साफ रास्ते वाली हालत मिल ही जाये तो उसे भला क्या इंकार होता। फिर भी बिरजू को बार-बार लग रहा था, मौका, सही मौका तभी होगा जब लोबीराम आठ बजे के बाद पार्टी मीटिंग में बैठ जायें।

लालबाग चौराहे तक हो आने पर भी बिरजू को लछमनिया नहीं दिखी। वापस लौट चलने के लिए वह मुड़ा ही था, तभी उसकी निगाह सामने के फुटपाथी होटल में केटली से गिलास मे उड़ेलती हुई चाय पर पड़ी। जहाँ वह खड़ा था, वहाँ तक चाय की खुशबू आने लगी थी। चूंकि वापस जाने का उसका कोई बहुत मन नहीं था, इसलिए उसने चाय लेने का ही फैसला कर लिया। फिर चाय की दुकान ऐसे मौके पर थी, जहाँ बैठकर वह लछमनिया के आने-जाने पर भी नज़र रख सकता था।

विरजू फुटपाथ पर ही पड़ी मेज के साथ लगी हुई एक ऐसी बेंच पर जा बैठा जहाँ से उसे सामने का नजारा दिखता रहे। उसे तो कुज्जी और चरसी का खुमार उतारना था तो उसने छोकरे से एक कड़क चाय लाने को कहा। सिर्फ चाय के नाम से छोकरे को नाक सिकोड़ते देखकर उसने फिर दो समोसे और लाल पेड़े भी ले आने को कह दिया। अब छोकरे की बत्तीसी निकल आने लगी और फटाका उसने विरजू के सामने पानी का गिलास पेश कर दिया। पानी का पूरा गिलास एक झटके में ही खत्म करने के बाद विरजू वहाँ के पूरे माहौल का जायजा लेने में लग गया। भोपाल हाउस की तरफ से धीरे-धीरे नजरें घुमाकर जब उसने सामने की ओर देखा तो दारुलशफ़ा के अन्दर जाने वाली सड़क से लगे हुए बंगले के आहाते में उसे अँधेरा ही दिखायी दिया। एकाएक उसके चेहरे पर मुस्कुराहट खिल आयी। उसे लगने लगा, अगर इस वक्त कहीं से लछमनिया आ निकले तो उसे इसी आहाते के अँधेरे में घेरकर बात करने का मौका मिल जायेगा।

अब विरजू को अपने ऊपर समोसे, पेड़े और चाय जैसा लम्बा आर्डर देने पर कोफ्त भी होने लगी। छोकरा अभी भी बेंचों के इधर-उधर घुसपैठ में लगा हुआ था। कब चाय लायेगा, कब तक वह आयेगा और जो इस बीच लछमनिया सड़क के उस पार अपने बापू की गुमटी पर आ गयी तो वह कैसे सब कुछ छोड़कर, पैसे देने के चक्कर में फँसा हुआ भला निकल पायेगा। विरजू बेचैनी से बार-बार छोकरे का ध्यान अपनी ओर खींचने में लगा हुआ था, तभी किसी ने पीछे आकर उसके कंधे पर हाथ रख दिया।

एक पल को उसके रोम-रोम में बिजली दौड़ गयी। उसकी रगों में चलता हुआ खून जैसे अपने आप जम जाने लगा। किसी अनजाने भय की काली छाया ने जैसे उसके दिमाग को कोने-कोने से घेर लिया। उस वक्त के टुकड़े में, वह बहुत अपनी माजिल के [illegible] गुजर चला था, तब उसके अन्दर अपनी पहचान [illegible] उठ खड़ा हुआ था। [illegible] फिर जब तक वह [illegible] देखे, उसने ही कोई बहुत [illegible], "क्या, [illegible] हूँ?"

"ग्रोफ..." कहकर बिरजू ने ग्रन्दर रुकी हुई साँस छोड़ दी। इतनी देर में उसकी ग्राधी जान ही सूख गयी थी। फिर बेंच से उठकर वह दूसरी तरफ से बाहर निकल जाने लगा। उधर कंधे पर हाथ रख देने वाला ग्रादमी, बिरजू के उठने से बेंच के ग्रन्दर घुस ग्राया। ग्रौर तभी छोकरे ने एक हाथ मे समोसा ग्रौर एक हाथ में पेड़े की प्लेट जोर ग्रावाज से मेज पर पटक दी। बेंच से बाहर निकल जाने के लिए बढ़े हुए बिरजू के कदम रुक गये ग्रौर बिना कुछ बोले वह वापस बैठ गया। प्लेट की ग्रावाज के साथ ही उसके जहन मे ख्याल ग्राया; जैसे ग्रब इस तरह नाश्ता ग्रा जाने पर, जब शायद कंधे पर हाथ रखने वाले ने उसकी प्रतिक्रिया का कुछ थोड़ा ग्रश तो जान ही लिया था, तब उसके चले जाने से किसी को भी शक हो सकता था। या ग्रभी शक ना होने पर भी, कभी बाद में इतने लोगों में से किसी को भी उसके ग्रस्वाभाविक व्यवहार की याद ग्रा सकती थी। बिरजू जल्दी-जल्दी दोनों प्लेट का माल उड़ा लेने मे जुट गया। वह जान-बूझकर लोगों को दिखाना चाहता था, वह भूखा है, तभी तो मुँह मे ठूंस-ठूंसकर उसने पहली बार मे पेड़े साफ कर दिए ग्रौर फिर समोसे मे जुट गया। इतने में छोकरा पानी का गिलास लाया तो मुंह ठुंसा होने की वजह से बिरजू ने हाथ के इशारे से ही उसे रोका ग्रौर बुश्शर्ट की जेब से पाँच का नोट निकालकर दे दिया। तब तक वह बोलने काबिल हो गया था ग्रौर उसने छोकरे से चाय न लाने ग्रौर छुट्टा फौरन ले ग्राने को कह दिया।

बिरजू ने बड़ी देर तक लछमनिया के मिल जाने का इन्तजार किया। इस बीच उसने दारुलशफा के कई चक्कर लगाये। वह लोबीराम के कमरे के इर्द-गिर्द मॅडराता रहा। ग्रौर वहीं कमरे के सामने दूसरी छोर की मुंडेर पर टॅगा हुग्रा ग्रास-पास की टोह लेता रहा। लेकिन लछमनिया तो कहीं भी थी नही। वह न तो ग्रपने बाप की गुमटी पर ग्रायी ग्रौर ना ही लोबीराम के कमरे के ग्रास-पास ही दिखी। वैसे ग्रब तक, हमले का पहले से तय हुए समय को ना बदलने का ही उसने फैसला कर लिया था। फिर भी लोबीराम के कमरे के ग्रन्दर कौन-कौन है ग्रौर यह लोग कब तक जाने वाले थे, यह तो जान लेना जरूरी था ही। ग्रब उसे कोफ्त हो रही थी; भला लालबाग आकर इस तरह ग्रड्डा मारने की जरूरत क्या थी। क्यों...भला क्यो...इतने चक्कर लगाये थे उसने...

इधर-उधर भटकते रहने से आखिर मिला क्या ? यह सब न करके अगर सीधे-सीधे, अपने पुराने तरीके से ताकता रहा होता तो अब इस समय इतने अँधेरे में तो न होता।

जब लालबाग बीड़ीवाले की गुमटी का तीसरा चक्कर लगाकर बिरजू लौटा तो उसके सब्र का पैमाना भर चुका था। अब जहाँ एक तरफ उसे लोबीराम के कमरे पर नजर रखनी थी, वहाँ दूसरी तरफ लछमनिया की बाबत जानना था क्योंकि अपने इस षड्यंत्र में वह जरूरत से ज्यादा उसके ऊपर निर्भर रहा था। इसी वजह से उसने लोबीराम का पीछा तक नहीं किया था और एक बार तो महज लछमनिया की बतायी हुई बात को सूत्रधार बनाकर वह पहले से तय किया हुआ समय बदल चलने लगा था। बिरजू की समझ नहीं आ रहा था, कहाँ से शुरू करे। अब इतने कम समय में कैसे आगे कदम उठा ले ? उसे एक खालीपन का अहसास होने लग गया। कही इतने दिनों में पहली बार वह चूक न जाये या फिर कोई गलत कदम न उठा बैठे। और साथ में लछमनिया को लेकर अलग हौल-दिली मची हुई थी जो कोई उसे परकाकर कुछ भेद निकाल लेने की कोशिश न करता हो ?

सबसे पहले अब उसको बिछुड़े हुए सूत्रों को बटोर लेना था। इन सूत्रों में सबसे अहम् था : लोबीराम को ढूंढ निकालना। एक बार उसका मन हुआ वह रंगीनराय के अड्डे तक जाकर उन्हें देख आये। फिर वहाँ अपने पहचान लिए जाने के डर से उसने यह ख्याल छोड़ दिया। वहाँ गैलरी के पूर्वी कोने से पश्चिमी किनारे तक का वह लम्बा चक्कर लगाने लगा। इतना तो उसे मालूम था, लोबीराम रंगीनराय की बैठक में गये थे। अगर वह वहाँ से अपने कमरे को लौटे तभी वह उन्हें देख पायेगा। लेकिन उनको देख लेने के लिए उसे किसी ठिकाने पर रुकना ही था। इसलिए वह अब रंगीनराय की बैठक के सामने दक्षिणी सिरे के बरामदे पर जाकर रुक गया।

रंगीनराय की बैठक से लोबीराम के कमरे तक का इलाका देखते-देखते बिरजू के मन को निगलने लगा। और वह लाचार होकर एक बार फिर लालबाग तक हो आने की सोचने लगा। आखिर, में उसने पचास तक की गिनती कर लेने का टोटका अख्तियार कर लिया था। पचास की गिनती पूरी हो जाने के बाद उसे वहाँ तो अब रुकना नही था। फिर भी

वह गिनती जरा रुककर बोल रहा था, जिससे वह पूरा मौका दे पाये। लेकिन गिनती अभी चालिस तक ही पहुँच पायी, तभी थके हुए बिरजू के मन में बड़े जोर का उफान आया, दूर किनारे की सीढ़ियों से उतरकर लोबीराम सामने के बरामदे में धीरे-धीरे लुढ़ककर चले जा रहे थे।

बिरजू ने लोबीराम का पीछा नहीं किया। वह तो सिर्फ यह तय कर लेना चाहता था, वे अपने कमरे में ही पहुंच जायेंगे। उसके बाद का काम आसान था। अगर लोबीराम के पहुँचते ही और लोग भी उनको घेर लेते तो एक साधारण चकरवन्ध की तरह वह भी उनके बाहरी कमरे का एक चक्कर लगा लेने की मजबूत स्थिति में था। यह तो उसको मालूम था, आज के दिन लोबीराम कोई बड़ी देर तक कमरे के अन्दर बने रहने वाले नहीं थे। इसलिए, अगर उनके कमरे के अन्दर जाने और निकल आने के बीच और लोग नहीं आते-जाते तो जाहिरा तौर पर, उसके लिए रास्ता साफ था। तब वह सिर्फ एक आखिरी चेकिंग के बाद हमला कर सकता था। रंगीनराय के फ्लैट के नीचे की सीढ़ियों से लगे हुए बरामदे से लोबीराम के कमरे तक के सीधे रास्ते की दूरी, अन्दाज लगा सकने के बाद ही, बिरजू दूसरी तरफ की सीढ़ियाँ चढ़कर फिर सामने की तरफ जा पहुँचा। हर तरह के शक को दाँव पर लगाकर, उसने *लोबीराम को कमरे के अन्दर घुसते हुए देख ही लिया।*

अब बिरजू अपनी योजना के उस मोड़ पर जा पहुँचा जहाँ उसे लछमनिया के ना मिल पाने की वजह से एक अजीब उलझन होने लगी थी। अपने पेशेवर तरीकों की बिना पर खड़ी होने वाली उसकी हर कोशिश, अपने में एक इतिहास बनकर रह जाती। वह इतने विस्तार में रहकर अपना काम करता जिससे जब तक सीधा-सीधा कोई देख न ले, या रंगे हाथों उसे पकड़ न ले, वह फँसने वाला नहीं था। आज तक उसने सारे काम खुद अपने भरोसे पर अकेले-अकेले ही किये थे और हर बार वह अपने पीछे सिर्फ हवा का झोंका ही छोड़ गया था। लेकिन आज जब लछमनिया उसकी खुफिया साझीदार बन ही गयी थी, वह किसी भी तरह, उससे मिल लिए बिना आखिरी कदम नहीं उठा सकता था। और फिर उसे *इस वक्त लछमनिया की जरूरत सिर्फ इसलिए नहीं थी : वह* उसकी साजिश का हिस्सा थी, बल्कि इसलिए और थी, वह एक बड़ी चोरी थी जिसके लिए उसने बड़ा ही इन्तजार किया था। और जिसकी

सफलता शायद उसकी पूरी जिन्दगी तक की तमाम मुश्किलें आसान कर डाले; शायद उसे इस काबिल बना ले, वह बम्बई वापस जाकर चमकी से उन काली लकीरों का हिसाब माँग सके। इतने नाज़ुक मौके पर वह किसी तरह भी कामयाबी हासिल कर लेना चाहता था।

जब बिरजू ने लोबीराम को कमरे के अन्दर घुसते हुए देख लिया और तब भी लछमनिया का दूर-दूर तक कहीं नामोनिशान नहीं मिला तो उसके जहन में ख्याल आया, कहीं लछमनिया को किसी ने दाब तो नहीं रखा है? या फिर खुद उसी से मिल पाने भर को, वह उन खंडहरों पर ही इंतजार करती हो? अगर किसी ने लछमनिया को दाब रखा होगा तो, कुछ भी पता लगा पाना, उसके बस में नहीं था। लेकिन अगर वह मेडूखां की सराय के खंडहरों में उसे ढूँढ़ने लगी थी, तब उसे एक बार फौरन वहाँ जाकर देख आना चाहिए। पहले एक बार लालबाग बीड़ी-वाले के यहाँ या फिर लोबीराम की खिड़की पर ताक झांक और कर लेने की उसने सोची लेकिन फिर मिले हुए इन चन्द लमहों का सही इस्तेमाल कर लेना भी जरूरी लगा। उसे मालूम था अगर लछमनिया इन दोनों जगहों पर होती तो कम से कम एक बार आकर उससे इशारेबाजी जरूर कर जाती।

विमलादेवी के निराश होकर लौट आने के बाद जब पैसे के बूते लोबीराम को घेर लेने का आखिरी हथियार नाकाम हो लिया तो कुछ और कर लेने के लिए बलराम शास्त्री ने राजभवन की तरफ जाकर हल्ला बोल दिया। लेकिन दारुलशफा के बाहर जाने से पहले उन्होंने तीन तिलंगे लोबीराम को ताके रखने के लिए लगा दिये। सबको इतना तो मालूम ही था, वे रंगीनराय की बैठक में थे। बस उनके वहाँ से निकल आने पर फौरन राजभवन ठहरे हुए गुरुपदस्वामी के या बलराम के पास खबर भेज देनी थी। बलराम शास्त्री ने तो यहाँ तक कह रखा था, जरूरत पड़ने पर वे सब, लोबीराम को ले उड़ाने के लिए भी तैयार रहें।

पहला तिलंगा तो रंगीनराय की बैठक के बाहर नेताओं और विधायकों की भीड़ में घुल-मिल गया। दूसरे ने बलराम के फ्लैट पर जाकर टेलीफोन की गद्दी सँभाल ली और तीसरा इन दोनों के बीच बारम्बार

तारतम्य बनाये रहा। दूसरे तिलंगे के पास, राजभवन से बलराम के पाँच टेलीफोन आ चुके थे। यह मुलाकात, हर हालत मे, पार्टी मीटिंग शुरू हो जाने के पहले होनी थी। इसीलिए दूसरे तिलंगे को भी वहाँ से उठकर पहले और तीसरे के साथ मिल-जुलकर कार्यवाही कर लेनी थी।

जिस वक्त लुढकते हुए लोबीराम पर बिरजू की निगाह पड़ी थी, उससे पहले ही ये तिलंगे उनके पीछे लग लिए थे। जैसे बिरजू की घूरती हुई निगाहों के बारे में उनको पता नही था, वैसे तीन तिलंगो के जरा-जरा दूर पर घेरे रहने का भी उनको कतई अन्दाज नही था। वे तो उधर कमरे में उनका बेसब्री से इन्तजार करती हुई विमलादेवी की बावत भी कुछ नही जानते थे। यह भाग्य की विडम्बना ही थी जहाँ एक तरफ, उस समय, लोबीराम अपने हवाई किलों के खुद्दार ख्यालों की बुलन्दियों में भटक चले थे, वहाँ दूसरी तरफ हरफनमौला तीन तिलंगे, मस्तानी नागन विमलादेवी और शातिर बिरजू मिलकर उनकी बुलन्दियों को जमीन तक खींच लाने की खतरनाक साजिश में लगे हुए थे। अगर तब कही लोबीराम को इन सबका जरा भी सुराग लग गया होता तो वे, रंगीनराय के यहाँ से निकलकर ही नही आते। वहाँ से, सबके साथ मिलकर वह सीधे पार्टी मीटिंग मे पहुँच जाते।

लोबीराम का, रंगीनराय की बैठक से निकल आना ही गजब ढा देने वाला कदम था। उनके निकलते ही दूर से ताड़कर, बिरजू ने पेशेवर हरकतें चालू कर दी और तीन तिलंगो ने भी अपने आखिर तक के कदमों का हिसाब लगा लिया। उधर कमरे के अन्दर घुसते ही विमलादेवी ने अलग हमला बोल दिया था। जितनी देर तक विमलादेवी का हमला चलता रहा, उतनी देर में दूसरे तिलंगे ने जाकर राजभवन का फोन खटखटा दिया। पहला तिलंगा तो वहीं लोबीराम के कमरे के पास ही सटकर खड़ा रहा, लेकिन तीसरा जरा देर के लिए एक बन्द मोटर गाड़ी और क्लोरोफार्म की शीशी जुटाने चला गया था। इन लोगो ने बस बलराम शास्त्री की मुश्किल समझ ली थी। उनके थोड़ा कहे को ज्यादा जानते हुए अपने ढंग से यह सब पूरी तैयारी कर चुके थे। अभी हाल गुरुपदस्वामी के साथ होनेवाली मुलाकात में अगर लोबीराम को टूट जाने से नहीं रोक पाया जाता तो इन लोगो ने बस आज भर के लिए उनको उड़ा ले जाने की योजना बना डाली थी।

गुरुपदस्वामी को लोबीराम से मिला देना कोई इतना आसान नहीं था। यह भारत के गृहमंत्री की प्रतिष्ठा का प्रश्न था। वह बड़े नेता, पार्टी के कर्णधार थे। यूं उनका बेगैरत होकर लोबीराम के पास चले आना भी उचित नहीं था। फिर भी गरिमा और प्रतिष्ठा नापने-तौलने में बनती हुई सरकार के बिगड़ जाने का खतरा था। और फिर बलराम शास्त्री को उस समय न तो विमलादेवी के हमले का पता था, और ना ही अपने द्वारा छोड़े हुए तीन तिलंगों की बनायी हुई खतरनाक योजना उनको मालूम थी। उनको तो बस इस मुलाकात पर ही सारा दारो-मदार नजर आने लगा था। खुद उनका अपना भविष्य भी अधर में लटक चला था। जीवन में पहली बार पूरे मंत्री बन जाने की सम्भावना में खतरे की घंटियां बजने लगी थीं।

सवाल सिर्फ बलराम शास्त्री के भविष्य का नहीं था। वे सारे सब जो मंत्रिमंडल की प्रक्रिया से जुड़े हुए थे, अब तक दहल चुके थे। एक तो रंगीनराय की मिनी मीटिंग के साथ लोबीराम और बलदेव चौधरी के जुड़ जाने से और दूसरे पार्टी अध्यक्ष के वहां जा पहुंचने से सभी को खतरे की घंटियां सुनायी देने लगी थीं। कइयों ने उत्सुकदास को घेर लिया और कई राजभवन, गुरुपदस्वामी के पास दौड़कर आ गये। वहां तो बलराम शास्त्री खुद हर आने वाले को, बढ़ा-चढ़ाकर डरा रहे थे। रुंआसे चेहरे, खौफ में डूबी हुई, हाथ से निकल जाती हुई बाजी का गम खायी निगाहें, बस पल-दो पल में उत्सुकदास का ही कोई करिश्मा देख पाने के लिए बेताब थीं।

तभी राजभवन के बाहरी हिस्से से अनेक-अनेक भावी मंत्रियों, वर्तमान विधायकों, समर्थकों और बहुधन्धी नेताओं के हुज्जूम में घिरे हुए उत्सुकदास लपकते हुए बढ़ चले। उनको देखते ही वहां पहले से ही जमा हुए उम्मीदवारों में जोर का शोक उठा। उन सबके जज्बात का हिसाब, हिस्सों-हिस्सों में, निराशा, डर और लिप्सा के त्रिकोण में जूझा हुआ, बना हुआ निकल रहा था। सबके सब एक साथ ही बुदबुदाने, बड़बड़ाने लगे थे। आधे से ज्यादा मंत्रिमंडल तब तक वहां इकट्ठा हो चुका था। अभी तक जो बलराम शास्त्री के द्वारा पीड़ित किये जा चुके थे, अब किसी तरह उत्सुकदास से आश्वासन के दो शब्द सुन भर लेने को तरसने थे।

उधर उत्सुकदास, उधार मांगे हुए इन क्षणों में इधर आने की

से झल्लाये हुए थे। आज के दिन, और इस आखिरी मुकाम पर पहुँच जाने के बाद, उलटफेर की गाथा उन्हें कोई अच्छी तो लग नहीं रही थी। लेकिन गुरुपदस्वामी ने दुबारा बुलवाया था। बलराम ने तब तक उन्हें विमलादेवी की नाकाम कोशिशों का हिसाब टेलीफोन पर ही दे दिया था। न चाहते हुए भी उन्हें आना पड़ा और ऊपर से यहाँ तमाम नेताओं के चेहरों से उड़ती हुई रंगत भाँपकर वह भी थोड़ा हिल गये। उनका अहंकार जहाँ एक तरफ मिली हुई सत्ता के पाये से शिखर तक तड़प रहा था, दूसरी तरफ एक नया खालीपीली मोर्चा खुला जानकर उनको भी हल्की-सी बेचैनी घेरने लगी थी। अब कहीं जाकर, उनको कुछ तो कर लेने का यकीन होने लगा था।

इससे पहले उत्सुकदास गुरुपदस्वामी के कमरे में घुस पाते, बलराम शास्त्री ने बड़ी कातरता से प्रणाम जड़ दिया। और कोई वक्त होता तो वहीं पर इस प्रणाम का जवाब वह हिकारत भरी चुटकियों से देते। लेकिन माहौल दूसरा था। फिर मंत्रिमंडल की गरिमा में डूबे हुए नेताओं की भीड़ ने भी उनको कोई ऐसी-वैसी हरकत करने से रोका था। तभी आगे बढ़कर उन्होंने बलराम शास्त्री का हाथ पकड़कर जरा अपनी तरफ खींचकर सौजन्यतावश दबाते हुए पूछा, "क्यों दोस्त, क्या चला दिया?"

तभी नेताओं की भीड़ का रेला आया और उनका हाथ बलराम शास्त्री के हाथ से छूट गया। जाहिर था इन लोगों से बचकर अन्दर चले जाना मुमकिन नहीं था। और सबके सामने न तो बलराम से और ना ही गुरुपदस्वामी से कोई बात कर सकना होता, इसलिए वह एकाएक रुक गये और उनके पीछे घूम लेने के लिए बढ़ते ही, नेताओं की भीड़ भी फौरन रुक गयी। हाथ उठाकर उत्सुकदास ने सभी को समझा देने की कोशिश करते हुए कहा, "देखिये आप लोग पार्टी मीटिंग में चलें या फिर बगल के कमरे में रुके रहें, अभी मुझे गृहमंत्री और राज्यपाल से मिलना है!"

राज्यपाल से मिलने की बात सुनते ही सभी के चेहरे की झुर्रियाँ सिकुड़ने लगीं और उत्सुकदास को इस संगीन मौके पर न छेड़ते रहने का इरादा लोगों ने कर लिया। लेकिन जरा-जरा पीछे हटने के अलावा वहाँ से कोई गया नहीं। अब तो राज्यपाल से उत्सुकदास की हो सकने वाली बातचीत का जायजा लिए बिना राजभवन छोड़ देना बेमानी था। फिर

भी बड़े नेताओं और कैबिनेटस्तर के मंत्रियों से रुका नहीं गया। वे सब उत्सुकदास के जरा से आगे बढ़ते ही शर्मोहया का जामा छोडकर, अन्य लोगों से वहाँ भीड न लगाने को कहते हुए खुद आगे बढ़ गये।

गुरुपदस्वामी को कमरे के अन्दर न पाकर उत्सुकदास हड़बड़ा गये, "अरे बलराम कहाँ है वे ?"

"वे तो जरा अन्दर है।"

"तो आवो !"

"नहीं जी, तब तक दो मिनट यही रुकें, बस आ ही गये !"

"क्यो भला ?"

कुछ दूर पीछे रुके हुए बड़े नेता तब तक सोफे पर बैठ चुके थे। बलराम ने जरा आगे झुककर उनके कान में कहा, "वहाँ बाईजी हैं।"

उत्सुकदास ने नाकारा-सा मुँह बनाया और वहीं कमरे के दूसरे छोर की खिडकी के पास जाकर जब खड़े हो गये तो उन्होने बलराम से धीमी आवाज मे लगभग फुसफुसाते हुए कहा, "बाबू तो गजब करते हैं, यह कोई वक्त है बाईजी के आने का, ऊपर से आज और यहाँ राजभवन में, दिनदहाड़े !"

बलराम को बात बुरी लग गयी। गुरुपदस्वामी के लिए उसके मन में अटूट श्रद्धा थी। ऐसा नहीं था बाईजी के प्रति उनकी कमजोरियों को वह कोई बड़ी ऊँची निगाह से देखते। लेकिन अंधी श्रद्धा थी, उसका भला वह क्या करते ?

"जो आप सोचते होंगे वैसा है नहीं। आज तो बाईजी बेटे की मौत से दुखी हैं।" उनकी आवाज में स्वाभाविक रूप से तीखापन उभर आया था।

"ओह !" उत्सुकदास को भी अपनी [illegible] पर [illegible] लेकिन ऐसे मामले में वह पीछे नहीं हुआ करते, "फिर भी वे यहाँ [illegible]"

"फूलदास के कातिल पकड़े गये, पता है आपको।"

'अच्छा, कौन थे भला ?"

"दुर्लभकाछी और उसके साथी।"

दुर्लभकाछी का नाम सुनकर एक बार तो [illegible] उनको कृष्णवल्लभ यादव और दुर्लभकाछी का नहत्व [illegible] आज के दिन यह खबर अच्छी नहीं लगी उनको। फिर [illegible]

होना भी अजूबा ही लग रहा था। वह बाईजी और गुरुपदस्वामी के संबंधों को भी जानते ही थे। लेकिन जब ताँबाकांड के सिलसिले मे लखनऊ से लेकर दिल्ली तक कृष्णबल्लभ यादव का नाम जीवित हो उठा था, तब मरे हुए फूलदास के लिए पकड़े गये दुर्लभकाछी को अगर कहीं लोगों ने कृष्णबल्लभ के साथ जोड़कर गुरुपदस्वामी के सामने पेश कर दिया तो एक और मुसीबत खड़ी हो जानी थी। क्योंकि बाईजी के यहाँ होने से गुरुपदस्वामी इन भावुक रिश्तों को शायद ही छोड़ पायें। बस एक पल में ही उत्सुकदास ने यह सब सोच डाला था। फिर भी उनके चेहरे पर इसकी जरा भी छाप नहीं आने पायी और अपने को पूरी तरह संतुलित रखे हुए उन्होंने कहा, "तब तो बाबू भी जायेंगे ना!"

"कहाँ?"

"बाईजी के साथ, फूलदास की अन्त्येष्टि में!"

"हाँ, शायद पार्टी मीटिंग के बाद जायेंगे। आई० जी० पुलिस तो आये थे। और हाँ, पता भी तो लगाया जाय रहा था, कब होगी अन्त्येष्टि?"

"क्यों बलराम, अच्छा-खासा दिन कैसे अन्त होने लगा है?"

"हाँ गुरु! सो तो मुझे भी लग रहा था।"

"अच्छा, अब जो होगा भुगतेंगे? यह तो बताओ, कुछ सोचा है?"

"अरे तो हाथ-पैर फूलने लगे हैं, समझ मे घुन घुस गया है।"

"यह ससुरा लोबीराम···"

"बस एक ही रास्ता था जो मैंने भी बाबू को बता दिया और उनको लोबीराम से मिल लेने को राजी कर लिया है।"

"यह तो ठीक है, मानेगा वह?"

"इसके अलावा रास्ता भी क्या है?"

"एक रास्ता है।"

"वह क्या?"

"बाबू को मत बतलाना, आपस की बात है। तुम वहाँ रहना जब लोबीराम से वे मिलें···"

"लेकिन मिलेंगे कहाँ, और फिर ससुरा मुझे देखकर भड़केगा।"

"मिलेंगे कहाँ?" उत्सुकदास एक पल को हिसाब लगाने लग गये और फिर बोले, "और कहाँ, यही राजभवन में!"

"श्रावेगा नहीं तो लाना होगा। श्रौर जो नही श्रावे तो बाबू को मोटर से दारुलशफ़ा ले जाना। फिर घेर-घारकर उसे मोटर तक खिंचवा लेना। उसके श्राते ही मोटर चल देगी···समझ गये···"

इसके श्रागे उत्सुकदास श्रपनी साजिश का वह मुद्दा कह लेना चाहते थे जिसे गुरुपदस्वामी के सामने कहना मुमकिन नहीं होने वाला था। लेकिन उनको उसका मौका मिला ही नहीं, इतने में श्रन्दर के कमरे से निकलकर गृहमंत्री श्रा चुके थे। उनको देखते ही उत्सुकदास ने लपककर पैर छुए। गुरुपदस्वामी कुछ बोले नहीं, सामने रखे हुए सोफे पर एक के ऊपर दूसरी टाँग रखकर बैठ गये। इससे पहले वह श्रौर कोई बात करें, उत्सुकदास ने जल्दी से बात शुरू कर दी, "बाबू, हम लोगों ने बड़े विचार-विमर्श के बाद तय किया है, श्रापके बिना मिले लोबीराम मानेगा नहीं।"

"लेकिन बलराम के साथ कौन गया था ?"

"क्यों बाबू···विमलादेवी !"

"श्रोह !" विमलादेवी का नाम सुनकर गुरुपदस्वामी एकदम सनक गये। फिर दूसरे क्षण उनके होठों पर हल्की-सी रहस्यमय मुस्कुराहट उभरी जो इतनी पैनी थी, इतनी तीखी थी श्रौर जिसे महसूस करके एक बार उत्सुकदास को श्रहसास हुश्रा, वह श्रब इस वक्त कोई ऐसी बेवकूफी कर रहे हैं जिसकी बाबद खुद भी उनको कुछ पता नहीं। बलराम तो बिलकुल उल्लू की तरह कभी गुरुपदस्वामी श्रौर कभी उत्सुकदास को देखे जा रहा था। इन लोगों के भौंचक हो जाने की जरा भी परवाह न करते हुए गुरुपदस्वामी ने बड़ी मुलायम श्रावाज में गहराई तक पैंठ जाने वाली श्रावाज में कहा, "श्रौर विमलादेवी लौटकर श्रा गयी, किसी ने जान लेने की कोशिश की; वे भला हैं कहाँ !"

यह कोई ऐसी बात नहीं थी जिससे उत्सुकदास का संतुलन बिगड़ जाता। विमलादेवी खुद उनकी विषय-वस्तु थी, इसलिए गुरुपदस्वामी की बात का जवाब था उनके पास। श्रौर कोई होता तो इस सवाल का जवाब उत्सुकदास जरा जमकर दो-चार गालियों की रंगीनियों में दे देते। लेकिन भला उनके सामने कहते भी क्या ? बस शालीनता ही थी शब्दों में, "क्या है बाबू, वो श्रपने पर बड़ा भरोसा रखे थी। श्रब काम नहीं बना तो सामने श्राने से कतराय रही होवेगी।"

बात उत्सुकदास ने कही तो थी लेकिन गुरुपदस्वामी को

इतमिनान नही हुआ। फिर भी वह कुछ आगे इस बारे में बोले तो नहीं पर मन में कहीं; विमलादेवी को बस इतना ही मान लेने का उनका मन नही हुआ। उसी वक्त बेसब्री से घडी की बढ़ती हुई सुइयो को गिन लेने की कोशिश करते हुए वह बोले, "फिर तुम लोग यहाँ क्या कर रहे हो ?"

बलराम शास्त्री कसमसाकर उठ बैठे, "हाँ···हाँ···मैं तो चला लोबीराम को ले आने, आप यही रहेंगे बाबू ?"

"रहना तो था, पार्टी अध्यक्ष ने आने को कहा था। यही से उनकी पी० एम० हाउस बात करानी थी। लेकिन उससे पहले लोबीराम से भी मिलना जरूरी है।"

"तो आप यही रुकें, मैं उसको ले आने की कोशिश करता हूँ!"

"और जो वह नहीं आया ?" उत्सुकदास ने पूछा।

एक पल कुछ सोचकर गुरुपदस्वामी उठ खड़े हुए और फिर उत्सुकदास से बोले, "तुम यही रहो। पार्टी अध्यक्ष के आने से उनको रोक लेना और हो सके तो इस बीच दिल्ली लगावो, कुछ पता करो वहाँ क्या चक्कर चला रखा है लोगों ने।"

"हाँ···वह तो करना था और राज्यपाल से भी मिलता हूँ।"

"उनसे मिलकर क्या होगा, वे तो मौका ताड़े हुए हैं चोट मारने को।"

"फिर भी देखना है।"

"देखो उत्सुकदास, मौका बड़े नाजुक मोड़ पर आकर रुक गया है। यहाँ से इन सबने मिलकर एक बहुत बड़ी साजिश कर छोड़ी है। मैं बलराम के साथ लोबीराम को लेने जा रहा हूँ, और तुमको अगर कुछ करना है तो दिल्ली ठीक करो। कोई पी० एम० से जाकर कहे, राज्यपाल को राष्ट्रपति शासन समाप्त होने की घोषणा करने को कहे। और कुछ देर बाद पार्टी अध्यक्ष का फोन पहुँचने पर उनसे भी सर्वसम्मति से पार्टी मीटिंग मे हाईकमांड के निर्णय को कामयाब कराये जाने का निर्देश दें, तभी कुछ होगा।"

"ठीक है बाबू···ठीक है···आप चलें।" कहते हुए आगे बढ़ चले गुरुपदस्वामी को बाहर तक छोड़ आने को वह चल दिये। कुछ ही दूर पर उनके कदम पर कदम पर मिलाकर चल रहे बलराम शास्त्री का कुर्ता खींचकर जरा अपनी ओर घसीटते हुए उत्सुकदास ने वह बात कह डाली जो जरा देर पहले अंदर कहते-कहते रुक गये थे।

"बाबू को बस दारुलशफ़ा छोड़कर कहीं और मिलवाना। यहाँ ले आवो तो मैंने भी फिटिंग करनी थी और हाँ किसी को लगा रखा है?"

"वे तिलंगे है ना।"

"वे हैं तो उन्होने इन्तजाम कर लिया होगा। मैंने बन्द गाड़ी भिजवा दी थी। लोबीराम न माने तो सारे को मीटिंग में ही जाने नही देना।"

लोबीराम जब अपने कमरे तक पहुँचे तो महाभारत की लड़ाई का एक क्षण पूरा कर सकने जैसा उनको लग रहा था। वैसे तो तुरन्त छोटा-मोटा फायदा उठाकर चुप बैठे रहने की अपनी आदत से हमेशा मजबूर रहा करते। लेकिन इस बार एक तरह से वह अपनी दूर की कौड़ी पर संतुष्ट ही थे! राजनीति के दाँव-पेंच तो उनको खूब आते, लेकिन सत्ता चला सकने या सत्ता की धुरी का हिस्सा बने रहना उनको कभी नहीं आया। खुद कभी सत्ता हथिया ले सकने का, ऐसा सोच पाने तक का ख्याल, उनको कभी नही आया। उनका धन्धा छोटा था और खेल भी मामूली! बस वह किश्तों में अपनी तिजोरी भरते आये थे।

यह विधायकों का सट्टा था जिसे बड़ी खूबी से वह खेलते। और फिर खास किस्म के विधायकों पर ही उनकी पकड़ हुआ करती। भाड़-पंजा, मुट्ठी-मोची, केवट-कहार, दुतियाये, लतियाये तमाम वर्गों, प्रजातियों के प्रतिनिधियों को उन्होने फाँस रखा था। लोबीराम अपने में, पढ़े-लिखे, घिसे-घिसाये, चलते-पुर्जे आसामी थे। उनमें पेट के अंदर घुसकर बात डाल सकने की कस्बाई तकनीकी थी। दर्जी की कैंचियाँ, पतुरिया की कमर, ताड़ी के घड़े, भाँग के गोले, अफीम की गोलियाँ, गाँजे का दम, चरस की सलायी, वह इस तरह फेंका करते थे जैसे कोई फौजी [illegible] हथगोले, टैंक, बन्दूक और बारूद की बाकायदा युद्ध-रचना में इस्तेमाल करता है।

उन दिनों पार्टी में, पिछड़े वर्ग के लिए, कोई अवसर न [illegible] करता था। कुर्मी, अहिरान, [illegible], [illegible] और [illegible] के [illegible] लोबीराम के ऐश्वर्य में बहुत गर्वान्वित रहते। बड़े [illegible] उठ-बैठ, पढ़े-लिखे [illegible] बातें, कुछ अंग्रेजी के [illegible] उनके हथियारों की [illegible]

जाति, वर्गों के इलाकेदार बँटवारे से ये सब नये-नये नेता बनने लगे और इनकी पार्टी की राजनीति में पकड़ कमजोर थी, जिसका पूरा फायदा उठाया लोबीराम ने।

हरिजन और पिछडे वर्ग के नेताओ की उभरती हुई नस्ल को लोबीराम ने ठीक वक्त पर पहचाना। उनकी भाषा, हाव-भाव, उनकी समस्याएँ जितनी उनको जानी-समझी थी, पार्टी में बहुत कम लोग, तब जानते थे। पार्टी टिकट का युद्ध, चुनाव के कुरुक्षेत्र का पैसा, सबको उनके जरिए ही मिला करता। खुला-छुट्टा साँड की तरह, अपने जवानी के दिनो में लोबीराम ने सबको रौंद डाला। जिसने चू-चपड की उसका पत्ता साफ था। उसे पार्टी का टिकट नही मिलता और अगर टिकट मिल भी जाये तो पार्टी के सूत्रो से मिल जा सकने वाला पैसा वह डकार जाया करते। जाने-अनजाने इन विधायकों की टोलियाँ, बस हमेशा उनके साथ जुडी रही। टोलियो के हुज्जूम जैसे बढते गये वैसे-वैसे उनमे से बाय-प्रोडक्ट की तरह इत्ते चिलगोजे, इत्ते चमचे निकल आये जिसके उनको सँभाल पाने का मौका नही मिल पाया। बड़े मियाँ···बड़े मियाँ, छोटे मियाँ शुभानअल्ला! जैसे माजरे में हरिजन-मेहतर, मोची, बाल्मीकि, पिछड़ गये अहिर, ग्वाला, लोध और कहारों कलवारों के नुमाइन्दे जो पार्टी राजनीति के सर्कस से कुछ तो खुद चकाचौंध थे, ऊपर से उनको इन नयी प्रकार की प्रजापतियों ने और उछाल रखा था। सदियों शताब्दियों से गिड़गिड़ाकर, जुतियाकर, घिघयाते हुए जीने की जिनकी आदत बन चुकी थी, अब आसमान तक ऊँचे उड़ जाने लगे। लेकिन वहाँ भी रह सकने के लिए, उन सबको एक जमीन चाहिए थी, एक धरातल चाहिए था। उस जमीन की ललक उनको लोबीराम में झांक रही दिखी थी जो खुद उनके अपने स्तर की थी, जहाँ वह खुद रह सकते थे। इन सबको लोबीराम के पास-पास घिरते जानकर उनके तमाम समर्थक भला कब पीछे रहते। लेकिन इन समर्थकों ने दारुलशफा आकर ऐसा चोला बदला, इतनी जल्दी सब कुछ आत्मसात किया, अपने-अपने मालिको को तो ताक में रख दिया और लोबीराम पर टूट पड़े।'

लेकिन इतना सब होते हुए भी लोबीराम को खुद अपनी ताकत का अहसास बड़े दिनो बाद हुआ। यह अहसास एक तरह से उनको दूसरो ने ही कराया था। वह तो साफ तरीको की गुटबन्दी में जूझे ही नहीं, उलटे

अपने-अपने हथकंडे आजमाने के लिए लोग-बाग उन्हें घेरने लग गये। उनको तो पता ही नहीं लग सका, कब भला, इतनी ताकत उनके साथ जुड़ गयी थी। सत्ता की लड़ाई में पार्टी के अन्दर जब-जब सर फुडव्वल होती उनकी उपयोगिता के नये दाम बन जाया करते। एक अकिंचन पत्थर के टुकड़े को हीरा बनाकर बेहिसाब पार्टी खेल के खिलाड़ी उसका भाव बढ़ाते रहे।

फिर एक दिन वह भी आया जब सारी बातें उनके सामने साफ थीं। हर खेल के दाँव उनको पता थे, हर दाँव, हर चाल वह साधकर मजे-मजे खेल लिया करते। तब से लेकर आज तक, पार्टी के नेताओं की कभी हिम्मत नहीं हुई उनको बिना पूछे काम चला सकने की। धन-सम्पदा, कीमत और दाम खड़े-खड़े चलकर नहीं, दौड़कर उनके पास आने लग गये थे। लेकिन आज पहली बार और सबके मुकाबले उत्सुकदास जैसा बड़ा खिलाड़ी चूक गया था। उनको पूछने तक नहीं आया। शायद उसे पार्टी हाईकमाण्ड का घमंड था।

लोबीराम अच्छी तरह जानते थे, अगर इस बार, उनको छोड़ देने के बाद, उत्सुकदास सत्ता हथिया लेने में कामयाब हो गया तो आने वाले तमाम दिनों में कोई और भी उनको घास डालने वाला नहीं होगा। एक बहुत बड़ा भ्रम टूट जायेगा। और जो कहीं लोगों ने उनके अनुशासन, उनकी शराफत को सच मानकर आगे से उनकी पूजा करना छोड़ दिया तो वह कहीं के रहने वाले नहीं थे। उन्होंने उत्सुकदास को आखिर तक मौका दिया था। लेकिन ससुरे ने विमलादेवी को भेजा। और वह भी तब जब वह पार्टी अध्यक्ष के और तमाम विधायकों के सामने खुल्लमखुल्ला विद्रोह कर चुके थे।

अब अपने कमरे की ओर लौट चलने पर उनको जहाँ एक तरफ आने वाले *सुनहरे वक्त का बेसब्री से इन्तजार था,* उनको यह भी मालूम था, अब विमलादेवी को भगा देने के बाद, उनका हर एक कदम, इस वक्त एक लम्बी चलने वाली लड़ाई के लिए बढ़ रहा था। हालाँकि उनको इस तरह की लड़ाई का कोई भी तजुर्बा नहीं था, और ना ही अपने ऊपर पूरा इतमिनान हो पा रहा था। फिर भी एक बड़े धन्धे के लिए, एक बड़ी रकम के लिए और फिर सत्ता की साझेदारी के लिए वह पूरी तरह मरमिटने को तैयार थे। उनके मुँह में खून लग चुका

रंगीनराय, उत्सुकदास, दरोगा, बलदेव चौधरी वगैरा को उन्होंने कितने करीब से देख रखा था। शासन के गुर-गुटकों से वह इतना वाकफ थे, इतनी जान-पहचान थी उनकी व्यवस्था के तंत्र से, अब उनको मजा आने लगा था। महज छोटे से पैसे के लिए अपनी इतनी बड़ी ताकत को यूँ ही घूरे पर फेंक देना जैसा लगा था उनको।

लोबीराम ने साजिश की चौकड़ी भरते हुए अपने फ्लैट का दरवाजा खोला। बाहरी कमरे में हल्की-सी रोशनी में आगे बढ़ते हुए उनको लछमनिया के गायब होने पर हैरत थी। फिर किसी का वहाँ न होना अच्छा ही लगा। उसके पास मुश्किल से दस मिनट का समय था, जब तक रंगीनराय के यहाँ पार्टी अध्यक्ष की चाय पार्टी चलने वाली थी। एक बात जिसने बार-बार उनके पेट में उठ-उठकर गुदगुदी मचा रखी थी, वह थी आज उनके नेताओं के नेता होने की, सुपरहिट स्टार होने की। रंगीनराय, बलदेव चौधरी, उत्सुकदास सबका खेल बस उनके ऊपर आकर टिक गया। उनकी एक करवट, एक इशारा, उनका एक कदम दारुलशफ़ा में ही क्यों, पूरे प्रदेश की राजनीति में तहलका मचा देने वाला था। सबकी निगाहें उनकी ओर थीं और उनका मन दूर कहीं बज रही सुनहरे भविष्य की धीमी-धीमी शहनाइयों में डूब चला था। अब मंत्रिमंडल, सत्ता और पार्टी के समूचे दाँव-पेंच बस उनके इर्द-गिर्द मँडराने लग गये थे। वक्त के इस दौर मे दारुलशफ़ा के हर कमरे में राजभवन की ऊँची मिनार से दिल्ली में पी० एम० हाउस तक सैकड़ों-हजारों लोग उत्सुकदास, गुरुपदस्वामी, रंगीनराय, बलदेव चौधरी या पार्टी अध्यक्ष से कुछ भी सुन लेने को बेकरार नहीं थे, वे तो लोबीराम के शब्दो, उनकी भाव-भंगिमाओं और हरकतों का माने-मतलब लगा लेने मे लगे हुए थे।

यह पहले दर्जे का संकट था, जिसमे पार्टी के बड़े-बड़े नेताओं का सिर घूम जाने वाला था। सवाल सिर्फ सर्वसम्मत से विधानमंडल पार्टी के नेता के चुनाव का नहीं था, सवाल पार्टी के सरकार बना लेने का नहीं था, सवाल तो पार्टी हाईकमाण्ड की प्रतिष्ठा से जुड़ जाने वाला था। कोई नही जानता था, किसी को नही मालूम था, क्या हो जाने वाला था। जहाँ एक तरफ लोग लोबीराम के खुले विद्रोह को दिल्ली की गहरी राजनीति से जोड़ने लग गये, वहाँ दूसरी तरफ आज की पार्टी के ही टूटने लग

जाने के आधार नम्बर आने लगे थे। युद्ध-स्थलों को छोड़कर और कोई नहीं, जोखीराम ने देखने नम्बर। [illegible] नाम का [illegible] हुआ इतिहास नहीं-बनने वालों की [illegible] के कुछ जाने [illegible] वैसे तो यहाँ वालों को दुनिया ने इतना बदल डाला, लेकिन इस नम्बर आनेवाला बनना किन्हें [illegible] से नहीं [illegible] हुए था।

ऐसा नहीं था कि जोखीराम को यह सब मालूम नहीं था। इस समय यहाँ तक तो उनके अन्दर उथल-पुथल मचा हुआ था, एक नन्ही-सी [illegible] नहीं; उनके [illegible] से मुट्ठी [illegible] बाहरी थी। आज उनको [illegible], मेरठ-आगरा, कानपुर, [illegible], [illegible] छत्तरों की [illegible] से ऊपर उठकर दुनिया के सबसे बड़े [illegible] बनाना जा रहा था। [illegible] के आने वाले [illegible] को भरा देने का, [illegible] की बैठक हो जाने का, [illegible] के आ जाने का, [illegible] किसी युद्ध [illegible] की इच्छा तक रहा था। [illegible] के मन्दन में उथल-पुथल के बल से आज [illegible] एक ऐसा जोखीराम निकल आने वाला था जिसको [illegible] से सबके होने पस्त होंगे, जिसकी उँगलियों पर [illegible], [illegible] करोड़ की [illegible] भारत का सबसे बड़ा [illegible] जो भरत, राम, कृष्ण, बुद्ध की जन्मभूमि था।

बाहरी कमरे से निकलकर जोखीराम बड़े इत्मीनान के साथ बीच की छोटी गैलरी को पार कर, अपने सोने के कमरे में दाखिल हो गये। कमरे में घुसते ही बायीं तरफ का स्विच दबाकर उन्होंने रोशनी कर दी। रोशनी होते ही हमेशा की तरह उनकी नजर सीधे सामने दीवार से सटी हुई तिजोरी पर पड़ी। लेकिन आज इस नजर में कातरता नहीं थी। आज तो उन्होंने तिजोरी को उसी महिमा से देखा, जिसके साथ ही उनके होंठों पर कुटिल मुस्कान उभर आयी थी। इस वक्त अपनी योजनाओं के आधार में उनको वह तिजोरी बड़ी नाचीज, बड़ी छोटी हो गयी। और कोई वक्त होता तो वह तिजोरी खोलकर बैठ जाते। और या तो उनमें रखे हुए पैसों को चूमते-चाटते, या फिर लक्ष्मी-पाठ शुरू कर देते। पर जो कुछ उन्होंने सोचा था, वह भला इस छोटी-सी तिजोरी में कहाँ समाने वाला था। उनके लिए तो बड़ी-बड़ी आलमारियाँ चाहिए बड़े-बड़े कमरे चाहिए होंगे। इस वक्त तो वह तिजोरी के [illegible]

शीशी से तीन-चार चम्मच भांग का चूरन ही फांक लेने के लिए आगे बढ गये।

तिजोरी के ऊपर रखी हुई भांग के चूरन वाली, शीशी का ढक्कन खोलकर उन्होने मसाला अन्दाज से ही अपनी हथेली में उड़ेल दिया और पूरा मुँह खोलकर फांक गये। फिर पानी पीने के लिए जैसे ही वह आगे बढ़े तो उनके कदम अचानक रुक गये। उनकी नजर अपने पलंग पर जैसे स्थिर होकर जम गयी। वहाँ बीचोबीच रखे हुए, खुले ब्रीफकेस मे से बड़ी-बडी नोटो की गड्डियाँ उचकी हुई जैसे उनको चिढ़ाने लगी। ब्रीफकेस मे से दिख रही सौ-सौ के नोटो की गड्डियां, देख पाते ही वह उछलकर वहाँ आ गये। ब्रीफकेस किसका था, उसका ढक्कन खुला हुआ था, उसमें दबा-दबाकर रखे रुपयो का भंडार था। फिर वापस लौटकर वह तेजी से तिजोरी के पास आये। तिजोरी का हैण्डल बार-बार दबाकर उन्होने देखा वह बन्द था। अच्छी तरह भरोसा कर लेने के लिए उन्होने जल्दी से तिजोरी खोली और उसको सरसरी तौर से देखकर, सब ठीक होने का उन्होने विश्वास कर लिया तो तिजोरी बन्द कर दी, लेकिन वापस आकर नकद रुपयो की गड्डियां उठा-उठाकर तौल लेने की कोशिश करने लगे। पूरे रुपयों को गिन लेना इतना आसान नहीं था। हजार-दो हजार नही वे तो लाखो मे थे।

लोबीराम मोटे चश्मे की फ्रेम मे फटी-फटी आंखों से इस खुद-ब-खुद आ गयी सम्पदा को देखने लगे। हर गुजरने वाले पल के साथ मोह, तृष्णा का जैसे समन्दर लहराने लगा। जिसके साथ ही उनके पैरो में एक अजीब तरह की कमजोरी भी पैदा होने लगी। जब और उनसे खड़ा नहीं हुआ गया तो वह धम्म से वही पलंग के पास ही जमीन पर बैठ गये। उसी वक्त उनको कमरे में किसी के आ जाने का अहसास हुआ। और दहशत अन्दर ही अन्दर उछाल मारकर पैठ गयी और उनको फिर से खड़े हो जाने के लिए मजबूर करने लगी। बैठे ही बैठे पंजों के बल घूमते हुए वह उठ जाने की कोशिश करने लग गये। पीछे पलटकर कमरे के दूसरी तरफ नजर दौड़ाते ही उनके सामने जो हैरतमन्द नजारा आया, उसे देखते ही जहाँ एक तरफ पैर के अँगूठे से सिर के बाल तक बिजली की लहरें दौड़-कर उतर गयी, वहीं दूसरी तरफ अविश्वास, आश्चर्य, वासना की मिली-जुली कराह दांतों के बीच से निकल भागी। उनके सामने मादरजात नंगी

विमलादेवी खड़ी थीं।

यह स्वप्न था या हकीकत। अनबूझे, अनजाने [illegible] कुछ पलों तक यूँ ही खड़े रहे। और सामने विमलादेवी सिर्फ एक [illegible] की चार-छः इंच वाली हल्की-सी पैन्टी पहने हुए, उन्हें [illegible] रही थी, जैसे बिफरी हुई शेरनी अपने शिकार को देखे। [illegible] के सामने तीनों लोक घूम गये—जैसे असंख्य चरस की सिगरेटों का धुआँ, [illegible] भाँग के गोलों की तह के ऊपर मँडराते हुए, [illegible] लगा। विमलादेवी को उन्होंने पहले भी [illegible] माहौल में जब कि अभी वह पलंग के [illegible] को भी बटोर नहीं पाये थे, इस तरह, [illegible] खुले हुए लहराते बालों की फाँस के [illegible]! यह सब उनको कुछ ज्यादा लग रहा था!

बस कुछ पलों में ही उनके [illegible] में, अनेक-अनेक आसनों के जरिये, [illegible] वाली विमलादेवी की गड़मड़ [illegible] लेकिन वहाँ उनकी चल नहीं [illegible] एक तरह की वितृष्णा [illegible] जोरियों के अहसास में [illegible] महसूस हुआ करती। लेकिन [illegible] एक लम्बा खेल खेलती [illegible] राम की कमजोरियों, [illegible] लगती। एक कुशल [illegible] रखे हुए भी, वह कुछ [illegible] तो तब पार होने [illegible] पर भी, वह [illegible] लगती।

फिर भी [illegible] सामने आ [illegible] खुल्लमखुल्ला [illegible] थी, जिसे [illegible] जाने तक को [illegible]

[illegible] ह खे भी के ले

कर टुकडों में जुड़ जाने जैसा लग रहा था उनको !

इससे पहले लोबीराम हालात को समझकर सँभल जाने की कोशिश करें, विमलादेवी ने हमला बोल दिया। और इस बार उन्होंने उनके सबसे ज्यादा सबसे बड़े कमजोर मोर्चे पर हल्ला बोला। बस एक ही झपट्टे में वह उनके करीब पहुँच गयी और हैं···यं का···अरे ! अ···र···रे ही कह पाये, तब तक विमलादेवी के होंठो ने हरकत शुरू कर दी थी।

विमलादेवी की यही अदा कातिल थी जिससे लोबीराम बेवस हो जाया करते। सारे ब्रह्माड का अखंड सुख, समूचा का समूचा सुख उनके अन्दर तार-तार होकर जागने लगता। उनकी आकाक्षाओं का स्वर्ग अब उनके सामने था। ऐसे में सत्ता का संघर्ष, नपे-नपाये, जाने-माने मानदंड जो उन्होने खीचे थे, अपने-आप उनसे बड़ी दूर, उनकी पकड़ से बाहर पहुँचने लगे। वह तिजोरी भी जो उन्हें जान से ज्यादा प्यारी थी अपने आकार में छोटी हुई होती धीरे-धीरे दिमागी अनुभव के मानदंड से टकराकर भाग चली। छोटे-बड़े, अनेक प्रकार के सूत्रों मे, हजारो···लाखों की दौलत भी वहाँ के खालीपन में घुसकर उड़ते हुए गायब हो गयी। काफी देर तक यूँ ही खड़े रहने पर जब उनके अंदर कुछ और मजा पा लेने का खयाल दबाव डालने लगा, तो वह पास के पलंग पर बैठ गये।

बिरजू ने तो लोबीराम के निकल आने की उम्मीद छोड़ दी थी। उसे लग रहा था वह अंदर जाकर किसी गहरी नीद में सोने लग गये थे। कमरे का दरवाजा बन्द था और इतनी देर मे न तो कोई अंदर ही गया और ना ही अन्दर से कोई बाहर आया। तभी बिरजू का ध्यान लोबीराम के कमरे से सटकर खड़े हुए उस तिलंगे पर गया जिसे बलराम शास्त्री ने लगा रखा था। कुछ देर बाद दूसरा तिलंगा मंडराते हुए वहाँ आया और खुसर-पुसर करके चला गया। पहले तो वह आदमी ऐसे ढंग से खड़ा था, बिरजू का उधर ध्यान ही नही गया। खासकर जब उसने दरवाजों की फाँक से ताक-झाँक की और फिर जब दूसरा तिलंगा वहाँ आया, तब कही जाकर बिरजू का माथा ठनका।

वैसे तो लोबीराम के कमरे के इर्द-गिर्द शोहदे, तरह-तरह के रंगीन मिजाज लोग धका-पेल मचाये रखा करते, लेकिन आज वहाँ कुछ देर पहले

तक सन्नाटा था। और अब लोबीराम अंदर थे और हमले का वक्त आ जाने वाला था। उस समय इन तिलंगों की हरकतों से एक नया माहौल बन चला था, जिसे ताड़ लेना बिरजू के लिए जरूरी हो गया था। उधर लछमनिया का कहीं पता न था। बिरजू एक बार मेडूखाँ की सराय तक हो आया था। वहाँ से लौटकर आते वक्त उसने जाने-माने अड्डों पर बार-बार देखा भी था। लेकिन लछमनिया तो न मिलनी थी और न मिली। फिर भी बिरजू को इतमिनान था, जब तक वह लोबीराम के यहाँ हाथ साफ करेगा, लछमनिया जहाँ भी होगी—लौटकर आ जायेगी।

बिरजू ने ताके रहने की अपनी जगह बदल देना ही ठीक समझा। अब एक जगह रुके रहना उसके लिए ठीक नहीं था। इसलिए दूसरी मंजिल की मुंडेर छोड़कर वह बरामदे में टहलता हुआ सीढ़ियों तक आया। फिर वहाँ से ऊपर जाकर उसने उलटा चक्कर लगाना शुरू किया। दूसरी और फिर पहली मंजिल का पूरा चक्कर लगाकर एक बार फिर वह दारुलशफ़ा के दफ्तर के सामने जा पहुँचा। कुछ देर वहाँ रुककर वह बाहर की तरफ देखता रहा, फिर बोर्ड पर टँगे हुए नाम की तख्तियों को पढ़ने का बहाना करते हुए वह तिरछी निगाहों से दफ्तर के अंदर की गतिविधियों को भाँपने लगा। वहाँ तो गर्मजोशी का माहौल था। बड़े जोरों से लोग चिल्ला-चिल्लाकर मन्त्रिमंडल की खबरों की धज्जियाँ उड़ा रहे थे।

जितना वक्त उसे गुजारना था, वह गुजर चुका था। बिरजू फिर लोबीराम के कमरे की ओर चल दिया। इस बार उसने लोबीराम के कमरे के बिलकुल करीब से निकलकर जाने की ठान ली थी। वहाँ तक पहुँच जाने पर अनायास बिरजू ने उसी आदमी को फिर देखा। लेकिन अब वह अकेला नहीं था। उसके साथ दो लोग और थे। उनकी ओर बिना देखे हुए भी देखते हुए बिरजू जब वहाँ से निकलकर आगे बढ़ रहा था, तभी दो आदमी और आकर खड़े हो गये। जाहिर था वहाँ रुक पाना उसके लिए मुमकिन नहीं था। फिर भी इनकी हरकतों का सही [illegible] सकने के लिए वह बरामदे के नुक्कड़ पर ही जाकर रुक गया। [illegible] के खम्भे के पीछे छिपकर खड़ा हो गया। उसे वहाँ ज्यादा देर [illegible] नहीं करना पड़ा। बाद में आये-गये लोगों ने शायद कमरे [illegible] थी। तभी पहले से बिखरकर खड़े तिलंगे सिमटकर [illegible] उसी समय बिरजू ने देखा, कमरे का दरवाजा खुला [illegible]

की औरत निकलकर बाहर आयी। औरत की पहली झलकी में बिरजू को एक बार लछमनिया के मिल जाने जैसे ख़याल पर दिल के बल्लियों उछल जाने जैसा अहसास हुआ था। पर औरत के आकार का सही अंदाज लग जाने पर उसे लछमनिया के ना होने का विश्वास हो गया। तब तक औरत वापस अंदर जा चुकी थी और दोनों आदमी वही के वही खड़े थे।

तभी बिरजू को लगा बरामदे के उस छोर से कुछ लोग आने लगे थे, इसलिए उसका वहाँ खम्भे के पास अब और रुके रहना ठीक नहीं था। वह एक झटके में लोबीराम के कमरे और खम्भे से लगे बरामदे की जगह के बीच किनारे से लगी सीढ़ियाँ पकड़कर ऊपर चढ़ गया लेकिन सीढ़ियाँ चढ लेने के लमहे में ही उसने बाहर आकर खड़े हुए लोबीराम को देख लिया था। अब बिरजू के लिए फ़ैसले की घड़ी आ पहुँची थी। उसे मालूम था अगले कुछ क्षणों में ही न सिर्फ़ आज का बल्कि उसके लिए आने वाली तमाम जिन्दगी का दारोमदार था। उस समय एक-एक सीढ़ियाँ चढ़ने में, जहाँ एक तरफ उसे खुशियों और ऐश की एक नयी मंजिल मिलने की उम्मीद लग रही थी वहाँ दूसरी तरफ उसे न जाने क्यों लछमनिया के बराबर गायब रहने से एक प्रकार का डर लगने लगा था। फिर भी उसे पक्का विश्वास था, लछमनिया खुद उसके खिलाफ नहीं जा सकती। वह या तो कहीं फँस गयी होगी या फिर उसके ऊपर कोई मुसीबत आ गयी थी।

फिर भी ऊपर पहुँचने के बाद बिरजू को बस तय कर पाना रह गया था, कहीं लछमनिया कमरे के अंदर बन्द तो नहीं थी। क्योंकि लछमनिया के वहाँ अन्दर होने से एक खतरा और था जिसके तहत उससे मिलने-जुलने वालों पर नजर रखी जा सकती। पहली मंजिल पर बिरजू आगे नहीं गया। दो क्षण आखिरी सीढ़ी के बाद रुके रहकर उसने किसी और के अपने पीछे-पीछे नहीं आने का यकीन कर लिया। उसके बाद पेंट की जेब में मोड़कर रखे हुए कपड़े के झोले को वापस जेब मे रख लिया। फिर पैण्ट की पिछली जेब से उसने छोटी कंघी निकाली और बालों को कसने लग गया। तभी उसने प्यास महसूस की। बड़े जोरों से गले में खुश्की, जकड़न और तालुओं में जलन हो रही थी। कोई भी अगला कदम उठाने के पहले, उसने तय किया बाहर निकलकर उसे एक ठंडा पीना था। वह उन्हीं सीढ़ियों से उतरकर नीचे चला गया जिनसे चढ़कर ऊपर आया था।

सिगरेट खत्म होते ही, उसने ग्राखिरी टुकड़े को जमीन पर फेंककर जूते के तल्ले से मसल डाला। एक ग्रारामगीह, मजे की उस स्थिति मे वह पहुँच चुका था जिसमें वह हमेशा ही कामयाब होता ग्राया। उसने पैंट की खुफिया जेब से लोबीराम के लिए खासतौर पर बनायी गयी दो तालियों का जोड़ा निकालकर बुश्शर्ट की जेब में डाल लिया ग्रौर खरामा-खरामा ग्रन्दर की ग्रोर चल दिया। इस समय उसकी ग्राँखों की दोनों पुतलियों के सामने लोबीराम की तिजोरी जैसे छुपी हुई बार-बार बाहर निकल ग्राने के लिए बेकरार होने लग गयी थी।

बिरजू लोबीराम के कमरे के सामने इतने ग्रात्मविश्वास से गया जैसे वह खुद ग्रपने ही घर को जाने लगा हो। उसने एक सेकेण्ड में लगे हुए ताले को तौलकर हाथो मे ले लिया। बुश्शर्ट की जेब से खुद ग्रपनी बनाई हुई मास्टर की निकालकर उसने ताले मे लगा दी। बस दो-तीन झटकों में ताले का खटका ग्रलग हो गया। दरवाजा ठेलकर वह ग्रन्दर घुस गया। पहली बार की तरह उसने ग्रन्दर जाकर बगल वाला दरवाजा खोल दिया ग्रौर बाहर निकल ग्राया। अब उसने दरवाजा बन्द करके कुण्डी में ताला फँसाकर ग्रपनी चाभी से बन्द कर दिया। ताला बन्द करने के बाद उसने एक बार बाहरी बरामदे से, पहली, दूसरी मंजिलो के बरामदे तक नजर जरूर दौडायी, लेकिन किसी खास वजह से, किसी को भी ग्रपनी ग्रोर ताड़ते-ताकते न देखकर वह बगल के दरवाजे से ग्रन्दर हो लिया। दरवाजा ग्रन्दर की तरफ से बन्द कर लेने के बाद उसने चैन की साँस ली।

ऐसा नही था, उसके पास वक्त नही था लेकिन मिले हुए वक्त को वह किसी कीमत पर जाया नहीं कर लेना चाहता था। दरवाजे से ताला खोलकर ग्रन्दर ग्राकर फिर बाहर निकल ग्राने की बारी में उसने किसी के ग्रन्दर ना होने के लिए खुद देखभाल कर लिया था। तब एक बार बिरजू को फिर वह शाम याद ग्राने लगी थी, जब वह पहली बार इस फ्लैट में करीब-करीब इसी तरह दाखिल हुग्रा था ग्रौर जब खुदा के करम से ग्रन्दर के कमरे में नंगे बदन, प्यारी-प्यारी-सी, शहद में घुली हुई, जवानी की काली घटाग्रो को तोबा मारती हुई, तडपती, बेचैन लछमनिया मिली थी जिसे पा जाने की राहत मे तब वह लोबीराम की तिजोरी तक साफ करना भूल गया। वह सोच रहा था, काश ग्राज एक बार फिर यही पर उसे खोयी लछमनिया मिल जाय।

लेकिन लछमनिया तो वहाँ थी नहीं तो भला मिलती कैसे ? हाँ इस बार अन्दर के कमरे में बेशर्म, बेपर्दा तिजोरी आज उसे अपने पास वैसे ही बुला रही थी, जैसे उस रोज खामोश, बेपर्दा, बेशर्म खूबसूरती में उसे लछमनिया ने बुलाया था। बिरजू ने कमरे की बत्ती जलायी नहीं और अपनी पेनटार्च की हल्की रोशनी से तिजोरी के किनारे पर चाभी लगाने वाली जगह ढूँढ निकाली थी। तिजोरी में चाभी लगाने से पहले उसने कमरे का दरवाजा भेडकर अन्दर की तरफ से सिटकनी लगा दी।

चाभी तो बिरजू ने खासकर इसी तिजोरी के लिए ही बनायी थी, इसीलिए उसे खोलने में जरा भी दिक्कत नहीं हुई। उसकी हसरत भरी निगाहें इस वक्त तिजोरी के खुल जाने का इंतजार कर रही थीं। और उसका दाहिना हाथ खुद ब खुद हैंडिल घुमाकर पल्ला खोलने लगा था। हसरत और हकीकत मिलने और मिल जाने के बीच इतना कम फासला रह गया था कि उससे रुका नहीं गया और एक ही झटके में उसके सामने तिजोरी के दोनों खाने थे। इसके साथ ही बड़े जोरों का धमाका हुआ। लगा, जैसे जोरदार हथौड़े की चोट से किसी ने सिर के पिछले हिस्से को खोदकर सलाखें चुभा दीं। उसे हैरत थी, परेशान था वह, यह क्या हो गया ? इतने दिनों की तपस्या, और इतना लम्बा झोल ?

पागलों की तरह बिरजू तिजोरी को नाखून गड़ा-गड़ाकर नोचने लगा। लेकिन उसे मिलता भी क्या ! ऊपरी तौर से तिजोरी खाली थी। तभी उसकी निगाह तिजोरी की बायीं तरफ की दीवार में लगाये हुए छोटे से बक्से पर पड़ी जिसे देखकर एक बार तो उसे कुछ करार-सा आया पर दूसरे ही क्षण जहालत के गुब्बारे उठने लगे। उसे खुद अपनी बेवकूफी पर हैरत थी। एक पेशेवर चोर होने के बावजूद उसे लगा, ऐसी मामूली-सी बात में वह चूक गया। दुनिया-भर के तीन-तिकड़म कर लेने के बाद बिरजू लोबीराम के कमरे के अन्दर अकेला बन्द था। बाहर किसी को कानोकान खबर नहीं थी और उसे अपना काम पूरा कर लेने की खुली छूट थी। और फिर तिजोरी सामने थी, वह उसने खोल भी ली थी। लेकिन लोबीराम का माल तिजोरी की बायीं दीवार में लगी एक और छोटी तिजोरी में था। और इस छोटी तिजोरी की चाभी बना लेने का उसे ख्याल तक नहीं आया था। यहाँ तक उसने इसके बारे में कुछ सोचा तक नहीं था। इसका कोई गुमान तक उसे नहीं हुआ था।

बिरजू के पास इस वक्त सिर्फ दो चाभियाँ थी। एक तो बाहर वाले ताले की मास्टर-की थी और दूसरी नापकर बनायी हुई तिजोरी के बाहरी हिस्से की चाभी थी। उसे मालूम था, इनमें से कोई भी अब उसके किसी काम की नहीं थी। तिजोरी की चाभी बड़ी थी। उसे तोड़कर छोटा करने में उसे फिर तिजोरी खुली हुई छोड़कर जाना पड़ेगा और मास्टर-की दूसरे प्रकार के तालों के लिए थी। फिर उसे खोलकर ठीक करने, बना लेने की कोशिश करने के लिए न सिर्फ समय चाहिए, कुछ औजार भी चाहिए थे। दोनों मे से कोई भी उसके पास नही था। इसलिए एक अजीबो-गरीब मन:स्थिति में पहुँचकर बिरजू जैसे थका हुआ बेजार बस अपने सिर के बाल नोंचने लगा।

पर दूसरे ही क्षण उसने अपने आपको सँभाला। हालांकि आज के मनहूस दिन को वह कोस रहा था, जब इस कमरे मे न तो उसे तिजोरी का माल ही मिला था और पहली बार का मिला हुआ लछमनिया का गुदगुदा शबाब भी उसके हाथो से निकल जा चुका था। तिजोरी खाली थी, पलंग खाली था। पलंग का ख्याल आते ही बिरजू पीछे घूमकर खाली पलंग पर, उस दिन की नंगी लछमनिया का ख्याल करने लगा। तभी उसकी निगाह दो तकिये के नीचे दबे हुए ब्रीफकेस पर पड़ी, जिसे, विमलादेवी से और सब पाने और जिसके तुरन्त बाद गुरुपदस्वामी के बाहर रुके रहने का संदेश पाकर, लोबीराम तिजोरी के अन्दर बन्द नही कर पाये थे। इसी ब्रीफकेस में विमलादेवी के दिये हुए पाँच लाख रुपये थे। पलंग के ऊपर और तकियों के नीचे जिस तरह से ब्रीफकेस नुमा चमड़े वाला झोला रखा था उसे देखकर बस बिरजू को लगा उसमे कुछ था। उसका तजुर्बा था दारुलशफ़ा में इस तरह के ब्रीफकेस और थैलों में कागज-पत्तर नहीं नोटों की गड्डियाँ हुआ करती थी। इस अहसास के साथ ही उसने भड़ाक से तिजोरी का पल्ला बन्द कर दिया और हैंडिल घुमाकर चाभी लगा दी। तभी एक बडा हल्का ख्याल उसके जहन से उतर दिल में खुरदरी मचाने लग गया, जिससे खामखा बिरजू को हँसी आ गयी। उसे लगा, लोबीराम के इस कमरे में उसके लिए बार-बार यह पलंग ही फला था और तिजोरी दगा दे गयी थी।

तेरह

लोबीराम टूट गये'''लोबीराम टूट गये'''हमने तो कहा था'''देख
लोबीराम टूट गये। यह गूँज थी या फुसफुसाहट, राजनीति का, सत्त
सरकार का एक और दाँव था या लोबीराम के नाम की गुनगुनाहट किसी
नयी शक्ल में लोगों के दिमाग पर छाने लग गयी थी। किसने उड़ाया था
किसका खेल था, लोबीराम टूट गये। इन शब्दों के पीछे कौन-सी साजिश
थी, इसका किसी को पता नहीं था। फिर भी सबके सब इन्हीं तीन शब्दो
को उछालते चले जा रहे थे। इसका न तो कोई सूत्र था, ना ही कोई
आधार। बस, जैसे खुद-ब-खुद दारुलशफ़ा की खामोश दीवारों ने बोल
दिया था, इन तीन शब्दों को, जो अजान की तान की तरह उड़ चले थे
यह तीन शब्द कही दूर से हवा के बहाव से उड़कर आये थे जिन्हे नापने-
तौलने, जाँच लेने, परख लेने तक की किसी को फुरसत नही थी। और ना
ही इनको सुन पाने के बाद किसी के पास होश तक बाकी रहा था खोज
कर लेने का।

लेकिन खबर कहीं से लँगड़ी तो नहीं थी, यह भी शंका उठी थी लोगों
के मन में। आखिर कही यह सधी-सधायी चाल उत्सुकदास तो नही खेल
गये? स्वाभाविक था, ऐसा हो सकता था। जब लोबीराम के मिल जाने
से रंगीनराय, बलदेव चौधरी का पलड़ा भारी हो चला था, तो सिर्फ ऐसी
खबर उड़ाकर ही काफी कुछ हासिल किया जा सकता था। जो कही ठीक-
ठाक तरीके से विधायकों के जहन में झूठ-मूठ ही यह तीन शब्द जमा दिये
जाते तो जाँच-पड़ताल करने तक मीटिंग शुरू हो जानी थी। फिर किसको-
किसको लोबीराम बताते, समझाते कुछ भी करते, शंका तो घर कर ही
जाती और साथ मे लाल बुझक्कड़ का जादू दो हिस्सो में बँट जाता। हाँ
'''हाँ, नहीं'''नही, कहते-बताते प्रदेश की सरकार के भाग्य का फैसला
हो जाता। लेकिन यह तमाम सवाल उठे थे, खबर उड़ने के दूसरे दौर में।
पहले में तो हक्का-बक्का, भौचक विधायक अपनी गहराइयों तक इन शब्दों
को बस आत्मसात ही कर पाये थे।

फिर भी'''लोबीराम टूट गये'''यह शब्द निकले तो पैदा भी हुए
थे। किसी ने देखा-सुना, कुछ तो जाना ही था, कोई तो आधार था ही।

[illegible] में पार्टी अध्यक्ष का आना एक [illegible] विद्रोह कर देना एक विस्फोट था, जिसने अधकचरे विधायकों को जड़ से हिला दिया था तो इन शब्दों के अन्दर भी एक जलजला था, तेज रफ्तार में दौड़ता हुआ ऐसा ववंडर था, जिसने बड़े नेताओं के जोड़-हिसाब को एक झटके में उखाड डाला था। अब तो नये सवाल उठने लगे थे। हर कमरे-बरामदे-गैलरी-सडक और मैदान के हर कोने से विधायक, उनके चमचे, चक्करबन्ध, चिलगोजे और खुराकी दौड़-दौड़कर असलियत जान लेने में जुटे हुए थे।

असल में पहले-पहल यह खबर उड़ायी थी बलराम शास्त्री के द्वारा छोड़े हुए तीसरे तिलंगे ने जो रंगीनराय की मिनी मीटिंग से उठकर गया तो था, लेकिन गुरुपदस्वामी की मोटर में विमलादेवी के साथ बैठकर लोबीराम के चले जाने की बात उसने फिर लौटकर वहीं मीटिंग में एक विधायक के कान मे डाल दी थी। उसके बाद पहले शोर उठा था—लोबीराम कहाँ हैं···लोबीराम गये कहाँ? यह शोर ही बाद में उनका पता न लग पाने से···लोबीराम टूट गये···लोबीराम टूट गये, की फुसफुसाहट में बदल गया था। हालाँकि तब तक पार्टी अध्यक्ष वहाँ से जा चुके थे और उन्होंने खुद जाते वक्त लोबीराम को पूछा था।

पार्टी अध्यक्ष को गाड़ी तक पहुँचाकर रंगीनराय, दरोगा द्विवेदी और बलदेव चौधरी वापस लौटे थे, बस उतनी ही देर में सब कुछ हो चुका था। खुद उनके फ्लैट मे जमा हुए लोगों ने तब तक की सारी कामयाबी पर पानी फेर दिया था। इसी बीच जाने कब दबे पाँव से तीसरा तिलंगा आया और गुरुपदस्वामी के साथ मोटर में बैठकर लोबीराम के राजभवन में चले जाने की गुपचुप बात छोड़ गया। किसने कही—कौन था, किसी को मालूम तक नही था। हाँ उधर दौड-भागकर जोशीले खुराकियो ने इस खबर की सत्यता की पुष्टि कर डाली थी।

रंगीनराय ने तो सोच रखा था, पार्टी अध्यक्ष के चले जाने के बाद बाकी बच रहे विधायकों को लेकर वे और बलदेव चौधरी पूरे दारुलशफ़ा में एक-एक कमरे में जायेंगे बस सभी का सहयोग माँगने को। इसके दो फायदे होने वाले थे। एक तो मिनी मीटिंग का टेम्पो आखिर तक बना रहेगा और दूसरे उत्सुकदास के आदमियों को तोड़-फोड़ कर लेने का मौका ही नही मिल पाता। लेकिन वापस आते ही जैसे, किसी ने एक झटके में

उनके नीचे से जमीन ही खींच ली थी। अब सवाल और विधायकों का सहयोग ले लेने का नहीं था। अब तो सवाल लोबीराम को रोके रहने का था।

बलदेव चौधरी, रंगीनराय, दरोगा, मनोहरलाल सहित करीब दस विधायक उल्टे पैर लोबीराम के कमरे की ओर चल दिए। तभी रास्ते में बलदेव चौधरी ने रंगीनराय की बगल खेंचकर कहा, "क्यों रा···साब यह क्या हो गया ?"

"मुझे तो इसमे उत्सुकदास की कोई चाल लगे है !"

"चाल···कैसी चाल ?"

"खबर उड़ाकर विधायकों का मनोबल गिराने की।"

"हाँ या फिर खुद लोबीराम का असर कम करने की।"

"लेकिन दोनों से अपना तो नुकसान होगा ही।"

तभी दरोगा बीच में आ गया और बिना लुका-छिपी के जोर-जोर से चिल्लाने लगा, "देख लेंगे सारे को, जायेगा कहाँ ?"

"और जो बात सही निकली ?" मनोहर ने तुक्का फेंका।

"बस यही ना कहो।" दरोगा के स्वर में पीड़ा थी।

"लेकिन एक रास्ता है !"

रंगीनराय का एक रास्ता बता सकने का माद्दा सबको अच्छा लगा और बलदेव चौधरी के रुक जाने से सबके सब रुक गये। जाहिर था, आगे बढ़ने से पहले अब आगे का रास्ता जान लेना जरूरी हो गया था।

लोगों के रुक जाने से रंगीनराय ने खुफिया तौर पर फुसफुसाते हुए कहा, "क्या है, हम लोग वहाँ तक चलेंगे और लौटकर कह देंगे उत्सुकदास ने झूठी खबर उड़ा दी है।"

"लेकिन लोबीराम अलग हुए," बलदेव चौधरी के शब्दों में [illegible] था।

"कहेंगे, वे राज्यपाल और गृहमंत्री से [illegible] के लिए [illegible] गये।"

"लेकिन आपकी इस बात में एक [illegible] है।" दरोगा ने [illegible] किया।

"वो क्या ?"

"अगर हम मान [illegible] लोबीराम को [illegible]

गृहमंत्री से बात करने को भेजा था और अगर कहीं वहाँ से लौटकर वह सचमुच टूट गया तो क्या यह नहीं समझा जायेगा जो हमने घुटने टेक दिए ?"

"सो तो है ?" बलदेव चौधरी ने हामी मिलायी।

"लगाये रहो···लगाये रहो···दरोगा, अब भला इस सारी फिलासफी का वक्त बच गया है। अरे छोड़ो भी यह, जो कहता हूँ वही करो। इतनी जल्दी और कुछ नहीं सोच सकते।"

रंगीनराय की बात मे दम था, इसलिए सबके सब खामोश हो गये और लोबीराम के कमरे की ओर फिर से चलने लग गये। अब तक यह भीड पन्द्रह-बीस की हो चुकी थी और हर क्षण दो-चार और, पीछे से, सामने से, बायें-दायें से आ-आकर मिल रहे थे। धड़धड़ाते हुए, लोबीराम का दुखी किया हुआ काफिला, क्रोध और हिंसा की आग भड़काता हुआ आगे बढ़ा चला जा रहा था। काफिले के पीछे हिस्से से लोग खिड़की-दरवाजे पर थापें देकर लोबीराम की बाबत पूछते जाते थे। जो सबके तेवर थे, ऐसा लग रहा था, लोबीराम के मिल जाने पर उसे फाड़ डालने, नोंच डालने के लिए ये लोग तैयार थे।

तभी बलदेव चौधरी के बच रहे समर्थकों ने, जो पीछे से पायी खबर पर दौड आये थे, उनको रोक लिया। आगे के दांव सुझा देने के लिए हर कोई बेताब था। इसी उलझाव मे एक बार फिर काफिला रुक गया। बलदेव चौधरी के समर्थक बड़े अक्खड किस्म के जीव थे; जिनको सँभाल लेना रगीनराय के बस की बात नहीं थी। इसी बीच उनके पुराने पाँच समाजवादी विधायकों की एक टोली आ पहुँची। इनसे हर विधायक को अपनी-अपनी सहानुभूति, समर्थन की भड़ास अभी निकालनी रह गयी थी लेकिन एक साथ न बोलकर वे बारी-बारी से आपसी बातचीत के लहजे में लफ्फाजियाँ फेंकने लगे :

एक विधायक, "रायसाब, वह तो कमीना है, हमने पहले ही कहा था।"

दूसरा विधायक, "खुद ही तो चलकर आया था, रायसाब भला क्या करें ?"

तीसरा विधायक, "तो भला रायसाब कोई भगा देते, क्यों दरोगा ?"

चौथा विधायक, "हाँ, हाँ, और क्या, तभी तो हमने वैसा खेल बनाया

।"

पहला विधायक, "और अब दगमदगा!"

तीसरा विधायक, "कोई जरिया निकाल लो तब जानें, खालीपीली गाये हैं।"

पाँचवें विधायक ने, जो अब तक चुप था, तभी मुट्ठी बाँधकर बड़े र से हवा में उछाली और उसे रोके रहा, फिर भर्राये गले से चिंघा- ते हुए बोला, "जमदूत बन जायेंगे, लोबीराम को लायेंगे!"

और कोई वक्त होता तो रंगीनराय खूब चटकारियाँ भरते, इनको ींचते-तानते, लेकिन अभी तो उन्होंने किसी की कुछ सुनी ही नहीं, अपने यालों में ही खोए रहे। इतने में बलदेव चौधरी अपने गोल को तोड़कर नके पास आ गए। और जैसे अपने-आप दोनों के आगे बढ़ जाते ही पूरा ाफिला फिर से चल दिया।

चलने को तो बलदेव चौधरी चल दिये लेकिन उनका भी मन कहीं र था। उन्हें लग रहा था"'रंगीनराय के साथ आकर वह फँस गये।। ोड़-तोड़ की राजनीति में तो खतरा रहता ही है।"'फिर इसमें उत्सुक- ास, गुरुपदस्वामी का कौन मुकाबला कर पायेगा।"'वे तो सीधे-साधे रीके से हमला कर देना ज्यादा कारगर समझते हैं।"'उनके पीछे बड़ी ामवारी थी, जिसकी बिना पर पार्टी के तमाम विधायक साथ हो आते। "या फिर विरोधी दलों के साथ साँठ-गाँठ करके भी मुख्यमंत्री बन ाने का मुद्दा था, उनके पास।"'लेकिन बस गिनती की राजनीति में र गये थे। अब तो उनको साफ-साफ एक बड़ी हार दिख रही थी।

साथ चलते हुए रंगीनराय ने एक बार आँखें बगलिया कर बलदेव ौधरी को देखा। कुछ कहने-सुनने को तो था नहीं लेकिन भाव-मुद्राओं । रंगीनराय को उनके अंदर चल रही उथल-पुथल का अंदाज तो लग ो गया था। जाहिर था अगर बलदेव चौधरी के अदर उठता हुआ बलबला भाला नहीं गया तो उनके अदर भी या तो कमजोरी पैदा हो जाने गेगी या फिर वे भी कोई लम्बी उड़ानें भरने लग जायेंगे। रंगीनराय का स वक्त कुछ भी बात करने का मन तो था नहीं, फिर भी महज बलदेव ौधरी को तरंगित रखे रखने के लिए उन्होंने सिलसिला छोड़ दिया, चौधरी साब, किसी भी तरह लोबीराम को रोकना होगा।"

"अरे भई यह तो बड़ा नाकारा निकला! अभी बीस-पच्चीस मिनट

'पहले ही···"

"लेकिन क्या यह नहीं हो सकता, यह सब झूठ हो ?" दरोगा बोला।

"हो भी सकता है, पर एक बात तो तय पायी, विमलादेवी उसे ले गयी और फिर मोटर में गृहमंत्री थे।"

"लेकिन रायसाब, उससे क्या होता है !"

"होता क्या है ? चौधरी साब आप बड़े भोले हैं।"

"क्यों ?"

"मोटर राजभवन गयी थी।"

"हां !"

"और वहां उत्सुकदास मौजूद था ?"

"हां।"

"और अब तक वहां पार्टी अध्यक्ष भी जा पहुंचे होंगे। मेरा ख्याल है चौधरी साब, आपको यहां रुकना नहीं चाहिए था।"

"फिर ?"

"आपको पार्टी अध्यक्ष के साथ ही रहना चाहिए था।"

"तुम्हीं ने तो रोका था।"

"सो तो है, गलती मेरी है।"

तभी दरोगा ने बात का सूत्र पकड़ लिया और पीछे मुड़कर चिल्लाने लगा, 'गाड़ी लाओ', 'गाड़ी लाओ', 'जल्दी करो', 'भागकर जाओ।'

दरोगा की हरकत ने अभी तक बोर होने लग गये कुछ विधायकों में सनसनी फैला दी लेकिन न तो रंगीनराय ने और ना ही बलदेव चौधरी ने इसका प्रतिकार किया। तब तक चार-पांच खुराकी दौड़ पड़े थे जिनके पीछे चौधरी के भक्त विधायक भी चल दिए क्योंकि उनको मोटर में पहले से अपने लिए बैठ जाने की जगह ले लेनी थी। एक बार फिर काफिला रुक गया था और अब चूंकि बलदेव चौधरी को अलग हो जाना था और आगे तक नहीं जाना था, इसलिए रंगीनराय ने उन्हें साधे रखने के लिए आखिरी डोज दे देना ठीक समझा। जब तक मोटर बरामदे के किनारे या 'ए' और 'बी' ब्लाक के बीच वाली सड़क पर आवे, तब तक उनको समझा ही देना उचित था। रंगीनराय ने चौधरी का हाथ पकड़कर जरा काफिले की पकड़ से दूर ले लिया और फिर बोले,

"चौधरी साब, यह कोई ऐसी बात नहीं है जिससे हम लोग मैदान निकल जाने जैसी स्थिति मे होने का अहसास करने लग जायें। कई बातें है, कई तरीके हैं, लोबीराम को रोके रखने के।" रंगीनराय के चेहरे पर रहस्यमय कुटिल मुस्कुराहट उगने लगी थी।

"क्या···क्या ?"

"लेकिन यह सब आप हमारे ऊपर छोड दें। आप तो बस पार्टी अध्यक्ष को घेर लें। उनसे किसी को मिलने ही न दें। आपको शायद याद होगा, यहाँ से जाकर उनको पी० एम० हाउस रिपोर्ट देनी थी, जिसके बाद ही फैसला होगा, गोया राष्ट्रपति शासन समाप्त किया जाय या नहीं!"

"सो तो है!"

"तो आपको यह भी मालूम होगा, पार्टी अध्यक्ष यहाँ से लोबीराम के साथ ही जाने का भ्रम लेकर ही गये हैं। जाहिर है वे इस बात का अपनी रिपोर्ट में हिसाब बैठाकर बोलेंगे!"

"हिसाब बैठाकर ?"

"हाँ, चौधरी साब, हिसाब बैठाकर। वे बोलेंगे इत्ते लोग खिलाफ हैं। सर्वसम्मत से उत्सुकदास को चुना नहीं जा सकता।"

"ऐसा ?"

"हाँ, ऐसा।"

"फिर तो चुनाव होगा।"

"हाँ! लेकिन यह तभी होवेगा जब इस बीच कहीं उत्सुकदास लोबीराम को उनके सामने पेश न कर दे!"

"क्या मुँह लेकर वह जायेगा ?"

"साले का मुँह है भी, सुअर का थोथना है पूरा!" इसके बाद बड़ी बचकानी अदा में रंगीनराय ने अपनेपन मे चीख लेते हुए उनको करीब-करीब दबोचकर कह दिया, "भागो चौधरी साब, पार्टी अध्यक्ष को घेर लो, तोड़ लो, किसी से भी मिलने न देना···"

रंगीनराय को आगे सुन लेने के लिए चौधरी रुक नहीं सके। वह सामने सड़क पर रुकती हुई मोटर की तरफ उछल-उछलकर दौड़ चले।

बलदेव चौधरी के चले जाते ही काफिला आधे से भी कम लिया था। उनके भक्त विधायक तो मोटर मे ठूँस लिये और बाकी

खड़ी हुई जीप में भरकर लग लिए। और जो फिर भी बच गये वे वि
में भरकर राजभवन की ओर तमाशे के अन्तिम दौर को देख पाने को
दिये। इन लोगों के चले जाते ही दरोगा, जो अभी तक किसी ग
चिन्ता मे डूबा हुआ था, बिगड़े हुए शेर की तरह बिफर पड़ा, "राय
यह खबर, जिसने भी उड़ायी, है बड़ी जानलेवा।"

"अरे दरोगा, अब समझ आया।"

"नही ऐसा नहीं, मैंने कुछ और सोचा था।"

"क्या ?"

"जो लोबीराम टूट गया होता और टूट जाने की खबर ऐसे न फै
तो..."

"तो ?"

रंगीनराय के कान के पास अपना मुँह ले जाकर दरोगा ने फुसफु
हुए आगे कहा, "तो हम लोबीराम को गोमती पार जंगल में दबा देते

"कैसे ?"

"अरे साब, यह भी कोई राजनीति का दाँव है जो इसकी विवेच
करें ? यह तो खड़ा-खेल है, अपनी लैन का !"

"इससे क्या होना था ?"

"लोबीराम का सामने का रूप सब आपके यहाँ देख लिए थे। ज
वह सामने ही नही तो हमें उनके उसी रूप की बदौलत फायदा उठा ले
का मौका मिल जाता !"

"तो जाओ करो ना ! किसने रोका है ?" रंगीनराय ने खीझक
कहा।

"लेकिन खबर जो उड़ गयी है।"

"उसे हम मोड़ देंगे। जाओ-जाओ, ससुरा बस पार्टी अध्यक्ष से
मिलने पाये।"

"तो चुप रहना।" उँगली होंठों पर रखकर इशारे में समझाते हु
दरोगा भी बगली काटकर अलग हो लिया।

जब रंगीनराय बचे हुए काफिले को साथ लेकर लोबीराम के कम
के सामने जा पहुँचे तो वहाँ लटकता हुआ ताला देखकर उनका कलेज
मुँह को आने लगा। हलक से निवाला निकाल लेने जैसी बात थी
उनको लगा, वहाँ लटकता हुआ बेजान ताला उनको मुँह चिढ़ा रहा था

उनकी खिल्ली उड़ाने लग गया था। कुछ क्रोध मे, कुछ घृणा और निराशा की मिली-जुली प्रतिक्रियाओं मे डूब चलने के कारण रंगीनराय ने बड़े जोर से ताला लटकने वाले दरवाजे के बगल के दरवाजे पर लात मार दी। लात मारते वक्त उनको अपने संतुलन का ख्याल तो था नहीं। जिसकी वजह से जोरदार लात के प्रभाव से जब बगली दरवाजा अन्दर की तरफ खुल गया तो वह आगे की तरफ जरा फिसल गये। लेकिन उनको पास खड़े विधायकों ने सँभाल लिया। और जिसके साथ ही बाकी सब लोग लोबीराम के कमरे के अन्दर घुस गये और उलटफेर करते हुए अपनी भड़ास निकालने लगे।

पार्टी मीटिंग शुरू होने का वक्त हो चुका था लेकिन खास-खास नेताओं का दूर-दूर तक पता न था। उत्सुकदास को गुरुपदस्वामी के साथ, बलदेव चौधरी को पार्टी अध्यक्ष के साथ आना था। रंगीनराय को पूरे दल-बल के साथ बड़े शोर से हल्ले का रेला-पेल मचाते हुए आना था, यह तो सबको मालूम था लेकिन सैकड़ों निगाहें बस लोबीराम के आ जाने का इंतजार करने लगी थी। सबकी जुबान पर एक ही नाम था, सबके दिल में एक ही सवाल था, लोबीराम कहाँ होंगे—इधर होंगे या उधर होंगे। खबरों में, बतकही इतनी ज्यादा हो चुकी थी, इतने अनुमान, इतने अन्दाज अब तक लोगों ने लगा लिए थे जो एक से एक नये कोण, एक से एक बढकर छान ली गयी, घोंट ली गयी खुराफातों के अब तक अम्बार पैदा होने लग गये।

लेकिन मीटिंग तो होनी थी, इसलिए हाईकमाण्ड के पर्यवेक्षक शाम से ही आकर जमे हुए थे। दरियाँ बिछ गयी थी, चाँदनी जमा दी गयी थी और सामने बीचोबीच गुलगुले गद्दों के ऊपर एक और साफ चादर फैलाकर लम्बे-लम्बे गिर्दे रखे हुए थे। बीच के पाँच गिर्दों के सामने पाँच लकड़ी की सन्दूकचियाँ थीं। बीच का गिर्दा और उसके सामने की संदूकची पार्टी अध्यक्ष के लिए थी; जिनके अगल-बगल गृहमंत्री गुरुपदस्वामी और बलदेव चौधरी के गिर्दे और संदूकचियाँ थीं। आखिर वाली दोनों तरफ की सन्दूकचियाँ पर्यवेक्षक और पार्टी मंत्रियों के लिए थीं। हर ... पर एक दस्ता कागज, एक-एक कलम-दावात और एक अदद ...ा।

हुआ था।

पाँच, सात के गोल मे विधायकों में गर्मजोशी की बातचीत चल रही थी। हर जगह बोलने वाले एक या दो थे, बाकी तो अपनी-अपनी हाँ-ना मिलाने में जुटे थे। जिस गोल मे बोलने वाले दो से ज्यादा पड़ रहे थे, वहाँ से चीखने-चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। जाहिराना तौर पर गुटों के आधार पर बँटे हुए थे। सबसे मजबूत और सबसे बड़ा अकेला गुट उत्सुकदास के समर्थकों का था जिसमें गुरुपदस्वामी के आदमी ज्यादा थे। दूसरा गुट बलदेव चौधरी का था जिसमें गिने-चुने विधायक थे, तीसरा गुट पुराने विधायकों का था जो रंगीनराय के साथ थे। और चौथा गुट लोबीराम का था जो अलग-अलग कोनों में बिखरा हुआ भी अपने आप मे एक ताकत रखता था।

गोल और गुटों से अलग पार्टी की सरकार बन जाने का उत्सवी माहौल सबके ऊपर जोशीली तरंग बनकर लहरा रहा था। राष्ट्रपति शासन से ऊबे हुए विधायकों के लिए आज का मौका एक त्यौहार की तरह अनेक-अनेक खुशियों की गठरी लेकर आया था। सब के सब आने वाले सुनहरे वक्त के लिए अपना-अपना हिसाब लगा लेने में मशगूल थे। मंत्रिमंडल से लेकर कमेटियों, समितियों, संस्थाओं, निगमों और संस्थानों की सदस्यता, अध्यक्षता से जुड़ी हुई सुविधाओं के साथ कोटा, परमिट, तबादला, तरक्की, धन्धा-ठेका, आदि की नयी-नयी रोज-रोजाना की गतिविधियों ने सबके अन्दर कई प्रकार की याचक भावनाओं, खूबसूरत तमन्नाओं के फूल जैसे खिला रखे थे। सत्ता और सरकार की जटिल राजनीति जिनकी पकड़ से बाहर थी, उनके लिए तो बस आने वाले वक्त की यही सुनहरी प्रक्रियाएँ ही माने रखती थी जो उनकी मुर्दा जिन्दगी में एक बार फिर से हलचल पैदा कर सकती थी।

विधायकों के सारे हिसाब इशारों-इशारों में उभरकर सामने आने लगे थे। बहुतेरे जो गुरु-गम्भीर थे, चुप्पी साधे बैठे थे, लेकिन फिर भी साफगोयी पर विश्वास करने वालों ने अपने-अपने चक्कर चला दिए थे। ऐसे विधायक जहाँ राजनीति के खेल में अपने-अपने गुटों से जुड़े होते लेकिन व्यक्तिगत स्तर के धन्धों से सम्बन्धित कठिनाइयों, मुसीबतों को बड़ी दयनीयता से आपस मे खुल्लम-खुल्ला, बिना संकोच के कहते जा रहे थे, गुटों से अलग होते हुए भी इनके खेल एक जैसे थे इसीलिए पार्टी

की सरकार के बन जाने का मौका इन सबके लिए एक हसीन प्यारा मौका था, जिसके नशे में इनको झूम उठने का अहसास होने लगा। इधर जब गुरुपदस्वामी, उत्सुकदास, पार्टी अध्यक्ष, बलदेव चौधरी, रंगीनराय, लोबीराम, दरोगा द्विवेदी अपने सत्ता के खेल में जूझे हुए थे, ये सब खर्चे-पानी के हिस्सों, टुकड़ों को जोड़ लेने लग गये। इनको इस बात की फिकर तो थी मुख्यमंत्री कौन होगा लेकिन पार्टी की सरकार नहीं बनने वाली थी, ऐसा सोच सकने की ताकत अब इनमें नहीं बची थी।

ऐसे माहौल में बड़े नेताओं के अभी तक न आने की वजह से रुकी हुई पार्टी मीटिंग को देखते हुए एक विधायक बोला, "अरे भई, ये सब कहाँ मर गये?"

बात का अर्थ समझ जाने से उस गोल में खड़े हुए सभी विधायक ठहाका मारकर हँसने लगे तो दूसरा विधायक बोला, "आज सवेरे से मेरी हथेली खुजलाय रही थी!"

"कौन वाली?" तीसरे ने दूर की कौड़ी फेंकी।

"अरे दाहिनी रे! और कौन-सी!"

"मेरा तो दाहिना पैर तक खुजलाय रहा था!" पहले ने टोका।

"अगर खुजलाने की ही बात हो···"

"देखो गन्दी बात, आज के दिन नहीं।"

"हाँ, हाँ और क्या, हमने तो हनुमान जी कै परसाद मानो हतो।"

"और हम तो गंगाजी को चुनरी चढ़ावेंगे। तरसा दिया ये सारे राजपाल ने!"

"राजपाल! वे तो ससुरा महा छरछन्दी है! जब-जब हमने कुछौ कही तो मुकुर कै गुर्रात रहा।"

"हम तो जानत हते सो उसके पास गये नाही।" पीछे खड़ा एक और विधायक अपनी दुर्दशा बयान कर रहा था, "इत्ते दिन मा जमा-जोडी सो सब उड़ गयी। ऊपर से यै सारे खुराकी दो-दो, चार-चार माँग-माँग कै गरीबी लै आय। तौन तंग आयकै हमने तो सब सारन कै भगाय दैय!"

"और का···! और का! मुफ्ती मा कौन खिलायँगा।"

"लेकिन भई कुछौ कहो इस बीच हम सोये खूब! न सवेरे का चक्कर न भरी दुपहरी मां निकलना, न ज्यादा भीड़-भाड़! हमारो तो वजन

गये इस बीच !" गोल में दाहिनी तरफ के मुच्छाड़िया ने मुँह बाकर उद्गार प्रकट कर दिये ।

"हाँ···हाँ, वजन इनका नहीं तो का हमारा बढ़ेगा, नीद इनका नहीं तो का हमका आवैगी !"

"का है भला !" गंजे ने टोपी उतारकर बदमाशी में पूछा ।

"लेव ये कित्ते भोले हैं !"

"भोले हैं !···हाँ···हाँ···भोलेशंकर हैं ! लेकिन वजन बढ़ने का नुक्शा तो बतलावें ।" गंजा उकसा रहा था ।

"अरे इनने गाड रक्खी थी, जोड़ रक्खी थी, उसी खातिर चद्दर तान के सोय रहे।"

"और तुम लोग बड़े साधू होव !" मुच्छड ने जड़ दी ।

"साधू होंगे तुम···तुम्हारा बाप ! तुम्हारे बाप का बाप !"

"अरे···अरे, साधू होना, भला कोई गाली है जो गुस्सात होव !" गंजे ने चेतावनी दी ।

"धत्त तेरे की···" मुच्छड़ फँसना नहीं चाहता था ।

"अरे तुम लोग ऐसे भिड़े रहो, उधर देखो···उधर !" पीछे की तरफ खड़े हुए विधायक ने, सामने गिर्दा, सन्दूकचियों वाले मंच के दाहिनी सिरे पर दल-बल के साथ आकर बैठते हुए रंगीनराय की तरफ इशारा किया ।

आगे-पीछे, सामने से मुँह बाये हुए विधायक मंच की तरफ नाक सीधी कर देखने लगे । बड़े हाल के हर कोने-किनारे से सत्ता के खेल की ताजा खबरें, दाँव-पेंच के नये कोण आत्मसात कर लेने के लिए विधायकों का हुज्जूम रंगीनराय को घेरने लग गया था । इसके पहले इस गोल के विधायक भी उधर चलें, गंजा विधायक बोल उठा, "देखो···देखो यही हैं, हमारी नयी आजादी के पैरोकार !"

"आजादी-वाजादी कुछ नहीं, मरवायेंगे ये सबको !"

"क्यों भला ?"

"क्यों भला···गुड-गोबर हुव बिलकुल । दै पैसा···दे पैसा···पैसा है तो और कुछ जान लेने की जरूरत कहाँ रह गयी ?"

"अरे···रे···रे···सीधे मुँह बात करना नहीं आता सारे को ?"

"बस बात करो, हम तो चले ।"

"लेकिन बतावो ना कैसे मरवायेंगे ?"

"हाँ, तो इनकी साजिश है, सरकार न बनने देने की !"

"कय्या···का का का···" एक साथ पाँच-सात विधायक कराह उठे।

"हाँ···हाँ, यँ सब उत्सुकदास के खिलाफ हैगे ?"

"उत्सुकदास सारा चोर हैगा ?"

"हाँ···यें तो है···हम सबसे हिस्सा माँगेंगा !"

"का, खुद ?"

"नहीं किशनवल्लभ, यशोदाबल्लभ, कालीशंकर हैंगे इसी काम को !"

"लेकिन सरकार बनेगी, तभी तो···"

"सरकार तो बननी है···वर्ना हम सब बरबाद हो जावेंगे !"

"हुव···बड़ी कर्में चढ़ गयी है।"

"तो चलो, हम रायसाब को बोल दे गा !"

"चलो···चलो, सब जना मिलि कै कहि दें !"

मीटिंग शुरू होने मे देर होने की बात, वैसे तो रंगीनराय को पता थी, लेकिन यहाँ आ जाना खुद अपने आपमें उनकी चाल थी। एक तो जिन विधायकों से अभी तक सम्पर्क नहीं बन सका था, उनसे मिल लेना हो जाना था और ऊपर से ज्यादा से ज्यादा विधायकों के ऊपर और गहरी छाप डाल देने जैसा कुछ करना था। यह बडा कीमती, बड़ा माने रखने वाला कदम था। फिर उन्होंने दरोगा को लोबीराम के टूट जाने वाली खबर को घुमा देने का भी वादा कर लिया था। लोबीराम का असन्तुष्ट विधायकों की मीटिंग से एकाएक गायब हो जाना और फिर उनका गुरुपद-स्वामी की गाडी में बैठते हुए पाया जाना एक सनसनीखेज वारदात थी, जिसे उत्सुकदास के आदमी बखूबी इस्तेमाल करते जा रहे थे। इसमें रोक लगानी थी, और फिर अगर दरोगा आगे तक के लिए लोबीराम को उड़ा ले जाने वाला था, तो उसकी भूमिका भी बनानी थी।

मीटिंग में पहुँचकर उनको अपना बड़ा गोल बना लेना था, इसीलिए काफी विधायकों को लेकर पहुँचे थे, लेकिन गोल इतना बड़ा खुद-ब-खुद होने लगेगा इसका उनको पता नहीं था। चूँकि मीटिंग शुरू हो जाने में कुछ देर हो चली थी और बड़े नेता कोई अभी आये नहीं थे, ऊपर से तरह-तरह की अफवाहों ने ऊधम मचा रखी थी इस खातिर हर कोई अन्दर तक की बात जान लेना चाहता था। हर कोई जानना चाहता था

आखिर सब लोग हैं कहाँ, क्या चल रहा है ? इतने सवाल थे सबके मन में जो खुद उनको नही पता थे। फिर खबरों के अलावा रंगीनराय के लिए सबके मन में एक आकर्षण था, एक खास जगह थी उनके लिए ! इसीलिए उनके आते ही दस-पांच को छोडकर करीब-करीब सभी विधायकों ने चौकड़ी भर लेना चाहा था। वे एक के ऊपर एक लदे-फंदे खड़े थे।

समूचे, वहाँ पर तब तक आ गये, विधायकों को अपने पास खींच लेने का पूरा इतमिनान हो जाने पर रंगीनराय ने जैसे सबके मन का चोर निकालकर छेडना शुरू कर दिया था—

"सरकार बना लेना कोई हँसी-ठट्ठा नहीं है। हमने इतने दिन झक नहीं मारी। आप सबके यहाँ आने से पार्टी की बड़ी ताकत छिप जाने लगे, ऐसा भी नहीं है। पार्टी हमारी है, आपकी है, उत्सुकदास के बाप की नही है। गुरुपदस्वामी दिल्ली के बडे हैं, उनको हमने पूजा है, उनके लिए हमारे मन में अनन्य श्रद्धा और विश्वास है। उनके एक हुक्म पर हम सब सर पै कफन बांधकर जूझने लगें, ऐसा तो है लेकिन उनका हुक्मनामा अगर पार्टी की एकता को तोड़ने वाला हो, भ्रष्टाचार के पहाड़ उठा लेने वाला हो, सबको चोट पहुँचाने वाला हो तब ! हम आपके अंदर उठने वाले सवालों के बारे में कुछ कहे, इससे पहले हम आपको बता दें; आज उत्सुकदास के खिलाफ जो विरोध का अंधड उठने लगा है, उसके पीछे कोई आज का नही, दस सालों का हिसाब है। आपमें कौन नहीं जानता, कैसी लूट मचायी थी इसने पिछले मंत्रिमंडल में। इनका गुट है। गुट तो हमारे भी हैं, आपके हैं, चौधरी साहब के हैं, लोबीरामजी के हैं। पार्टी की राजनीति गुटबन्दी की राजनीति तो होती है, लेकिन इनका गुट चोर-उचक्को का गुट है···उसमें कौन है···कृष्णवल्लभ यादव। कृष्णवल्लभ को हमसे ज्यादा कौन जानता होगा ? इसने डाकुओ, धन्धेबाजो, तस्करी सेठों के जरिये गुनाह के अम्बार खड़े कर रखे हैं। मैं पाक-दामन, साफ-दामन की बात नही करता, लेकिन अफीम की खेती और डकैती की कमाई का भी समर्थक नही हो सकता। हम जानते हैं, आप सब दुखी हैं। राष्ट्रपति शासन हम लोगों के लिए कोई खुशी की चीज तो है नही। राष्ट्रपति शासन का लोकतान्त्रिक व्यवस्था मे कोई स्थान नही होता। राष्ट्रपति शासन न सिर्फ आप सबके पेट पर बल्कि दिमाग पर भी लात मार देने जैसा है। इसलिए आज सबसे पहले हमारी पहली मांग होवेगी,

आज अभी राष्ट्रपति शासन खत्म कर दिया जाय।"

सभी विधायकों के चेहरे पर खुशियों की लहर दौड़ गयी जिसके साथ जोश में कुछ ने तालियाँ बजा दीं और एक-दो जिन्दाबाद करने लगे। उनको रोकते हुए रंगीनराय ने आगे कहा, "लेकिन राष्ट्रपति शासन सिर्फ खत्म हो जाने से क्या हमारी समस्याएँ खत्म हो जायेंगी? अगर कहीं ऐसा हुआ जो राजपाल की जगह किसी ऐसे आदमी को प्रदेश का मुखिया बना दिया गया जो, पार्टी के आदर्शों, आपकी, हमारी और जनता की भलाई को ताक में रखकर लूटने-खसोटने के लिए पले-पलाये कुत्तों को छोड़ दे, आप सबके ऊपर जाँच, सी० आई० डी० के फंदे डाले जायें! डकैतों, मुजरिमों को शह मिले और सारा प्रदेश पूँजीपतियों, कालाबाजारियों, रैकेटरियरस के चंगुलों में फँस जाये! क्या आप चाहेंगे? बोलिए तब अपने-अपने घर जाकर आने वाली नस्ल को आप क्या जवाब देंगे? जब अगली बार आप चुनाव लड़ेंगे और आपके क्षेत्र की जनता आपसे पूछेगी, सरकार ने किया क्या, पार्टी की सरकार ने क्या किया तो आपके पास क्या जवाब होगा? हल्ला होगा, बड़ा शोर होगा, उससे बड़ा नाटक होगा लेकिन इस सबके पीछे नामी पेशेवर खिलाडी, शराफत की नकाब ओढ़कर जो लूट मचायेंगे, आपको जवाब देते नहीं बनेगा। क्या कहेंगे आप? बोलिए ना?

"अब मैं आपको बताता हूँ उस काड के बारे में जिसे पिछले कई दिनों से अखबार की सुर्खियों में आप सब देख रहे होंगे। वह कांड है ताँबाकांड! ताँबाकांड वह बदनुमा धब्बा है, पार्टी के दामन पर जिसे हम सात जन्म तक नहीं छुड़ा सकते। ताँबाकाड महज एक घपला नहीं है, यह है राष्ट्रविरोधी गद्दारों की एक बहुत बड़ी साजिश। ताँबाकाड के ऊपर संसद में, अखबारों में जो बहस चल रही थी, उसे आप सबने पढ़ा होगा लेकिन आपको शायद यह नहीं मालूम होगा ताँबाकाड का असली मुजरिम कौन है?" इतना कहकर कुछ पलों के लिए रंगीनराय चुप हो गये।

"कौन है, कौन है?" तमाम विधायकों की आवाज गूँज उठी।

"मैं आपको बताता हूँ, कौन है, वह कौन है? वैसे तो कानूनी मुजरिम है, कामयाब सेठ। लेकिन मेरे कुछ सवाल हैं जिनका जवाब हमें चाहिए आज और अभी, और उससे पहले जब हमें उत्सुकदास को नेता चुन लेने को कहा जाय, मेरा—

बोर्ड को दस लाख की चपत लगाकर माल हथिया लिया, फिर साठ-सत्तर लाख के नकद मुनाफे पर ताँबा विदेशी तस्करों को बेच खाया। यह देश के लोगों को सरासर चूतिया बनाना है।

पाँचवाँ सवाल : मेरा पाँचवाँ सवाल है, दोस्तो! उत्सुकदास से! क्यों, आखिर क्यों उन्होंने बिजली बोर्ड को मजबूर किया ताँबा उद्योग निगम को घाटे पर देने के लिए? क्या इस काम में कृष्णवल्लभ, जो उस समय बिजलीमंत्री थे, उनके साझीदार थे? क्या कृष्णवल्लभ यादव ने बिजलीमंत्री की हैसियत से, अपने विभाग के हित को छोड़कर, एक फर्जी जालिये को फायदा नहीं पहुँचाया? कहाँ हैं वह ताँबे की भट्टियाँ जिनमें छीजन जानी थी? क्या उद्योग-मन्त्री को यह भी बतलाना होगा जो उद्योग निगम के पास ताँबे की भट्टियाँ नहीं थीं तो छीजन का उसे क्या करना था? क्या जिन छोटे-छोटे उद्योगों के लिए यह ताँबा लिया गया था, उनके पास ताँबा गलाने की भट्टियाँ थीं? अगर उनके पास भी भट्टियाँ नहीं थीं और उद्योग निगम के पास भी नहीं थीं, तो बिजली बोर्ड ने क्या छीजन उनको काला बाजार करने को दे दी थी? बात यहीं खत्म हो जाती तब भी गनीमत थी, बिना लाइसेन्स के ताँबे की छीजन-चोरी छिपे प्रदेश की सीमा से बाहर ले जायी गयी। उसकी तस्करी की गयी, उसे तस्करों के हाथ बेचा गया। और पैसा कहाँ गया? ताँबा गायब! भट्टियाँ गायब! पैसा गायब! दोस्तो, ताँबा जायेगा देश के बाहर, पैसा आयेगा लेकिन वह भी देश के बाहर चुप्पे-चुप्पे विदेशी बैंकों के खुफिया खातों में जमा हो जायेगा!"

बड़े जोरों की फुसफुसाहट, हल्की-हल्की चीखों से जैसी लिपटी हुई उठी, जिसके साथ विधायकों के बदलते तेवर का दीदार हो गया रंगीनराम को, जो बार-बार हाल के दरवाजे को देखते जा रहे थे। उनको डर किसी भी वक्त, उत्सुकदास या पार्टी अध्यक्ष, गुरुपदस्वामी के ..

सकते थे। उनको अभी भी दस मिनट चाहिए थे। दस मिनट के अन्दर वह वहाँ पर मौजूद विधायकों की नफरत को, अनेक-अनेक शंकाओं और सवालों की उस मीनार पर ले जाकर खड़ा कर देंगे जहाँ से फिर उत्सुकदास के लिए उन्हें उतार लाना मुमकिन नहीं हो पायेगा। हल्की चीखों में डूबी फुसफुसाहट के छोर को पकड़ते हुए उन्होंने आगे कहना शुरू किया :

"दिन-दहाड़े पुलिस अफसर को मार दिया गया, वह मेरा दोस्त था, आपका दोस्त था, हम सबका दोस्त था। वह बेहद ईमानदार, वह फरिश्ता था और वह हमारे गृहमंत्री का सम्बन्धी था। उसका नाम··· उसका नाम फूलदास था!"

भीड़ से उनके ही किसी विधायक ने दहाड़ मारी, "हाय फूलदास!" कोई और बोला, "अरे राम! फूलदास नहीं रहा!"

रंगीनराय ने यह धमाका जान-बूझकर किया था। यह धमाका था, उन विधायकों के लिए खासकर जो गुरुपदस्वामी के भक्त थे। इनके आपे से बाहर हो जाने से उत्सुकदास की बधिया बैठ जानी थी।

रंगीनराय अब लोबीराम के टूट जाने का हिसाब पूरा करने लगे थे, "लेकिन आपको मालूम है, फूलदास को किसने मारा? अफीम के तस्करी डाकुओं ने। और मुझे बेहद अफसोस के साथ कहना पड़ता है, यह अफीम के तस्करी डाकू बड़े-बड़े फार्म बनाये हुए हैं जहाँ गेहूँ-धान, जौ और बाजरा नहीं पैदा होती। वहाँ तो अफीम पैदा होती है। उस नायजायज अफीम को पैदा करने के लिए, भूमिधर बैंकों से कर्ज लिया जाता है और सिंचाई विभाग पानी देता है, बिजली बोर्ड बिजली देता है। सरकारी गाड़ियों में खाद जाती है। सरकारी मशीनों से सारा काम होता है। वह जमीन जिस पर अफीम की खेती है वह जमीन भी तो फंदे की है। वह भी गाँव-पचायत से लपेटी हुई है। ये अफीमी डाकू, यह खतरनाक तस्कर हमारे भूतपूर्व बिजलीमंत्री और आज होने वाले सिंचाई मंत्री के सगे-सम्बन्धी हैं। मैं तो कहता हूँ, इन्होंने ही फूलदास को मरवाया है। इनकी ही अफीम पकड़ी थी उसने, इन्हीं के कारिन्दे से बयान लिखवाया था, उसी ने ताँबा पकड़ा था, अफीम की पेटियों के बीच, दबाकर ले जाता हुआ बिजली बोर्ड वाला ताँबा पकड़ा था उसने! कौन नहीं जानता ताँबे का सौदागर कामयाब सेठ था? कौन नहीं जानता अफीम का मालिक कृष्णवल्लभ का भाई यशोदावल्लभ था? और कामयाब सेठ और कृष्णवल्लभ दोनों का रिश्ता

…इन दोनों का रिश्ता उत्सुकदास के साथ कौन नहीं जानता ?"

विधायकों के चेहरे फक थे। सबको जैसे साँप सूँघ लिया था। उस तलहटी पर ले जाकर रंगीनराय ने अपनी तंद्राओं को बाँध दिया था, जहाँ गुमसुम सब के सब, क्षोभ, पीड़ा और कुंठा में बँधे हुए, उठती-गिरती शब्दों की तरंगों के साथ झूल रहे थे।

"ये सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं ! क्या कामयाब सेठ, क्या कृष्णवल्लभ और क्या उत्सुकदास ! वे साँपनाथ ये नागनाथ !! बड़ी हवा उड़ायी इन लोगों ने ! साफ़-साफ़ कन्नी काटकर अलग हो लिए ! पहले तो पट्टी चढ़ाकर उस समय के मुख्यमंत्री से दस्तखत करवा लिए, सारा घपला खुद किया और अब मामला खुल गया तो हाथ झाड़कर अलग हो लिए ! कहते हैं…*खुल्लमखुल्ला कहते हैं ताँबाकांड से उनको* क्या लेना-देना ? इतना बड़ा लेन-देन हुआ था, लाखों के वारे-न्यारे हो गये, करोड़ों का सौदा हो गया और सीनाजोरी देखिये, सारा दोष गृहमंत्री के ऊपर मढ़कर सन्त बन गये, साधू बन गये। वाह, वाह, कहने को जी चाहता है, क्या जादूगरी दिखायी थी, ताँबा गायब किया, ताँबे की भट्टियाँ गायब कीं, पैसा गायब किया और फ़ाइल…ताँबाकांड की असली फ़ाइल भी गायब कर दी।"

हाँ…हाँ, ठीक…ठीक…शेम…शेम, कई विधायकों ने नारे लगाये। अब रंगीनराय एक पल को रुक गये…हल्का-सा जो शोर उठा था उसके साफ़ हो जाने का इंतजार किया और जब एक बार फिर वहाँ सन्नाटा हो गया तो बड़ी तेज बड़ी पैनी आवाज में उन्होंने फिर शुरू किया :

"साथियो ! एक आदमी कुछ लोगों को बेवकूफ बना सकता है, सभी लोगों को कुछ समय के लिए बेवकूफ बना सकता है लेकिन सभी लोगों को हमेशा के लिए बेवकूफ नहीं बना सकता ! यही हुआ उत्सुकदास के साथ !" रंगीनराय की आवाज की पिच और बढ़ने लग गयी, "मुझे यह बात कहने में गर्व महसूस हो रहा है, उनका भाँडा फूट गया…उनकी ढपली टूट गयी, हमने उन्हें नंगा कर दिया, झूठे को घर तक पहुँचा आया हूँ। *मिल गयी…मिल गयी, दोस्तो, ताँबाकाण्ड की असली फ़ाइल मिल गयी।* कुछ देर पहले तक मेरे पास थी वह फ़ाइल। अभी हाल सी० बी० आई० के एस० पी० को देकर आ रहा हूँ। उस फ़ाइल के हर पन्ने से धन्धे की बू आती है। उस समय के उद्योगमंत्री और आज के होने वाले

फिर हारकर रायसाब वापस लौट चले। बड़े निराश मन से, उनको लग रहा था यह शगुन ठीक नहीं हुआ। दरोगा के न होने से एक तो लोबीराम से सम्बन्धित बात नहीं पता लग पायी और फिर समाँ बाँध लेना मुश्किल होगा। हारकर उन्होंने अपनी मन:स्थिति से समझौता कर लिया और यह सोचकर मीटिंग हाल में वापस घुस गये कि दरोगा या लोबीराम कोई आया तो वह मंच से उठकर उन्हें अलग ले जाकर बतिया लेंगे।

मीटिंग हाल में घुसते ही रंगीनराय ने देख लिया मंच पर अभी पार्टी अध्यक्ष बैठे नहीं थे हालाँकि बाहरी घुसपैठियों को निकाला जा रहा था। तभी उनकी बगल में आकर किसी ने फुसफुसाकर कहा, "जरा इधर आइये!"

फुसफुसाहट की झन्नाहट और अचानक अलग आने की कही बात ने उनको चौंका दिया था। फिर जैसे ही उन्होंने घूमकर देखा तो थका हुआ, परेशान दरोगा, उलझे बाल, बेहाल-सा उनको एक कोने में ले जाने को खड़ा था। इसके पहले दरोगा कुछ और कहे या और कोई मँडराता हुआ विधायक उनसे जुड़ जाये, वह खुद दरोगा को खींचते हुए एक किनारे ले गये और धड़धड़ाते हुए बोले, "कहाँ रहि गये थे, यहाँ जान निकल गयी रही।"

"अरे कुछ पूछो नाहीं, फिर बतावेंगे?"

"उसका का हुआ?" रंगीनराय रहस्यपूर्ण ढंग से बोले।

"उसको तो बलराम के तिलंगे उड़ा ले गये!"

"क्या?" एक पल को तो रंगीनराय के ऊपर जैसे फालिज गिर गया पर दूसरे क्षण अपने को सँभालते हुए उन्होंने होंठों पर मुस्कुराहट लाते हुए कहा, "चलो···चलो ठीक हुआ···साँप भी मर गया और लाठी भी नाही टूटी।"

"तो अब लाइन का हैगी?" दरोगा ने पूछा।

"सीधा हमला!"

"कैसे?"

"कृष्णवल्लभ पर हमला और माँग होनी है लोबीराम की!"

"क्या?"

"लोबीराम को पेश करो···लोबीराम को पेश करो!" रंगीनराय

ने गाते हुए कहा।

"और उत्सुकदास को छोड़ दोगे ?"

"नहीं...कभी नहीं...लेकिन ज़रा बाद में मामला गर्मा जाने पर !"

"और धूमधड़ाका ?"

"जब लोबीराम नहीं आयेंगे और कृष्णवल्लभ को नहीं निकाला जायेगा !"

"चुनाव की माँग ?"

"वह तो है ही।"

"शुरू होते ही ?"

कुछ क्षण रंगीनराय सोचते रहे, फिर बोले, "देखते हैं...देखते है !"

"तो चला !"

"चला...चला !"

रंगीनराय और दरोगा मंच की तरफ बढ़ चले। किनारे-किनारे चलते रहने पर भी दर्जनों विधायक उठकर प्रणाम, नमस्कार, दुआ-सलाम कर रहे थे। कइयों ने तो घेर लिया था। कुछ और फुसफुसाहट कर रहे थे और गुदगुदा रहे थे। असन्तुष्ट गुट की लाइन पकड़ पाने को तड़फड़ाते हुए घिघियाते हुए इन तमाम विधायकों को मच के ऊपर चढ़ जाने के पहले एक आख़िरी झटका दिया रंगीनराय ने :

"देखिए आज की मीटिंग मे हमें सिर्फ अपने अधिकारों का इस्तेमाल करना होगा। अपना नेता हम चुनेंगे...नेता हम पर थोपा नही जाना चाहिए...सारे विधायक यहाँ मौजूद हैं...सबको अक्ल है...अच्छा-बुरा सोचने-समझने की, लाख-डेढ लाख जनता के प्रतिनिधि हैं। और अपना प्रतिनिधि...अपना नेता नही चुन सकते ? कमाल है...और कृष्णवल्लभ जैसे जालिम को मंत्री बनायेंगे...आँख में मिर्च झोकेंगे !"

"नहीं...नहीं हम कृष्णवल्लभ को बर्दाश्त नही करने को !" समूहों गान में सब बोल उठे।

"कृष्णवल्लभ चोर है !"

"उसने बड़ी रकम काटी है !"

"और उत्सुकदास क्या कम है...सुना नही था उनकी कहानी रायसाव की ज़ुबानी !"

"हाँ...हाँ।" हाथे पे ताली मारकर दो-तीन एक साथ बोले।

"अच्छा तो आप लोग अपने सँभाले और हम उनको सँभालते हैं।" मंच की ओर इशारा करते हुए रंगीनराय ऊपर चढ लिये।

मंच पर आते देखकर बलदेव चौधरी ने, जो खुद पार्टी अध्यक्ष के पास बैठे थे, उनके लिए जगह बनाते हुए कहा, "आवा···आवा, कहाँ अटक गये थे, हमारे तो हाथ-पैर फूलने लगे थे।"

रंगीनराय अपने लिए बनायी हुई जगह पर जाकर बैठ गये और बलदेव चौधरी के कान की तरफ झुके तो इसी बीच वह खुद कंधे झुकाने लग गये थे।

"हाँ···जरा जवाबी हमले का इंतजार करना जो था!" फुसफुसाते हुए रायसाब बोले।

"अरे हमले का छोड़ा···पहले बतावा···का लोबीराम टूट गये?"

"हल्ला तो यही था!"

"लेकिन है कहाँ?"

"किसे पता···फिर सुना बलराम के तिलंगे उड़ा लै गये!"

"राजभवन में तो उसको झलक दिखी थी।"

"दिखी थी?"

"हाँ!"

"तो पक्का समझो वे टूट गये!"

"हे भगवान! हे परमेश्वर!! कैसा नाटक करता था?"

"पार्टी छोड़ने को कह आया था!"

"मुझसे तो मंत्रियों का सौदा तय कर लिया था।"

"अरे आप यह कहें···हमारे साथ जो दगमदग करी है उसे भला भूलेंगे?"

"क्या···क्या?"

"वह मीटिंग···अपने यहाँ की बैठक···उसी ने करायी थी।"

"अच्छा?"

"और क्या···हमसे बोला कसमे उठायीं···बड़े पैंतरे बदले थे उसने, तभी तो···वह सब हुआ रहा!"

"और पार्टी अध्यक्ष को क्या कह आया था?"

"वहाँ तो लगता है···उत्सुकदास ने फिटिंग कर ली!"

"कैसे?"

"लगता है, दिल्ली···दो-तीन बार फोन मिलाया था···कोई कह रहा था पी० एम० से भी बात की थी।"

"और पार्टी अध्यक्ष ?"

"उन्होंने भी पी० एम० हाउस बाद में लगवाया तो था ?"

"आप नहीं थे वहाँ ?"

"नहीं··· हम जरा देर को गृहमंत्री से उलझे जो थे !"

"बस यही चूक गये।"

"चूक क्या गये ··देखिएगा जरा···आज अगर इन्होंने उत्सुकदास को मुख्यमंत्री बना दिया···हमारा हक छीन लिया तो भुस भर दूँगा।"

"क्या करेंगे आप ?"

"जो कुछ बन पड़ेगा करेंगे···इनकी तो लुटिया डुबो के मानेंगे ! आज जरा वक्त कम था···इसीलिए और कोई राजनीति का दाँव चलाना मुमकिन नहीं था। लेकिन आज के बाद देख लेना !"

"अभी तो आज की सोचो !···है ना ?"

"और क्या ?"

"तो लोबीराम का टूट जाना क्या माने रखता है, जब वे यहाँ होंगे नहीं ?"

"कैसे भला ?"

"अभी तक उनकी गुट्टियों को तो पहले वाले ही तेवर याद होंगे ?"

"हाँ !"

"उसी पर अपना दाँव लगा देंगे !"

"और ?"

"और सीधा हमला कृष्णवल्लभ के जरिए उत्सुकदास पर !"

"तो ठीक है···।"

तभी बलदेव चौधरी ने देखा, पार्टी अध्यक्ष उन्हें अपने करीब आ जाने का इशारा करने लगे थे। उनकी गृहमंत्री के साथ, इस बीच चल रही मंत्रणा खत्म हो चुकी थी। तभी उनकी नजर पार्टी के महामंत्री पर पड़ी जो उठ खड़े हुए थे।

सबको शांत करने की कोशिश करते हुए महामंत्री ने मीटिंग शुरू होने की घोषणा कर दी। महामंत्री ने अपने भाषण में विधायकों को मीटिंग के महत्त्व और एजेण्डा के बारे में बताया। और पार्टी

गुरुपदस्वामी की कुछ देर जय-जयकार के बाद महामंत्री ने पहले पार्टी अध्यक्ष से विधायकों को दिशा निर्देश देने के लिए कहा। पार्टी अध्यक्ष की लम्बाई ज्यादा थी, इसीलिए उनके उठकर खड़े होने पर माइक को उनके मुँह के सामने रखने की कोशिश होने लगी। इसी बीच गृहमंत्री ने इशारे से महामंत्री बल्लभदास को अपने पास बुलाया। इतनी देर तक चुप रहने के बाद पहली बार गुरुपदस्वामी ने कहा :

"देखो···इस हाल से बाहर जाने के कितने रास्ते हैं।"

"दो ! गुरुजी !"

"तो दोनों दरवाजे, पार्टी अध्यक्ष के शुरू होने से पहले बन्द कर दिए जायें और मेरा भाषण खत्म होने तक बंद रहे।" कुछ सोचते हुए उन्होंने आगे कहा, "इस बीच न तो कोई आयेगा और ना ही कोई बाहर जायेगा !"

बल्लभदास ने गुरुपदस्वामी की बात कुछ समझी और कुछ नहीं समझी लेकिन दौड़कर हाल के दूसरी छोर पर चला गया। वहाँ दोनों दरवाजों को, उसे बाहरी तरफ से बन्द करते हुए देखकर, कई विधायकों ने ताने मारने शुरू कर दिये "हाँ·· हाँ पर्दा खींच दो, बुर्का पहना दो !"

"अरे···अरे···ओ ! बल्लभदास···देखो···देखो वो खिड़की रह गयी।" हँसी के ठहाके उठ खड़े हुए, तभी एक और बोला, "और···वो ···वो रोशनदान !" तभी बल्लभदास के आदमी ने दो ताले पेश कर दिये जिन्हें उसने फुर्ती से दोनों दरवाजों पर जड़वा दिया। कुछ विधायक जो अभी तक इस कारनामे को घूर रहे थे, अपनी जगह से फब्तियाँ कसने लगे, "साले कैद करके रखेंगे। हो जाने दो मीटिंग, बतायेंगे।···हाँ···हाँ इन्हें भी बन्द कर देना !"

बल्लभदास कुछ डर गया था। इसलिए लौटकर जाते वक्त जिधर से फब्तियाँ और ताने आ रहे थे, वहाँ अपनी सफाई देने के इरादे से वह रुक गया।

"मार डालो हमें···टाँग दो···जैसे यह सब हम खुद ही खुशी में करते थे।" फिर धीरे-से रहस्य खोलने की मुद्रा में आधा झुककर विधा-यकों के एक हुज्जूम के पास बुदबुदाया, "अरे गृहमंत्री का आदेश था तभी तो ! वैसे बाहर एक आदमी है जो विधायक रह गये उनको ले आने को कह दिया है।"

इतने में माइक से महामंत्री की आवाज आयी, "सब लोग शान्त हो जायें···बल्लभदासजी आप मंच पर आ जायें···देखिये आप लोगों से विनती है···सब लोग शान्ति से आगे की कार्यवाही में सहयोग दें ! ··· देखिए उधर से अब भी आवाजें आ रही हैं···शान्त हो जाइए·· शान्त हो जाइए···कृपया शान्त हो जाइए, अब हमारी पार्टी के अध्यक्ष आप लोगों से कुछ बातचीत करेंगे !"

पार्टी अध्यक्ष ने जो उठकर खड़े हो चुके थे और जिनके लिए माइक लगाया जा चुका था, अपने दोनों हाथ उठाकर लोगों से चुप हो जाने का इशारा किया। कम होते हुए विधायकों की आवाजें जब करीब-करीब बंद हो गयी तो पार्टी अध्यक्ष की तेज-पैनी आवाज मीटिंग हाल में गूंजने लगी :

"आज पहला मौका है इस तरह·· यहाँ के माहौल मे आप लोगों से दो शब्द कह सकने का ! इस प्रदेश, प्रदेश की राजधानी और प्रदेश के विधायकों से मेरी जान-पहचान बहुत पुरानी है। यहाँ की खुली हवा में मेरी धड़कनों ने कभी ताकत बटोरी थी। और आज आप सबके बीच मैं उसी ताकत के बल पर खड़ा हूँ, आपसे मुझे एक ही बात कहनी है कि कोई भी मुल्क आगे तभी बढ सकता है जब वहाँ की सबसे बड़ी पार्टी, पार्टी के नेता, विधायक आपसी झगड़ों को छोड़कर देश की समस्याएँ हल करने में जुट जायें। हमारे लिए, हमारी पार्टी के लिए सत्ता-सरकार कभी भी अपने-आपमे एक ध्येय नही रहा है। हमने प्रजातांत्रिक तरीकों से, जनता के मन में खुफिया रिश्तों की डोर बाँधकर चुनाव के माध्यम से सत्ता हासिल भले की हो, लेकिन वह सिर्फ देश के लिए, देश की जनता के लिए, राष्ट्र को आगे ले जाने के लिए। हमारा ध्येय, हमारा उद्देश्य, हमारा आदर्श हमेशा-हमेशा से सिर्फ जनता की सेवा करना ही रहा है। शासन की मर्यादा के लिए, सरकार के नियंत्रण के लिए प्रजातात्रिक तरीकों से हमने सत्ता हासिल, सिर्फ मुल्क की शख्सियत को ऊँचा उठाने के लिए की। इसीलिए आज एक बार फिर हम यहाँ जमा हुए हैं, सरकार बनाने के लिए···भारत जैसे महान देश के एक महान प्रदेश की सरकार बनाने के लिए जिसका आधार स्तम्भ यहाँ पर बैठा हुआ हर एक विधायक, होगा। आपके अन्दर अनेक-अनेक सवाल उठ रहे होंगे ! आपकी [illegible] हो सकती है, आपके मापदंड अलग हो सकते हैं लेकिन मेरा पूरा [illegible]

है कि एक एकता का ऐसा सूत्र है···पार्टी की एकता का सूत्र जो हमेशा से हम सबको बांधता आया है और बांधता रहेगा।"···

डायस पर बैठे उत्सुकदास इतनी देर में बोर हो चुके थे। जिस रफ्तार में पार्टी अध्यक्ष बोल रहे थे, उनके भाषण के खत्म होने की कोई उम्मीद नजर नहीं आ रही थी। उधर उनको मुख्यमंत्री बनना था। राजभवन में शपथ समारोह की तैयारियाँ जो पूरी हो चुकी थी, पार्टी मीटिंग के शुरू होने के पहले ही कुछ उजड़ने-सी लगी थी। वहाँ से चलते समय ही उत्सुकदास का माथा ठनका था। लेकिन फिर दिल्ली से हुई बातचीत का भी उनको भरोसा था। आधे घंटे के अंदर राजभवन से ही उत्सुकदास ने दिल्ली, तीन फोन लगाये थे। पहला टेलीफोन पी० एम० के सेक्रेटरी को था जिससे पी० एम० हाउस की खबरें उनको मिली। दूसरा टेलीफोन उन्होंने एक केन्द्रीय मंत्री को लगाया था जिनसे उन्होंने यहाँ होने वाले षड्यंत्र के बारे में बताया। तीसरा और आखिरी टेलीफोन उन्होंने एक आई० सी० एस० अफसर को लगाया था जिससे अपनी दुर्दशा के बारे मे बताया और साथ में मिर्च लगाकर पार्टी अध्यक्ष की रंगीनराय के यहाँ होने वाली बैठक में होने वाले घपलों को भी उछाला था। आई० सी० एस० अफसर जिससे उत्सुकदास ने बातें कही थी, पी० एम० की नाक का बाल था। उसके बस में था जो वह लोबीराम, रंगीनराय की साजिश को एक झटके में तोड़ दे। इसीलिए उत्सुकदास को बड़ा भरोसा था निकल जाने का, जो और सब गड़बड़ होते हुए भी।

फिर भी पार्टी अध्यक्ष के लम्बे भाषण ने एक बार उत्सुकदास को हिला दिया और उनके अंदर हौलदिली मच जाने लगी। पार्टी अध्यक्ष की नीयत पर उनको शुरू से शक था लेकिन दिल्ली से उनको निर्देश मिल चुका होगा इसका इतमिनान था उनको, पर अब यह विश्वास भी डगमगाने लगा था। मन की शंका को दूर करने के लिए वह खिसककर गुरुपदस्वामी के पास आ गये और घबड़ायी आवाज में बोले, "अरे बाबू ये हो क्या रहा है?"

"का?" गुरुपदस्वामी ने हैरत में पूछा।

"ये पार्टी अध्यक्ष का रात-भर बोलेंगे···उधर राजभवन···"

"हाँ···हाँ पता है···सब पता है।"

"फिर?"

"ये जो कुछ कर रहे हैं, ठीक है ?"

"ठीक है···आप कहते हो।"

"और क्या ?"

"लेकिन शपथ समारोह कब होगा ?"

"तुमको शपथ समारोह की पड़ी है···यहाँ पहले चुनाव तो हो जावे।"

"चुनाव होगा ?"

"तो तुम क्या समझे बैठे हो ?"

"तो कब होगा ?"

"जरा धीरज रखो, हवा खराब थी !"

"अच्छा बाबू, इनकी दिल्ली बात हुई थी।"

"हाँ।"

"क्या पी० एम० से ?"

"हाँ।"

"तो पी० एम० ने क्या कहा ?"

"हमे क्या पता···बतियात तो रहे···कुछ बताया नही ?"

इतने मे बलराम शास्त्री लपककर आ गये, "हाँ···हाँ, बाबू इनका रोका···अब देखो जरा-सा पानी पिया और फिर चालू हो गये···क्या···क्या बोल रहे हैं···न सिर न पैर !"

"ऐ बलराम तू चुप करा···गोबर हव···राजनीति तो आती नहीं।"

गुरुपदस्वामी की डाँट से बलराम शास्त्री फिर वापस जाकर बैठ गये और उत्सुकदास भी दुबककर अपनी जगह पर पहुँच लिये।

पार्टी अध्यक्ष का भाषण तेज रफ्तार मे दौड़ने लगा था, अब वे देश की राजनीति के इतिहास के कोने-किनारे की झाँकियाँ बताने लगे थे। देश की आजादी की लड़ाई से लेकर वर्तमान में सरकारी योजनाओं तक पर वे धाराप्रवाह बोल रहे थे। इस बीच कुनमुनाते हुए मसकसाते हुए विधायक करवटें बदल चुके थे। हालाँकि कइयों को पार्टी अध्यक्ष के रूमानी भाषण से मजा आ रहा था लेकिन और कई चुटकियाँ काट रहे थे, चटकारियाँ भर रहे थे। यह सबके नशे-पानी का वक्त था। जो विधायक हर तीन-तीन घंटों पर पूरा खाना खाते थे उनके पेट की नसें फड़फड़ा रही थी। किसी को सिगरेट की तलब थी तो किसी को चिलम

की तड़प । पान-तम्बाकू तक के लिए सब तरस रहे थे । विधायकों को उत्सुकदास की तरह यह मीटिंग महज एक हंगामा, शुगल और समारोह के सरीखा ही लगी थी जहाँ चन्द लफ्फाजियों के बाद विधानमंडल पार्टी के नेता का सर्वसम्मति या बैलट से चुनाव हो जाना था । सबके तेवर, सबका जोश धरा का धरा रह गया । पार्टी अध्यक्ष ने वह चाल खेली थी जिसका कोई जवाब नहीं था ।

उधर रंगीनराय और दरोगा ने जो कुछ सोचा था, उसका ठीक-ठीक उलटा हो रहा था । पहले तो इन लोगों को और खुद बलदेव चौधरी को पार्टी अध्यक्ष का रफ्तारी भाषण एक तरह का वरदान ही लगा । वह इसे उत्सुकदास को गाडी से उतार देने का पैंतरा ही समझ रहे थे । उनको लग रहा था, देर लगाकर पार्टी अध्यक्ष शपथ समारोह का समय निकाल देंगे जिसके बाद कम से कम रात-भर का वक्त मिल जायेगा । लेकिन जब पार्टी अध्यक्ष के भाषण का रुख पार्टी की महानता, राष्ट्र की समस्याओं से उत्पन्न परिस्थितियों मे एकता की तरफ मुड़ने लगा तो वे सनके । रंगीनराय को पार्टी अध्यक्ष की हरकतें पता थी । जब भी उनको कोई ऐसी बात मनवानी होती जिसके लिए मीटिंग मे मौजूद लोगो को राजी करने मे मुश्किल होने वाली थी तब वह इसी तरह लम्बा खीचकर पटकनिया दिया करते थे । यूँ तो पार्टी अध्यक्ष की इस तरकीब का एक पहलू उत्सुकदास की गाडी छुड़वाने का भी हो सकता था लेकिन अब रंगीनराय को यह मुमकिन नही लगने लगा था । क्योकि पार्टी अध्यक्ष को दिल्ली भी लौटकर जाना था···पी० एम० से मिलकर जवाब भी देना था । और फिर अगर उत्सुकदास की गाड़ी-भर छुड़वानी हो तो पार्टी मीटिंग टाली जा सकती थी या फिर जब गड़बड़ी की पूरी तैयारी हो जाने की उनको खबर थी तो मीटिंग शुरू होने पर ही गडबड़ी मचवा देने का शोशा छोड़ा जा सकता था । तजुर्बे के बिना पर रंगीनराय ने साफ-साफ पार्टी अध्यक्ष के इरादों को भाँप लिया ।

पार्टी अध्यक्ष कह रहे थे, "पार्टी कोई चन्द लोगों का हुज्जुम नहीं होती । भीड़ तो किसी जगह हो सकती है—रेल के प्लेटफार्म, बस के अड्डे, सिनेमाघर पर, सब्जीमंडी या सड़क पर, मेले मे या सर्कस में लेकिन पार्टी का इस प्रकार की भीड़ से अलग एक ऐसा अस्तित्व होता है, एक ऐसी शख्सियत होती है जो बेजान नही, जानदार होती है । इसके

मन होते हैं, इसको मानना होता है। परम्पराओं, सिद्धान्तों और आदर्शों के लिए बीते-बाकड़े बन-बन, मन-मन में इसकी एक छवि बनती है। यह छवि इतिहास की कड़ियों से जुड़ी, बदली और टूटती है। इसे आत्म-सात करने में जो वक्त लगता है लेकिन टिकने वाले कांच की तरह एकदम से टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर जाती है। कई बार पार्टियाँ आंदोलन से या इतिहास के दौर से जुड़-जुड़ पैदा हो जाती हैं। इंकलाब से पार्टी पैदा होती है…" आप अगर स्वतंत्र विधायक होते, अगर आपने पार्टी के चुनाव चिह्न पर, पार्टी के टिकट पर, पार्टी के झंडे के नीचे खड़े होकर चुनाव न लड़ा होता तो आप अपनी मर्जी के मालिक थे। तब आपकी व्यक्तिगत पसंदगी, नापसंदगी के अपने मायने होते। तब आप जो भी चाहे कर सकते थे, कह सकते थे। लेकिन जब आपने पार्टी के प्रतिनिधित्व को कबूल किया! जब आपने पार्टी के कार्यकर्ताओं पर आस्था रखकर पार्टी की बनायी हुई रणनीति के तहत चुनाव लड़ा तो आपको पार्टी का अनुशासन मानना पड़ेगा। अनुशासन कोई ऐसा शब्द नहीं है जो सिर्फ कहने-सुनने के लिए हो। अनुशासन एक दर्शन है, एक विद्या है! आजादी निरंकुश नहीं हो सकती और पार्टी के सदस्यों को अपनी…अपनी हद में वैयक्तिक आजादी तो है लेकिन जहाँ व्यष्टि और समष्टि के हितों में संघर्ष हो, वहाँ व्यष्टि को समष्टि के लिए बलिदान करना होगा। पार्टी की राजनीति में व्यष्टि का कोई महत्त्व नहीं होता। हम सब एक प्रकार से बँधे होते हैं…पार्टी के संगठन से। संगठन ही शक्ति है, संगठन पार्टी की आत्मा है।…अनुशासन और संगठन का एक दूसरे के साथ गहरा सम्बन्ध होता है। एकता और संगठन एक-दूसरे के पर्याय होते हैं। जब तक पार्टी के सदस्य, पार्टी के विधायक अपने-अपने व्यक्तिगत विरोधों को भूलकर निष्ठा और विश्वास के साथ, अनुशासन में बँधे हुए पार्टी के द्वारा तय की गयी दिशा की ओर नहीं चलते, कोई भी पार्टी ज्यादा दिनों तक जीवित नहीं रह सकती। हर पार्टी में गुटबंदी होती है। इसे गुटबन्दी से कोई शिकायत नहीं…गुटों के सन्तुलन से ही राजनीति पैदा होती है… उसका प्रजातांत्रिक स्वरूप बनता है। ऐसा गुटबन्दी पार्टी के ऊपर नहीं जा सकती…गुटों का सामंजस्य…हूँ।। पार्टी का [illegible] है जिसे आपने खुद बनाया होगा। अपनी [illegible] हुई चीज को कोई [illegible] नहीं। बिगड़ जाने के बाद किसी चीज के [illegible]

पार्टी तमाम···असंख्य कणों से बनी हुई काँच की दीवार के बीच में क़ैद रहती है। जहाँ एक तरफ उसे बाहरी हमलो से बचना होता है, वहाँ दूसरी तरफ उसे अपने अन्दर होने वाले दबाव को भी संतुलन मे रखना होता है। यह तभी मुमकिन हो जाने वाला होगा जब कंधे से कंधा मिलाकर हम सब न सिर्फ बाहरी हमलों का मुकाबला करें बल्कि अन्दरूनी दबाव को भी झेल लें। एकता में ही वह शक्ति होती है जो पार्टी को क्या दुनिया मे हर किसी प्रक्रिया को जीवन देती है। पानी की एक बूंद, हवा के झोंके में या वातायन के घनत्व मे या जमीन की ताकत में लुप्त हो जाती है। आपने आसमान में बहते हुए बादलों को कभी देखा है। बादल का एक टुकड़ा तमाम गैसों से बनकर भी अपने आपमें रुई से ज्यादा ताकत नही रखता। उड़ा ले जाती है हवा उसे, आकाश का खालीपन उसे झुलाता रहता है। लेकिन छोटे-छोटे रुई के गोले सरीखे अनेक-अनेक बादलों के टुकड़े जब आपस में मिलकर बुन जाते है, जुड़ जाते हैं तो हवा के बहाव में क्षण-भर को ही सही न सिर्फ अपना अस्तित्व बना लेते हैं बल्कि उत्पत्ति की प्रक्रिया को भी जन्म दे देते हैं। तब···तभी उन्हीं बादलों के घेरे से टूटकर निकलती है पानी की बौछार जो धरती को जीवन देती है। पानी की बौछार क्या है? उसकी अपनी तो कोई मौजूदगी नही होती। पानी की वह बौछार एक नही···दो नही अनेक असंख्य पानी की बूंदों से बनती है। जैसा मैंने कहा पानी की एक बूंद कुछ नही होती··· एक फूंक में···क्षण के हजारवें हिस्से में सूख जाती है, खो जाती है··· टुकड़े-टुकड़े हो जाती है लेकिन जब तमाम बूंदें एक हो जाती हैं तो लहर-धारा की भाँति धुआंधार बरसात बन जाती है जिससे दरिया बनते हैं, जिससे तालाब, कुओ का जन्म होता है। तब पानी को आप चाहे किनारों में बाँध दें लेकिन उसकी रफ्तार को नही रोक सकते। बूंद···बूंद से बौछार, तमाम बौछार से धारा, धाराओं से लहर, तमाम लहरो से बहाव पैदा होता है जो सैंकड़ो-हजारो पत्थर की चट्टानो, पहाड की ऊँचाइयों तक को लाँघती हुई विशाल समन्दर मे समा जाती हैं···लीन हो जाती हैं। उत्ताल तरंगो के जोड···जोड़ से बना असीम सागर भले ही किनारों में रुका हुआ हो फिर भी उसमें अपनी गति है। सीमाओ में तो संसार-विश्व, ब्रह्माड तक बँधा है, फिर भी सागर की गुरुता अपरम्पार है, उसकी महिमा अपार है, उसकी गति, उसके प्रवाह को नाप सकना भी मुमकिन नही!

उसी तरह एक जर्रा क्या है…उसकी हैसियत क्या है लेकिन तमाम जर्रे मिलकर धरती बनते हैं उनसे विश्व बना है…उनसे ज्वालामुखी धधकते हैं, बगूले बनते है ! हवा क्या है… हवा अपने मे सिर्फ मामूली प्रवाह है लेकिन हवा की अनेक-अनेक गोलाइयों, ऊंचाइयो के आयतन से जो पैमाइश पैदा होती है उससे ब्रह्मांड का सतुलन बनता है, उससे बादल इकट्ठा होते हैं, उससे मौसम बनते है। उसी पैमाइश से चक्रवात, तूफान …जलजले पैदा होते हैं। वह तीर की रफ्तार से चकराने वाली घुमनी जिसमे असंख्य मिट्टी के जर्रे, पानी की करोडो बूंदें समायी होती है… वह सब मिलकर बनी हुई पैमाइश से पैदा होती हैं। पेड़ को लीजिये, पत्तियों को लीजिये, फूल की तमाम पंखुडियों को लीजिये यह सब आपस में मिली हुई, एक दूसरे में समायी हुई… अपने अस्तित्व को पा सकती हैं। सदियों, शताब्दियो के मानव जीवन के इतिहास की ओर जब हम देखते हैं तो लाखों…करोड़ों साल पहले कीड़ों-मकोड़ों, जानवरों की तरह से जीने वाला मनुष्य आज कहाँ तक पहुँच गया है। इस तमाम विकास के पीछे तमाम शताब्दियो की मिली-जुली कोशिशें हैं। आदमी ने जब से मिलकर काम करना सीखा तभी से उसका विकास हुआ है। पहले वह अकेले जीता था तो उसका अस्तित्व बस महज एक साधारण जानवर की तरह था। उसने मिलकर खोजें की, पहाड काटे, नदियाँ पार की, मुल्क बनाये, देश पैदा किये। फिर देश के अंदर अपनी… अपनी आस्थाओं के घेरे में मंडराते हुए उसने तमाम इजाद किये…अपने जीने…आराम के सामान इकट्ठा किये, प्रकृति पर विजय प्राप्त की।

"विश्व के इतिहास में आदमी की जीने और तरक्की की प्रक्रियाओं पर गौर करते हुए जब हम मुल्कों का इतिहास देखते हैं तो हमें यह ज्ञात होता है कि जिन मुल्कों ने, जिन देशों ने एक होकर, मिल-जुटकर आत्म-शक्ति के स्रोत बनाये वे ही देश महान बन सके। रोम, ग्रीस, मिश्र, फारस, भारत और बाद की शताब्दियों मे ब्रिटेन और जर्मनी सारे देश-वासियो की एकता और संगठन शक्ति के बलबूते पर ही महान बन सके। देशभक्ति, समष्टिगत परम्पराओ और विश्वास के भरोसे ही इतिहास में इन्होने अपना स्थान बनाया, अपने दौर को बनाया। भारत की सबसे बड़ी कमजोरी टुकड़ों-टुकडो मे बँटकर आपसी झगड़ो में जुटे रहना थी। को इतिहास ने इसकी सजा दी है। हमने सैकड़ो साल …

भुगती है···गुलामी की जंजीरों में जकड़े हुए, तड़पते हुए। भारत का बीता हुआ इतिहास आपसे कराह-कराह कर, दर्दभरी आवाज में कह रहा है कि उन भूलों को, उन गल्तियों को फिर से न दोहराओ। उस दौर में हम कुचले गये, हम मारे गये, हमारे देश के ऊपर जो अत्याचार हुए हैं उनका अगर हिसाब किया जाये, उनकी अगर विवेचना की जाये तो एक बार मानव इतिहास की आत्मा गुनाहों के बोझ से दबकर टूटने लगेगी।"

अब रंगीनराय का माथा ठनका, उनका शक सही निकला। साफ़-साफ़ पार्टी अध्यक्ष दगा देने लगे थे। उन्होंने अपने शक को भरोसा देने के लिए दरोगा की ओर देखा तो उसका चेहरा पहले से ही सफ़ेद होने लगा था। सिर पर से बेतहाशा पसीने की बूँदें टपक रही थीं, उलझे हुए बाल उँगलियों से तोड़ता हुआ वह बार-बार उनकी ओर देख रहा था। रंगीनराय को अपनी ओर देखता हुआ जानकर दरोगा उनके जरा और पास खिसक गया और फुसफुसाते हुए बोला :

"यह दगा···यह खेल !"

"अरे हाँ···देखो भला !"

"पहले लोबीराम टूट गये हैं और अब ये गुडगोबर किये हैं।"

"लोबीराम का झटका तो मैंने झेल डाला था···यहाँ तैयार बैठे हैं सबके सब !"

"क्या लोबीराम के आदमी आपका साथ देने वाले थे ?"

"हाँ ! और फिर सबने उसको देखा था मेरी बैठक में बोलते हुए।"

"सो तो है !"

"और तब से लेकर अभी तक उसका और कोई संदेश तो आया नहीं ?"

"वह ऐसा है भी नहीं जो बार-बार बात बदले···"

"खुल्लमखुल्ला !"

"हाँ···खुल्लमखुल्ला कभी नहीं। उसका तरीका तो है, ऐसे मौके पर, जब नीयत खराब हो जाये तो घुट्टी मार के बैठ जाओ···"

"लेकिन सब सारे उसका कोड समझते हैं।"

"कोड क्या ?"

"अरे वही हिस्से वाली बात···कहा हो तभी दिलवायेंगे।"

"सो तुम कहोगे वह सारा, इनको हिस्सा देता ?"

"नही"'आज नही, अरे क्या पता कुछ चाय-पानी कर वा देता'''वक्त बदलने लग गया है'''कोई यूँ मानता है नही।"

"अच्छा छोड़ो'''अब इनको क्या हुआ ?"

"हाँ'''यह खूब रही'''मेरा तो माथा चकराने लग गया है।"

"लेकिन अभी भाषण किसी तरफ भी मोड़ा जा सकता है।" रंगीनराय ने उम्मीद से कहा।

"यह तो इनकी पुरानी तरकीब है। बड़ा लम्बा खीचकर लाते हैं और कब तोड़ेंगे किसी को पता नही।"

"लेकिन पता तो करनी होगी !"

"कैसे ? यह बैठे तभी तो ?"

"नहीं, मालूम करता है पी० एम० से इनकी बात हुई थी ?"

"हाँ, सो तो हमें मालूम है।"

"क्या भला ?"

"यह तो बाप को भी न बतावे है !"

"फिर भी।"

"कुछ पता नही'''किसी को भी कुछ पता नही !"

"उत्सुकदास को भी ?"

"उसकी तो खुद हालत पतली रही'''अभी हाल मुँह बनाय रहा था'''बड़बड़ा रहा था'''तब गृहमंत्री ने डांटा।"

"अरे हाँ गृहमंत्री को तो पता होगा ?"

"मुझे तो लगता है'''दोनों बुड्ढे मिलि गये हैं !"

"यह एक ही सूरत में हो सकता है।" रंगीनराय की समझ में बात आने लगी थी।

"कैसे ?"

"जब पार्टी अध्यक्ष का और गृहमंत्री का फैसला एक हो।"

"गृहमंत्री का फैसला तो सबको मालूम है'''उधर सम्बन्धी की लाश पड़ी है'''लेकिन उत्सुकदास को दूल्हा बनाये बिना अर्थी ना उठावेंगे, रायसाब'''ऐसे हैं ये !"

"और पार्टी अध्यक्ष का फैसला चौधरी साब ने बताया था'''हमने खुद देखा था'''सुना था ! '''अगर इनके और गृहमंत्री के फैसले छत्तीस का आंकड़ा हैं तो भला ये छाछठ कैसे हो गये ?"

"बीच में कहीं कुछ गोल है···कुछ छूट रहा हम लोगों से !"

"···छूटा ···ऊटा कुछो नहीं···बस मैं कहना नहीं चाह रहा था !"

"का···का भला ?"

"अरे यही", ताली पर हल्की ताली मारते हुए रायसाब ने कहा, "पी० एम० दरोगा···पी० एम०।"

"ओह···"

"फिर भी दुविधा में हैं हम···ये अध्यक्ष जो हैं···इनके काटे का मन्तर नहीं है···अगर उत्सुकदास को उड़ाना हो ना·· तब भी ऐसे ही बोलेंगे।"

"और गृहमंत्री जो चुप बैठे हैं···बलराम को गरियाया है।"

"अरे वे तो गोबर के चोत हैं···बड़े आशावादी हैं !"

"लेकिन रायसाब मानि गए ये अध्यक्ष बड़े खिलाड़ी हैं, फिर भी हम करें क्या।"

"करें क्या ?" सोचते हुए रायसाब ने अपना माथा खुजलाते हुए कहा, "अभी जरा और रुक जाओ···इनको मुड़ने तो दो !"

"लेकिन आपै ने अभी कही···आखिर तक समझ न आयेगा !"

"सो तो है पर यें देखो भला कैसे मगन होयें···दौड़ायें हैं···जैसे ढपली बजाते हों···ऐसे में कैसे छेड़ूं ? चलने दो अभी···तुम उधर," उत्सुकदास की तरफ इशारा करते हुए दरोगा को ढकेल दिया, "जरा ख्याल करो···कुछ ढूंढो !"

"ठीक है···ठीक है।" कहकर दरोगा खिसक गया।

दरोगा ने बलराम शास्त्री के पास पहुँचते···पहुँचते पार्टी अध्यक्ष के अब जोरों से चल रहे तूफानी भाषण की वजह से मुँह बनाया था जिसे सहमतिपूर्वक देखते हुए बलराम शास्त्री भी चिढ़ाने जैसी भाव···भंगिमा पैदा करने लगे। दोनों दुःखी थे, पार्टी अध्यक्ष ने उनको दुखी कर रखा था। अलग···अलग गुटों के नेता होते हुए भी इस वक्त के हालात में दोनों की विचारधारा एक ही पैमाइश में उतर रही थी।

"आवा···आवा दरोगा !" दरोगा के पास आते ही शास्त्री धीमी पर चीखती आवाज में बोला।

"अरे का आवा···ये तो धुआंधारी होइ गयें ! लगता है···सबेरे तक बोलेंगे।"

"हाँ···हाँ···हम सब परीशान हैं!"

"क्यों नहीं···क्यों नही, राजभवन जाने की जल्दी होगी ना!"

"अरे हाँ यार! तुमका तो सब मालूम है। सारा इंतजाम हो चुका है।"

"क्या तुम लोगन का इत्ता इतमिनान रहा।"

"काहे का?"

"अरे यही उत्सुकदास के चुने जाने का।"

"ओह! उसकी बात है···वह सब तो ठीक है!"

"क्या खाक ठीक है!"

"क्यो भला?"

"ठीक होता तो ये इत्ती देर से बर्रा रहे होते!"

"यही तो मैंने भी कहा था बाबू से।"

"बाबू से!"

"हाँ और मुखमंत्री भी घबड़ाये थे!"

"अबे साले! अभी से मुख्यमंत्री बनाये हुव!"

"बनाये तो हुते पर अभी हाल दहला दिया पार्टी अध्यक्ष ने।"

"देखो बलराम, हमारा आपस का कितना भी विरोध हो इस मामले में तो हम एक हैं ना?"

"किस मामले में?"

"यह पार्टी अध्यक्ष की भड़ास पर!"

बड़े जोर की हँसी आ गयी शास्त्री को जिसकी आवाज से डायस पर बैठे लोग उधर मुड़कर देखने लगे। एक बार पार्टी अध्यक्ष ने भी बोलते हुए पलट कर घूरा था, इनकी तरफ। गुरुपदस्वामी ने भी तब आँखें चढ़ाकर शास्त्री को गुस्से में तरेर दिया। शास्त्री को गलती का अहसास हो लिया, फिर भी धीरे से फुसफुसाकर दरोगा से बोले, "हाँ यार इसमें तो हम एक हैं। बोलो कुछ करना है?"

"अब क्या करना है···तुम्हारी फूहड़ हँसी ने खेल बिगाड़ दिया।"

"हाँ!"

"और क्या, बैठो चुप्पाये कै।" कहकर दरोगा आगे खिसक गया, गुरुपदस्वामी की निगाहों से दूर।

लेकिन दरोगा के खिसक जाने से और बलराम शास्त्री के खिसिया-

कर आँखें नीची कर लेने से कोई बात नहीं खत्म हो गयी थी। शास्त्री की फूहड़ हँसी आग लगा चुकी थी। तमाम विधायक जो अब तक पार्टी अध्यक्ष के सनसनाते हुए भाषण के खौफ से चुपचाप बैठे हुए थे, कसमसाने लगे। शास्त्री की हँसी डायस की तरफ से आयी थी जिससे और लोगों में हिम्मत के बल करवटें बदलने लगे थे। फिर भी खुल्लमखुल्ला कोई भाषण में प्रतिरोध नही डाल सकता था। क्योंकि एक तो भाषण अच्छा था एक-एक शब्द जैसे सम्मोहन मे बांधे हुए विधायकों को ऊँचाई से नीचे तक बार-बार दौडा रहे थे, दूसरे पार्टी अध्यक्ष की प्रतिष्ठा, सम्मान और व्यक्तित्व सभी को खास तरह के भय की रस्सी में लपेटे हुए था।

और कुछ तो होना नहीं था, हाँ फुसफुसाहट, गुदगुदाहट का दौर जरूर शुरू हो गया था। शास्त्री की हँसी ने उनके मन की ऊब जो सम्मोहन में बँधी और भय मे लिपटी, दुबकी हुई थी, उभरकर एक दूसरे का सहारा ढूंढ़ने लगी।

एक विधायक, "अमा! हम तो देख यह रहे है"'इनका भाषण द्रोपदी के चीर की तरह खिंचता जा रहा है!"

दूसरा विधायक, "अरे उत्सुकदास को तो देखो कैसी हवाइयाँ उड़ी हैं चेहरे पर!"

तीसरा विधायक पीछे से लपका, "क्यो, भला क्यों?"

पहला विधायक, "अब इनकी सुनो"'क्यों, भला क्यों?"

चौथा विधायक, "उसके हवाइयाँ ही नही कलेजे पर छुरियाँ भी चले हैं जी!"

पाँचवाँ विधायक, जो अभी तक गम्भीर मुद्रा में भाषण सुनने का बहाना किये था, "जो यह रात-भर ऐसे ही बोलते रहे तो उसके हलक से निवाला निकाल लिया समझो।"

दो-तीन विधायक एक साथ बोल उठे, "और क्या, और क्या!"

दूसरा विधायक, "और हम जो खिचड़ी चढ़ा आए थे?"

सब लोग मुँह छुपाकर खी'''खी करने लगे, फिर तीसरा बोला, "का कह्यो'''खिचड़ी!"

दूसरा, "हाँ'''हाँ, स्टोव पर खिचड़ी चढ़ी है और कमरा बन्द है।"

इन लोगों की बातों में रुचि लेते हुए दो-चार और अधलेटे होकर आये थे। उनमें से एक बोला, "इनका खिचड़ी की पड़ी है, हमारी री दावत घुसि गयी।"

"कैसे···कहाँ थी!"

"अरे वही दास के यहाँ···अंग्रेज है साला। टाइम से न पहुँचो तो -पीकर सो रहेगा।"

"ऊपर से कुत्ते अलग छोड़ देगा।" एक ने तजुर्बे से कहा।

"हमने आज छानी नहीं थी सो बड़ा गंदा लग रहा है।"

"मैं तो ज्यादा खा गया था तो पेट गुड़गुड़ाय रहा है।"

"वो तो लगता है सभी का हाल है···कैसी-कैसी आवाजों में गैस पटाखे बज रहे हैं!"

"धत्त।"

"हमरे यहाँ कई कारीगर आये बैठे हैं।"

"कारीगर क्या?"

"अरे वे ही!"

"हाँ : मैं बताऊँ वे हैं खुराकी देने वाले···चढ़ावा वाले···लौटि गये तो हजारों का नुकसान अलग!"

"बाप रे बाप···आखिर ये चाहत का हैं?"

"भाड़ में जायें चाहत, मेरी तो नस फटी गयी समझो!"

"नस?"

"हाँ···इधर कुछ बहुमूत्र रोग लगा हुआ था···तो!"

पेट पकड़कर, मुँह दबाकर सबने हँसी रोकी, फिर भी भिनभिनाहट तो डायस तक जा ही पहुँची। अच्छा-खासा गोल बनने लगा था इन लोगों का। सबके सब अपना-अपना रोना लगाये हुए थे। मीटिंग हाल के एक कोने से दूसरे कोने तक बस माहौल छूटकर भागने का बन चुका था। सबकी मुसीबतें दिल और दिमाग के सोचने-समझने की, अहसास को पकड़ सकने तक की प्रक्रियाओं पर फालिज गिर चुका था। असल में विधायक इतने लम्बे भाषण के लिए तैयार होकर ही नहीं आये थे। सबको पार्टी मीटिंग के तुरन्त बाद राजभवन जाने की बात पता थी। लेकिन केन्द्रीय नेताओं का हवा दबोचे हुए था जिसकी वजह से बेहद तकलीफ के दौर से गुजरते हुए भी कोई कुछ कह नहीं पा रहा था। उधर पार्टी

अध्यक्ष का रफ्तारी भाषण अब और तेज दौड़ने लगा था। शब्दों का उतार-चढ़ाव, आवाज की पिच, नपी-तुली लगातार विधायकों के दिमाग पर हथौड़े बरसा रही थी, कोड़े जमा रही थी। उनकी मुद्राएँ, हाथों का उठना-गिरना जैसे नोच-नोच कर हर विधायक के अन्दर से वह जमा हुई ताकत निकाल रहा था, जिसमें कहीं भी विरोध कर सकने का इरादा हो। कुछ जो स्वस्थ और सुन्दरमन के थे, स्वाभाविक रूप से उनके जादू के घेरे मे आ चुके थे और जो उखाड़ी-पछाड़ी और ऊबे थे उनके अन्दर कुछ कह सकने, कर सकने का माद्दा ही नहीं बाकी था।

ऐसा नही था पार्टी अध्यक्ष यह सब देख नही रहे थे, समझ नहीं रहे थे। विधायकों की चुलबुलाहट, सबकी बेचैनी, मुसीबत और परेशानी उनकी तेज निगाहों से छिपी नही थी। और कोई वक्त होता तो कसमसाहट और फुसफुसाहट वह एक झटके में साफ कर देते लेकिन आज··· आज उनको ऐसा नहीं करना था। आज तो बड़ी खूबी से···इतनी देर की मेहनत के बाद···जान-बूझकर उन्होंने यह माहौल पैदा कर दिया था। पार्टी अध्यक्ष की पैनी निगाहों ने पैमाइश कर ली थी···सब्र का···सबके सब्र का पैमाना नाप लिया था। एक···एक की नब्ज पकड़ रखी थी उन्होंने!

पार्टी अध्यक्ष कह रहे थे, "साथियो, यहाँ आने से पहले मैं पी० एम० से मिला था। और अभी राजभवन से मैंने फिर टेलीफोन से उनसे बातें भी की थीं। उनसे बातें करने के बाद हमने गृहमंत्री के साथ सलाह-मशविरा भी किया। इस दौरान आज मैं तमाम विधायकों के साथ काफी देर तक रहा। विधायको के अन्दर जो असंतोष है···सिद्धान्तों और व्यक्तित्व की जो लड़ाई चल रही है उसके प्रति हम अनजान नहीं हैं। पी० एम० ने आपके नाम सदेश मे मुझसे यह कहने के लिए कहा है कि आपकी भावनाओं का हम आदर करते हैं और आज के बाद आपको उन्होने दिल्ली आने के लिए कहा है। वह आप मे से हर एक की बात सुनेंगे···और आपकी जो भी शिकायतें होंगी उन्हें दूर किया जायेगा। हम प्रजातांत्रिक ढंग से पार्टी को चलाते रहने को आतुर हैं। प्रधानमंत्री का भी यह कहना है कि प्रदेश की सरकार का गठन कोई इतनी बड़ी घटना नही है जिसके लिए आप आपसी मतभेदों को खुलकर सामने आने दें। अगर आज मन्त्रिमंडल बनता है तो आपकी सहमति से बनेगा।

ग्राज देश के सामने तमाम समस्याएँ हैं···तमाम खतरे हैं। विरोधी दलों की साजिश है हमारी पार्टी को कमजोर बनाने की। राष्ट्रीय स्तर पर भी पार्टी और केन्द्र की सरकार में हमें यहाँ के कुछ नेताग्रों की जरूरत है। मुझे इस बात की घोषणा करते हुए हर्ष हो रहा है कि प्रदेश पार्टी के ग्रध्यक्ष श्री बलदेव चौधरी, जिनकी निष्ठा, लगन और देश-सेवा से ग्राप सब वाकिफ हैं, को इस सिलसिले में प्रधानमंत्री ने दिल्ली बुलाया है। मुझे विश्वास है श्री चौधरी ग्रब राष्ट्रीय स्तर पर प्रधानमंत्री की जिम्मेदारी में हाथ बटायेंगे।"

बड़े जोर की तालियाँ बजीं। यह तालियाँ बलदेव चौधरी के विधायकों ने नहीं बजायी थी···ग्रौर ना ही उत्सुकदास के समर्थकों ने। यह तालियाँ जहाँ एक तरफ तमाम विधायकों के चौधरी साब के प्रति सम्मान का प्रतीक थी, वहाँ दूसरी तरफ पार्टी ग्रध्यक्ष के भाषण के ग्राखिरी दौर में पहुँच जाने की खुशी में भी थी। तालियों की ग्रावाज धीमी पड़ते ही पार्टी ग्रध्यक्ष ने ग्रपने प्रयोग की सफलता को ग्राँककर ग्रागे कहना शुरू किया, "मुझसे प्रधानमंत्री ने ग्रपने साथ ही रायसाब को लेकर ग्राने के लिए कहा है···वैसे यह मेरा भी विचार था कि ग्रगर चौधरीसाब दिल्ली चले ग्राते हैं तो प्रदेश पार्टी की जिम्मेदारी रायसाब को ही सौंपी जानी चाहिए।" एक बार और तालियाँ बजीं···इस बार तालियों की ग्रावाज ज्यादा तेज थी। कुछ लोग पार्टी ग्रध्यक्ष, रायसाब, चौधरीसाब के जिन्दाबाद के नारे लगाने लगे।

इसी बीच लोगों ने देखा पार्टी ग्रध्यक्ष तो 'धन्यवाद' कहकर बैठ चुके थे···लेकिन उनकी जगह गुरुपदस्वामी ग्राकर खड़े थे। वह लोगों से शांत हो जाने के लिए कह रहे थे। नारेबाजी ग्रौर हुल्लड़बाजी बन्द नहीं हो रही थी तो गुरुपदस्वामी ने बिना ग्रौर इंतजार किये बोलना शुरू कर दिया। लेकिन उनके पहले वाक्य से ही पूरे हाल में सन्नाटा छा गया···जैसे बिजली गिरी हो। उन्होंने एक झटके से ग्रसंतुष्ट गुट के नीचे से जमीन निकाल ली थी। विधायक हक्का-बक्का उनकी तरफ हैरतमंद निगाहों से देख रहे थे" हमेशा सीधी-सादी राजनीति करने वाले गुरुपदस्वामी कौन-सी चाल खेल गए थे। ग्रौर तो ग्रौर, खुद उत्सुकदास को लगा, उनके ग्रपने गुरुपदस्वामी ने यह कौन-सी चोट कर डाली। एक बार वह उठने को हुए फिर कुछ सोचकर बैठे ही रहे लेकिन उनका

चेहरा क्रोध, निराशा और घृणा से तिरछा हो गया था। रंगीनराय और बलदेव चौधरी को भी जैसे अपने कान पर विश्वास नहीं हो रहा था। गुरुपदस्वामी का पहला वाक्य था, "कृष्णवल्लभ यादव को पार्टी की सदस्यता से निलम्बित कर दिया गया है। उनके ऊपर गम्भीर आरोप है!"

राजकृष्ण मिश्र



जन्म : 3 अगस्त, 1940

जन्म स्थान : वाराणसी

शिक्षा : बी० ए० (कामर्स), लखनऊ विश्वविद्यालय सर्टिफिकेट कोर्स, ऑल इण्डिया इस्टीट्युट ऑफ सोशल वेलफेअर एण्ड बिजनेस मैनेजमेंट, कलकत्ता

राजकृष्ण मिश्र की पहली कहानी 'कफ़न के लिए' 1957 मे छपी थी। उसके बाद 'क्या होगा', 'वह आएगी', 'धड़कनों का राग', मन के किनारे,' 'धन्धा' आदि कहानियाँ समय-समय पर प्रकाशित होती रही। 1973 मे खलील जिब्रान और गुरुदेव रवीन्द्र टैगोर की परम्परा मे लिखी पुस्तक 'कामना का क्षितिज' छपी थी। राजकृष्ण मिश्र ने 'चालान', 'वापसी', 'वजूद', और 'हेलो' नाटक लिखे हैं। 'चालान', और 'वापसी' नाटक दूरदर्शन और आकाशवाणी से प्रसारित किये जा चुके हैं। राजकृष्ण मिश्र दूरदर्शन के फ्रीलान्स निर्माता-निर्देशक है और दूरदर्शन के लिए फिल्में बनाते है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः', 'बन्द मुट्ठी, खुला आसमान', 'पीढ़ी से पीढ़ी तक', टुकड़ों में बटी जिन्दगी', 'भूले-भटके', 'पुनः', और 'सकट मोचक' दूरदर्शन फ़िल्मों के पट-कथा लेखक, निर्माता और निर्देशक रहे है।